ज रस्ते में क्षुधा तृषा आदि अनेक दुक्कर परिसह सहन कर यह क्षेत्र पावन किया और वृद्ध अवस्थाके कारण से अशक्त शरीर होने से यहां विराजमान हुवे थे. और इनकी सेवामें पंडित प्रवर बाल ब्रह्मचारी श्री अमोलख ऋषिजी महाराज यहां विराजते थे. मुनि श्रीके सद्बोधसे आजतक ५४००० पुस्तके अमूल्य सर्व हिंदमें और ब्रह्मा अमेरिका, आफरिका, आदि देशोंतक दिये गये हैं, इससे खुला मालुम होता हैकि विद्वान मुनिराजों और उदार प्रणामी श्रावकोका सम्बन्ध मिलनेसे समयानुसार प्रवृति करने से जग जीवोंको कैसा लाभ मिलता है.

अब हम आत्यन्त अपसोस से कहते हैकि-हमारे इस क्षेत्रको धर्म मार्ग में प्रसिद्ध लाने वाले और ज्ञान दान का अमुल्य दान दिला सर्व हिन्द के धर्मात्माओंको तोष ने वाले तपस्वीराज श्री केवल ऋषिजी महाराज वि. सं. १९७१ की चेत सुदी प्रति पदासे बीमारी बहुत ही बडगइ तव सावण वद५ को सर्व साथ अत्यन्त नम्र भावसे खमनखमना करीये.और नवमीके दिन आलोयणा निन्दना कर अन्नाहारके त्याग किये और १३ मंगलवार के दिन १०॥ बजे अपने मुखसे संथारा कर १॥ बजे देहोत्सर्ग हुवा !! और श्री अमोलख ऋषि जी उग्रह विहारी हुवे. जिससे जैसे राजा विना रइयत मुनि तैसेही सब यहां का होकर ज्ञान खाता बन्ध पडा है जी.

हमारी नम्र विनंती हैकि जैसा प्रयास ज्ञान वृद्धि का बाल ब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलख ऋषिजी और इन के सद्बोध से यहां के तथा अन्यग्राम के श्रावकोने किया हैं. इससे भी अधिक सर्व हिन्दके साधु मार्गीयों से होने की अत्यन्त आवश्यकता है, जो सर्व संघ इस प्रत्यक्ष दाखले को ध्यान में लेकर, ज्ञान वृद्धि-सम्प-वृद्धि वगैरा साधुमार्गी धर्मोन्नति के एकेक कामों का स्वीकार कर यथा शक्ति प्रवृति करेंतो यह पूर्ण शुद्ध धर्म पुनः पूर्ण प्रकाश मय होवे !

धर्मोन्नति इच्छक,

राजा बहादुर लाला-सुखदेव सहायजी ज्वालाप्रशाद.

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०३	११	मन्दग	सम्यग
,,	२३	निर्ज्जरा	निर्जरा
२०६	७	कर	०
२०७	१५	नन	मन
२०८	१४	निर्यच	तिर्यंच
,,	१८	कशल्यता	कौशल्यता
३०१	१२	पुष्क	पुष्प
,,	१७	माति	सात
,,	२७	काले	वाले
३०२	४	आढ्य	कण्डया
,,	६	रसमा'रसया'	रसया-रसमें
३०३	१७	वर्व	पूर्व
३०५	१४	क वित	कषायला
,,	१७	मनुप्य	धनुप्य
३०७	२८	जुड	जुडे
३०८	५	एणधर	गणधर
,,	७	आदारिक	औदारिक
,,	७	मूत्र	शूक्र
,,	१८	हर्डायाँ	हडीयाँ
३१२	७	यड	पड
३१४	८	यथार्थ	अयथार्थ
३१७	४	व्युछिन्नकिरिय	व्युच्छिन्नकिरिय
३१८	६	पढते	०
३२१	५	चयन्य	जयन्य
३२३	४	अतिवार	अतिचार
,,	२८	,,	,,
३२५	इसपृष्टकी पांचवी ओलीभीवडेअसरमें		
,,	१२	८	८ स्त्रीपरिसह
३२७	५	दर	दूर
,,	१७	मुप्य	गुप्य
३२८	५	३३ सागर	३ पल्योपम
,,	१२	क्रोड पूर्व	देशउणाक्रोडपूर्व
३३०	२७	(इन वचन	(इन मन वचन
३३२	४	कुद्धि	बाह्नि

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	७	ठामस्स	ठाणस्स
३३५	१५	औदायिक	कुछ औदायिक
३४६	६	गुणमिथ्यात्व	गुणनोमिथ्यात्व
३५०	४	(अचारी)	(अचौरी)
३५४	१५	मका	मकार
,,	१०	८	२
,,	१५	पूर्य	पूर्ण
३५६	१३	गमन गमन	गमनागमन
३५७	१०	सो मोह	सो क्षीण मोह
३५८	१३	मिथ्यात्व	मिथ्यात्व
३६०	१६	वीसरे	तीसरे
३६७	१६	जयस्य	जयन्य
३६९	२	औ	और
३७०	३	तया	तया
,,	६	अनन्तांत	अनन्तानन्त
,,	१०	क्रोरड	क्रोड
,,	५	अनन्तात	अनन्तानन्त
३७१	२०	तिजय	विजय
३७२	९	मुहुर्त	०
३७४	१०	गमत	प्रमत
,,	३	मुदूर्त	मुहुर्त
३७५		पृष्टांक ७६६	३७६
३७६	१८	जाम	जाय
,,	१२	वेजावे	वेजावे, और बारवे जावे.
३८३	१०	होता है	तेहै
,,	१८	१. जयन्य	जयन्य १.
३८४	१७	अठातीसवा	अट्टतीसवा
३८५	१	कौर	और
,,	९	मिथ्यात्व	०
३८८	१०	संयाबे	
३८९	५		
३९१			

३९६	११	बुन्य	बंध
३९९	३	६	०
४०४	१६	अगो पग	अङ्गोपाङ्ग
४०५	८	होता है.	होतहै. आगे गो व कर्मका बंधनहीं
४०६	१४	का ३१	३१ का
४०७	१२	प्रकृति	प्रकृति बन्ध
४००	८	११	१२
४१०	७	अठाय	अठारा
४११	८	कर्म बन्ध	कर्मप्रकृतिबन्ध
४१५	५	२	१
”	२१	१	२
४१७	५	८	७
४१९	१६	५३	५३वें
४३०	३	नरकात	नरकानु
४३३	१	क्षीण	क्षीण
४३७	३	लोभ२३विनका-	लोभविना२३का
४४०	८	३६१	३६
४४२	२२	अयाति	०
४४५	१६	केवली केवली	केवली के
४४७	१२	११२	११३
४५८	नोट	स्य	स्वर्ग
४५९	७	और	०
४६१	८	प्रउद्वा	पउद्वा
”	२१	संयोगी	सयोगी
”	२२	क्षान्वा	मोन्वा
४६२	२१	सन्नापाती	सन्नाद्वार
४६३	१२	१ अ	५ अ-
४ ५	८	मागमें	मागमें

४६५	१२	इकासवाकर्म	इकीसवाकर्मसत्ता
४६६	४	आविरविमें	अविरति से
४६८	१२	सत्ता	साता
४६९	१८	मत	सत्ता
४७३	९	तिर्यचाकायु	तिर्यचायुका
”	१४	तिर्यचु	तिर्यचायु
४८२	९	३ ज्ञान	३ अज्ञान
”	११	३ दर्शन	३ज्ञान३दर्शन
४८४	१३	हेडिंगरहगया	समुचयभावद्वार
४८८	४	तेलवान्धि	न ग्रन्थि
४८९	१४	और भी	और ४१ वा
४९१	११	सातवा	सातवा
४९३	२०	श्रमी	मिश्र
४९४	१०	अपर्माप्ते	अपर्याप्त
४९५		इस पृष्ठ में दोद्वार	छापते रहगये
५००	८	हेडिंगके नीचेके	ओली उपरचाहिए
५०१	१०	लेश	लेशा
५०३	११	मरणद्वार	स्वर्गमर्यादद्वार
५०६	१३	संयरेगी	सयोगी
५०९	१०	पायेचा	पासेचार
५११	४	तीर्नतीर्था	तीर्थातीत
५१४	७	प्रमाद्	प्रमाद
५१८	७	३	६
५२१	१५	निर्जेरा	निर्ज़रा

इस सिवाय औरभी बहुतसी अशुद्धियों इस पुस्तक में रहगइ है. जिसका मुख्य सबब विहार करने से प्रुफका बराबर बरोबर न होना तथा बहुतई जनदी से काम पूरा कराने का है इसलिये नम्र विनती है कि जो जो अशुदियां दृष्टि आवे उसे जानावोगे तो सभार स्वीकार द्वितीया वृत्ति छपने के प्रसंग आनेमें सुधारा किया जायगाजी.

अमोल ऋषि.

श्री मुक्ति-सोपानका अनुक्रमणी.

द्वितिय खण्डानु क्रमणी

तृतीय खण्ड.

चतुर्थ खण्ड.

इति अर्थकांडानुक्रमणी.

अथ मूल खंडानुक्रमणी.

इति मुक्तिसोपानकी अनुक्रमणी.

र चारित्र इन तीनों सार पदार्थ रत्नों समान धर्मका माते पूर्ण पर्ने-यथातथ्य (जै
सी तरहमे करना चाहिये वैसीही तरहसे) आराधना-पालना-स्पर्शना-अन्त तक क
ने मे प्राप्त हुवा है.' इसलिये उस सुख का 'अनियण'-अर्थात् कदापि नाश नहीं
होता है-अन्त नहीं आता है-ऐसा अनन्त है. और 'मव्वाबाह'-अर्थात् उस सुख में
कदापि किसी प्रकार की किंचित मात्र ही व्याधी, विकल्पना मिश्रता या किंचित
मात्र नुन्यता-कमी पना होताही नहीं है. ऐसे परम सुख को जो "अणु हवंति"-
अर्थात् अनुभव लेते हैं-भोगवते हैं, उन सिद्ध-परमात्मा को मेरा त्रि-करण त्रियोगकी
विशुद्धि से वारम्वार वन्दना नमस्कार होवो!

परि शिष्ट

यह विश्व अनन्तान्त जीवों से माने पूर्ण भरा हुवा है, वे सब जीव गुणकी
अपेक्षा से अनन्त प्रकार के हैं. जैसे-ज्ञानादि गुणों में सब से हीन गुण के धारक-
और चैतन्यतादि लक्षणों में सब से हीन शक्ति के धारक सूक्ष्म निगोद के जीवों है
उन जीवों में से कभी कोइ एक जीव एकार्ध अंश अधिक गुणकी वृद्धि होने से ऊंच
दिशाको प्राप्त होता है. यों अन्त गुण पुण्याधिक होने सूक्ष्म निगोद से निकल बादर
(बड़े) निगोद मय शरीर को प्राप्त होता है. वहां भी अनन्त गुणाधिक पुण्य होने से
प्रत्येक एकेन्द्रिय-पृथ्व्यादि स्थावर काय में आता है. यों अनुक्रम से अन्तान्त गुण
पुण्याधिक होने बेन्द्रिय-तेन्द्रिय-चौरिन्द्रिय-असज्ञीय पचेन्द्रिय-सज्ञीय पचेन्द्रिय-नरक-देव
मनुष्य-पर्याय तक प्राप्त करता है. यहां तक आकर कोइक जीव सर्व दुर्गुणों का
सर्वांश नाश कर संपूर्ण गुण मय जब आत्मा बन जाता है तब सर्वज्ञतादि गुण प्रगट
होते हैं, उस आत्मा को साकारी (शरीर धारक) परमात्मा कहते हैं. और कुछ काल
प्रकार रहेबाद शरीरादि सर्व संयोगों का सर्वांश त्याग होते निजात्म के स्थान निज
एकही स्वरूप मय जब आत्मा हो सिद्ध स्थान को प्राप्त करता है, उस आत्मा को
पद परमात्मा कहा जाता है. वोही आत्मा मंगलाचरण में कथन किये मुजब अनो-
पम निराकार परम सुखका अनुभव करता है, सुख भुक्ता है. और उपरोक्त कथन
मुजब जो जीवों सहज स्वभाव से निपजते हुवे पुण्याधिकतासे आकर्षा कर सज्ञी पर्या
तक आये हैं ज्ञानादि गुन कुछ विशेष जिनकी आत्मा में प्रकाश हुवे हैं, वो-

जीवों श्री आचारांग सूत्र के प्रथमाध्याय के कथनानुसार 'सहसम्मी मइयाए' अर्थात् स्वानुभव (जाति स्मरणादि ज्ञान) से जानकर, या 'परवागरणाणं' अर्थात्–तत्त्वज्ञोंद्वारा श्रवण कर. 'अन्नेसिं अन्ति एवा सोचा' अर्थात्–किसी का सहज वचन श्रवणकर या ग्रन्थों में पठन कर इत्यादि सम्बन्ध से परमात्माके परम सुख के ज्ञाता–जानकार हुवे हैं. उन को परम सुख प्राप्त कर ने की जिज्ञासा–अभिलाषा होवे यह स्वभाविक ही है. उनकी जिज्ञासा-इच्छा पूर्ण कर ने जो आत्मा सर्वज्ञ–सकार परमात्मा पद को प्राप्त हुवे हैं उनोने स्वानुभव द्वारा निश्चयात्म पूर्वक परम परमात्मा पद को प्राप्त कर ने के अन्तान्त गुणों को ज्ञान कर जाने हैं, परन्तु वचन द्वारा अनुक्रम से वागरने - समझाने और उन गुणों में जीवों को लगा कर मार्ग में प्रवर्ता कर परमपद प्राप्त करने जितना काल - समय निज पर का न होने से कार्य कों असाध्य जान परम कृपालु अर्हत - सर्वज्ञ देव ने मुमुक्षुओंपर अत्यंत करुणा दृष्टि कर परमात्म पद प्राप्ति के कार्य को सहज साध्य बना ने -स्वल्पज्ञों कों समझा ने उन परमात्मा पद प्राप्ति के अनंतानंत गुणों का समावेश कुछ स्वल्प (थोडी) संख्या में करना उचित समझा कि जिस से सर्व मुमुक्षुओं - परमात्म पद के इच्छकों सहज में समझें और परमात्म पद प्राप्ति के मार्ग में प्रवृत्ति कर परमात्म के परम सुख के भुक्ता वनें. इस हेतु से उन अनंत गुणों का शिर्फ चउदह (१४) वातों मेंही समावेश कर दिया और उनका नाम 'चउदह गुणस्थान' या 'चउदह जीवस्थान' स्थापन किया. इतनी थोडी संख्या में होने से मुमुक्षुओं शीघ्र समज जावें परमात्म स्थान को प्राप्त कर ने. उत्साही वने. प्रयत्न शील हो पर्यात करें, और परमात्मा वन अनन्त सुख कों भुक्ते.

उन १४ गुणस्थान के नाम इस प्रकार हैं:—

मिच्छे सासण मिस्से । अविरय देसे पमत्त अपमत्ते ॥
निअट्टि अनिअट्टि सुहुम । व सम खीण सजोगी अजोगी गुण ॥

अर्थ—"प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थान"—जगत निवासी प्रायः सर्वी, जीवों का मूलस्थान अनादि से यही है, कर्मो रुपी महा मेघ घटा से अच्छादित हुवा चैतन्य चंद्र मूर्छित - बे भान दिशा में पडा हुवा काल लब्धि परि पक होते-व्याधि वेदनादि सहने से - कुछ कर्मांश पतले पडने से - स्व स्वभाव से - भतव्य ताके योग्य सहजही ऊंचा आता है - वो पुण्यांश की प्रवलता कर अज्ञान तपश्चरणादि के प्रभाव से इकीसवा स्वर्ग (नववी ग्रयेवेक तक चले जाता है. इस स्थान में रही हुइ आत्मा इतने

त्वस में देखाती हुइ विषय कषाय से निवृत्ति पाता है, इस गुण की अधिकता होनेसइ से आठवा दरजा दियागया है.

९ नववा "अनयट्टी बादर गुणस्थान"-इस स्थान में आया आत्मा सूक्ष्म बादर सर्व विषयों से और तीनांश कषाय से निवृताता है, इस गुणकी अधिकता होनेसे इसे नववा दरजा मिला है.

१० दशवा-"सूक्ष्म संपराय गुणस्थान" इस स्थान को प्राप्त हुवा आत्मा सूक्ष्म किञ्चित लोभके सिवाय सर्वथा विषय कषाय से निवृतता, है इस गुणकी अधिकताहो नेसे इसे दशवा दरजा दियागया है.

११ इग्यारवा-"उपशांत मोह गुणस्थान"-इस स्थानमें आने बाद सूक्ष्म लोभरुप शल्य रहाथा सो भी सर्वथा दबजाता है-वीतराग अवस्था को प्राप्त होताहै, इस गुण की अधिकता होनेसे इसे इग्यारवा दरजा दियाहे (इसने मोह-कषाय को दबाया है, परन्तु क्षय नहीं किया है जिससे पडवाइ होता है.)

१२ बारवा-"क्षीणमोह गुणस्थान"-इस गुनस्थान में आया हुवा आत्मा सर्वथा मोह-कषायका जड मूलसे नाश करता है. यह पीछा पडता नहीं है. इस गुणकी अधिकता होनेसे इसे बारवा दरजा दिया गया है.

१३ तेरवा"सयोगी केवली गुणस्थान"-इस स्थान को प्राप्त होनेसे आत्मा सर्वज्ञ सर्व दर्शी साकारी परमात्मा बन जाताहे इस गुणकी अधिकात होनेसे इसे तेरवा दरजा दिया गया है.

१४ चउदवा 'अयोगी केवली गुणस्थान'—इस गुणस्थान को प्राप्त हुवे बाद आत्म परम परमात्मा बनजाता है-सिद्ध अवस्था को प्राप्त होता है, यहां सर्व गुणों संपन्न होने से-फिर कोइ भी कार्य बाकी नहीं रहने से इसे आन्तिम-सर्व से ऊंचा चउदवा दरजा दिया गया है.

मुमुक्षुओं! ऊपरोक्त चउदह बातों का जरा दीर्घ दृष्टि से ख्याल कीजिये कि महान तत्ववेत्ता सर्वज्ञ परमात्माने अपने ऊपर कैसा जबर प्रशाद किया है अति गुढ-गहन विषय को कैसा सुलभ सहज कर समझाया है. इस में अल्पज्ञभी तुर्त समझजाय और ऐसा सहज काम जान इस में प्रवर्त ने उत्सुक बनें!

परन्तु मुझे यहां संशय होता हैकि-ऊपरोक्त चउदह गुणस्थान का ऐसे खुल्ले-सहज अर्थ को पढकर कदाचित कोइ स्वल्पज्ञ विचार करेंगे कि अहो इसमें क्या, यह

तो सहज बातों हैं, इन में अनंतानंत गुणों का समावेश कैसे होता है! यह बात कै
मानी जाय? वगैरे उन जीवों को यह भाव सद्स्वरूप दर्शाने. वा मुमुक्षुओं को
१४ बातों के अंदर रहा हुवा अत्यंत गुढ रहस्य को बनाकर-हेय-त्याग ने योग्य, ज्ञे
य-जान ने योग्य और उपादेय-आदर ने योग्य कतव्यों में मायण घना ने, उन अ-
नंत गुणोंमें से जो कुछ शास्त्र ग्रंथों में कथा गया है. उसमेसे भी जोकुछ किंचित
हिस्सा मेरे जानने में पढने में और उसमें का कुछ हिस्सा अनुभवने में आया है,
उस में से जितना द्रव्यादि की अनुकूलता के अनुसार दर्शानेकी मेरे में शक्ति है
और भाविष्य है उतनासा विभाग श्री जिन मणित मूल शास्त्रों आचायों रचित ग्रंथों
वा धारी मुनि आदिके अनुसार खुलासे वार दर्शानेके लिये यह "गुणस्थाना रोह-
ण अढी शतद्वारी" नामक ग्रंथद्वारा मसिद्ध करने मयत्न होता हूं!

इस ग्रंथ के मुख्य दो काण्ड (विभाग) किये हैं:—जिसमे से मथम अर्थका-
ण्ड में तो ऊपरोक्त १४ गुणस्थान पर २५२ द्वारों (बावतों) को - १ मूल
खण्ड, २ कर्मारोहण खण्ड, ३ संसारारोहण खण्ड, और ४ धर्मारोहण खण्ड, इन
चारों खण्डों में बाट कर उनके अर्थ संक्षेपमें दर्शा खुलास कर किया है, और
दूसरे मूल काण्ड में उन २५२ द्वारों को चारों खण्डों में विविभित कर चउदेही गुण
-स्थानों पर अलग २ उतारे हैं. इसमें भी जो विशेष जानने योग्य बातों हैं उन्हे उसी
पृष्ट के नीचें टीप में दाखल की गइ हैं. यों इस गहन ग्रंथ के विषयों का स्पष्टि
कारण कर सर्वके समझमें आवे और इष्टार्थ सिद्ध होसके ऐसा बनानेमें मैने यथा शक्ति मयत्न
किया है. में जानता हूं कि इसे लिखने जैसा ज्ञानानन्द मेरी आत्मा में हुवा है वैसाही
ज्ञानानन्द पाठको को भी पठन व मनन करने में हुवा चाहिये!

मुमुक्षु—अमोल ऋषि.
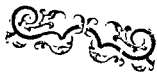
* प्रवेशीका *

इस ग्रन्थका नाम "मुक्ति सोपान" रक्खा गया है अर्थात् श्री तीर्थंकर महाराज मोक्ष में गमन करने-जाने के चौदह सोपान (पंक्तिये) फरमाये हैं उन चउदेही पंक्तियों का स्वरूप इसमें समझाया गया है. और इसका अपर (दूसरा) नाम "गुणस्थाना रोहण-अढीशत द्वारी" रक्खा गया है अर्थात् उन चउदेही गुणस्थान (गुणवृद्धि के मंजिलों) में जीवों कैसी तरह से आरोहण करते (चडते) हैं. जिसका विगत वार खुलासे के साथ कथन किया गयाहै. इसलिये दोनोंही नाम यथार्थ कहीये गुणनिष्पन्न-सच्चेहैं.

इस ग्रन्थके दो काण्ड (विभाग) किये गये हैं. जिसमे प्रथम अर्थ कान्ड है क्योंकि हरेएक पदार्थ का मतलब समझ में आनेसे उसका यथार्थ ज्ञानानुभव आत्मा में होता है. और उससे उस ज्ञानमें ज्ञानी आत्म तल्लीन बना रसायण-उत्पन्न करसकते हैं इसलिये प्रथम अर्थ काण्डमें २५२ ही द्वारों का अलग २ (भिन्न २) खुलासा से अर्थ समझाया गयाहै. और दूसरा मूल काण्ड है जिसमें उस अर्थ काण्ड में दर्शाये २५२ द्वार चउदेही गुणस्थानों पर अलग २ उतारे गये हैं.

इस ग्रन्थ के दोनों विभागों चार खण्ड द्वारा २५२ द्वारों विविक्षित कियेगये हैं जिसमें से प्रथम मूल द्वारारोहण खण्ड है. जिसमें मूल चउदही गुणस्थानो का (अन्य पदार्थोंकी अपेक्षा विना) स्वरूप समझाया है. जिसके ३३ द्वारहैं. दूसरे कर्म द्वारा रोहण खण्डमें आठो कर्मों और १४८ प्रकृतियों वगैरा भिन्न२ कर चउदेही गुणस्थान पर उतार कर समझाया है. जिसके ७ प्रकरण के १३७ द्वारों हैं. तीसरे संसारारोहण खण्ड में संसारी जीवों में मिलते हुवे अनेक बावतों को चउदेही गुणस्थानों पर उतार समझाया गयाहै. जिसके ४१ द्वारों हैं. और चौथा धर्मारोहण खन्ड में धर्मात्मा में मिलते हुवे अनेक बावतों को उतार के समझाया है. जिसके भी ४१ द्वारों हैं. यों चारों खन्ड के मिलकर सब २५२ द्वारों हैं. जिसका स्वरूप आगे गाथा द्वारा बताते हैं:—

सिरि जिणेसर वन्दामि । भणामि गुणठाणारोहण अढीसत दारी॥
चउदह गुणठाणस्स । चउ खण्ड दुव्वे सरवन्धाओ ॥१॥

अर्थ-प्रथम श्री जिनेश्वर भगवंत को नमस्कार कर के "गुण स्थानारोहण अ-

दीशतद्वारी" नामक ग्रंथ को दो काण्ड और चारों खंड के २५२ द्वारो कर कहता हुं सो दत्त चित्त से पठन कर मोक्षानु गामी बनीये.

गाथा—नामऽत्थ पणवागरणा । पव्वेसा लक्खण दिठन्त ॥
गुण अवयेण दव्व । लद्ध खय खेत्त खेत्त पम्माण ॥२॥
ठीइ काल भाव गुण - सया मग्ग चउ अवरोह गइ दिठन्तो।
अन्तर विरह फासा - तीओ पढम सासय गमण भव अप्पा बहु॥३॥

अर्थ—प्रथम मूल खंड के ३३ द्वारों के 'नाम' कहताहुं -प्रथम नाम द्वार 'ऽत्थ' केहतां दूसरा अर्थ द्वार, 'पण-वागरणा'-कहतां तीसरा प्रश्नोत्तर द्वार, 'पव्वेसा'. कहतां-चौथा प्रवेश द्वार, 'लक्खण' कहतां पांचवा लक्षणद्वार, 'दिट्ठन्त' कहतां छट्ठा दृष्टांत द्वार. 'गुण' क० सातवा गुणद्वार. 'अवयेणा' क०-आठवा अवयेणा द्वार. 'दव्व' क० नववा द्रव्य (जीव) प्रमाण द्वार. 'लद्ध' क० दशवा द्रव्य पावती द्वार 'खय' क० इग्यारवा जीव खपती द्वार, 'खेत्त' क० बारवा खेत्र परिमाण द्वार, 'खेत्र पमणा.' क० तेहरवा क्षेत्र स्पर्शना द्वार, 'ठीइ' क० चउदवा स्थिती द्वार, 'काल' क० पंदरवा काल मान द्वार, 'भाव' क० सोलवा-भाव परिमाण द्वार, 'गुणसया' क० सत्तरवा-निरंतर गुण द्वार, 'मग्गचउ' क० मार्गणा के चार द्वारः—अठारवा-मार्गणा द्वार, उन्नीसवा उपमार्गणा द्वार, वीसवा-परम्पर मार्गणा द्वार, 'इक्कीसवा '-परस्पर उपमार्गणा द्वार. अवरोह' क० बावीसवा-उवरोह अवरोह द्वार 'गइ दिठंत' क० तेवीसवा-गतिदृष्टांत द्वार, 'अंतर' क. चौवीसवा-अंतर द्वार. 'विरह' क. पचीवा-विरह द्वार, 'फासतीओ' क० स्पर्शना के तीन द्वारः—छव्वीसवा एक-भव आश्रिय स्पर्शना द्वार, सत्तावीसवा - बहुत भव आश्रिय स्पर्शना द्वार, अट्ठावीसवा-परस्पर स्पर्शना द्वार, 'पढम' क. उगनीसवा प्रथमा प्रथम द्वार, 'सासय' क. तीसवा शाश्वता शाश्वत द्वार 'गमण' क. इकतीसवा पर भव गमन द्वार. 'भव' क. बत्तीसवा भव मेळया द्वार, और 'अप्पाबहु' कहतां-तैंतीसवा अल्पा बहुत द्वार.

गाथा—किरिया कारण हेउ-पंच चउबन्ध नव कम्म बन्ध ओ ॥
धुव चउ घाइ छक, पुण्ण पाव दुग्ग परावत्त चउ ॥४॥
भूयकार अप्प अवट्ठि दुग्ग अवक बन्ध विछेह दुग्गं ॥
कम्मोदय नव ओ, धुव्व चउ पुण्ण पाव दुग्गं ओ ॥५॥

विवाग अट्ठघाइ - छक्क - उदय विच्छ हो दुग्गे ॥
ऊदीरणा दह विच्छोहदु,धुव्वचउ सत्तानव घाइ छक्क विच्छोह दुग्गे॥६
भङ्ग नव वन्ध इरिया । भावट्ठ सेणी वेए निज्जरा ॥
करण गुण सेणीओ । कम्म सत्त भाग ती सत्त सतद्दारा॥७॥

अर्थ-कम्म सत्त भाग तीअठ सत्तद्दारा' कहतां-दूसरा कर्मारोहण खंड के सातों प्रकरण के मिल १३७ द्वारः—(१) कर्मोत्पत्ति प्रकरण के ७ द्वारः—'किरिया' कहतां प्रथम-किरिया द्वार. 'कारण' क० दूसरा मूलहेतु (कारण) द्वार. 'हेउपंच' क० हेतुके पांच द्वारः-तीसरा-मिथ्यात्व हेतु द्वार. चौथा अविरत हेतु द्वार, पांचवा कषाय हेतु द्वार. छठा-जोग हेतु द्वार, सातवा-समुच्चय हेतु द्वार. (२) कर्म बंध प्रकरण के ३८ द्वारः—'चउ बंध' क० प्रथम चार बंध द्वारः- "नव कम्म बंध ओ" क० कर्म बंध के ९ द्वारः - दूसरा-समुच्चय कर्म बंध द्वार. तीसरा-ज्ञानावरणीय कर्मबंध द्वार-चौथा दर्शनावरणीय कर्मबंध द्वार. पांचवा वेदनीय कर्मबंध द्वार. छठा-मोहनीय कर्म बंध द्वार. सातवा आयु कर्मबंध द्वार. आठवा नाम कर्मबंध द्वार. नवमा-गोत्र कर्म बंध द्वार. दसवा अंतराय कर्म बंध द्वार. 'धुव्व चउक्कं' ध्रुव बंध के चार द्वारः-इग्यारवा-ध्रुवकर्म बंध द्वार. बारवा-ध्रुव कर्म प्रकृत्ति बंध द्वार. तेरवा-अध्रुव कर्म बंध द्वार. चउदवा-अध्रुव कर्म प्रकृति बंध द्वार. 'घाइ छक्क' क० घातिक कर्म के छ द्वारः- पंद्रवा-सर्व घातिक कर्म बंध द्वार. सोलवा-सर्व घातिक कर्म प्रकृति बंध द्वार. सतरवा देश घातिक कर्म बंध द्वार. अठारवा-देश घातिक कर्म प्रकृत्ति बंध द्वार. उन्नीसवा-अघातिक कर्म बंध द्वार. 'पुन्न पाव दुग्गे' क० पुन्यके दो और पापके दो द्वार-इकीसवा-पुन्य कर्म बंध द्वार. बावीसवा-पुन्य कर्म प्रकृत्ति बंध द्वार. तेवीसवा-पाप कर्म बंध द्वार. चौवीसवा-पाप कर्म प्रकृत्ति बंध द्वार. 'परावत्त चउ' क० परावर्त मान कर्म बंध के चार द्वारः—पचीसवा-परावर्त मान कर्म बंध द्वार. छब्बीसवा-परावर्तमान कर्म प्रकृति बंध द्वार. सत्तावीसवा-अपरावर्त मान कर्म बंध द्वार. अट्ठावीसवा-अपरावर्तमान कर्म प्रकृति बंध द्वार. "भुयकार अप्प अवठी दुग्गे" क० भुयस्कार के दो, अल्पतरके दो, और अवस्थित के दो यों छ द्वारः—उनतीसवा-भुयस्कार कर्म बंध द्वार. तीसवा-भुयस्कार कर्म प्रकृत्ति बंध द्वार. इकतीसवा - अल्पतर कर्म बंध द्वार, बत्तीसवा अल्पतर कर्म प्रकृत्ति बंध द्वार. तेतीसवा अवस्थित कर्मबंध द्वार. चौतीसवा-अवस्थि-

त कर्म प्रकृति बंध द्वार, पैंतीसवा अव्यक्त कर्म बंध द्वार. 'बन्ध' क० छत्तीसवा-समु-
च्चय कर्म बंध द्वार, 'विच्छेद दुगे' क० विच्छेदके दो द्वार:-सैंतीसवा कर्म बंध विच्छेद
द्वार, अडतीसवा कर्म प्रकृति बंध विच्छेद द्वार. (३) कर्मोदय प्रकरण के३६ द्वार
'कम्मोदय नव" क० कर्मोदय के ९ द्वार:-प्रथम-मुक्त कर्मोदय द्वार, दूसरा-ज्ञानावर-
णीय कर्मोदय द्वार, तीसरा-दर्शनावरणीय कर्मोदय द्वार, चौथा-वेदनीय कर्मोदय द्वार,
पांचवा-मोहनीय कर्मोदय द्वार, छठा-आयु कर्मोदय द्वार, सातवा- नाम कर्मोदय द्वार,
आठवा-गोत्र कर्मोदय द्वार, नववा अंतराय कर्मोदय द्वार. 'ध्रुव चउ' क० ध्रुव क-
र्मोदय के चार द्वार:—दसवा ध्रुव कर्मोदय द्वार, इग्यारवा ध्रुव कर्म प्रकृतियोदय
द्वार, बारवा-अध्रुव कर्मोदय द्वार, तेरवा-अध्रुव कर्म प्रकृतियोदय द्वार, "पुण्ण पाव
चउ " क० पुण्यके दो और पापके दो यों चार द्वार-चउदवा-पुण्य - कर्मोदय द्वार,
पंदरवा-पुण्य कर्म प्रकृतियोदय द्वार. सोलवा-पाप कर्मोदय द्वार, सत्तरवा- पाप क-
र्म प्रकृतियोदय द्वार. 'चउ विवाग अट्ठ' क० चार विपाको के ८ द्वार:—अठार-
वा-क्षेत्र विपाक कर्मोदय द्वार. उन्नीसवा क्षेत्र विपाक कर्म प्रकृतियोदय द्वार, बीसवा
भव विपाक कर्मोदय द्वार. इक्कीसवा भव विपाक कर्म प्रकृतियोदय द्वार, बावीसवा
जीव विपाक कर्मोदय द्वार, तेवीसवा - जीव विपाक कर्म प्रकृतियोदय द्वार,
चौवीसवा-पुद्गल विपाक कर्मोदय द्वार, पचीसवा- पुद्गल विपाक कर्म प्रकृतियोदयद्वार,
'चार छक्क' क० घातिक कर्मोदय के ६ द्वार: छव्वीसवा-सर्व घातिक कर्मोदय द्वार, स-
त्तावीसवा-सर्व घातिक कर्म प्रकृतियोदय द्वार, अट्ठावीसवा - देश घातिक कर्मोदय
द्वार, उनतीसवा-देश घातिक कर्म प्रकृतियोदय द्वार, तीसवा - अघातिक कर्मोदय
द्वार, इकतीसवा-अघातिक कर्म प्रकृतियोदय द्वार. 'उदय' क० बत्तीसवा- समुच्चय क-
र्म प्रकृतियोदय द्वार. 'विछेद दुगे' कर्मोदय विच्छेद के दो द्वार :—तैंतीसवा कर्मो
दय विच्छेद द्वार, चौंतीसवा-कर्म प्रकृतियोदय विच्छेद द्वार. (४) कर्म उदीरणा प्र-
करण के १२ द्वार:— 'उदीरणा दस' क० कर्मोकी उदीरणा के १० द्वार:— प्र-
थम-समुच्चय कर्मोदीरणा द्वार, दूसरा - ज्ञानावरणीय कर्म उदीरण द्वार, तीसरा-दर्श-
नावरणीय कर्म उदीरणा द्वार, चौथा वेदनीय कर्म उदीरणा द्वार, पांचवा - मोहनीय
कर्म उदीरणा द्वार, छठा-आयु कर्म उदीरणा द्वार, सातवा-नाम कर्म उदीरणा द्वार.
आठवा-गोत्र कर्म उदीरणा द्वार, नववा-अंतराय कर्म उदीरणा द्वार, दसवा - समुच्चय
प्रकृति उदीरणा द्वार. "विच्छेद दुगे'क० व्यच्छेद के दो द्वार:-इग्यारवा-कर्म

उदीरणा व्यच्छेद द्वार, बारवा-कर्म प्रकृति उदीरणा व्यच्छेद द्वार. (५) कर्म सत्ता प्रकरण के २२ द्वारः—'सत्तानव' क.कर्म सत्ता प्रकरण के ९ द्वारः—पहिला समुचय कर्म सत्ताद्वार, दूसरा-ज्ञानावरणीय कर्म सत्ताद्वार, तीसरा-दर्शनावरणीय कर्म सत्ताद्वार, चौथा-वेदनीय कर्म सत्ताद्वार, पांचवा - मोहनीय कर्म सत्ताद्वार छठा-आयु कर्म सत्ताद्वार, सातवा-नाम कर्म सत्ताद्वार, आठवा-गोत्र कर्म सत्ताद्वार, नववा अंतराय कर्म सत्ताद्वार, 'धुव्वधुव' क. ध्रुव कर्म सत्ताके ४ द्वारः-दशवा ध्रुव कर्म सत्ताद्वार. इग्यारवा-ध्रुव कर्म प्रकृत्ति सत्ता द्वार, बारवा अध्रुव कर्म सत्तां द्वार. तेरवा अध्रुव कर्म प्रकृति सत्ता द्वार "घाइ छक्कं" क० घातिक कर्म प्रकृति सत्ता के ६ द्वारः—चउदवा सर्व घातिक कर्म प्रकृत्ति सत्ता द्वार, पंदरवा - सर्व घातिक कर्म प्रकृत्ति सत्ताद्वार, अठारवा-अघातिक कर्म सत्ताद्वार, उन्नीसवा - अघातिक कर्म प्रकृत्ति सत्ताद्वार, 'सत्त' क० वीसवा - समुचय कर्म प्रकृत्ति सत्ताद्वार, "विच्छेह दुग्गे" क० कर्म सत्ता विच्छेद के दो द्वारः—इक्कीसवा - कर्म सत्त विच्छेद द्वार, बावीसवा-कर्म प्रकृत्ति सत्ता विच्छेद द्वार, (६) कर्म भंग प्रकरण के ११ द्वारः—"भंग नव" कर्मों के भांगेके ९ द्वार-पाहिला - समुचय कर्म भंग द्वार, दुसरा-ज्ञानावरणीय कर्म भंग द्वार, तीसरा दर्शनावरणीय कर्म भंग द्वार, चौथा वेदनीय कर्म भंग द्वार पांचवा मोहनीय कर्म भंग द्वार, छठा आयु कर्म भंग द्वार सातवा नाम कर्म भंग द्वार, आठवा गोत्र कर्म द्वार, नववा अंतराय कर्म भंग द्वार, 'बंधि' क० दसावा बंधी भंग द्वार, 'इरिया' क० इग्यारवा इर्यावही भंग द्वार. (७) भावादि प्रकरण के १३ द्वारः—'भवठ'-भाव के ८ द्वारः-पहिला-मूल भावद्वार, दूसरा-उदय भाव द्वार, तीसरा उपशम भावद्वार, चौथा क्षयोपशम भाव द्वार, पांचवा - क्षायिक भाव द्वार, छठा पारिणामिक भाव द्वार, सातवा सन्नीपातिक भाव द्वार, 'श्रेणी' क० आठवा श्रेणीद्वार, 'वेद' क० नववा कर्म वेदे द्वार, 'निज्जरा' दशवा कर्म निर्जरा द्वार, 'करण' क० इग्यारवा दश करण द्वार, 'गुणसेणी' क०—बारवा गुण श्रेणी द्वार यह सब कर्मारोहण स्कन्दके १३७ द्वार हुवे.

गाथा—गइ जाइ काय दण्डग । त्तित्तिओ जीव दुय योनी कुलओ॥
सुहुम तस्स सन्नी। भासग आहारत्तिय पयाय दुग्गे ॥८॥
पाण इन्द्रियट्ठ सन्ना । वेए कसाय लेसा योग सरीर ॥

मोक्खस कारण ओ । ए एक चालीस धम्मदारा ॥१२॥

अर्थ-धर्मारोहण खण्डके ४१ द्वार :—'उवओग पंच' क० उपयोग के पांच द्वारः—प्रथम—मूल उपयोग द्वार. दुसरा-अज्ञान द्वार. तीसरा-ज्ञान द्वार. चौथा-दर्शन द्वार. पांचवा-समुचय उपयोग द्वार. दिठी' क० छट्टा दृष्टिद्वार. 'भव' क० सातवा भव्याभव्य द्वार 'चरम' क० आठवा-चरमाचरम द्वार. 'परीत' क० नववा-परितापरित द्वार. 'पयवी' क० दशवा-पदवीद्वार. 'आया' क० इग्यारवा-आत्मा द्वार' झाण' क० बारवा-ध्यान द्वार. पाय क० तेरवा-ध्यान के पाये द्वार 'दव्व' क० चउदवा-षट द्रव्य द्वार. 'परिणाम' क० पंदरवा-परिणाम द्वार. 'वीय' क० सोलवा वीर्य द्वार. 'तित्थ' क० सत्तरवा-तीर्थातीर्थ द्वार. 'समत्त' क० अठारवा-सम्यक्त्वद्वार. 'सयय' क० उन्नीसवा-संयता संयति द्वार. 'लिंग) क० वीसवा-लिंगद्वार. 'चरित्त' क० इक्कीसवा-चरित्र द्वार. 'नियंठे' क० बावीसवा - नियंठा द्वार. 'कल्प' क० तेवीसवा-कल्पद्वार. 'परिसह क० चौवीसवा-परिसह द्वार. पम्माय' क० पचीसवा-प्रमाद द्वार. 'रागी' क० छव्वीसवा-सरागी वीतरागी द्वार. पडित', क. सत्तावीसवा-पडवाइ अपडवाइ द्वार 'छउम' क० अठावीसवा-छद्मस्त वीतरागी द्वार० 'समुग्घ' क० उनतीसवा-समुद घात द्वार. 'देव' क० तीसवा-पांच देव द्वार. 'परिणामी' क० इकतीसवा-परिणामद्वार. 'करण' क० बत्तीसवा-करण द्वार. 'निवत्ती' क० तेंतीसवा-निवृत्ति द्वार. 'आसव' कहतां चोतीसवा-आश्रव द्वार. 'संवर' क० पेंतीसवा-संवर द्वार. 'निज्जराडु' क० निज्जरा के दो द्वारः—छत्तीसवा-निर्जरा द्वार सेंतीसवा-निर्जरा भेदद्वार. 'फल' क० अडतीसवा फल द्वार. 'तित्थगोय' क० उनचालीसवा-तीर्थंकर गोत्र बन्ध द्वार. 'तित्थ फास' चालीसवा- तीर्थंकर स्पर्शना द्वार. और 'मोक्ख' कहतां इकतालीसवा-मोक्ष द्वार.

गाथा—इमाओ चउ खण्डे । सव्वे दारा भवन्ति अढीसत ॥
चउदहस्स गुणठाणे । मूल मूल अत्थ अत्थओ ॥१३॥

अर्थ—ऐसी तरह से चारों खण्ड में सर्व २५२ द्वारों की रचना कर इसका मूल मतलब तो मूल काण्ड में चउदेही गुणस्थानोपर बना है. और इसका विस्तार के साथ अर्थका खुलासा समझाने अर्थ कान्ड किया गया है.

—※—※—※—※—※—

(३)जिनका कुछ अर्थ नहीं होवे जैसे-हँसने का अवाज,छींकनेका शब्द,वाजित्र काअवाज इत्यादिअर्थ शुन्य नाम.इन तीनों प्रकार के नामों में से यथार्थ नामही प्रमाण भूत सर्व मान्य होता है. सोही चतुर्दश गुणस्थान के जो प्रथम द्वार में नाम कहे सो यथार्थ नाम हैं. अर्थात् जैसा जिनोंका नाम है वैसेही उनोंमें गुण पाते हैं सो दूसरे द्वार में बताया है.

३—तीसरा-प्रश्नोत्तर द्वारका अर्थ.

किसी वस्तु के नाम के अर्थ दो तरह के होते हैं:— १ व्यवहारिक सो लोक रूढी प्रमाणे. और २ निश्चयिक सो परमार्थिकः—व्यवहारिक से अधिक मान-निय निश्चयिक नामार्थ होता है. इसलिये १४ ही गुणस्थानों के निश्चयिक नाम हैं. इन का व्यवहारिक रीति से कोइ उलट अर्थ भास होवेतो उसका निर्णय तीसरे प्रश्नो त्तर द्वार में किया गया है.

४—चौथा-प्रवेश द्वार का अर्थ.

ऐसे जो गुणों के भंडार रूप जो गुणस्थान हैं, इन में प्रवेश करने गुणज्ञ और गुण वृद्धिक जरूर ही इच्छेंगे. उनकी इच्छानुसार कार्य सिद्ध करने की रीति-अर्थात् इन गुणस्थानों में प्रवेश करनेका उपाय चौथे प्रवेश द्वार में कहा है.

इस द्वार का सम्पूर्ण खुलासा वार स्वरूप समझाने के लिये उपशमश्रेणी और क्षपक श्रेणी दोनों श्रेणीयों का स्वरूप समझाने की बहुतही आवश्यकता है. इस लिये 'सप्ततिका नामक षष्ठम् कर्म ग्रंथानुसार कुछ विस्तार से दोनों श्रेणीयोंका स्वरूप यहां दर्शाया जाता है:—

"उपयोगो लक्षणं"—इस तत्वार्थ सूत्र के फरमान मुजब जीवका जो निज स्थान लक्षण गुण है सो "उपयोग" है. अर्थात् अनादि काल से आत्मा ज्ञान दर्शन रूप स्व लक्षणों की धारक है. परंतु यह दोनोंही गुणों अनादि से अपने स्वभाव से कर्मों कर आच्छादित हो रहे हैं दबा रहे हैं. जिन के योग से यह आत्मा भ्रमित हुवा निगोद तिर्यंच नरक देव और मनुष्यों की गति में नाना प्रकार का रूप धारन कर—वेष—निवासित—हुवा सदा निजगुण की सत्ता रख ने वाले पुन्य पाप के फलों का अनेक प्रकार से अनुभव लिया. सो उपरोक्त ज्ञान दर्शन रूप उपयोगों के स्वभाविक

कर के, दूसरा स्थिति बंध करना शुरु करे. सो पीहले २ के स्थिति बंध की अपेक्षा से पल्योपम के संख्याते भाग कमी स्थिति को कर के बंधता है. ऐसीही तरह जो जो आगेको स्थिति बंध करे वो वो पहिले २ के स्थिति बंध से पल्योपम के असंख्यातवे भाग कमी २ करता हुवा स्थिति का बंध करता है.

यों करण काल के अंतर मुहूर्त पर्यंत रहकर फिर अनुक्रम से अलग २ अंतर महूर्त प्रमाण के तीन करणों करता है. जिनके नाम-१ यथा प्रवृत्ति करण. २ अपूर्व करण. ३ अनिवृत्ति करण. और चौथा उपशांत अधा होता है, सोभी अंतर मुहूर्त का ही जाणना.

१ प्रथम-यथा प्रवृत्ति करण का स्वरूप:—यथा प्रवृत्ति करण में प्रवेश करता हुवा प्राणी प्रति समय अनंत गुण विशुद्धि की वृद्धि को करता है. और ऊपरोक्त प्रकृतियों में से शुभ प्रकृतियों के बन्धादि दो स्थानी रस का चौस्थानीये रस को दो स्थानीयां कर बंध करताहै.परंतु यहां तथा विधी तत्प्रयोग्य विशुद्धि के अभाव कर १ स्थिति घात २ रसघात,३गुणश्रेणी और ४ गुण संक्रम इन चारों कामों में का एक भी काम नहीं कर सकता है अनेक जीवों की अपेक्षा कर इस करणमें प्रवृत्तने वाले जीवोंके असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाण अध्यवसाय के स्थानक प्रथमही समय में होते हैं. वो भी छस्थान पतित होते हैं. और पहिले समय के अध्यवसाय स्थानक से दूसरे समय के अध्यवसाय स्थानक विशेषाधिक होते हैं. योंही दूसरे समय के अध्यवसाय स्थानक से तीसरे समय के अध्यवसाय स्थानक अधिक होते हैं. तीसरे से चोथे समय के अधिक होवें. यों पहिले २ के समय से आगे २ के समय के अध्यवसाय स्थानक विशेषा धिक होते हैं. जिनकी जो कदापि स्थापना की कल्पना करें वो विषम चतुरस्र क्षेत्र का निरुंधन होता है. ऐसी तरह यथा प्रवृत्ति करण के अन्तिम समय तक आता है वहां तक कहना चाहीये. यहांपे अध्यवसाय के स्थानको विशुद्धिकी अपेक्षा कर के-एकेक मे छस्थान वृद्धिवन्त होते हैं वो ऐसी तरहः—यथा दृष्टान्त-दो पुरुषों ने एक साथही यथा प्रवृत्ति करण में प्रवेश किया. उसमे से एक तो सर्व जघन्य विशुद्धि की श्रेणीमें प्रतिपन्न हुवा. और दूसरा सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके अध्यवसाय स्थानक में प्रतिपन्न हुवा. उन दोनों की विशुद्धि का तारतम्यपना यहां बताते हैं-प्रथम जीव के प्रथम समय में सर्व से जघन्य मंद विशुद्धि सर्व से स्तोक (थोडी)

विशुद्धि अनंत गुण अधिक होती है, और उससे भी दुसरे समय की उत्कृष्ट विशुद्धि अनंत गुण अधिक होती है, ऐसे अपूर्व करण के अंतिम समय लग कहना. इस अपूर्व करण में प्रवेश करने वाला प्रथम समय सेहीः-स्थिति घात, २ रसघात, ३ गुण-श्रेणी, ४ गुण संक्रम, और ५ अन्यस्थिती बंध. यह ५ कामों एकही वक्त इकठे करता है, इनका स्वरूप खुलासा वार कहते हैः—

(१) स्थिति घात का स्वरूपः-जो क्रोधादि कषाय की स्थिती भोगवनी वाकी रही होवे. उसे सत्ता में से अग्रभाग की स्थिति को उकेरे अर्थात्-उसकी स्थिति भाग का अग्रस्थान उत्कृष्ट तो बहुत सागरोपम प्रमाणे होता है, और जघन्य से पल्योपम के असंख्यात वे भाग प्रमाणे होता है, उस स्थिति के खंड (टुकडे) करे, उसे उकेरना कहते हैं. ऐसी तरह उकेर कर उस के दलिये (चूरा) जो नीचेकी आद्य स्थिति खंड करने की रही है उस दल में उन दलियों को प्रक्षेप करे. यों अंतर मुहूर्त कालतक उस स्थिति खंड को उकेरे. योंही जो फिर वाकी स्थिति रहे उस के अग्रभाग से पल्योपम के असंख्यातवे भाग प्रमाण स्थिति कर के उसकादल पहिले की तरेही अंतर मुहूर्त वाकी रहे उसे नीचे की स्थिति में मिलावे. यों अंतर मुहूर्त २ की स्थिति में उसका दल मिलाते २ अपूर्व करण के काल में अनेक हजारों स्थिति खंड खप जाते हैं. तब जो अपूर्व करण के प्रथम समय में जितनी कर्म की स्थिति सत्ता थी उस से संख्यात गुण कम स्थिति सत्तारही सो स्थिति घात.

(२) रस घातका स्वरूपः—जो अशुभ कर्म का रस विन भोगवा हुवा रहा है, उस रस का अनंतवा भाग छोडकर, वाकी रहे अनुभाग के भाग अंतर मुहुर्त में खपावे - विनाश कर, फिर जो अनंतवा भाग वाकी रहा उसका अनंत वा भाग छोडकर वाकी रहे अनुभाग के सब भागों को अंतर मुहूर्त में खपावे, फिर पहले छोडा जो अनंतवा भाग उसका भी अनंतवा भाग छोड कर वाकी रहे अनुभाग के भागों को अंतर मुहूर्त में खपावे. यों अनुभाग खंड के अनेक सहश्र एक स्थिति खंड में व्यतित्ति क्रमें. और उस स्थिति खंड के अनेक सहश्र से अपूर्व करण समाप्त होवे. इस खंड के काल से स्थिति खंड का काल संख्यात गुणा अधिक और स्थिति खंड से अपूर्व करणका काल संख्यात गुण अधिक जानना,

(३) गुण श्रेणी का स्वरूपः— अंतर मुहूर्त प्रमाण कर्म स्थिति से जो ऊपरकी कर्म स्थिति वर्त रही है उस में से दलिये गृहण कर अपनी उदयावल्लिकाकी ऊपर

की स्थिति में समय २ में असंख्यातगुण २ चढता हुवा दलिक सक्रम
वो ऐसी तरह कि-प्रथम समय स्तोक, उससे दुसरें समय में असंख्यात गु
उस से तीसरे समय में असंख्यात गुण अधिक, यों जावत अंतर मुहूर्त के
मय पर्यंत कहना. यह अंतर मुहूर्त अपूर्व करण और अनिवृत्ति करण के
कुछ अधिक काल जानना. यह तो पहिले समय में ग्रहण किया उस दल का
करने की विधि बनाइ. यों दुसरे समय से लगा कर अंतिम समय पर्यंत ग्र
ग्रहित दलका भी निक्षेप कर ने की विधि-रीति जाणना. अर्थात्-जो समय
दलिक ग्रहण करे वो सब अलग २ अंतर मुहूर्त के सब अलग २ समय के द
मिलावे. यों अपूर्व करण के समय अनिवृत्ति करण के समय अनुक्र में कम हो
बाकी रहे उन में गुण श्रेणि दलिक का निक्षेप शेष बाकी रहे उस में होवे. उस
अधिक - बढे नहीं.

(४) गुण संक्रम का स्वरूपः—जो अपूर्व करण के प्रथम समय में बिना ब
यानी ऐसी जो अनंतान बंधि आदि अशुभ प्रकृति यों है उसका दल बंधती हु
ऐसी जो सम्यक्त्वादि प्रकृति उस में समय २ में असंख्यात गुण अधिक मिलावे, मिला
कर फिर पर प्रकृति रूप में परिणमावे, उसे गुण संक्रम कहते हैं. सो पहिले समय
सर्व स्तोक (सब से थोडा) संक्रमावे उस से दुसरे समय असंख्यात गुण अधिक संक्र-
मावे, यों समय २ में असंख्यात गुणाधिक २ वृद्धि पाता हुवा दलका संक्रमण करे.

(५) अन्य स्थिति बंध का स्वरूपः—अपूर्व करण के पहिले समय में जो कर्म
का स्थिति बंध कहा उसकी अपेक्षा से अपूर्व करण के दुसरे समय में जो दुसरा स्थि
ति बंध का प्रारंभ करे वो स्तोक (कमी) जाणना. इसलिये इसे अपूर्व स्थिति बंध
कहते हैं. यहां स्थिति बंध और स्थिति बंध का काल बराबर ही जानना. इन
दोनों का एकही वक्त प्रारंभ होता है. और एकही वक्त में पूरा करते हैं
यों ऊपरोक्त पांचोंही कार्य अपूर्व करण में होते हैं.

३. अनिवृत्ति करण का स्वरूपः—अनिवृत्ति करण में एकही वक्त प्रवेश
करने वाले सब जीवोंके प्रथम समय में एकसारी अध्यवसाय का स्थान होता है
अर्थात्-अपूर्व करण के प्रथम समय में जो जीव वर्तता है और जो पहिले वर्ते हैं औ-
र जो आगे को वर्तेंगे. उन सबोंका अध्यवसाय स्थानक एकसा-एक रूपीही होता है
और प्रथम समय के अध्यवसाय स्थानक से दूसरे समय के अध्यवसाय स्थान अनंत

गुणे अधिक विशुद्धि लिये होते हैं. यों जितने समय आनिवृत्ति करण के हैं उतने समय के अध्यवसाय स्थानक पीछे के अध्यवसाय स्थानक से आगे के अध्यवसाय स्थानक विशुद्धि की अपेक्षा अनंत गुणें अधिक होते हैं- इसका अनिवृत्ति करण ऐसा नाम देने का मतलब यह है कि-जो इसमें प्रवेश करते हैं. उन सबोंके अध्यवसाय स्थानक का परस्पर निवृत्ति और व्यवृत्ति न होती है, इसकी अपेक्षा से अर्थात्-भेदन होवे सबोंके एकसे अध्यवसाय होवें इसलिये अनिवृत्ति कहा है. यहां समय २ प्रति एकएक अध्यवसाय स्थानक उसके होतेहैं उसकी स्थापना मुक्तावलीकी माफिक(०-०-० -०)ऐसी करना. और यहां भी प्रथम समयसे ही स्थिति घातादि पांचोंही काम एक ही वक्तमें अपूर्व करणके जैसेही होते हैं. यों अनिवृति करणका असंख्यातवा भाग गये बाद बाकी एक भाग रहे तब अनंतान बंधीकी नीचेकी उदयावली की मात्र स्थिति को छोड कर बाकी अंतर मुहूर्त प्रमाणसे संक्रमा कर भोगवता है. जैसे मनुष्य गति में बाकी की तीनों गति को संक्रमा कर अजोगी केवली भोगवते हैं. उसेही स्तिबुक संक्रम कहते हैं. अन्त करण को अभिनव स्थिति बंध के काल प्रमाणको अंतर मुहूर्त का करते हैं. अर्थात् वो अंतर मुहूर्त नवीन स्थिति बंधाद्धा समान जानना. वो अंतकरण के दलिक को उकेर कर पर प्रकृति बंधाती है उसमें संक्रमावे और प्रथम स्थिति का दलिक आवलिका मात्र सो वेद्यमान उदयावलि पर प्रकृति में स्तिबुक संक्रम कर संक्रमावे. ×

अब अन्तकरण किये बाद दूसरे समय में अनंतान बंधि की ऊपर की स्थिति का दलिया उपशमाना शुरु करे. वो ऐसी तरह कि-पहिले समय में स्तोक उपशमावे, दूसरे समय उन से असंख्यात गुणा उपशमावे. उसे संक्रमा कर भोगवे. जैसे मनुष्यगति में बाकी की तीनों गति को संक्रमा कर अयोगी केवली द्विचरम समय में भोगवते हैं. वैसे यहां भी जानना. यों समय २ में असंख्यात २ गुण अधिक बढता हुवा उपशम करता हुवा अंतर मुहूर्त के अंतिम समय अनंतान बंधिका सर्वदल उपशमित होता है. जैसे धूल के पुंज को पानी की बून्दों से सींच २ कर घनादिक से कूट २ कर सूक्ष्म(बारीक.) करे. वो ऐसा बारीक करे कि उसे कोइ उड़ा

+ जो अनुदयी प्रकृति का दल है उस को उदयवंत प्रकृति में डालते हैं, उसे ही स्ति-बुक संक्रम कहते हैं.

नहीं कर सके. तैसे ही कर्म रूप रेणु (धूल) के समूह को विशुद्धि रूप पाणी के
-भाव से भींच २ कर अनिवृत्ति करण रूप घन से कूट २ कर ऐसा सूक्ष्म करे कि
वो फिर बंधन-संक्रमण-उदय उदीरणा-निद्धत और निकाचनादिक करण को मात
होने अयोग्य होवे. उसे अनंतान बंधिकी उपशमना कहना.*

* [अब यहां-कितनेक आचार्य कहते हैं कि अनन्तान बन्धि की उपशमना तो नहीं
होती है, परन्तु विसयोजनाही होती है. विसयोजना भी क्षपण विशेष को कहते हैं.
जिसका स्वरूप ऐसा है.---श्रेणिको अप्राप्त हुवे ऐसे चारों गति के सन्नि पचेन्द्रिय पर्याप्त
अविरति सम्यग्दृष्टि जीवों तथा तिर्यंच और मनुष्य इन दोनों गति वाले देश विरति जीवों,
तथा प्रमत और अप्रमत मनुष्यों, अनन्तान बन्धि की चारों कषायोंको क्षपानेके लिये जैसे
पहिले कहा वैसेही यथा प्रवृत्ति आदि तीनों करणों करे, परन्तु इतना विशेष जो अनिवृत्ति
करण में प्रवेश किया हुवा अन्तर करण नहीं करता है, परन्तु उद्वलना संक्रम कर खपावे
सो उद्वलना संक्रम का स्वरूप कहते है.

[उद्वलमान संक्रम का स्वरूप ---अनन्तान बन्धि आदि कर्म प्रकृति का दल प्रथम स-
मय पल्योपम के असंख्यात भाग प्रमाण स्थिति खण्ड है उसको अन्तर मुहूर्त उकेर कर दूसरी
प्रकृतिमें संक्रमावे. योंही दूसरे समय दूसरा स्थिति खण्ड करके उसका कुछ भाग दूसरी प्रकृतिमें सं-
क्रमावे, और कुछ भाग अपनी नीचेकी स्थितिमें संक्रमावे. परन्तु दूसरी स्थितिमें जितना स-
उसमें अपनी नीचेकी स्थिति जो संक्रमावेसो असंख्यात गुणा जानना. यों समय२ मेंस्थिति
कोतो पीछे २ के स्थिति खण्ड की अपेक्षा-विशेष हीन दल्की अपेक्षा अनन्त गुणा होना
और संक्रमाने के समय में भी अपनी नीचे की स्थिति में असंख्यात गुणा संक्रमाते हैं न
दूसरी प्रकृति में विशेष हीन २-(कम) करता २ संक्रमावे, यों द्विचरम समय तक संक्रमा
हैं. और अन्तिम समय में तो अपनी स्थिति बाकी न रही उस में सब दल को दूसरी प्र
कृति में संक्रमाते हैं, ऐसेही सर्व संक्रम-याने उद्वलमान संक्रम कहते हैं.]

यों उद्वल संक्रमण कर आवलिका मात्र बाकी छोड कर सब अनन्तान बन्धिको खपा-
वे. और सो आवलि मात्र रहा है उसे स्तिबुक संक्रम कर वेदमान प्रकृति में संक्रमा कर
खपावे. उसे अनन्तान बन्धिकी विसयोजना कहते हैं. सो अन्तर मुहूर्त के बाद अनिवृत्ति क-
रण के अन्त में बाकी रहे कर्म के-स्थिति घात,रसघात और गुण श्रेणी होती नहीं है क्योंकि
वो भी स्वभावस्थही रहते हैं. अर्थात सूक्ष्म अवस्था में रहते हैं. ऐसी तरह से अनन्तान
बंधी की विसयोजना होती है.]

अब दर्शन मोहनीय त्रिकको उपशमाने की रीति कहते हैं:—

मिथ्यात्वकी उपशमना तो मिथ्यात्वी के तथा क्षयोपशम सम्यक्त्वी के इन दोनों कोही होतीहै. और सम्यक्त्व तथा मिश्र मोहनीय की उपशमना क्षयोपशम सम्यक्त्वी के ही होती है. इसमें मिथ्यात्वी के तो ग्रन्थिभेद करने प्रथम उपशमसम्यक्त्व की प्राप्ति करने वालेके मिथ्यात्व की उपशमना जैसे होती है उसकी रीति कहते हैं:- कोई सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्ता करण काल के पहिले अन्तर मुहूर्त काल पर्यन्त समय २ में अनन्त गुणावृधी गत विशुद्धि में प्रवर्तता ऐसा अभव्य सैद्धिक जीवकी विशुद्धि की अपेक्षा अनन्त गुण विशुद्धिवन्त ऐसा मति अज्ञान, श्रुति अज्ञान और विभंगज्ञान इन में के किसी भी साकार उपयोग युक्त और मनादि तीनों जोगों में से किसी भी जोग युक्त प्रवर्तता जघन्य परिणाम से-तेजुलेश्यामें. मध्यम परिणाम से पद्मलेश्या में और उत्कृष्ट परिणाम से शुक्लेश्या में प्रवर्तता. मिथ्यात्व दृष्टि चारों गतिमें से किसी भी गति वाला. कुछ कम एक कोडाकोडी सागरोपम की स्थिति सातों कर्मोंकी बाकी रहे. इत्यादि सर्व पहिले कीही तरह जहां तक यथा प्रवृत्ति करण और अपूर्वकरण यह दोनों मिथ्यात्व उपशमाने को पूर्ण करे तहां तक कहना. परन्तु यहां इतना विशेष कि-अपूर्वकरण में गुण संक्रमण करता नहीं है. फक्त-स्थितिघात, रसघात गुणश्रेणी. और अन्यास्थिति बन्ध यह चारों कामही प्रथम से प्रारंभ करता है. और गुणश्रेणी दलिक रचना भी उदय समय से लगाकरही जानना. और फिर अनिवृत्ति करण में भी ऐसेही कहना. फिर अनिवृत्ति करणाद्धा के संख्याते भाग गये बाद और फक्त एकही संख्यातवा भाग रहे तब मिथ्यात्व की नीचे की प्रथम स्थिति आनना न बन्धि की तरह अन्तर मुहूर्त मात्र नीचे छोड कर. ऊपर अन्तर मुहूर्त मात्र अभिनव स्थिति बन्ध के अन्तर मुहूर्त जितनी (पहिली स्थिति के अन्तर मुहूर्त से कुछ अधिक) अभिनव स्थिति के बन्ध के काल जैसी, ऐसी मिथ्यात्वकी अन्तकरणाद्धा करे. वो अन्तकरण वाला कर्मदल कुछ उकेर के पहिले की स्थिति में मिलावे, और कुछ दूसरी ऊपरकी स्थितिमें मिलावे. वहां पहिले की स्थिति में वर्तता जीव ऊदीरणाका प्रयोग कर प्रथम स्थितिका दल उदया वालिका के ऊपरका है उसे आकर्ष कर उदया वलिका में मिलावे-उसे ऊदीरणा कहते हैं. और जो दूसरी स्थिति के नजदीकसे ऊदीरणा प्रयोग करके उसमें का दल आकर्ष (खेंच) कर उदया वालिका मे मिला-भोगवे. अब उदय और ऊदीरणा करके प्रथम स्थितिका दल भो-

इन के कर ने का सव स्वरूप ऊपर कहे मुजव ही जाणना, विशेष में इतना हैकि जो अपूर्व करण में गुण संक्रमे तो बंध नहीं होवे ऐसी सव अशुभ प्रकृत्ति को प्रवर्ते. और अपूर्व करणद्धा के असंख्याते भाग गयेवाद - निद्रा, प्रचलाका बंध विच्छेद होने वाद वहुल स्थिति खंडों को अति क्रमणे से - अपूर्व करणद्धा के संख्यात भाग गये वाद वाकी एक भाग रहे तव - देव द्विक, पचेंद्रिय जाती, वैक्रिय द्विक, आहारक द्विक, तेजस. कार्मण, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरू लघु चतुष्क, त्रस नवक, आदेय, निर्माण, और जिननाम इन ३० प्रकृतियों का बंध विच्छेद होता है उस के वाद स्थिति खंड प्रथक्त्व जानेसे अपूर्व करण के अंतिम समय - हांस्य, रति, भय और जुगुप्सा इन चारों प्रकृत्तियोंका बंध विच्छेद होने. हांस्य रति अरति शोक, भय और जुगुप्सा इन छः प्रकृत्तियोंका उदय रहता है.

यहां सर्व मोहनीय कर्म के अंतिम समय - देशोपशमना, निधत्ति, निकाचनना, करण का विच्छेद होवे तव आगे के समयमें अनिवृत्ति करण में प्रवेश करता है; वहां भी स्थिति घात आदिक पांचों कामों पहिले कहे हैं उसही तरह से कर ते हैं. सो अनिवृत्ति करणद्धा के संख्याते भाग गये वाद चारित्र मोहनीयकी २१ प्रकृत्तिका अंतर करण करता है. उस वक्त संज्वलकी चौकडी में की जो कषाय उदयको प्राप्त होवे वो कषाय और तीनों वेदों में सो जो वेद उदय को प्राप्त होवे सो वेद, इन दोनों प्रकृत्ति की प्रथम स्थिति अपने उदय काल के प्रमाण जितनी होती है उन दोनों को छोड कर वाकीकी जो १९ प्रकृत्ति जिसका उदय नहीं है उनकी प्रथम स्थिति आवलिका मात्र होती है, वहां अपने उदय कालका प्रमाणका अल्पा वहुत कहते हैं:-

तीनों वेदों में से स्त्री वेदका और नपुंसक वेदका उदय काल थोडा होता है और स्वस्थान में परस्पर तुल्य होता है. उन से पुरुष वेदका उदय काल संख्यात गुणा अधिक जानना. उस से संज्वलका क्रोधका उदय काल विशेषाधिक, उस से संज्वल के मान का उदय काल विशेषाधिक, उस से संज्वल की माया का उदयकाल विशेषाधिक उस से संज्वल के लोभका उदयकाल विशेषाधिक, इस में जो सज्वला के क्रोध के उदय में उपशम श्रेणीका आरंभ करे. उस के जहां लग अप्रत्याख्यनी और प्रत्याख्यानी इन दोनों क्रोधका उपशम नहीं होवे वहां लग संज्वलके क्रोधका उदय होता है, ऐसेही जो संज्वल के मानोदय में श्रेणी का आरंभ करे उस के जहां

स्थिति गत करके वेदे. उसही समय से लगाकर तीनों माया का उपशम करने लगे वोभी मान की तरह एक आवली रहे संज्वलकी माया का बंध उदय उदीरणा विच्छेद होवे उस समय अप्रत्याख्यानीय प्रत्याख्यानीय माया उपशांत होवे तब मोहनीय की २४ प्रकृत्ति यों का उपशांत हुवा.

उस वक्त संज्वल की माया का प्रथम स्थिति गत एक आवली तथा समय कम आवलिकाद्विक में बंधा हुवा जो उपर की स्थिति गत दलिक उसको छोड कर बाकी रहा सर्व उपशांत होवे. फिर प्रथम स्थिति गत एक आंवालिका को स्तिबुक संक्रम कर संज्वल के लोभ में संक्रमावे. और समय कम दो आवालिका बंधे हुवे दलिक को पुरुष वेदमें उपर कहे मुजबही उपशमावे, यों संक्रमावे. फिर समय कम दो आवलिका संज्वल की माया उपशांत होवे तब मोहकी २५ प्रकृत्ति का उपशांत हुवा.

जिस वक्त संज्वल की माया का बंध उदय उदीरणा का विच्छेद हुवा तदनंतर दुसरे समय में ही संज्वल के लोभ की दुसरी स्थिति में सें दलका आकर्षन कर प्रथम स्थिति को रचे उस प्रथम स्थिति लोभ वेदनाद्धा के तीन विभाग दो प्रमाण से करे—उस में प्रथम विभाग का नाम - अश्वकरणाद्धा और दूसरे विभाग का नाम - किट्टि करणाद्धा.

प्रथम अश्वकरणाद्धा विभाग में वर्तता आत्मा पूर्व स्पर्द्धक ÷ में से दल ग्रहण कर अपूर्व स्पर्द्धक करें. उस स्पर्द्धकी उपरकी वर्गणा के रस विभाग से एक रस विभाग ज्यादा या दो रस विभाग ज्यादा. रस विभाग सहित यों जावत सब जीवों से अनंतगुणा पर्यंत में एक रस विभाग कम रसोपेत कर्म स्कंध दल नहीं मिलता है.

÷ स्पर्द्धक का स्वरूप—जीव अनन्त कर्म प्रमाणु से निष्पन्न स्कन्ध उसे कर्म पणे ग्रहण करता है, वहां एकेक कर्म स्कन्ध में जो सबसे जघन्य रस है उस के दो विभागकी केवल ज्ञानी भी कल्पना नहीं कर सकें. ऐसा बारीक छेदता हुवा सब जीवों को रस का विभाग देता है. और ऐसेही बरोबरी के जघन्य रस के कर्म स्कन्ध दल उसका समुदाय उसे वर्गना कहते हैं, उस से एक रस विभाग चडता कर्म स्कन्ध की दूसरी वर्गना. उस से दो रस विभाग चडते कर्म स्कन्धकी तीसरी वर्गना. यों एकेक रस विभाग चडती २ वर्गना करता अभव्य से अनन्त गुनी आधिक और सिद्ध से अनन्त गुणहीन प्रमाण वर्गना का समुदाय उसे स्पर्द्धक कहते हैं

शमावे. अन्तिम समय में संज्वल के लोभ का उपशांत होवे, उसही वक्त-५ ज्ञानावरणीय की ५ अंतराय की. ४ दर्शनावरणीय की. ऊँच गौत्र और यशः कीर्ति इन१६ प्रकृत्ति यों के बंधका व्यवच्छेद करे. उस वक्त बाद दुसरेही समय में उन महात्मा ओंको उपशांत कषायी कहे जाते हैं क्यों कि यहां ही मोहनीय की सर्व २८ही प्रकृत्तियोंका सर्वतः उपशांत होता है.

वो उपशांत कषायी महात्मा जघन्य से तो एक समय ही रहे, और उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त पर्यंत रहे. फिर तो जरूरही पतन को प्राप्त होते हैं. वो पतन दो तरह से होता हैः— एक भव से और दुसरा काल से.

(१) जिसका आयु पूर्ण होजावें उसवक्त मनुष्य भवका क्षय होने से मरकर अनुत्तर विमान में देवता होवे. वहां प्रथम समय मेंही बंध सक्रमणादी आठों कारणों फिर उदय प्रवर्तावे. वो सीधाही इग्यारवे गुणस्थान से चौथे गुणस्थान परही आकर टेहरता है. परंतु बीच में के गुणस्थानोंको बिलकुलही स्पर्शता नहीं है. और उपशम सम्यक्त्वसे पडकर उसही समयमें वेदक सम्यक्त्वी होताहै, सो भव क्षय पडवाइ जानना- और (२) इग्यारवे गुणस्थान का जो अंतर मुहूर्त का काल है सो पूर्ण भोग कर उपर जाने के रस्ते के अभाव से वो वहां से पीछे पडे, हो जहां २ बंध उदय उदीरणा की प्रकृत्ति का व्यवच्छेद हुवा है तहां२ से पीछा करता जिस तरह से चडेथे वैसीही तरह पीछा पडे, वो पडते हुवे कोइ प्रमत होवे, कोइ अविरति होवे और कोइ— सास्वदानी होकर मिथ्यात्व में भी आते हैं.

यह उपशम श्रेणी एक भव में उत्कृष्ट दो वक्त करते हैं, परंतु जो दो वक्त उपशम श्रेणी करते हैं वो निश्चय से उस भव में क्षपक श्रेणी नहीं करते हैं, परंतु एक वक्त उपशम श्रेणी कर दुसरी वक्त क्षपक श्रेणी करलेवें तो कुछ ना नहीं है.

"क्षपक — श्रेणी."

क्षपक श्रेणी में प्रवर्त ने वाले महात्मा मनुष्य की-आठ वर्ष से अधिक उम्मर वज्र वृष नाराच संघयण, शुद्ध ध्यान वंत, अविरति-देश विरति-प्रमत्त संयति अप्रमत्त संयती इन में से कोइ भी होवो, परंतु इतना विशेष कि-जो केवल अप्रमत्त संयति ही होवेतो पूर्वके जानकार होवे, और शुक्ल ध्यान उपगत होवे. और दुसरे सव धर्म ध्यान उपगत होते हैं. ऐसे जीव शुभ योगमें वर्तते क्षपक श्रेणीका आरंभ करते हैं. वो प्रथम अनंतान बंधि चौकको विसंयोजना कर खपावे, इस विसंयोजना करनेकी विधि पहिले कर आये हैं वैसेही जाणना तदनंतर-तीनों मोहनीयको क्षपाने प्रवर्त होवे. वहां यथा प्रवृत्ति आदि तीनों करणों पहिले कहे वैसीही तरहसे करे. परंतु इतना विशेष जो अपूर्व करणके पहिले समय सेही अनुदित मिथ्यात्व और मिश्रका दल वो उदय वन्त सम्यक्त्व मोहनीय में गुण संक्रमण कर संक्रमावे, और उन दोनों का उद्वल अर्थात् संक्रमण करना शुरु करे. उस वक्त प्रथमतो वडे २ जो स्थिति खण्ड हैं उनको उवेले. उस से दुसरा स्थिति खण्ड वहुत कम उवेले. उस से भी तीसरा वहुत कम उवेले यों अपूर्व करण के अंतिम समय पर्यंत उवेलना करे. इसमें जो अपूर्व करण के पहिले समय जो स्थिति का सत्तावन्त होवे उस से असंख्यात गुण कम स्थिति का सत्तावंत होवे.

तदन्तर दुसरे समय में अनिवृत्ति करण में प्रवेश करे, वहां भी स्थिति घात आदि सर्व पूर्वोक्त विधि प्रमाणे ही कर ते हैं. अनिवृत्ति करण के प्रथम समय में दर्शन त्रिक का भी देशोपशमना निद्धति-निकाचनाका व्यवच्छेद करे; वहां प्रथम समय मे दर्शन मोहनीय त्रिककी स्थिति सत्ताका घात करता २ सहश्रों गम स्थिति खण्ड गये वाद, वाकी जिस वक्त असंज्ञी पचेन्द्रिय की स्थिति सत्ता समान स्थिति रहे. फिर उतनेही स्थिति खण्ड के सहश्रों गम गये वाद चौरिन्द्रिय की स्थिति समान सत्ता रहे. फिर उतनेही स्थिति खण्डके सहश्रों गम गये वाद, तेन्द्रिय की स्थिति समान सत्ता रहे. फिर उतने ही स्थिति खण्ड के सहश्रों गम गये वाद बेन्द्रिय की स्थिति जितनी सत्ता रहे. फिर भी उतनेही स्थिति खण्ड के सहश्रों गये वाद पल्योपम के असंख्यातवे भाग प्रमाणे दर्शन त्रिक की स्थिति सत्ता रहे, तदन्तर तीनो दर्शन मोहनीय का भी प्रत्येक एकेक संख्यातवा भाग छोड कर वाकी की सर्व स्थिति खपावे तदन्तर फिर भी वाकी छोडा हुवा संख्यात भाग का एक संख्यात वा भाग

छोडकर बाकीकी सर्व स्थिति की घात करता २ स्थिति घात के बहुत सहस्र अति-क्रमें उसवक्त मिथ्यात्व के असंख्यात भाग का खन्डन करे और मिश्र मोह तथा स-म्यक्त्व मोह का संख्यातवा भाग का खण्डन करे. उस के बाद यों बहुत स्थिति खण्ड गये बाद, जिसवक्त मिथ्यात्व का दल आवलिका मात्र रहे, और मिश्र मोह तथा सम्यक्त्व मोह का दल पल्योपमके असंख्यातवे भाग प्रमाणेही रहता है.

अब स्थिति खण्ड के दल को खण्डन करने की प्रत्येक विधि कहते हैं:— खण्डन किये हुवे ऐसे मिथ्यात्व के दल उनका मिश्र और सम्यक्त्व दोनों में प्रक्षेप करे. और मिश्रका दलतो फक्त सम्यक्त्व मेंही प्रक्षेप करे, और सम्यक्त्व का दल सम्यक्त्व अपने नीचे की स्थिति में प्रक्षेप करे. उसके बाद जो मिथ्यात्व का दल आवलि मात्र रहा है. उस भी स्तिबुक संक्रम कर सम्यक्त्व में संक्रमावे. तब मिथ्या-त्व क्षीण होवे. उसके बाद मिश्र का तथा सम्यक्त्व का असंख्याते भाग कर के उस के खण्डमें बाकी एक भाग रक्खे. फिर उस के भी असंख्यात भाग कर एक भाग बाकी रक्खे. और सर्वों का खण्डन करे. यों कर ते २ कितनेक स्थिति खण्ड गये बाद, मिश्र मोहनीय एक आवलिका मात्र रहे. उस वक्त सम्यक्त्व मोहनीय की स्थि ति सत्ता आठ वर्ष प्रमाण की रहे उस वक्त निश्चय नय के मत से तो सर्व विघ्नोंका नाश हो गया ! इसलिये इसे दर्शन मोहनीय का क्षपक (क्षायिक) सम्यक्त्वी) कहना

तदनन्तर-फिर भी सम्यक्त्व के स्थिति खण्ड को अंतर मुहूर्त प्रमाण उकेरे, उसका दल उदय समय से आरंभ कर सर्व स्थिति सत्ता समय २ संक्रमावे. उस में भी उदय समय सब से थोडी संक्रमावे. उस से दुसरे समय असंख्यात गुण अधिक उस से तीसरे समय असंख्यात गुण अधिक, यों समय २ असंख्यात गुण अधिक २ संक्रमाता २ इस गुण श्रेणी के मस्तक पर्यंत जाणना. उसके बाद ऊपर तो वि-शेष २ हीन जहां लग स्थिति का अंतिम समय होवे वहां लग संक्रमावे, यों अंतर मुहूर्त २ प्रमाण अनेक स्थिति खण्डों को उकेरता है. और निक्षेपण भी करता है, वो स्थिति दल में संक्रमाता द्विचरम स्थिति खण्ड पर्यंत जावे. उस द्वीचरम स्थिति खण्ड मे अन्तिम खंड असंख्यात गुणा करे; वो अन्तिम स्थिति खण्ड जिस वक्त उकेरे उसे क्षपक कृत करण ऐसा नाम कहना. इस कृत करणाद्धा में वर्तता ऐसा जीव, किसी पूर्व आयुका बंध किया होतो वो आयु क्षय हुवे मरकर चारों गति में की कि-सी भी गति में अवतार लेना है. और लेश्या के विषे पहिले तो शुक्ल लेश्या में था

और जो आयु विना बन्धे क्षपक श्रेणीका आरंभ करे तो वो अवल इन सप्तक का क्षयकरे तो वो नियमा से अनुपरत परिणाम वन्त—चडते परिणाम से आगे चारित्र मोहनीय की प्रकृत्तियों को क्षपाने उद्यम कर. तब—यथा प्रवृत्ति आदि ती नो करणों (उपशम श्रेणी में कहे मुजवही यहां) करे. यहां अप्रमत्त गुणस्थान मे य था प्रवृत्ति करण, अपूर्व करण गुणस्थान में अपूर्व करण और आनि वृत्तिवादर गुण. स्थान में अनिवृत्ति करण करे. वहां अपूर्व करण में स्थिति घात आदि कर अप्रत्या- ख्यानी चौकडी और प्रत्याख्यानी चौकडी की आठों कषायों को ऐसी तरह क्षपा वे कि-जो अनिवृत्ति करणाद्धा के प्रथम समय मेंही उस कषायाष्टक की पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण मात्र स्थिति बाकी रहे. फिर-थीण द्विविक. नरक द्रिक. ति र्यंच द्रिक, पाहिली चार जाति. स्थावर नाम. उद्योत नाम. सूक्ष्म नाम. साधारण नाम नरगाति और तिर्यचगाति तत्प्रायोग नाम कर्म की १३ प्रकृत्ति, तथा पूर्वोक्त थीणाद्रि विक सो दर्शनावरणी की यों सब १६ प्रकृत्ति यों को उद्वल ना संक्रमकर प्रति समय उवेल २ जब पल्योपम के असंख्यातवें भाग जितनी भी स्थिति वहां रहे तब उन १६ प्रकृत्तियों को प्रतिसमय वन्धती हुइ अन्य प्रकृत्ति में गुणसंक्रमण कर सं क्रमा २ कर क्षीण करता २ अनिवृत्ति वादर गुणस्थान के संख्याते भाग गये वाद बाकी एकही भाग रहे तब उन सब प्रकृत्तियों का क्षय करे.

(यहां आचार्यो के दो मत हैं:—(१) अप्रत्याख्यानी चौकडी और प्रत्या- ख्यानी चौकडी जो पहिले खपानी शुरु करी थी परन्तु अभीतक क्षय हुइ नहीं. उस के बीच में पहिलेही उन १६ प्रकृत्तियोंका क्षय किया, और (२) यह १६ प्रकृत्तियों का क्षय करती वक्त ही बीच में उन आठों प्रकृत्ति का क्षय कर दिया ऐसाभी कि- तनेक आचार्योंका फरमान है.)

आठ या शोले कषाय खपायेबाद अन्तर मुहूर्त में ९ नो कषाय और संज्वल की चौकडी का अन्त करण करे. फिर नपुंसक वेद की ऊपर की स्थिति वाला दल उवेलने की विधि सेही खपाना शुरु करे. वो अंतर मुहूर्त में उवेलता २ पल्योपम के असंख्यातवे भाग प्रमाण जब स्थिति रहे तब वंधती हुइ प्रकृत्तियोंमें उसका दल गुण संक्रमकर संक्रमावे, यों करते अंतर मुहूर्तमें उसका सर्वतः नाश होवे. फिर वो नपुंसक वेद की नीचे की स्थिति का दल जो नपुंसक वेदके उदय में श्रेणीका प्रारंभ किया हो तो वेद २ कर खपावे. अन्यथा तो आवली मात्र रहे तब उसे उदयवन्त वध्यमान प्रकृ

भी अल्पज्ञों को समझाने स्थूल भेद की अपेक्षा-अनन्त कल्पना से एके क कषाय की तीन २ कल्पना कल्पनी तब १२ किट्टि होवे. यह तो क्रोधसे क्षपक श्रेणी आरंभे उस आश्रिय कहा.

और जो मानोदय में श्रेणि प्रतिपन्न होवे तो उसे उद्बलन अनेक प्रकार की विधिकर क्रोधका क्षय कियेबाद् बाकी रही तीनो कषाय की ऊपरोक्त विधिसे ९ किट्टि करे. और जो माया के उदय में श्रेणिका आरंभ करेतो क्रोध और मान इन दोनों को उद्बलन विधिकर खपाने से बाकी रही दोनों कषाय को ६ किट्टिकरे. जो लोभके उदय में श्रेणिका आरंभ करेतो क्रोध मान माया इन तीनों को उद्बलन विधिकर उद्बेलकर खपावे, बाकी रहे एक लोभकी ही ३ किट्टि करे. यह किट्टि करने की विधि कही.

यह किट्टि करणाद्धा पूर्ण हुवे बाद किट्टिवेदना अद्धा में प्रवेशकीया हुवा जो क्रोध में श्रेणीका आरंभ करे तो वोक्रोध की दूसरी स्थिति में रहा हुवा प्रथम किट्टिका दलिया दूसरी स्थिति में से आकर्ष प्रथम स्थिति गत करके वो जहां तक एक समय अधिक एक आवलीरहे वहां तक वेदताहै. फिर उनके अन्तर समयमें ऊपरकी दूसरी स्थिति में रहा हुवा दूसरी किट्टि का दल उनको आकर्षकर प्रथम स्थिति गत कर के वोभी एक समय अधिक एक आवली रहे वहां तक वेदे. फिर ऊपर की स्थिति तीसरी किट्टि के दल को आकर्षकर प्रथम स्थिति गत कर वेदताहै. यों तीनो किट्टिवेदनाद्धा में ऊपर की स्थिति के दलिक को गुण संक्रम कर प्रति समय असंख्यात गुण वृद्धि युक्त संज्वल के मान में प्रक्षेप करे, यों तीनरी किट्टि के आद्धाके अन्तिम समय में संज्वल के क्रोधका बन्ध उदय उदीरणा का साथही व्यवच्छेद होताहै. और म-णमें भी अन्तिम समय कम दो आवलिका बन्धा हुवा दल रहा है उस सिवाय दूसरा नहीं है. क्यों कि सब प्रक्षेप मान में होगया है; उसे आगे के समय में मान की दूसरी स्थिति में से प्रथम किट्टिका दल आकर्ष कर प्रथम स्थिति करके अन्तर्मुहूर्त तक वेदते हैं. वहां जो क्रोधका दल बाकी रहा है उसे एक समय कम दोआवलिका गुणसंक्रम कर संक्रमावे और अन्तिम समय तो सर्व संक्रम कर संक्रमावे. अर्थात् यहां क्रोध का क्षय हुवा.

वैसे ही मानकी प्रथम किट्टि का दल प्रथम स्थिति में किया हुवा है उसे वेदते २ एक समय अधिक एक आवली बाकी रहे तब फिर दूसरे समय में मानकी ऊपर की

१६ मकृत्ति की सत्ताकी स्थिति सर्व अपवर्त्त मान मे अपवर्तन कर अर्थात्-घटा कर क्षीण कषाय के अद्धा जितनी करे, परन्तु निद्रा द्विक की स्थिति स्वरुपकी अपेक्षा मे एक समय कम करे, और कर्म रुपसे बराबर होवे. सो कषाय अद्धा अभीभी अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है. उस वक्त उन १६ मकृत्तियों के स्थिति घातादि विराम पावे. परन्तु जो दूसरी बाकीं रही स्थिति है उसके स्थिति घातादि कायम है. इन १६ मकृत्ति की उदय ऊदीरणा करके वेदते २ एक समायधिक आवली मात्र बाकी रहे वहां तक वेदे. फिर ऊदीरणा से भी विराम (निवृत्ति) पावे. उस वक्त एक आवली मात्र फक्त उदय करके ही वेदते हैं. वो भी क्षीण कषाय के द्विचरम × समय पर्यन्त फिर उन द्वि चरम समय में—छद्मस्त (ढकी हुइ) अवस्थामेंही निद्रा और प्रचला कानाश करे-सत्ताकी अपेक्षा से क्षय होवे, फिर-५ ज्ञानावरणीय, ४ दर्शनावरणीय ५अन्तराय इन १४ मकृत्ति का छद्मस्त अवस्था के अन्तिम समय में घात करे.

यों इन १४ मकृत्तिका क्षय होतेही दूसरे समय में व्यवहार नय के मतानुसार सयोगी केवली भगवन्त होते हैं ! और निश्चय नय के मतानुसार तो उसही समय में केवली गिनेजाते हैं ! उस केवल ज्ञान रुप महादिव्य जगत्—चक्षुकर लोकालोक के सर्व द्रव्य क्षेत्र काल भाव और भवों को सर्वांश कर देखते जानते हैं. इस वक्त जो परम पुण्यात्मा जीव तीर्थंकर गौत्र का उपार्जन कर के आये होते हैं उनके यहां *अष्ट प्रतिहार्य, ३४ अतिशाय, ३५वाणी गुण. इत्यादि गुणों की माप्ती होती है. यह सामान्य केवली के नहीं होते हैं. यह जघन्य तो अन्तर मुहूर्त पर्यन्त उत्कृष्ट देशऊणा (८ वर्ष कम) क्रोड पुर्व पर्यन्त भूमण्डल में सुखसे विहार करके सत्य धर्म को पूर्ण प्रकाश में लाते हैं.

इन केवल ज्ञानी भगवन्तों में से जिनके आयु कर्म थोडा होवे और वेदनीय कर्म अधिक होवे तो ८ समयमें समुद्घात हो वो कर्म बरोबर होजाते हैं. समुद्घात हुवे बाद अन्तर मुहुर्त बाद व उत्कृष्ट ६ महीने बाद मुक्ति माप्त करतेहैं. और बहुत से केवली भगवन्त विना स मुद् घात कियेही मुक्ति माप्त कर तेहै.

फिर दोनों प्रकार के केवली भगवन्त भी भवोप गृही कर्मों के क्षय करने के

× अन्तिम समय के पहिले के समय को " द्विचरम " कहा जाता है * सामान्य केवली के और तीर्थंकर के फक्त इन गुणों की ही न्युन्याधिक ताहै बाकी तो सर्व गुण बरोबर होते हैं.

लिये—लेश्यातीत, अत्यन्त अप्रकम्प्य. परम निर्ज्जरा का कारण ऐसा शुक्लध्यानका तीसरा पाया ध्याते हुवे योगोंका निरुंधन करना शुरु कर देते हैं. प्रथम वादर वचन जोग का निरुंधन करने को प्रवर्ते. वहां वादर काया योग कर के वादर मन योग का और सुक्ष्म मन योग कर के वादर वचन योग को रुंधन करे. फिर सूक्ष्म काया योग कर वादर काया जोग का रुंधन करे. फिर उसही कर के सूक्ष्म मन जोग का रुंधन करे. फिर सूक्ष्म वचन जोग का रुंधन करे. फिर सूक्ष्म काया जोग का रुंधन करते सूक्ष्म क्रिया अप्रतिपाती नामक शुक्ल ध्यान के तीसरे पाये करके उदारीक शरीर के अन्दर रहे हुवे प्रदेशों के छिद्रों को आत्म प्रदेशों को घन रुप कर पूर्ण करे (खड्डे—तुरे) तब दो भागके प्रदेशों घन होने मे मूल शरीर मे तीसरे भागके जितनी अवघेहना उन आत्म प्रदेशों की घन रुप होकर रहजाती है. इसहीं ध्यान में प्रवर्त ते हुवे स्थिति घातादि कर सयोगी केवली गुणस्थान के अन्तिम समय—एक आयुष्य विना बाकी के तीनों कर्मों को अयोगी गुणस्थान की अवस्था है वैसे स्थिति बन्त करे; परन्तु इतना विशेष—जिनकर्मों का अयोगी गुणस्थान में उदय नहींहैं. उन कर्मों की स्थिति स्वरुपापेक्षा करके समय मात्र कम करे. कर्म स्वरुप की अपेक्षा मे अयोगी अवस्था जितनी करे.

इस अयोगी केवली गुणस्थान के अन्तिम समय में: २ औदारिक द्विक, ४ तेजस—कार्मण शरीर, १० छे संस्थान, ११ प्रथम संघयण १५ वर्ण चतुष्क, १६ अगुरु लघु नाम. १७ उप घात नाम. १८ पराघात नाम २० शुभ—अशुभ विहायो गति. २१ प्रत्येक नाम. २२ स्थिर नाम. २३ अस्थिर नाम. २४ शुभ नाम. २५ अशुभ नाम. २६ निर्माण नाम. २७ सुस्वर नाम. २८ दुस्वर नाम २९ उश्वास और ३० दोनो वेदनीय में की एक वेदनीय. इन ३० प्रकृत्ति की उदय और ऊदीरणा का विच्छेद होना है. तब दूसरे समय में अयोगी केवली होते हैं; यहा फक्त पंच लघु अक्षर (अ. इ. उ. ऋ. ऌ.) उचार करने में जितना काल लगता है. उतने काल तक रहते हैं. इसस्थान को प्राप्त होनेही व्यपरित क्रिया—अप्रतिपाती नामें शुक्ल ध्यान का चोथा पाया प्राप्त होता है.

इस गुणस्थान में स्थिति घातादि कुछभी नहीं है. फक्त जितनी उदय वाले प्रकृत्ति है उनको वेदता हुवा—खपावे. और जिन प्रकृत्तिका उदय नहीं फक्त सत्तामे हीहै उनके दलिये उने स्तिबुक संक्रम कर उदयवाले प्रकृत्ति में संक्रमा कर वेद कर खपा—

वे. यों अयोगी गुणस्थान के द्वि-चरम समय पर्यन्त कर तेहैं.

अब यहां जो स्वभावसे प्रकृत्तियों का नाश होता है उनके नामः—२ वैक्रय आहारक - शरीर, ४वैक्रय आहारक बन्धन. ६ वैक्रय आहारक संघातन. ८ वैक्रय आहारक अंगोपांग. ९ देव गति, १० देवानु पूर्वी, यह १० प्रकृत्तियों देवगति के बन्ध की वक्त में बन्ध ती है, इसलिये इने देवगति सहचारीणि कही जाती है. इनका भी द्विचरम समय में नाश करते हैं. फिर ३-औदारिक - तेजस - कार्मण यह तीनों शरीर, ६ इन तीनों का बन्धन, ९ इन तीनों का संघातन, १५ छे संघयण, २१ छे संस्थान,२२ औदारिक अंगोपांग, २६ वर्ण चतुष्क, २७ मनुष्यानु पूर्वी, २८ पराघात नाम, २९ उपघात नाम३०अगुरुलघु नाम, ३२ शुभा शुभखगति, ३३ प्रत्येक नाम, ३४ अपर्याप्ता नाम, ३५ उश्वास नाम, ३६ स्थिर नाम, ३७ अस्थिर नाम, ३८ शुभनाम, ३९ अशुभनाम, ४० सुस्वर नाम, ४१ दुस्वर नाम, ४२ दुर्भग नाम, ४३ अनादेय नाम, ४४ अयशकीर्ति नाम, और ४५ निर्माण नाम. यह ४५ प्रकृति योंका यहां उदय नहीं होने से द्विचरम समय में इनका भी विच्छेद होता है.

अब द्विचरम समयमें बचाया १सो साता असाता में का एक वेदनीय २ मनुष्यायु, ३ मनुष्य गति ४ पचेन्द्रिय की जाति, ५ त्रस नाम, ६ बादरनाम, ७ पर्याप्तानाम, ८. सुभग नाम, ९. आदेय नाम, १० यशकीर्ती नाम, ११ उंच गौत्र यह ११ ही प्रकृति मनुष्यगति सहगत है, अर्थात मनुष्यगति में यह प्रकृत्तियों जरूर पाती है, इसलिये मनुष्य शरीर के साथ इन ११ प्रकृति का उदय तो सामान्य केवली में पाता है. और १२ तीर्थंकर नाम सहित १२ प्रकृति का उदय तिर्थंकर में पाता है, इन १२ प्रकृति का चउदवे अयोगी केवी गुणस्थान के अन्तिम समय में सर्वथा क्षय करते है. "कृत्स्न कर्म विप्र मोक्षो मोक्षः" अर्थात-सर्व कर्मों के बन्धन से मुक्त होना-छूटना इसीको मोक्ष कहते हैं यों क्षपक श्रेणी आरुढ महात्मा अनुक्रम से सर्व कर्मोका नाश करते हुवे चउदवे गुणस्थान के अन्तिम समय सर्व कर्मोंसे रहित होतेहैं उसी वक्त वो मोक्ष हुवे समजना.

सूत्र-पूर्व प्रयोगाद - आविद्ध कुलाल चक्रवद्,

असङ्गत्वाद - व्यपगतलेपा लाम्बुवद्,

वन्ध छेद्, एरण्ड वीज वद्,

तथा गति परिणामच - ऽग्निशिखावच्च ॥

तदन्तर मूर्द्ध गच्छत्या लोकान्तात् ॥ तत्वार्थ सूत्र. अ. १० ॥

अर्थात्– "तदनन्तर" उन कर्मों के सर्वांश से छूटे बाद–(१) जैसे - कुम्भार का घुमाया हुवा चाक, छोडे बाद भी पूर्व के प्रयोग (धक्के) से बहुत कालतक घूमा (फिरा) करता है, तैसाही अनादि से परिभ्रमण करने का जो जीव का स्वभाव कर्म भाव करके हो रहाथा सो उन कर्मो से छूटे बाद भी मुक्ति स्थान में जाने तक की गमन क्रिया करता है. तथा बहुत काल से मुक्ति गमन के लिये तप संयमादि किरिया कर रहे थे उस प्रयोग से मुक्ति में जाते हैं. (२) जैसे-मट्टी से छाया हुवा तुम्बा पानी में डूबा हुवा सो वो मट्टीका का लेप गलनेसे उस संगत से रहित होने से स्व स्वभाव से पाणी के उपर अन्त में आकार ठेहरता है, तैसे ही आत्मा रूपतुम्बा जो कर्म रूप मट्टी से लेपाय हुवा संसार समुद्र में डूब हुवा था वो अनेक - अकाम सकाम निर्जरा रूप पाणी के प्रयोग से गलने से उस वजन से मुक्त हो हल्का हुवा लोकान्त में मुक्ति है वहां जाकर ठेहरता है. (३) जैसे गोटे-डोडे में (फल्यों) एरंडी का बीज बन्धा था वो फल सूक कर गोटा फटनेही एरंड बीज उछलकर उपर जाता है. तैसेही आत्मा कर्म रूप बन्ध से छूटतेही उपर को उछलता - जाता है. और (४) जैसे अग्नि से प्रज्वलित मशाल को जो कभी उलटी भी कर दी तो भी उसकी ज्वाला (झाल) उर्द्ध-उंची दिशाकोही स्वस्वभाव से गमन करती है, तैसेही संसार में झुकाने वाले कर्म रूप पवन का अभाव होनेसे आत्मा स्वस्वभाव कर उर्द्ध-मोक्ष को जाती है.

प्रश्न–जो आत्मा का बन्ध से छूटे बाद उर्द्ध गमन करनेका ही स्वभाव है तो फिर मोक्षस्थान में जाकर अटक क्यों जाती है? ठेर क्यों जाती है? आगे को क्यों नहीं गमन करती है?

उत्तर–"धर्मास्ति काय अभावात"–अर्थात् जैसे मच्छीको गमन शक्ति है पाणी की सहायता से है. तैसेही आत्मा और पुद्गलों का गमन धर्मास्ति काय नामक लोक व्यापी एक द्रव्य की सहायतासे है. अर्थात् धर्मास्तिके सहा[illegible] आत्मा और पुद्गल गमन कर सक्ते हैं. इस धर्मास्तिका संयोगके आगे अ[illegible]

होने से आत्मा आगे को नहीं जा सकती है. यहां ही लोक के अन्त में स्थिरी भूत होकर ठेहर जाती है.

श्लोक—दग्धे बीजे यथात्यन्ते । प्रादुर्भवति नाङ्कुरः ।
कर्म बीज तथा दग्धे । नारोहति भवाङ्कुरः ॥१९॥

अर्थात्—जैसे दग्ध किया-अग्नि कर जला हुवा बीज से अंकुर का प्रादुर्भाव होता है. अर्थात्—जले हुवे बीज से अंकुरा नहीं फुटता है, ऐसेही संसारके बीज भूत गई कर्मों रूप बीज भस्म भूत होनेसे वो जन्म रूप या किसी प्रकारकी व्याधी-दुःख रूप अंकूर उत्पन्न नहीं करसकते हैं. जिस से सिद्ध परमात्मा सदा काल अचल और अव्याबाद हैं.

श्लोक—संसार विषया तीतं । मुक्ता नाम व्ययं सुखम्॥
अव्या बाध मिति प्रोक्त । परमं परमार्षिभिः ॥ २० ॥

अर्थात्—जो मोक्ष स्थान में संस्थित रही हुइ आत्मा-संसार के सर्व विषयों से पर-अर्थात् श्रेष्ट और अव्या बाध अर्थात्—सर्व प्रकार की बाधा ओंसे रहित, अनन्त काल तक ही स्वरूप जिसका रहित एकसी ही बनी रहती हैं, ऐसे निरुपम—अनुपम सुख के भुक्ता हैं.

(५) पांचवा—लक्षण द्वार का अर्थ.

ऐसी तरह से जो अनुक्रम से गुणस्थाना रोहण करते हैं—जों जों आगे २ के गुणस्थानों में चढते जाते हैं, त्यों त्यों उनके आत्म गुण की अधिकता विशुद्धता की श्रेष्ट एवं वृद्धि होते हैं. वो गुण कौन से और कैसी तरह वृद्धिपाते हैं, यह स्वरूप दर्शाने के वास्ते पांचवा का "लक्षण द्वार" कहा गयाहै.

प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थान के स्थान में जो शास्त्रमें अन्यान्य ग्रन्थों मे संग्रह कर के मिथ्यात्व के २५ भेद लिये गयेहैं जिसका अर्थ.

(३२) मिथ्यात्व

सामान्य प्रकार से मिथ्यात्व के दो भेद—१. अव्यक्त मिथ्यात्व. और २. व्यक्त मिथ्यात्व.

१ अव्यक्त मिथ्यात्व सो—जैसे मन्दोन्मत्त मदिरा का सेवन करने से मनुष्य

वे भान हो मूर्च्छित हो पड जाताहै. उसे अपने पराये अच्छे बुरेका कुछभी भान नही होताहै, तैसेही सूक्ष्म निगोद से लगाकर असन्नी तिर्यंच तक तो यह एकही मिथ्यात्व निश्चय मे पाता है. और बाकी के दंडको के जीवों में से बहुत से जीवोंगे यह मिथ्यात्व में पाताहै. इस मिथ्यात्व के वशमे पडेहुवे जीवों ज्ञानावरणी आदि कर्मो का अति तीव्र रस चन्द्रहास मदिरा जैसा परिणमने से वो धर्म अधर्म पुन्य पाप अच्छा बुरा इत्यादि कुछभी नहीं समझते हैं. फक्त सुख दुःख रुप होती हुइ वेदना वेदने सिवाय दूसरा कुछभी ज्ञान उनमें न होनेसे अव्यक्त मिथ्यात्वी कहे जातेहैं.

(२) "व्यक्त मिथ्यात्व" सो-जैसे-किसीको पीलीया का रोग होने से वो श्वेत वस्तु को भी पित (पीली) देखताहै. तैसेही यह मिथ्यात्व एक सन्नी पचेन्द्रिय मेंही पाताहै. इसमिथ्यात्वके वश्य में पडे जीवको कर्मरुप पीलीये के रोगसे ग्रासित हुइ विपरीत बुद्धि कर सर्व पदार्थो विपरीत-उलटेही भास होते हैं. सत्य को असत्य, असत्य को सत्य; न्यायको अन्याय, अन्यायको न्याय, इत्यादि सब उलट जानते-श्रद्धतेहैं. सो व्यक्त मिथ्यात्वी. आगेजो मिथ्यत्वके भेद किये जावेंगे उन सबोंका समावेश इसमें होवाहै.

मुख्यत्व मिथ्यात्व के पांच प्रकार भी कहे हैं:—

(१) "अभिग्रह मिथ्यात्व" सो-जो जीवों-हट ग्राही-कदाग्रही होते हैं. वो अपने ध्यान में जो बात जची सो सब सची. बाकी की सब झूटी जानते हैं. कैसेभी सद्बोध-सदुपाय से उसे समजाने कोइ भी समर्थ न होवे. और वो सत्संग भी इसही डरके मानहीं करतेहैं. कि रखे उन ज्ञानी महात्मा के पास जाउंगा तो मेरी श्रद्धा पलट्य देवेंगेरे कभी कोइ उनको उनके धर्मकी असत्यता भी बतादेवे तो वो सीधा यह उत्तर प्रदान करें कि-इस मजब में ऐसे २ विद्वान श्रीमान लोक हैं सो वो क्या मूर्खहैं! बस-हमारे आगे यह पंचायत निकालही मत करो! ऐसा जो गर्दभ पुच्छग्रही * कीमाफिक-दुराग्रही होवे सो अभिग्रही मिथ्यात्वी.

---

* किसी एक अनाज का व्यापार करने वाले व्यापारीने फजर होतेही अपने पुत्र से कहा कि तूं आगे चलकर दुकान लगा! मैं भी पीछेसे आताहुं. परन्तु याद रखना कि-"पहिले ग्राहक को खाली मत जानदेना." यह हुकम पुत्र प्रमाण कर दुकान पर आया. दुकान लगाइ. उस वक्त-एक गद्धेने आकर अनाज में मुंह डाला. तब दूसरा दुकान दार उसे भगाने लगा. तब वो वणिक पुत्र संतप्त हो बोला कि-खबर दार! इसे भगाना नहीं, खानेदो, फिर हि

(२)"अनाभिग्रह मिथ्यात्वी"—यह हठ ग्राही तो नहीं होताहै. परन्तु भोला-निर्बुद्धि-असमझ होता है. यह सब देवों को सब गुरुओं को सब धर्मोंको सब धर्मार भक्तियों को एकसा जान ताहै मान ताहै. सब को वंदन नमन करे. सबकी सुने परन्तु सार भेद कुछ समझे नहीं. जैसे कुडछी सब पकानों मे फिर आवे परन्तु किसीके स्वादका उसे ज्ञान नहीं होवे तैसे. इसे सत्यासत्य का निर्णय करने की कुछभी दरकार नहीं होती है. पूछने से जवाब देताहै कि—सब मजहबोंमें बडे २ विद्वानों पण्डितों हैं वोक्या सब मूर्ख हैं ? अपन को इस झगडे में पडने की कुछभी जरूर नहीं है. हमारे भावतो सब अच्छे हैं. सब को मानेंगे पूजेंगे जिससेही हमारी आत्मा का उद्धार होजावेगा. ऐ-

[illegible] होवे. क्योंकि मेरे बाप का हुकम है कि—ग्राहक को खाली नहीं जानदेना. [illegible] और उसे समझाने लगे कि—गद्धे को माल खिलाने का तेरे बाप का हुकम नहीं है, यह ग्राहक नहीं है ! परन्तु वो तो एकही मंजूर नहीं करे. इतने में [illegible] घर आया, तब वणिक पुत्र बोला कि—माल खाया जिसके कुछभी [illegible] ! इतना वचन सुनतेही मार के डरके मारे वो गद्धा भगने लगा. उसके पीछे वो वणिक पुत्र भी भगा और गद्धेकी पूंछ खूब मजबूत पकडली. उसवक्त गद्धेने उस वणिक पुत्रके छाती में [illegible] पैरों से [illegible] प्रहार करने शुरु किये, यह विटम्बना उस को देख [illegible] उसके हाथ में से छोडाने लगे. परन्तु वो छोडे नहीं. [illegible] कि—क्या मैं मूर्ख हूं ! जो मुफ्त में माल खाने दूंगा ! वो उसकी [illegible] और वो वणिकपुत्र के [illegible] मूर्छित हो [illegible] पूंछ छोड पडगया ! उस वक्त उसका [illegible] और [illegible] के मुख से अपने पुत्र के मूर्खता के हाल सुन बडाही लज्जित हुआ. [illegible] दुकान में लाया, और कहने लगा कि—मूर्ख ! गद्धेको माल खिलाने का मैं ने कब कहाथा ! पुत्र बोला कि—[illegible] तो नहीं बताया, [illegible] ! बस, [illegible] तुमारी अक्ल. [illegible] !! [illegible] अभिग्रह मिथ्यात्वी होते हैं. [illegible]

[illegible] होते हैं.

सा जो होताहै सो अनाभिग्रही मिथ्यात्वी.

(३)"अनाभि निवेशिक मिथ्यात्व" सो-किसीको सत्संगतके प्रसादसे, सत्शास्त्र के श्रवन पठन से, या सत्-चलन वलन वाले सत्पुरुषों के दर्शन से; अपना मान नीय मजब अन्तः करणमें सक्षात् असत्य-झूट प्रतिभाष होने लग जावे. परन्तु मिथ्या मोहके प्रवलोदय कर उस ग्रहन किये हुवे असत्य मत का त्यागन नहीं करसके! और श्रीवीतराग के मार्ग को सत्य पथ्य तथ्य न्यायरुप जानता हुवा भी ग्रहण नहीं कर सके !! विशेषत्व-मिथ्यानुराग में मतवाला वनकर अपने असत्य पक्ष को स्थापन करने, वीतराग का न्याय पन्थ का उत्थापन करने-सत्शास्त्रों के कथनोंको लोपे गोपे उत्थापे या विपरीत प्रगमावे; उत्सूत्र की परुपणा से-या कपोल कल्पित खोटे ग्रन्थों रास चोपाइ आदि की रचना रच, वेचारे भोले जीवों को भरम रुप फासमें फसा कुमार्गमें लगावे, सन्मार्ग छोडावे. अपडूवे अन्य अनेकोंको डूवावे, ऐसी तरह जो फूटी नावा का सङ्गाती होवे सो अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी.

दृष्टान्त—श्रीपार्श्वनाथ भगवन्त के कितनेक * संतानीया साधुओं गोशाले के मत में मिलकर श्रीमहावीर स्वामीजी की निन्दा करने लगे. तव श्रीमहावीर स्वामी के श्रावको ने उनसे पूछा कि—आप श्रीपार्श्वनाथ भगवान की परुपणा को भी जानतेहो, और श्रीमहावीर स्वामीजीकी परुपणा को भी जानतेहो. तैसेही गोसालाजी की परुपणा को भी जान गयेहो. इन तीनों में से सत्य परुपना किनकी है सो फरमाइये? तब वो साधुओं बोले कि—हां हम जानते हैं. जसी परुपणा श्रीपार्श्वनाथ भगवान की [illegible] वैसीही परुपणा श्रीमहावीर स्वामीजी की है; परन्तु हमने जो श्रीगोसालाजी [illegible] धारन कियाहै. इसलिये हमारा वश पहोंचेगा वहां तक हमतो इस मतकी स्थाप[illegible] नेमें और महावीरके मतकी उत्थापना करनेमें कचास नही रक्खेंगे! हमतु[illegible] हरतेहैं. यह सुनतेही श्रावको उनके मिथ्यामोहका प्रवल उदय जान [illegible] चलेगये ! ऐसे मिथ्याहट ग्राही जीवों को अभिनिवेशिक मिथ्यात्वी [illegible]

(४)"संशयिक मिथ्यात्व" सो-कितनेक पुन्यात्मा जीव श्री[illegible] हैं, परन्तु सत्सङ्ग और सत्शास्त्र के पठन के अभाव से तथा [illegible] स्त्रास्त्रका पठन करभी अपनी दुर्बुद्धि के (मोहकी प्रवल [illegible]

* प्रति शिष्य-अर्थात्-शिष्य के शिष्य के सन्तानीय [illegible]

लेगी, वगैरा अहंता के भरेहुवे शब्दोचार करते हैं सो प्रत्यक्षमेंही मधान्ध भाश होते हैं ३ जो त्रिशूल खड्ग चक्र आदि शस्त्र के धारक हैं वो प्रत्यक्ष ही क्रोधाग्नि से प्रज्व-लित भाष होतेहैं.

(४) जो कहते हैं कि मैंही कर्ता हर्ताहूं, मेरे हुकम विन पत्ता भी नही हल सकता है, मेही सर्व सामर्थ्य हूं वगैरा शब्दोंसे प्रत्यक्ष में अभी मानी देखाते हैं. ५ जो दगल वाजी ठगाइ करते हैं, छिपकर या रुपवदल कर दूसरे को छलते हैं-जैसे मोह-नी का रुप वना भस्मा सुर को भस्म किया ऐसे मायावी गिनेजाते हैं. ६ जो लोभी -लालची होवे. नारेल डोडी जैसे निर्माल्य वस्तु के लोभ में पड शत्रूओं के नाश जै-सा जुल्म कर डालें वगैरा. को लोभी कहते हैं. ७ यह मेरा घर कुटुम्वेह यह मेरे रा-ज्य सेनाहै, यह मेरे ऋद्धि सिद्धि है ऐसे ममत्वी को रागी कहते हैं. ८ तैसे यह मेरा देषी दुशमन, शत्रु निन्दक है, इसका नाश होवे ! एसे भाव वाले द्वेषी गिनेजाते हैं. ९ जो शोक चिन्ता फिकर करते हैं, हाय विलापात करते हैं रोतेहैं, शिरउर कूटतेहैं, वगैरा सो शोकीहैं. १०जो कहते कुछही हैं और करते कुछही हैं. मनमें कुछही, और व-ताते कुछही ऐसे झूठ वोलने वाले. पापके हिंसाके शास्त्रों का स्थापन कर कुमत का प्रसार करते हैं. ११ दूसरे के वस्त्र भूषण के हरण कर्ता, स्त्री पुत्रादि को भरमा कर उडाने वाले. इत्यादि चोरी करने वाले होवे १२ रखे यह मेरेसे अधिक होजावे. मेरा राजपाट हरण करलेवे. इत्यादि मत्सर भाव धारण कर अपत्सरा आदि के पास सेउ नके तप का भङ्ग कराने वाले वगैरा सोमत्सरी कहे जातेहैं, १३ संग्राम करने वाले, शीकार खेलने वाले, यज्ञ होमादि द्वारा-धर्मके नाम से मनुष्य पशु या किसी वस्तु का होम-हवन कराने वाले, भैंसे वकरे मुर्गे आदिके घातिकृसो हिंसक कहे जाते हैं. १४ स्वस्त्री के या परस्त्री के लम्पटी. पुत्री और पशु के साथ भोग करने वाले, ऐसे जवर कामी. धुप दीप पुष्फ फल सुगन्ध, शीतोपचार. उष्णोपचारके कर्ता कराता. स्वशरी-र स्वकुटुम्वादि के प्रेम में रक्त रासमंडल खेलना, नाचना नचाना विषय राग गाना, स्त्रीयों के पीछे मारे२ फिरना. वाजिव वजाना वज वाना. वगैरे क्रिडा के करने वाले जगत् जीवों को सुखी दुःखी करना. शरापया आशीर्वाद देना इत्यादि अनेक दुर्गुण जिनो में पाते होवे, वो प्रत्यक्ष कुदेव के लक्षण हैं. एसे देवों को तरण तारण दुःख निवारण जानकर वन्दे पूजे सो लोकीक देवगत मिथ्यात्व.

(२) "लोकीक गुरुगत मिथ्यात्व" सो-जिनों की आत्मा में गुरु के (साधु) के

गुण पावे नहीं, ऐसा को गुरु करके मानेसो गुरु गत मिथ्यात्म. जैसे-जो-सचित्त (स जीव) मट्टी-पाणी-अग्नि-हवा-वनस्पाति और त्रस (हलते चलते जीवों) इन छजीवों की कायका वधकरने वाले, चकारम कारादि गालीयों असत्य वचनके बोलने वाले. वि- नादि वस्तु लेवें चोरी करने वाले, स्वस्त्रीया परस्त्री से गमन के करने वाले, धन धा- न्य चौपद दुपद आदि परिग्रह के रखने वाले, रात्री भोजन के कर्ता, मदिरा मांस- कन्द-मूल इत्यादि अभक्ष वस्तु के भक्षण करने वाले. गांजा तमाखू चडस भांग आदिनशा के सेवन करने वाले, स्नान मंजन तेल अतर सुरमा छापा तिलक वस्त्र भू- षणादि से शरीर को शोभा करने वाले, साफ नग्न रहे वारंगी बेरंगी अनेक तरहके व स्त्र धारण करने वाले, मुंड मुडाना जटा बढाना, भभूत रमाना इत्यादि अनेक रूप धा रण कर उदर पूरना करने वाले. इत्यादि अनेक तरह के गुणविना कोरा आडम्बर- पाखण्ड रचकर जो गुरु तरीके जगत में पूजा रहैं. उनको तरण तारण दुःख निवार- ण जानकर जो वन्दन नमन पूजन करेसो लौकिक गुरु गत मिथ्यात्व.

३ " लौकिक धर्म गत विथ्यात्व " - जो दुर्गति में पडते जीवों को धर-पकड रक्खे - पडने नहीं देवे, ऐसा जो परम लक्षण धर्म का है सो जिस में नहीं पाता है, फक्त-नाम मात्र धर्म हैं-जैसे देवालयादि बन्धाना, तीर्थ स्नानादि करना, धूप दी यज्ञ हवन दव आदि करना, फल फूल पत्र डाल कूंपल छाल आदि तोडना मोडना, पट मल्मुर्गे भेंसादि जीवों का वध, इत्यादि कर्मों में धर्म का मानना. तथा होली राखी आदि मिथ्या पर्वों का मानना. एकादशि आदि तप नाम धारण कर कन्द मूल पकान मिष्टानादि भोगवना. ऋतु दान कन्यादानादि देना, पंच धूनी तापना इत्यादि अनेक जो ढोंगी कृत्यो है, उसे तरण तारण दुःख निवारण जान पालना स्पर्शना सो लौ- कीक धर्मगत मिथ्यात्व.

४ "लोकोत्तर देवगत मिथ्यात्व" सो जिन-तीर्थंकर ऐसा नाम तो धारण कि- या. परन्तु जिनों में तीर्थंकरके गुण नहीं, गोशालावत-उनको तीर्थंकर देव कर माने, धन पुत्र स्त्री यश सुख की प्राप्ति के अर्थ-ग्रह दोष निवारन के अर्थ तीर्थंकरो का नाम स्मरणादि करना इत्यादि इस लोक परलोकके द्रव्यीक सुखार्थ जो वीतराग तीर्थ करों का स्मरन वंदन नमन पूजन करेसो लोकोत्तर देव गति मिथ्यात्व.

५ "लोकोत्तर गुरुगत मिथ्यात्व"—सो जैन साधुका लिंग भेष तो धारण कि- या. परन्तु साधुके गुण जिनों में नहीं पाते होवें. पांच महा व्रत पांच समिति तीन

शुधि रहित होवें. छेही जीव काया का आरंभ करते होवें. इत्यादि अनाचारी होवें उनको गुरु माने. तथा इस लोक परलोक इत्यादिक सुखार्थ सुसाध ओंको दान दे वंदन पूजन सत्कार सन्मानादि करे सो लोकोत्तर गुरुगत मिथ्यात्व.

६ "लोकोत्तर धर्मगत मिथ्यात्व" सो—जैन धर्म तो नाम है परन्तु जिनेश्वर के आज्ञानुसार जिस मे करणी नहीं. देव गुरु धर्म निमित्त छेही काया का वध. धूप दीप फूल पान फल का चढाना-भोगोप भोग लगाना. नाचना बजाना वगैरह हो उस में धर्म माने. तथा इस लोक परलोक के इत्यादिक सुखार्थ अंबर करणी सामायिक पोषा आंबिल उपवास अट्ठमादि तप करे सो लोकोत्तर धर्मगत मिथ्यात्व.

७—९ "कुप्रा वचनी देव गत मिथ्यात्व" सो—हरी हरादि कुदेव को. "कुप्रा वचनी गुरुगत मिथ्यात्व" सो-बावा जोगी आदि कुगुरुको. और "कुप्रा वचनी धर्म-गत मिथ्यात्व" सो-यज्ञ होम स्नान तीर्थत्व वगैरे धर्म क्रियाको मोक्ष प्राप्ती की इच्छा से मानना वन्दन नमन करना इनसे मोक्ष दाता जानना सो कुप्रावचनी देव-गुरु-धर्म गत - मिथ्यात्व.

और भी—जिनेश्वर प्रणित शास्त्रों में—१ ओछी—कमी. २ अधिकी—ज्यादा और ३ विपरीत—अनमिलती श्रद्धना जानना. परूपना—करना. और स्पर्शना करना सो भी तीन तरह के मिथ्यात्व गिने हैं:—जैसे

१. तीन कुमाचार्य ने आत्मा को एकही सर्वव्यापी मानी सो. तथा कितनेक [illegible] मतिवंतों आत्मा को - अक्षर के दाने जितनी. या दीपक समान या अंगुष्ट प्रमाण बताते हैं सो. और कितनेक-'अपने पर आवेगी. तो दाम को पहोंचेगी' इस कारण सूत्र शास्त्र के वचनों को लोपकरके छिपावे या अन्य रूपसे परिणमावे इत्यादि ओछी करे सो परूपणा मिथ्यात्व.

२ ऐसेही कितनेक कहते हैं कि"—एकही आत्मा सर्व ब्रह्माण्ड [illegible] में व्याप्त (रही) हुइ है. तथा धर्म [illegible] शुद्ध उपकरण रखने वाले साधु को परिग्रह धारी कहना. [illegible] में श्री महावीर स्वामीके ७०० केवल ज्ञानी कहे हैं और १५०३ [illegible] को केवल ज्ञान [illegible] इत्यादि अधिक परूपना मिथ्यात्व जानना.

३ ऐसेही कितनेक श्री [illegible] में [illegible]
[illegible]

व उत्पन्न होता है, सो समुदाय तत्व कहाजाता है, इन दोनों तत्वों कोही संसार की प्रवृत्तिके हेतु रूप मानते हैं. इन दोनों तत्वोंसे विपक्षीभूत-मार्ग और निरोध तत्वहै, जिस का स्वरुप ऐसाहै कि-सर्व पदार्थों क्षीणभाव रहकर नाश को प्राप्त होते हैं. कि-उसीवक्त दूसरी क्षीण में उसके जैसेही दूसरे पदार्थ उत्पन्न होजाते हैं. पूर्व ज्ञानमें उत्पन्न हुइ वासना को उत्तर ज्ञान तक ठेरहनेकी शक्ति है और क्षीणक परम्परा पूर्वक जो माननी पातीत होता है उसका नाम 'मार्ग' है, और यह मार्गही निरोध का कारण है. अर्थात्-चित्तकी निक्लेश अवस्था सो निरोध है. और सोही मोक्ष है.

और भी बोधमति १२ पदार्थ मानते हैं:-श्रोत चक्षु घ्राण रस और स्पर्श, यह पांचों इन्द्रियों. और इन पांचों के पांच विषय यों १०, और चित्त तथा शब्दायतन. इन १२ आयतनों की भी क्षीणीक मानते हैं. बौधमतिय-आत्मा को नहीं मानते हुवे फक्त द्रष्टा का अनुसन्धन ज्ञान क्षणों कोही मानते हैं. इस मे यह वात सिद्ध होती है कि-क्षुधा और को लगी. भोजन अन्य ने किया. और तृप्ति अन्य कोही आइ. तैसेही औषधी अन्य को दी, रोग अन्य का गया. ऐसेही अनुभव और को हुवा, स्मरण और को हुवा. बन्ध अन्य के हुवा, और मोक्ष अन्य हुवा. तपादिक्लेश किसीने भोगा, और स्वर्गादि प्राप्ति किसी अन्य कोहुइ ! यह सब वातों प्रत्यक्ष में अन्य मिलती हुइ देखाती हैं. और रात्री भोजन तथा मांस आदि अभक्ष का भक्षण यह प्रत्यक्ष में अधर्महैं इत्यादि अनमिलते बनावसे इसे विपरीत परूपणा मिथ्यात्व कहा जाताहै.

(२) नैयायिक दर्शन का स्वरुप.

नैयाकि मति-शिवको देव मानते हैं, गोतमामुनि को गुरु मानते हैं, इन के धर्म गुरुओं बडी कोपीन पहनते हैं. कम्बल ओढते हैं, जटा रखतेहैं, जटामें लिंग रखते हैं, शरीर को भस्म रमाते हैं,बगलमें तुम्बी और हाथमें दन्ड रखते हैं, निरस आहार और वनवास पसंद करते हैं, अतिथ पुजा बडी प्रियलगती हैं, कन्द मूल फूल फलादि का आहार करतेहैं और कितनेक स्त्री रखतेहैं, कितनेक नहीं भी रखतेहैं, जो स्त्री नहीं रखतेहैं वो उत्तम गिने जाते हैं, वृद्धवस्था प्राप्त होते कितनेक हंसवृत्ति-(नग्नपना) धारन करने हैं, शिवजी सिवाय अन्य देव को नमन करने में पाप बताते हैं. उनके भक्तों "ॐ नमो शिवाय' इस शब्द से नमस्कार करते हैं. तब वो "नमो शिवाय" इस शब्द से आशीर्वाद देते हैं. इनों का मुख्य उद्देश यह है. कि-किसीने भी १२ वर्ष पर्यन्त 'शैव दिक्षा' का पालन करलिया, फिरवो उसे छोड देवे तो भी मोक्ष पाता है. इनकी-

१. शैव, २ पाशुपत, ३ महाव्रत धर, और ४ काल मुख यह चार शाखाओं है. और गोतम मुनि (अक्षपदमुनि) कृत–'न्यायसूत्र.' उद्योत कर मुनिकृत न्यायवृत्ति भाषा, सर्वज्ञकृत-न्यायसार वगैरा सूत्रों को यह मानते हैं.

नैयायिको–१अवल तो कहते हैं कि-सत्तायोग से सत्व है, और फिर कहते हैं कि-सामान्य, विशेष, समवाय, यह पदार्थों सत्ता के विनाही सत्तहै. २एक स्थान कहा है कि-ज्ञान ज्ञान को आप जानता नही है, क्यों कि-अपने में आपही के क्रियाका विरोध होता हैं, और दूसरे स्थान कहाहै कि–इश्वरका ज्ञान आप आपको जानताहै. और स्वात्मा में क्रिया विरोध नहीं है. ३ आकाश को निरवयवी कह कर फिर कहते है कि आकाश का गुण शब्द है (तो अवयव विना शब्दोत्पत्ति कहां से हुइ?)सोभी एक देशमें शुन्यता है सर्वतः नहीं है, और भी यह १६ पदार्थों मानते हैं, उसमें भी बहुत विरोध भाप होताहै. तैसेही इश्वरको कर्ता यह मानते हैं, यह भी बडी विरुधता है. क्यों कि-जो कर्ता हैसो भुक्ताहै, और कृत कर्म फल भोगवनेसे अन्य में और इश्वरमें क्या तफावत्? तथा किसी भी वस्तुकी इच्छा होती है तब वो वस्तु निपजाताहै. और इच्छा है सोही दुःख है, अर्थात्-नुन्यता सेही इच्छा होती है, जो इश्वर होकर ही दुःखी हुवा तो फिर इश्वर कायका ? इत्यादि सबब से विपरीत परुपक गिने हैं.

(३) वैशेषिक दर्शन का स्वरुप.

वैशेपिक मति का श्रद्धान विशेष कर नैयायिक मति जैसाही है, फरक फक्त इतनाही है कि-वैशेपिक दो ही प्रमाण मानते हैं, और कहते हैं कि-शिवजीने उलूका रुप धारण कर कणाद मुनिको वैशेपिक मतका स्वरुप बताया है, इसलिये इस मतका नाम " औलुक्य " भी है, यह–तर्कशास्त्र, वैशेषिक सूत्र, प्रसस्तकर भाष्य, किरणावली, लीलावती आदि को मानते हैं. नैयायिक की तरह इन को भी विपरीत परुप जानना.

[४] सांख्य दर्शन का स्वरूप.

सांख्यमति के-देव-नारायण, और गुरु त्रिदन्डीये होते हैं. इन के धर्म गुरुओं कोपीन पहनते हैं धातुरक्त के वस्त्र रखते हैं, कितनेक शिरमुन्डाते है, कितनेक शीखा रखते हैं, और कितनेक जटा बढाते हैं, मृग चर्म का आसन रखते हैं, फक्त ब्राह्मन के घर काही अन्नखाते हैं, जिस में कितनेक तो फक्त पंचग्राम (५ कवल) मात्र खा-

करही संतोष करते हैं, और काष्ट की मुहपति भी रखते है, इसका सबब यह ऐसा बताते हैं कि "श्वाशो च्छास से जो जीवों हिंसा होती है वो इस से बचती है *"यह पाणीकी जीवानीकी यत्ना बहूत करतेहैं, कहते है कि-"पाणीकी एक सूक्ष्म बिन्दूमें से एकेक जीव निकल कर जो भ्रमर जितना बडा शरीर बनावे तो तीनों लोक में समावे नहीं ! इतने जीव एकही बिन्दू मं हैं" ! और इनों में कितनेक एकेक महीने तक उपवासभी करतेहैं. इनके मतकी माहिमा इनके "मठार शास्त्र" में ऐसी तरह लिखीहै-

श्लोक-हंस विपच खाद मोदं।नित्यं भुक्त्वच भोगान यथाऽभिकामं॥
यदि विदितं कपिल मतं । तत् प्रप्स्यासि मोक्ष सौख्य मचिरेण ॥
पंच विंशति तत्वज्ञो । यत्र यत्रा श्रये रतः ॥
शिखी मुन्डी जटिवापि । मुच्य ते नात्र संशयः ॥

अर्थात्—कपिल मुनिके फरमाये २९ तत्वों को जानने वाला फिर वो हंसे खेले खावे पीवे सदा खुशीरहै. चाहे किसी भी आश्रम में रहै शिखा धारी हो या मुण्डित हो जैसी रुची होवे वैसार है, तो भी वो सर्व उपाधी से मुक्त हो अल्प काल में मोक्षपाता है. इसमें संशयही नहीं है.

सांख्यमत के माननीये २५ तत्वों का स्वरूप.

१ प्रकृत्ति तत्व.-(१) सत्व गुण का सुख लक्षण, चिन्ह प्रसन्नता, प्रसाद-बुद्धि-लाघव-आश्रय-अनभिसंग-अद्वेष-प्रीत्यादि. सत्व गुण के कार्य-लिंग-आर्जव-मार्दव सत्य-शौच-लज्जा-बुद्धि-क्षमा-अनुकम्पा,-प्रसादादि. जिसमे सुखोतपति होती है. उर्द्धलोक निवासी देवताओं में प्रधानतासे सत्व गुणकी ही अधिक्यता है. (२) रजो गुणक दुःख लक्षण है, चिन्ह-संताप-ताप-शोप-भेद-चलित चित्त-स्तंभ-उद्वेगादि. यह रजो गुण कार्य लिंग-द्वेष-द्रोह-मत्सर-निन्दा-वचन-बन्धन-तपादिस्थान हैं. जिससे दुःखोत्प-

* श्लोक—ते प्राणाद तु यातेन । श्वासे नैकेन जंतवः ॥
हन्यते शत सो ब्रह्म । ब्रणु मात्राक्षर वादिना ॥
अर्थ-मुखढके विना श्वासोश्वास लेनेसे व अणुमात्र शब्दोचार करने से हजारो ब्रम्हका (हजारों प्राणीका) नाश होता हैं.

आत्मा भोक्ता भी नहीं है. परन्तु प्रकृत्तियों के वीकार भूत उभय मुख दर्पणाकार जो बुद्धि है उस में संक्रमण होनेसे निर्मळ आत्म स्वरूप के विषे सुख दुःख प्रति बिम्बित होनेसे उदय भाव भोक्ता कहलाता है. जैसे स्फटिक मणी के पास जैसे रङ्ग का पदार्थ होता है वैसेही रङ्ग मय वो मणी प्रति भाष होती है, यह सांख्य के २५ तत्त्वोंका स्वरूप संक्षेप में हुवा.

सांख्य मति-सत्व रज और तमो गुण से उत्पत्ति मान ते हैं सो अन मिलतीहै. क्योंकि-गुनी से गुन उत्पन्न होते हैं. परंतु गुनसे गुनी की उत्पत्ति कदापि नहीं होती है; जैसे मट्टी से घडा बनता है, परन्तु घडे से मट्टी कदापि नहीं बनती है. तैसेही आत्माको अकर्ता अभोक्ता मानना सो भी मिथ्या है. क्योंकि आत्म शक्ति की सत्ता विना किसीभी जड पदार्थों में वस्तु उत्पन्न करने की और सुख दुःख रूप कर्म फल वेदने की शक्ति नहीं हैं. इत्यादि सबब से यह भी विपरीत परूपक गिने जाते हैं.

(५) मीमांस दर्शनका स्वरूप.

मीमांस मत का दूसरा नाम 'जैमिनीय' भी कहते हैं, इनके देव ब्रम्हा, और गुरु वेदों कोही मान ते हैं. अन्य किसी को भी गुरु नहीं मानते हैं. इन के धर्मावलम्बियों-सांख्यमति की तरह ही-कोइ एक दन्डधारी. कोइ त्रिदंड धारी होते हैं, धातु रङ्ग के वस्त्र पहन ते हैं. मृगचर्म के आसन पर बैठते हैं. कमन्डल रखते हैं, शिर मुन्डाते हैं, यज्ञोपवित को तीन वक्त धोकर पानी पीते हैं. शूद्र जातिका अन्न नहीं खाते हैं. अपन को 'सन्यस्त' कह कर बोलाते हैं. ब्रम्हको अद्वैत मानते हैं. और सब शरीर में एकही आत्मा मानते हैं. ÷ और आत्मा में लय हो जाने कोही मुक्ति मान ते हैं. अन्य-मुक्ति की नास्ति बताते हैं.

मीमांस मत की दो शाखा है-१ पूर्व मी मांस और उत्तर मी मांस. इन में पूर्व मीमांसी तो बहुतकर गृहस्थाश्रमीही रहते हैं, और उत्तर मीमांसी ओंकी ४ शा

÷ श्लोक-एक एवाहि भूतात्मा । भूते भूते व्यवास्थितः ॥
एकधा बहुधा चैव । दृश्यते जल चन्द्रवत ॥

अर्थात्-जैसे पानीके भरे हुवे अनेक घडों में एकही चन्द्रमाका प्रति बिम्ब अलग २ दिखता, तैसेही एक परमात्मा सर्व आत्मा में व्यापे हुये हैं.

रवा है:—१ त्रिदन्डी, सशिखा, २ ब्रम्हसूत्री, ३ गृहत्यागी, और ४परिगृही. इन्में-एकही वक्त पुत्र के घर में भोजन कर ने वाले, कुटि में रहने वाले, इने 'कुटिचर' कहते हैं. २ पूर्वोक्त लिंग युक्त विप्र के घर का निरस आहार करने वाले, नदी के किनारे रहने वाले, को 'बहुदक' कहते हैं. ३ ब्रम्ह सूत्र, शिखा सहित, कषायवस्त्र, दन्डधारी, ग्राम में एक रात्री और नगर में तीन रात रहने वाले, ब्राह्मण के घर में धूम्र रहित अग्नि हो तब भोजन करने वाले, तपश्चर्यासे शरीर को सुकाने वाले, जो देशों देश फिरते रहते हैं, उनको 'हंस' कहते हैं. इन को जब ज्ञान उत्पन्न हो जाता है तब चारों वर्ण के घर का आहार कर ते हैं, और शरीर बिलकुल अशक्त हो जाता है तब अनसन कर देह त्याग ते हैं. और ४ वेदान्तक एकाध्ययी को 'परम हंस' कहते हैं.

यह कहते हैं कि-"हिंसा गार्ध्यत्" अर्थात् जो हिंसा इन्द्रियोंको और व्यक्षपोषने को की जाती है वो हिंसा गिनी जाती है.परन्तु वेदोक्त-अश्वमेध, गौमेध, नरमेध, अजामेध, मधु सपर्क, और पित्र तृप्ति के लिये जो हिंसा की जाती है वो हिंसा नहीं गिनी जाती है. और इनही के वेदोंकी स्मृति में ऐसा लिखा है :—

श्लोक—श्रूयुतां धर्म सर्वस्वं । श्रुत्वा चैव धार्यतां ॥
आत्मानः प्रतिकूलानि । परेषां न समाचरेत् ॥

अर्थात्—धर्म श्रवण कर धारन करने का येही सार है कि-किसी आत्मा के भी प्रतिकूल (दुःख प्रद) कृतव्य कदापि नहीं करे!

श्लोक—अन्धे तमसि मज्जाम । पशुभिर्ये यजा महे ॥
हिंसा नाम भवे धर्मो । न भूतोन भविष्यति ॥

अर्थात्—वेदान्ति का कथन हैकि-यज्ञ निमित्त पशुका वध करने वाला अन्ध और तामसी मनुष्य है, क्योंकि हिंसा करने मे धर्म न कदापि नहुवा और न होगा!! तथाच मन्त्र दर्शिनः पठन्ति :—

श्लोक—देवो पहार व्याजेन । यज्ञ व्याजेन वाथवा ॥
घ्नन्ति जन्तुन् गत घृणा । घोरान्ते यान्ति दुर्गति ॥

अर्थात्—देवों की तृप्ति के निमित्त और यज्ञ के निमित्त जो पशु का वध करते

हैं वो घोर (अति दुःख प्रद) दुर्गति में जाते हैं. ऐसे बहुत से दाखले दया धर्म की पुष्टि के उनोके शास्त्रोंमें होते हुवे भी यज्ञ और पित्रादि निमत हिंसा करनेमें दोष नहीं मानते हैं. बल्के धर्म मानते हैं. इसलिये यह भी विपरीत परूपक मिथ्यात्वी गिने हैं

(६) चार्वाक दर्शन का स्वरूप.

चार्वाक मत का दूसरा नाम नास्तिक मत भी कहलाता है. इन के न तो कोइ देव है, और न कोइ गुरु है फक्त कोइ २ देवीको मानते हैं. इनके शास्त्र में ऐसा लिखा है :—

श्लोक—पृथ्वी जलं तथा तेजो । वायु भूत चतुष्टयम् ॥
आधारो भूमिरे तेषां । मानं त्वक्ष जमेवही ॥ १ ॥
पृथव्यादि भूत संहत्या । तथा देह परिणतेः ॥
मदशक्तिः सुरांगे भ्यो । यद्व तद्व चिदात्मनि ॥२॥

अर्थ—पृथ्वी, पाणी, अग्नि और वायु इन चारों भूतों के आधार सेही सर्व श्रेष्टिहै, और जैसे-गुड महुवा पाणी और अग्नि इन चारों के संयोग से मदिरा (दारु) नामक पदार्थ उत्पन्न हो उन्मादका कर्ता होताहै. तैसेही उपरोक्त चारों भूतों के संयोग से आत्माजीव उत्पन्न हो अनेक चेष्टा करता है. और इन चारों के वियोग से या विनाश से आत्माका भी विनाश होता है. इन चारों भूतों शिवाय इस जगत में दूसरा कोइ पदार्थ है ही नहीं; न कोइ जीव है; और न कोइ पुण्य पाप है, तो फिर पुण्य पाप के फल भुक्त ने के लिये नरक और स्वर्गतो होवेही कहांसे? ऐसे कुबोध से यह लोको निडर बन मांस मदिरा परस्त्री या माता भग्नि को भी सेवन करनेमें चूकते नहीं है. और इनोंने बारे महीने में उत्तम दिन कायम किया है उस दिन एकान्त स्थान में यह सब भेले हो स्त्री को नग्न कर योनी पूजते हैं, और भोग भी करते हैं. इन की वाम मार्ग काचली मार्ग आदि उपशास्त्रहै, ऐसा व्याभिचारी मत तो प्रत्यक्षही सर्व धर्मों से विरुद्ध विपरीत परुपक देखीताहै. किंबहु.

और भी ठाणांगजी सूत्र में १० प्रकार के मिथ्यात्व फरमाये है. १"धम्म अधम्म सन्ना" अर्थात्—धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व. आचाराङ्ग सूत्र के प्रथम श्रुतस्कन्ध के चोथे अध्याय में फरमाया हैः—

सूत्र–जेय अतीता जेय पडुप्पन्ना जेय आगामिस्सा
अरहन्त भगवन्तो ते सव्वे वि-एवं माइक्खन्ति
एवं भासन्ति एवंपण्णवन्ति एवं परूवेन्ति–सव्वे
पाणा सव्वे भुया सव्वेजीवा सव्वे सत्ता–णहन्तव्वा,
ण अज्जवेयव्वा, णपरिघातव्वा, णपरिता वेयव्वा,
ण उद्दवयव्वा,–एस धम्मे सुद्धे णितिए सासए,
समेच्चलोयं खेयन्नेहिं पवेतित्ति.

अर्थ–सुधर्मा स्वामी फरमाते हैं कि–अहो, जंबु ! जो तीर्थंकर भगवन्त-गये काल में हुवे, वर्त मान में हैं और आवते काल में होंगे उनसबों का एक यही फरमान है कि–"सर्व प्राणी (बेन्द्रिय तेन्द्रिय. चोरीन्द्रिय) सर्वभूत (वनस्पति) सर्व जीव (पंचेन्द्रिय) और सर्व सत्व (पृथवी-पाणी-अग्नि-हवा)-इनको मारेनहीं, परिताप उपजावे नहीं, बन्धन में डाले नहीं, उपद्रव्य करे नहीं, किसीभी तरहसे कदापि किंचित मात्र दुःख देवे नहीं, सोहि दयामय धर्म शाश्वता सनातन है; ऐसा खेदज्ञ(पर दुःख के जान) श्री जिनेश्वरों भगवन्तों का फरमान है.

ऐसे दयामूल शुद्ध पवित्र धर्म को अधर्म श्रद्धे सो द्रव्य से धर्म अधर्म श्रद्धान हुवा, और निश्चय में आत्म स्वभाव ज्ञानादि गुणों से रमणता से जो धर्मोत्पत्ति होती है, उसे भूल पुद्गलानन्द जड पदार्थों से धर्मोत्पत्ति समझे सो धर्म अधर्मसज्ञा मिथ्यात्व.

२ "अधम्म धम्मसन्ना" अधर्म को धर्म श्रद्धे, अर्थात् यह जीव अनादि से अधर्म मार्ग में रमण कर रहा है, इसलिये अधर्म मार्ग में सहज रुची होतीहै, उस स्वभाव का प्रेरा हुवा हिंसा आदि पांचो आश्रव के सेवन में–अश्वमेधादि यज्ञों में, हिंसक पूजा, तीर्थस्नानादि. या बकरीईद जैसे कृतव्यों में धर्म माने सो अधर्म धर्मसज्ञा मिथ्यात्व.

३ "साहू असाहू सन्ना" कितनेक भोले जीवों साधुके गुणों से बिल्कुलही अवाकिफ होकर सब मनुष्यों जैसेही साधु ओं को जानतेहैं-साधु संसारी के भेद भाव ही नहीं समझे, तथा जगत् में सत्पुरुष तो थोडे हैं, और पाखण्डियों मुफ्तखोरे बहुत हैं, उनको देख उनके जैसेही-शान्त दान्त ज्ञानी ध्यानी तपी जपी आदि गुण सागर मुनिवरों को समझते हैं, तथा कितनेक कुमत पक्ष में सने हुवे अपने पक्षके (सम्प्रदायके

साधुओं को छोड कर और अन्य सब साधुओं को असाधु समझते हैं. ऊपरोक्त गुण संपन्न मुनिवरोंको निंदक लुम्पक भगवन्त के चोर आदि कहेसो साधु असाधु सन्ना मिथ्यत्व

४ "असाहू साहू सन्ना"—अर्थात्-असाधुको साधु श्रद्धे जैसे कितनेक कुल परंपरा से चले आते मत में फसे हुवे साधु के गुण अवगुण जानने की बिलकुल ही दरकार नहीं रखते हुवे सारंभी. सपरिग्रही. विषयी. कषायी, ग्रहस्थ जैसेही कृत-त्योंके करने वाले मन्त्रादि से भरमाकर. सरापादि से डराकर जो पेट भराइ कर ते हैं. मिथ्या अडम्बर वडाते हैं. ऐसे ढोंगी धूतारों को जो साधु माने सो असाधु साधु सन्ना मिथ्यात्व.

५ "जीव अजीव सन्ना"—अर्थात्-जीव को आजीव श्रद्दे, जैसे कितनेक चार वाक-नास्तिक मतीयों-पंच भूत वादीयों, पृथव्यादि के संयोग से ही जीवोत्पात्ति और भूतोंके वियोग से जीव की नास्ति कहते हैं. कितनेक अद्वैतवादी अनेक जीवोंसे भरे हुवे इस विश्व में फक्त एकही आत्मा व्यापक बनाकर सब जीवों की नास्ति कर ते हैं. कितनेक असंख्य जीवोंका पिन्ड जो मट्टी पाणी अग्नि हवा है और अनन्त जीवोंका पिन्ड जो वनस्पति है, इनको निर्जीव मानते हैं, कहते हैंकि यह तो भोगोप-भोग के लिये स्वभाविक ही उत्पन्न हुवे हैं. ऐसे ही कितनेक कीडी मकोडी आदि प्रत्यक्ष में हलन चलन करते हुवे कोही निर्जीव बताते हैं. ऐसे ही कितनेक जैनीयों भी सूका अनाज विगेरे में निर्जीव-अचित्त सन्ना धारन कर ते हैं, सो सर्व जीव अ-जीव सन्ना मिथ्यात्व जानना.

६ "अजीव जीव सन्ना"—अर्थात् अजीवको जीव माने, जैसे कितनक धातु पाषण वस्त्र काष्ट आदि की बनाइ हुइ मूर्ती को साक्षात मनुष्य या पशु तुल्य समज ते हैं. देवता के वंदिये किये पुष्पादि को सजीव कहते हैं. इत्यादि जो श्रद्दे सो अ-जीव जीव सन्ना मिथ्यात्व.

७ "मग्ग उमग्ग सन्ना"—अर्थात्-मार्ग को उन्मार्ग श्रद्धे. जैसे ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, दान, शील, क्षमा, दया, सरलता, निर्लोभतादि जो सीधा सत्य मोक्ष का मार्ग सर्वज्ञ ने प्रकाश किया है. उसे संसार परि भ्रमन करने का कारण बतावे वैसा श्रद्धेसो मार्ग उन्मार्ग सन्ना मिथ्यात्व.

८ "उमग्ग मग्ग सन्ना"—अर्थात् उन्मार्ग को सन्मार्ग श्रद्धे. जैसे-क्रिडा कितु-हल लीला नाचना गाना बजाना यज्ञ होमादि करना. इत्यादि धूम धाम को मोक्ष

मार्ग समने सो उन्मार्ग को सन्मार्ग सद्धा मिथ्यात्व.

९ "रूवी अरूवी सन्ना"-अर्थात् रूपी वस्तु को अरूपी माने, जैसे परमाणु पुद्गल, कर्म वर्गणा, वायु काय आदि रूपी पदार्थ होकर भी दृष्टि गोचर नहींहोनेसे अरूपी माने सो मिथ्यात्व.

१० "अरूवी रूवी सन्ना"-अर्थात् अरूपी पदार्थों को रूपी माने, जैसे धर्मास्ति काय आदि पंचास्ति काय जो अरूपी है उने, रूपी कहे, सिद्ध भगवन्त जो वर्णगंधादि गुण संपन्न हैं, उनको रक्त वर्णादि की स्थापना करे, जो जीवों मोक्ष प्राप्त हो अरूपी अवस्था धारण करी है उन्हें पुनः अवतार धारण कर रूपी हुवे कहे आकाश जो अरूपी है उसे शब्दादि गुणमय कहे. परमात्मा जो अरूपी है, उससे सृष्टि रूपी की उत्पत्ति कहे, वगैरा अरूपी को रूपी सन्ना मिथ्यात्व.

और भी ७ प्रकारके मिथ्यात्व जैन ग्रन्थोंमें कहे हैं सो:—

१ "अविनय मिथ्यात्व"-अर्थात्-श्री जिनेश्वर के, सद्गुरुओं के, शास्त्रों के वचनों को उत्थापे; भगवन्तको भी भूले-चूके बतावे; चतुर्विध संघका ज्ञानी ध्यानी तपी जपी त्यागी वैरागी इत्यादि गुणवन्तों की निन्दा करे-अवर्ण वाद बोले, इत्यादि अविनय करे सो मिथ्यात्व.

२ "अशातना मिथ्यात्व"—अर्थात्—३३ अशातना करे, गुणोवृद्ध, वयोवृद्ध मान्यवन्त मनुष्योंका सत्कार सन्मान नहीं करे, संताप उपजावे, या ताडना तर्जनादि आशातना करे सो मिथ्यात्व.

३ "अकिरिया मिथ्यात्व"-अर्थात्-कितनेक तो आत्मा को अक्रिय ही मानते हैं, अर्थात्-आत्मा न तो शुभाशुभ कर्म की कर्ता है और न भुक्ता है. और कितनेक आत्मा तारन का उपाय जो यम नियमादि क्रिया की जाती है, उसे व्यर्थ क बताते हैं, कितने फक्त एक ज्ञान सेही सिद्धी मानते हैं, क्रिया का नाश करते हैं, वगैरा यह सब अक्रिया वादी मिथ्यात्वी में गिने जाते हैं.

४ "अज्ञान मिथ्यात्व"-अर्थात्-जहां अज्ञान है वहां नियमासे मिथ्यात्व है, क्योंकि अज्ञानी धर्म अधर्म-शुभाशुभ कृतव्योंको और उसके फलसे अविज्ञ रहता. वह पन्थके देखा देखी क्रिया करते हैं, और फक्त उस क्रिया से ही मोक्ष मानते हैं. ज्ञान का निषेध करते हैं, इसलिये अज्ञानी मिथ्यात्वी है.

५ "परिवर्तन मिथ्यात्व"-अर्थात्-सम्यक्त्वी तो हैं, परन्तु गुणानुरी हैं

लच वश हो मिथ्यात्वी के मिथ्याकृतव्यों में सहाय करना मिथ्यात्वीयों से मिलकर रहना. मिथ्यात्वीयों के जैसे कृतव्यों करना, सो परि वर्तन मिथ्यात्व..

६ "परिणाम मिथ्यात्व"–अर्थात्-व्यवहार में तो सम्यक्त्व का पालन कर ते हैं, परन्तु अभ्यन्तर में मिथ्यात्व मोहका उपशम न होने से परिणामों से मिथ्यात्व का सेवन होता है सो परिणाम मिथ्यात्व.

७ "प्रदेश मिथ्यात्व"—अर्थात्–जो अनादि काल से मिथ्यात्व के दलिये खीर नीर की तरह आत्म प्रदेशों के साथ मिल रहे हैं. वो क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति होनेसे ही दूर होते हैं. जहां तक क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति न होवे वहां तक प्रदेश मिथ्यात्व गिना जाता है. (इसकी सत्ता इग्यारवे गुणस्थान तक पाती है. क्योंकि वो पडवाइ हो मिथ्यात्व तक आजाते हैं)

यों शास्त्रों और ग्रन्थों के आधर से मिथ्यात्व के ३४ भेद लिखेगये हैं. यह लक्षणों जिनों में पाते होवें. उन्हे मिथ्यात्वी जानना.

दुसरे और तीसरे गुणस्थान का अर्थ मूल मुझयही समझना कुछ विशेष न हो नेसे न लिखा.

चौथा अविरति सम्यक दृष्टि गुणस्थान के लक्षणः—

जीवादि नव तत्वों के द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नय कर बताया निश्चय और व्यवहार कर द्रव्य से क्षेत्रसे कालसे और भाव से जाने सो कहते हैं:—

१. "जीव तत्व"—सदा जीवता रहे, चेतना लक्षण युक्त; दश द्रव्य प्राण और चार भाव प्राण का धारक, प्रदेश आत्मक, ज्ञान दर्शन स्वभाव. द्रव्यार्थिक नय से नित्य. पर्यायार्थिक नय से आनित्य, परिणामी द्रव्य, व्यवहार नय से कर्म का कर्ता और भोक्ता, निश्चय नय से शुद्ध चित्त पर्याय का कर्ता, निज स्वरूप का भोक्ता, उदयीक भाव के मिलापक रूप, छद्मस्तके चेष्टादि लिंग गम्य, केवली के प्रत्यक्ष शरीर प्रमाण. अरूपी सो जीव द्रव्य. और (१) द्रव्य से निश्चय नय के मत से सर्व एक रूप हैं, व्यवहार नय के मत से-नरक तिर्यंच मनुष्य देवादि में अनेक रूप धारण करते हैं. (२) क्षेत्र से सर्व जीवो असंख्यात प्रदेशी लोक व्यापी हैं. (३) का-सें निश्चय नय के मत से ध्रौव्य आनादि अनन्त, व्यवहार नय के मतसे चारों गति में शरीर धारण की अपेक्षा उत्पात व्यय होताही रहता है जिस से, सादी सान्त हैं. (४) भाव से-निश्चय नय के मत से सब जीवों पारिणामिक भाव में-अपने २ स्वभाव

में प्रवृतते हैं. और व्यवहार नय के मत से संसारी जीवों शुभाशुभ भाव मे परीण मते हैं.

२ "अजीव तत्व"—सदा निर्जीव रहे, जड लक्षण, प्रमाणड आत्मक पुद्गल प्रदेश आत्मक, धर्मास्ति आदि तीनों द्रव्य- द्रव्यार्थिक नय मे नित्य, पर्यायार्थिक न मे अनित्य, घट पटादि रूप पलटता रहे, परिणामिक द्रव्य, और (१) द्रव्य से-धर्म स्तिके द्रव्य का चलण सहाय गुण, अधर्मास्तिके द्रव्य का स्थिर सहाय गुण, आ कास्तिके द्रव्यका विकाशदान गुण, काल द्रव्य का-पर्याय प्रवर्तन गुण, पुद्ग द्रव्यका पूर्ण गलन. (२) क्षेत्रसे-धर्मास्ति अधर्मास्ति और पुद्गलास्ति लोक व्यापक असंख्या प्रदेशी, आकाश लोकालोक व्यापक, अनन्त प्रदेशी. काल व्यवहारसे अढा द्वीप-समय क्षेत्र व्यापक वर्तनसे सर्व लोक व्यापक अप्रदेशी, (३) कालसे द्रव्य नय की अपे क्षासे तो पांचों ही द्रव्य अनादि अनन्त हैं. और पर्याय से-देश प्रदेश आश्रिय या अगु लघु आश्रिय धर्मास्ति अधर्मास्ति उत्पाद व्यय आश्रिय काल, पूर्ण गलन आश्रिय स्कन्ध परमाणु आश्रिय पुद्गल सादि सान्त हैं. (४) भाव से—चारों द्रव्य तो वर्ण गं रस स्पर्श रहित हैं, और पुद्गल वर्णादि सहित हैं.

३ "पुण्य तत्व"—किये कृतव्यों का पुनः शुभ फल दाता सो पुण्य, सुखद ता लक्षण, पुद्गलिक पदार्थ, आत्मोन्नति कर्ता. साता वेदनीय आदि शुभ प्रकृति क भोगवना सो द्रव्य पुण्य, दान दयालुता, सराग संयम, शुभ परिणामों की प्रवर्त सो भाव पुण्य. और (१) द्रव्य से-पुण्य के ४२ भेद. (२) क्षेत्र से-पुण्य पुद्गल लोक व्यापी, (३) कालसे-अभव्य आश्रिय संतति अनादि अनन्त, भव्याश्रिय अनादि सां त, (४) भाव से ९ प्रकार से पुण्य उपार्जन होवे.

४ "पाप तत्व"—जो मलिनि दिशा में आत्मा को माप-पटके सो पाप, दुः ख दाता लक्षण, पुद्गलिक पदार्थ, मिथ्यात्वादि कर्म प्रकृति सो द्रव्य पाप, मिथ्यात्व दि के उदय से उपरत मलीन परिणाम सो भाव पाप. और (१) द्रव्य से भोगवे के ८२ भेद, (२) क्षेत्र से-पाप पुद्गल लोका व्यापी, (३) काल से-अभव्याश्रिय अन दि अनन्त. भव्याश्रिय अनादि सान्त, (४) भाव से-१८ प्रकारे पापो पार्जे.

५ "आश्रव तत्व"—कर्म पुद्गल आनेका मार्ग सो आश्रव पुद्गलिक प्रणति रूप उदयिक भाव की प्रणति रूप सो भाव आश्रव. तमनिमित्त रूप कर्म दलका आग म सो द्रव्य आश्रव. और (१) द्रव्य से पुण्य पापादि रूप दलिक का संचय करन

सो. (२) क्षेत्र से-लोक व्यापि. (३) काल से-अभव्याश्रिय अनादी अनन्त. भव्याश्रिय अनादि सान्त. (४) भावाश्रिय-पुन्य पापका उपार्जन करना सो आश्रव.

६ "संवर तत्व"—आते हुवे कर्म पुद्गलों को रोक देवे—आत्मा को लगने न देवे सो संवर. आत्म परिणती रूप. निरुपाधि लक्षण. क्षायिक क्षयोपशमादि भाव रूप, भाव संवर. उस निमित प्रवर्तीनो द्रव्य संवर. और (१) द्रव्य से संवरके ५७ भेद. (२) क्षेत्र से चउदह राजू लोक (त्रस नाल) प्रमाणे. (३) कालसे-क्षायिक भाव आश्रिय सादि अनन्त. और क्षयोपशमिक भाव आश्रिय सादि सान्त. (४) भाव से अपने स्वरूप-ज्ञानादि गुणों में रमण करना सो सम्वर.

७ "निर्ज्जरा तत्व"—आत्मा से सम्बन्ध पाये हुवे कर्म पुद्गलों का झरना सो निर्ज्जरा. संयम तपादि जनक भाव सो भाव निर्ज्जरा. और उनसे सोनो कर्म पुद्गल आत्मासे दूर हुवे सो द्रव्य निर्ज्जरा. और (१) द्रव्य से-निर्ज्जरा के १२ भेद. (२) क्षेत्रसे-चउदह राजु लोक (त्रस नाल) प्रमाणे. (३) काल से-सादी सान्त. (४) भाव से सर्व इच्छाका निरूंधन कर सम भाव में प्रवर्तन होवे सो निर्ज्जरा.

८ "बन्ध तत्व"—शुद्धात्म गुणों के प्रतिकूल जो कषाय विषयादि गुणों है उनसे आकर्ष कर जो कर्म पुद्गलों का आत्मा प्रदेशोंके साथ सम्बन्ध होवे सो बंध. कर्म को ग्रहण करने रूप जो चिकणास लिये सत्ता है सो भाव बन्ध. उनके जोग से जो कर्मों के दलीयोका जमाव होकर ठहरे सो द्रव्य बन्ध. और (१) द्रव्य से बन्ध के च्यार प्रकार. (२) क्षेत्र से-लोक प्रमाण. (३) काल से-सादी सान्त. (४) भाव से राग द्वेष अज्ञानता रूप चीकास सो बन्ध.

(९) "मोक्ष तत्व"—सम्पूर्ण कर्मों का नाश कर आत्माका छूटकारा होना सो मोक्ष. कर्म पहलों के दूर होने से स्वानुभव होना सो भाव मोक्ष. जिस स्वानुभव से कर्मोंके बन्धन से छूटना सो द्रव्य मोक्ष. और (१) द्रव्य से मोक्ष साधन के ४ कारणो. तथा केवल ज्ञानी सो द्रव्य मोक्ष. (२) क्षेत्रसे—अढाद्वीप प्रमाण. (३) काल से—सर्व सिद्धों आश्रिय अनादि अनन्त. एक सिद्ध आश्रिय सादि अनन्त. (४) भावसे सर्व कर्मोंसे निर्मुक्त हो सिद्ध क्षेत्र में जो सिद्ध भगवन्त अनन्त ज्ञानादि गुणयुक्त बिराजते हैं सो भाव मोक्ष.

यों यह नवों पदार्थों-द्रव्यार्थिक नय से नित्य हैं, [illegible] अनित्य हैं. निश्चय नय से अभिन्न हैं. व्यवहार नय से भिन्न हैं. [illegible]

से-अनेक, ज्ञान नयसे ज्ञेय, क्रिया नयसे-हेयोपादेय, परस्पर मा पेक्षा, अनन्त धर्म सम कथंचित्-उत्पन्न, कथंचित्द्रि नष्ट, कथंचित् ध्रौव्यः यों विरूप एकही समयमें श्रद्धे और भी इने नय निक्षेपे प्रमाण आदि द्वारा जिनेन्द्र भाषित सूत्रानुसार श्रद्धने की रु- ची रक्खे सो चतुर्थ गुणस्थान धर्मी धर्मात्मा जानना .

सम्यक्त्वी के ६७ लक्षणों का अर्थ मूल प्रमाणेंही जाणना.

पांचवे गुस्थान के लक्षण.

"श्रावककी ११ प्रतिमा."

आर्य-श्रावक पदानि देव । रेकादश देशितानिय पुखतु ॥
स्वगुणाः गुणैः सह । संत्तिष्टन्ते क्रम विवृद्धा ॥ १ ॥

अर्थ-श्रीजिनेश्वर भगवन्त ने श्रावकों को गुणवृद्धि करने के इग्यारे स्थानक फरमाये हैं, उनमें श्रावकी प्रवर्त तैहवे जों जों योग्यता को प्राप्त होतेहैं, त्यों त्यों पीछे के गुणों में कायम रहते हुवे आगे को गुणों की वृद्धि करते जाते हैं.

आर्या-दंसण वय सामाइय । पोसह सचित्त राइ भत्तेय ॥
बंभारंभ परिग्गह । अणुमण उदिट्ठ देश विरदोय ॥२॥

अर्थ-उन ११ स्थानक के नाम-१सम्यक्त्व, २ व्रत, ३ सामायिक, ४ पौष- ध, ५ रात्रिभोजन त्याग, ६ सचित त्याग, ७ ब्रह्मचर्य ८ आरंभ त्याग, ९ परिग्रह त्याग, १० अनुमति विरत, और ११ उदिष्ट विरति-देशविरति. इस प्रकार से अनुक्र- में गुणों वृद्धि करते हैं.

आगे इन ११ ही स्थानक कोंका अलग २ विस्तारसे स्वरूप कहते हैं:—

आर्या-सम्यग् दर्शन शुद्धः । संसार शरीर भोग निर्विण्ण ॥
पंचगुरू चरण शरणं । दर्शनिक स्तत्त्व पथ गृह्य ॥ ३ ॥

अर्थ-देश विरति-श्रावक का पद प्राप्त करने का अव्वलही पंक्तिपा सम्यक्त्व है, जिसका विस्तार से वर्णन चौथे गुणस्थानमें कियागया है. उनगुणों संयुक्तही जी- व इन पञ्चम गुणस्थान में प्रवेश कर यहां सम्यक्त्व की विशेषशुद्धि करते हैं. अ- र्थात्-संसार से शरीर से और भोगों से विरक्त भावी होते हैं. संसारिक कुटम्बको

तो नतजेवी जान धायमाता (दूध पिलाने को रक्खी हुइ धाय) बच्चेको लाडलडाती हु इ भी विरक्त रहे त्यों ममत्व बन्धसे विरक्त रहे. व्योपारी ज्यों लाभोपार्जन की इ-च्छा से द्रव्य व्यय करते हैं, त्यों शरीर को धर्म करणी करने पेपेन हुवे विभूषादिसे विरक्त रहैं. और ज्यों व्यसनी अफीम को जहर जानते समान युक्त भोगवते है. त्यों भोगोपभोगका प्रमाण कर विरक्त रहते हैं. अर्हन्तादि पंच परमेष्ठि केही शरण भूत जा नते हुवे अन्य का शरण स्वप्न मात्रमें भी नहीं वांछते हैं. और सर्वज्ञ भणित तत्वों के ज्ञान को पथ्य (रुची कारक) आहार की माफिक ग्रहणकर परिणमाते-पचावेहैं. सो दर्शनिक-सम्यक्त्व रूप प्रथम स्थानक में प्रवर्तक देशविरती श्रावक कहे जाते हैं.

"शङ्का काङ्क्षा विचिकित्सा ऽ न्यदृष्टि प्रशंसा संस्तवाः सम्यग्दृष्टे रतीचाराः" अर्थात्-१ श्रीजिनेश्वर भगवन्त के अतिगहन सूक्ष्म जेसे वचन अपनी अल्प छोटे जैसी बुद्धि में न समानेसे-समझमें न आने से शङ्का-वेम लावे. २ धर्म करणी-फलकी या अन्यमतकी वांछा करे. ३ साधुओंके या रोगी ग्लानोके मलीन गात्र देख दुर्गंछा करे, या करणी का फल होगा कि नहीं ऐसा सन्देह करे. ४ पर (दूसरे) पाखण्डियों की परसंसा (महिमा) करे. और ५ पाखण्डियों का संस्तव (सङ्ग) परिचय-सङ्गति करे. तो सम्यक्त्व में अतिचार (दोष) लगता है. ऐसा जान सम्यक्त्वी श्रावक इन पांचोंही कामोंसे दीर्घ उपयोग युक्त सदा बचाव करते ही रहते हैं. सम्यक्त्व में दोष लगने नहीं देते हैं.

ऐसीतरह से जब दर्शन-सम्यक्त्व में निश्चलात्मक बन जाते हैं. तब अधिक वैराग्यकी वृद्धि कर ने दुसरे व्रत नामक स्थान में प्रवेश करते हैं. जिसका स्वरूप कहते हैं.

आर्या—निरति क्रमण मणुव्रत । पंचक मपि शील सप्तकं चापि ।
धारयते निःशल्यो । यो सौ व्रति नामतो व्रतिकः ॥ ४ ॥

अर्थ—"निःशल्योव्रति" इस सूत्रानुसार प्रथम-हृदय रूप क्षेत्र(खेतको) तीनों शल्यों से निष्कन्द-विशुद्ध करतेहैं अर्थात्-प्रथम माया शल्य का निकन्दकर - अभ्यान्तर-अन्तरीक चित्तवृत्तिको सरल (ढोंगकी [illegible] रहित) बनाते हैं. दुसरे नियाणा-निदान शल्यका निकन्द कर व्रत-धर्म करणी के इहलोक परलोक सम्बन्धि फलकी वांच्छा नहीं करते. विवांछक (अमरती) करणी कर नि लाभ [illegible]

म करते हैं. और तीसरा मिथ्यादर्शण-कुमत श्रद्धान का शल्य का निकन्द कर जिन वचनों के युक्त आस्तिक्य यन, की हुइ व्रतादि करणी को निर्मळ-निर्दोष रक्खते हैं. इन तीनो शल्य रहित हृदय क्षेत्र को बना फिर सम्यक्त्व युक्त व्रत बीजारोपण करते हैं सो कहते हैं:-

सूत्र-हिंसा नृतस्तेया ब्रह्मपरि ग्रह भ्यो विरतिं व्रतम् ॥
दिग्दे शानर्थ दण्ड विरति । सामायिक पोपधोपवासो
भोग परिभोगाऽतिथि संविभाग व्रत सम्पन्नश्च ॥

अर्थ-हिंसासे, झूठसे चोरीसे, मैथुन से, और परिग्रह से, पांचों से जो निवृतने हैं-र ने छोडते हैं सो पंच व्रत कहे जाते हैं. इन से निवृत्ति दो तरह से होती है:-"देश म र्व तो अणु महती" अर्थात्-जो सर्वथा प्रकारे इन पांचोही कामों का त्याग करते हैं. सो महाव्रती (साधु) कहे जाते हैं. और इनों की अपेक्षा से जो देश-थोडा मा त्याग करते हैं सो देशव्रती (श्रावक) कहे जाते हैं. +

और दिशाव्रत, देशव्रत, अनर्था दण्डव्रत उपभोग परिभोग परिमाण सामायिक पौषध उपवास, और अतिथी संविभाग, इन ७ को शीलव्रत कहते हैं, यों १२ व्रतों के धारक श्रावक कहे जाते हैं.

और "व्रत शीलेपु पञ्च पञ्च यथा क्रमम्" अर्थात् उपरोक्त पांचों व्रतों और

* साधू तो (२०) बीस विश्वा दया पाल्ते हैं, और श्रावक (१।) सवा विश्वा दया पाल शक्ते हैं. जिसका हिसाब इस तरह से हैं:—साधुनो त्रस और स्थावर दोनों प्रकारके जीवों की हिंसा से निवृते हैं. और श्रावक फक्त त्रस की हिंसा से निवृते, इसलिये १० विश्व कमी हुवे. साधूनो आरंभिक और संकाल्पिक दोनों तरह से त्रस की हिंसा से निवृते हैं, और श्रावक के आरंभ में त्रस की हिंसा निपज जाती ही है, परन्तु सकल्प कर (जानकर) मारते नहीं हैं. इसलिये ५ विश्वाही दया रही. साधु तो स अपराधी और निरपराधी दोनोंकी हिंसा से निवृते हैं, और श्रावक तो फक्त निरपराधी की हिंसा से निवृते हैं. इसलिये २॥ अढाइ विश्वाही दया रही. और साधुनो आकोटी अणाकोटी दोनों प्रकार त्रस की हिंसा से निवृते हैं. और श्रावक तो फक्त आकोटी (देख कर) जीव मारने से निवृते हैं इसलिये १। सवा विश्वाही दया जो उत्कृष्ट श्रावक होते हैंसो पाल सकते हैं.

सातों शीलों के पांच २ × अतिचार हैं सो अनुक्रम से आगे कहते हैं:—

"व्रत और अतिचार"

१. "थूलाओ पाणाइ वायाओ वेरमणं" अर्थात्-बडेजीवों जो हलते चलते मत्यक्ष में दृष्टि गोचर आतेहैं ऐसे निरपराधीको जान कर देखकर दोकरण और तीन जोग कर घात करे नहीं. इस व्रतके ५ अतिचारों:-"बन्ध वध च्छेदा-तिभार रोपणा-न्नपाना निरोधा" अर्थात्-मनुष्य पशु पक्षी आदि किसी भी त्रस जीवों को-१. मजबूत बन्धन से बान्धे, २ चाबूकादि से मारे, ३ अवयव-या चर्मका छेदन करे, ४ शक्ति से ज्यादा काम लेवे, और ५ खान पान का निरोध करे- तो इस व्रत में दोष लगता है. ऐसा जान इन ५ कामोंको नहीं करे.

२ "थूलाओ मूसा-वाया ओ वेरमणं" अर्थात्-स्थूल बडा झूठ-जिस से राजा का दन्डका और लोकों का निन्दाका पात्र बनें ऐसा झूठ दो करण और तीन जोग से नहीं बोले, इस व्रत के ५ अतिचारों:—"मिथ्योप देश रहोभ्याख्यान कूट लेख क्रिया-न्यासापहार-साकार मन्त्र भेदाः"—अर्थात्-१. खोटा-झूठा उपदेश देवे, २ गुप्त कर्म प्रगट करे, ३ खोटा खत लिखे, ४ अन्यका द्रव्यादि छिपावे-दबावे,और ५ चुगली करे, तो इस व्रत में दोष लगे. ऐसा जान यह ५ काम त्यागे.

३ "थूलाओ अदिन्ना-दाणाओ वेरमणं" अर्थात्-बडी चोरी जिससे राजके दन्ड का और लोकों के निन्दा-अविश्वास का पात्र बने ऐसी चोरीका दो करण और तीन जोग से त्याग करे. इस व्रत के ५ अतिचारः—"स्तेन प्रयोग तदाहृतदान विरुद्ध राज्याति क्रम, हिनाधिकमानोन्मान, प्रतिरूपकव्यवहाराः" अर्थात्—१. चोर को सहाय देवे. २ चोरका माल लेवे, ३ राजा की आज्ञा उल्लंघे, ४ तोले मापे कम ज्यादा रक्खे, और ५ तत्प्रति रूप वस्तु (हलकी) मिलाकर देवे, तो इस व्रत में दोष लगे. ऐसा जान इन ५ कामोंका त्याग करे.

× त्याग की वस्तु को—१.भोगने की अभिलाषा करे सो अतिक्रम, २ भोगवने केलिये गमन करे सो व्यति क्रम, ३ भोगवने को ग्रहण करे सो अतिचार, और ४ भोगव लेवे सो अनाचार. इन चारों प्रकार के दोषों में से पहिले के दोप्रकार के दोषों तो गृहस्थ को सहज लग जातेहैं और उनकी निवृति पश्चाताप व प्रतिक्रमणादि से हो जातीहै. परन्तु. तीसरा दोष तो विन प्रायश्चित दूर न होता है. इसलिये यहां व्रतों के अतिचारोंही दर्शाये गयेहैं.

४ "सदारा संतोस आवेसं मेहुणाओ वेरमणं" अर्थात्–जिस स्त्रीका प
(हाथ) ग्रहण किया है, उसे संतोष उसके उस उपरान्त सर्वथा मैथुन सेवन करने
का करण तीन जोग से त्याग करे. इस व्रत के ५ अतिचार:—पर विवाह क
रणित्वरिक गृहीता–अपरिगृहीता गमना-नङ्ग क्रीडा काम तीव्राभि निवेशा" अर्था
१ दूसरे का विवाह करावे, २ पाणी ग्रहण की हुई छोटी उम्मर की स्त्री का से
वे, ३ सगाई किया पाणी ग्रहण(लग्न) की हुई का सेवन करे, ४ योनी सिवाय
के अन्य से क्रीड़ा करे, और ५ भोग में लुब्धता रखे तो इस व्रत में दोष लगे.
अतः इन ५ कर्मों का त्याग करे.

५ "थूलाओ परिग्गहाओ वेरमणं"—अर्थात्—स्थूल बडी इच्छा से नि
धन धान्य आदि की मर्यादा करे कि इससे उपरान्त द्रव्य एक करण तीन जोग
नहीं रखूंगा. इस व्रत के ५ अतिचार:—"क्षेत्र वस्तु हिरण्य सुवर्ण धन धान्य
दास दास कुप्य प्रमाणातिक्रमा" अर्थात्-१ खेत घर आदि भूमिका, २ चान्दी स
दि धातु का, ३ धन (नगद) धान्य (अनाज) आदि द्रव्यका, ४ दासी दास च
तुष्पद का, और ५ जो घरादि के अनेक कार्यों में वस्तु बापरने में आवे उ
सका एक करण तीन जोग का (मर्याद) किया है, उससे अधिक वस्तु रखने
इस व्रत में दोष लगता है, ऐसा जान अधिक रखे नहीं.

६ "दिशि प्रमाणव्रत"—अर्थात्—पूर्व,पश्चिम, दक्षिण, उत्तर, और नीची ऊं
ची दिशा में गमन करने का (आवेदा) प्रमाण एक करण तीन जोग
इस व्रत के ५ अतिचार:—"ऊर्ध्वाधस्तिर्यग् व्यतिक्रम क्षेत्रवृद्धि स्मृत्यन्तराधान
अर्थात्-१-२-३-ऊंची नीची तिर्छी (चारों) दिशी का जो प्रमाण किया है
उससे आगे, ४ एक दिशीके क्षेत्रका प्रमाण दूसरी दिशीमें मिलावे. और ५ याद
भूलने से सन्देह न पड़े वहां तक आगे जावे तो इस व्रत में दोष लगता है.
अतः ५ कामों का त्याग करे.

७ "उपभोग परिभोग परिमाण व्रत"—अर्थात्-आहार आदि जो वस्तु ए
कही वक्त भोगने में आवे सो उपभोग, और वस्त्रादि वारम्बार भोगने में आवे सो
परिभोग इन दोनों प्रकार की वस्तु की जाति और संख्या भोगने का प्रमाण(मर
एक करण तीन जोग का करे. इस व्रत के ५ अतिचार:—"सचित्त सम्बन्ध स—
म्मिश्र दुष्पक्वाहारा" अर्थात्-१ नियमा बाहर किया ऐसी सचित्त (सजीव) वस्तु

का, २ सचित्त मिली हुइ अचित्त वस्तु का, ३ मिश्र वस्तु का,इनशेकी (केफी) वस्तु का. और ५ पूरी पकी न होवे एसी वस्तु का या पक कर बिगड गइ हो एसी वस्तु को भोगवने से इस व्रत में दोष लगता है. ऐसा जान इन पांचों प्रकार की वस्तु का त्याग करे.

और भी इस व्रत के धारक १५ कर्मदान त्यागते हैं.

> अङ्गार वन शकट भाटक स्फोट जीविका ।
> दन्त लाक्ष रस केश विष वाणिज्य का निच ॥
> यन्त्र पीडा निलान्छन मसंघाति दोषणं तथा ।
> दव दान सरः शोष इति पञ्च दशत्यजेत् ॥

अर्थात्–अग्नि के आरंभ का, २ वन कटाने का, ३ गाडे आदि वाहन बेचने का, ४ वाहन भाडेदेने का, ५ दांतोंका, ६ लाखका, ७ पृथव्यादि फोटनेका, ८ रसका, ९ केश (पशु) का, १० जेहर का, ११ यन्त्र (मीलों) का, १२ अंग भंग कर ने का, १३, दासादि का, १४ वस्तु जलाने का, और १५ निवाणों मे पाणी निकाल ने का, यह १५ प्रकार के व्यापारका भी त्याग कर ने हैं.

८ "अनर्थ दन्ड विरमण व्रत"–अर्थात्–जिस से अपना या दूसरे का कुछ भी मतलब निकलता न हो ऐसे अनर्थ दन्ड (पाप) कामों का एक करन एक जोग से त्याग करे. इस व्रत के ५ अति चारः—"कन्दर्प कौत्कुच्य मौखर्या समीक्ष्याधिकरणो - भोग परिभोगानर्थ क्यानि"–अर्थात् १ काम जाग्रत होवे ऐसी कथा करे, २ अंगकी कुचेष्टा करे, ३ ज्यादा बकवाद करे (बिना काम बोले) ४ पाप कारी वस्तु का संयोग मिलावे. और ५ भोगोप भोग में वृद्धि करे, तो इस व्रत में दोष लगता है, ऐसा जान पांचों कामों का त्याग करे.

ऐसी तरह से दूसरी व्रत प्रतिमा में उपरोक्त बारों व्रतों को धारण कर. उन के जो जो अतिचारों कहे हैं उनको सर्वदा प्रकार टाल के-त्यागते हुवे शुद्ध पालते हैं; सो व्रत धारी दूसरे प्रतिमा पर प्रवर्त ने वाले देशव्रति (श्रावक) कहे जाते हैं. *

* [illegible]

ऐसी तरह से व्रत प्रतिमा में प्रवर्तते जब व्रतों में निश्चलात्मक बन जाते हैं, और अधिक वैराग्य की वृद्धि होती है, तब सर्व व्रति (साधुपना) लेने को असमर्थ हुवे. साधु पनेकी वानगी चखने के वास्ते, तीसरी सामायिक प्रतिमा धारन करते हैं.

चतुरावर्त त्रितय । श्चतुः प्रणाम स्थितो यथा जातः ।
सामायिको द्विनिपद्य । स्त्रियोग शुद्ध स्त्रिसन्ध्याममिवं॥५॥

अर्थात्-सम=समभाव, आय=आवे, इक=जिस वक्त. अर्थात्-जिस वक्त अपनी चित्त वृत्ति की सम भाव में प्रवृत्ती होवे सो सामायिक व्रत यह द्रव्य तो सावद्य (हिंसक) जोग (मन वचन काया) से और भाविक राग द्वेष से निवृते, सम भाव में प्रवृत्तिका इस की आराधना करने के वास्ते कम से कम एक मुहुर्त (४८ मिनीट) काल तक का प्रमाण बन्धा है, और विशेष तो आपनी इच्छा होवे वहां तक इस व्रत की आराधना श्रावक जन कर सकते हैं. सामायिक व्रत आराधन कर ने की विधी इस मुजब हैकिः-जहां छेही कायका आरंभ विक्रम श्रवन दर्शन न होवे ऐसे एकान्त स्थान में, इर्या पन्थ सोधन पूर्वक जाकर यत्ना पूर्वक गृहस्थ का जो लिंग (भेष-कपडे) हैं, उसे छोडकर, साधु के जैसे पहर ने ओढने के वस्त्र की भाति लेखना कर-धारन करे, पूंजनी-गुच्छक से जमीन पूंज, एक पट वस्त्र श्वेत रंग का एकही मनुष्य सुख से बैठ सके ऐसे आसन को बिछा-मुहपाती मुखपर बान्ध, देव गुरु को तिखुत्ता के पाठ से वंदना कर, इतनी धर्म क्रिया करते किसी प्रकार की विराधना हुइ हो उसकी निवृत्ति अर्थ-इर्यावही का सूत्र रूप पाठका उच्चारन कर, उस दोषकी विशुद्धि के लिये-तस्सुत्तरी का सूत्र पाठ कह, कायुत्सर्ग (कायाको एक स्थान स्थिर) कर, मन में इर्यावही सूत्र का अर्थ का चिन्तावन कर, लगे पापके पश्चताप पूर्वकका युत्सर्ग की समाप्ति कर, दोष निवृत्ति की खुशाली के लिये चौवीसत्व (लोगस्स का) सूत्र कहे. सामायिक व्रत धारन करे, फिर नीचे बैठ डावा घुटना ऊभा रख कमल होडी वत दोनों हाथों को जोड गोडे पर स्थापन कर तीन आवर्तन युक्त - अर्हन्त को सिद्धको और गुरुको नमुत्थुणं सूत्र से स्तवन कर, ३२ दोष रहित + तीनों यो-

---

+ दशमन के दोष-१ सामायिक करिविधी और फलका अज्ञान होवे. २ सामायिक कर कीर्ती-यशकी वांछकरे. ३ "करेगा सामाइ सो होवेगा कमाइ" इत्यादि इसलोक के लाभकी इच्छा करे, ४ मैं बड धर्मात्मा हूं शुद्ध सामायिक करने वाला हूं इत्यादि गर्वकरे. ५ राजा

गों को रक्त, शास्त्र श्रवण पठन मनन स्मरण स्तवन आदि धर्म ध्यान में रमण करे जिसे सामायिक व्रत कहते हैं. "योग दुः मणि धानानादार स्मृत्य नुपस्थानानि"- अर्थात्-मन के वचन के और काया के योगों को दुमति ध्यान-खोटे कार्यों में परवृतावे. आदर रहित सामायिक करे. और सामायिक स्मृति-यददास्ति भूल जावे तो सामायिक में अतिचार लगता है-ऐसा जान इन पांचों दोषों से साफ दूर रहकर सामायिक करते हैं.

ऐसी तरह की शुद्ध सामायिक कमसे कम एक फजर एक दो पहर के और एक स्याम को यों तीन तो जरूर ही करे. ज्यादा करने का अवसर - वक्त मिलेतो लाभ को गमावे नहीं!

ऐसीतरह से तीसरी भूमीका में प्रवृत्त ते हुवे जब श्रावकजीको कुछ२ आत्मानु भवका अनन्द चख ने का एक प्रहर के अवकाश में जो मजह प्राप्त होता है. उस

सेठ कुटुम्ब आदिके डर से सामायिक करे. ६ सामायिक के फल का निदाना करे. ७ सामायिक के फल का सन्देह करे (होगाकी नहीं!) ८ क्रोध मान माया लोभ के वश सामायिक करे. ९ गुरु महाराज का और धर्मोप करण का बहुमान नहीं करे. १० दूसरे का अवगुण का चिन्तवन करे.

इन वचन के दोष—१ कुवच बोले, २ विनाविचारा बोले, ३ झगड़ा खड़ा होवे ऐसा वचन बोले, ४ असम्बन्ध—असत्य [illegible] बोले. ५ नवकार मन्त्रादि सूत्रका पूरा पाठ उच्चारण नहीं करे. ६ क्लेश उत्पन्न होवे ऐसे मर्मिक वचन बोले. ७ हास्य-मस्करी-हंसी ठिठ्ठा करे. ८ स्त्री-की भोजन की, देशकी, राजकी, चोरकी, आदिकी इत्यादि विकथा करे. ९ दूसरे की निन्दा-अवगुण बाद बोले-और १० सूत्र पाठ आदि गड़बड़ कर जल्दी पूरा करे.

काया के दोष—१ अयोग्य आसन से बैठे २ अस्थिर आसन से बैठे. ३ दृष्टिको चपल करे. ४ पापके-आरम्भ के कार्य करे. ५ भींतादि का टेका लेकर बैठे. ६ [illegible] शरीर को सकोड़े प्रसारे, ७ आलस-प्रमाद करे. ८ अंगोपांग-कड़का करे. ९ शरीर का मैल उतारे १० [illegible] बैठे-११ निद्रा लेवे. और १२ वैयावृत्य करावे-पग चंपावे.

ये १० मनके, १० वचनके, और १२ कायाके सब ३२ दोषों रहित जो सामायिक करे ऐसे शुद्ध सामायिक कहते हैं.

ही मजह के रसीले बने, वो मजह अधिक विलसने की उत्कन्ठा जागृत होती है, उसे तृप्त करने अधिक काल परमार्थिक वृति में गुजार में चौथी भूमि का 'पौषध' नामक है, उस में यथा विधि से प्रवेश कर ते हैं सो- कहते हैं:-

पर्वादिषु चतुष्वी । मासे २ स्वशक्ति मनी गुह्या ॥
प्रोपध नियम विधायी । प्रण धिपरः प्रोपधानशन ॥६॥

अर्थात्-जो स्वात्माको ज्ञानादि त्रिरत्नों की यथा विधि आराधना कर और छेही जीवों की काया को अभय दान देकर पोषते हैं-पाल ते हैं-तृप्त करते हैं, उसे पौषधवृत कहते हैं.

यह पौषध वृत सामायिक वृत की माफि कही यत्ना पूर्वक एकान्त स्थान में सुकुमल पूंजणी से पूंज चार हाथ लम्बा और एक हाथ चौडा विछोना प्रति लेखकर विछावे, मुहपति मुखपर बान्ध कर, हाथ में रजुहरण ग्रहणकर-लघु नीती, बडी नीति, पित आदि के लिये भोजन और स्थान की प्रति लेख स्थान पर सामायिक व्रत में कही हुइ विधी मूजब प्रति लेखना के दोष की निवृत्ति के लिये 'इर्यावही सूत्र' कायुत्सर्ग आदि करे. फिर-"पौषध व्रत" ग्रहण करने के लिये यही विधि कर पोषध ग्रहण करे. फिर थोडे से थोडे चार प्रहर विशेष यथेच्छा प्रमाणे १८ दोष रहित आत्मा + ध्यान में काल गुजारे.

* वस्त्र पात्र स्थान आदि में कोइ जीव जन्तु होवे उनको सूक्ष्म दृष्टिसे देखकर उन्हे तक लीफ नहोवे, ऐसी तरह से एकान्त में स्थापन करे उसे प्रतिलेखना कहते हैं.

+ पोषद के १८ दोष पोषा के पाहिले दिन वर्जना चाहीये-कल पोषा करनाहै इस लियेही-आज. १ स्नान करे २ अब्रह्म (मैथुन) सेवन करे. ३ पोषा के निमितही सरस और ज्यादा आहार करे. ४ पोषाके निमित वस्त्र धोवावे. ५ शरीरको सिणगारे, और ६ वस्त्र रंगावे [यह ६ काम पोषाकिये के पहिले दिन करे तो दोष लगे] और पोषालिये बाद.—१ अव्रति (जिसने संवर सामायिक न कियाहो उस) का आदर सत्कार करे, बैठने को बिछोना देवे, वैयावच्च करे. २ अपने शरीर की विभूषा करे. केश-बाल संवरे. वस्त्र सजावे, वगैरे.३ अपने शरीर का या दूसरे के शरीर का मैल उतारे. ४ अधिक निद्रालेवे-अर्थात्-पोषेमें दिनको तो सोनाही नहीं चाहिये. और रात्रिको पहला छेला प्रहर छोड बीचके दोप्रहर से अधिक निद्रा लेवे ५ पूंजणी रजुहरण आदिसे शरीर को पूंजे विनाही खाज कुचरे, ६ छीयोंके

इस व्रत के ५ अतिचार:— "अप्रत्यवेक्षिता ऽप्रमार्जितोत्सर्गादान संस्तारोपक्रमणाऽनादर स्मृत्यनुप स्थानानि" अर्थात्-बैठने सोने का स्थान वस्त्र लघुनीतिका भाजन भूमीका आदि जो जो वापर ने (उपयोग) में आवे. उन को-१ दृष्टि कर देखे नहीं. २ पूंजनी कर पूंजे नहीं. वैसे ही. ३ बिना देखे बिना पूंजे हाथ पग आदि शरीर बिछोना संकोचे पसारे. पूंजनीयादि उपकरण ग्रहण करे. ४ अनादर से-बेगार समझे जैसा व्रतों में बहुमान-पूज्य दृष्टि रहित पौष करे. और ५ पौष करे के पौषाकी स्मृति-शुद्धि भूल जावे. जिस से पौषा के अयोग्य कृतव्यों को समाचरे तो पोषा में दोष लगे. ऐसा जान पांचों काम वर्जते हैं.

उत्सर्ग मार्ग में उपरोक्त विधि प्रमाणे कम से कम एक महीना में छे पौषेवो जरूर करे:—दोनो अष्टमी के दो आठ पेहरके और चउदश पूर्णिमा का दो तथा चउदश अमावास्या का दो ऐसा करे के सोलह पेहरका पोषा करे. और ज्यादा बन आवेतो बहुत अच्छा.

अपवाद मार्ग में—जो चारों अहार का त्याग कर पति पूर्ण पोषा कर ने की शक्ति नहीं हो तो. देशावकाशिक व्रत. ऊपर कही पौषे की विधि माफक कही धारण कर. निरारंभ निर्वद्य वृत्ति से प्रवर्ते. इस व्रत में जो तिविहार के पच्चखाण पूर्वक उपवास व्रत धारण करे तो-प्रासुक-निर्जीव उष्ण आदि पाणी ग्रहन करते हैं. और रोग या वृद्धावस्थादि प्रसङ्ग से इतनी शक्ति न होवे तो भिक्षा वृत्ति से निर्दोष आहार लाकर उपाश्रय (धर्म स्थान) में भोगवते हैं. या आहार लिपजे बाद अचिन्त कि

[illegible] ! [illegible] ७ [illegible] ८ [illegible] ९ [illegible] १० [illegible] ११ [illegible] १२ [illegible] ६ [illegible] १२ [illegible] १८ [illegible]

रिता चरित्र रूप धर्म से आत्मा को पोषते हुवे - ज्ञान के ध्यान में सदा निमग्न रहते हैं. कोइ भी किसी प्रकार की आरंभिक सम्मति मांग ने आवे या अपने शरीरार्थ कदापि आरंभी काम करने का किसी को आदेश नहीं देतेहैकि तुम अमुक प्रकारसे यह कार्य करो. आरंभी कार्य में मौन धारण करते हैं. क्षुधा प्राप्त हुवे आपने स्वजन के घर में जो भोजन निपजा हो उसे भोगव आते हैं. सदा धर्म ध्यान में काल गुजारते हैं.

जो निजार्थ और परार्थ आरंभ करना और कराना इन पापों से निवृत्त ते हैं. उन की पाप कार्यो में सहज अरुची उत्पन्न होजाती है. अर्थात्— फिर उनको पापारंभी वो उत्पन्न हुवा काम अच्छा नहीं लगता है. तब अनुमोदन-अच्छा जानना और व्याख्यान करना इस से निवृत्ति करने दसवी ' उदिष्ट कृत प्रतिमा ' धारन करते हैं:—

आर्या—अनुमती रारंभ । व परिग्रहे वैहिकेषु कर्म सुवा ॥
नास्ति खलु यश । समाधीर नुमति विरतः मन्तव्य ॥१०॥

अर्थात्—उपरोक्त भूमीका में दर्शाये मुजब आत्म साधन करते २ जब मनपर पूरा काबु जमाता हैं. तब मनकी सांरभी कार्य के अनुमोदन से सहज निवृत्ति होतीहै. वो - अर्थात्—घर के और परके. आरंभी और सपरिग्रही जो कार्यों सुनने में देखने में जानने में आइ हुइ बातों की. तथा आरंभ से निपजी हुइ वस्तु आहार इत्यादि जो भोगव ने में आवे उन की-परसंस्या गुणानु वाद करने से-मन कर उन कार्य को अच्छा जान ने से निवृतते हैं. आप हाथ से आरंभ करते नहीं. दुसरे के पास कराते नहीं. और उन के वास्ते किसी ने कुछ आरंभ कर कोइ वस्तु निपजाइ होवे तो वो उसे ग्रहण करते नहीं-भोगवते नहीं. शुद्ध निर्दोष प्रासुक बक्त सिर जो आहार पानी वस्त्रादि मिल जावे. उसे ग्रहण कर धर्मार्थ शरीर का निर्वाह करते सदा आत्मानन्द में लवलीन बने रहते हैं.

ऐसी तरह प्रवृत्ति करते जब मन पर पूरा कबू पालिया गया. तब निश्चय होगया कि-अब मैं साधु वृत्ती - मुनि धर्म का सुख से निर्वाह कर पार पहोंचा सकूंगा ऐसा निश्चय होते वक्त साधु धर्म को अंगीकार करनेकी इच्छावाली "ग्यारमी उद्दिष्ट" प्रतिमा से-साधु तो नहीं परन्तु साधु जैसे (नकली साधु) बनते हैं.

रिता चरित रूप धर्म मे आत्मा को पोषते हुवे - ज्ञान के ध्यान में सदा निमग्न रहते हैं. कोइ भी किसी प्रकार की आरंभिक सम्मति मांग ने आवे या अपने शरीरार्थ कदापि आरंभी काम करने का किसी को आदेश नहीं देते-हैकि तुम अमुक प्रकारसे यह कार्य करो. आरंभी कार्य में मौन धारण करते हैं. क्षुधा प्राप्त हुवे आपने स्वजन के घर में जो भोजन निपजा हो उसे भोगव आते हैं. सदा धर्म ध्यान में काल गुजारते हैं.

जो निजार्थ और परार्थ आरंभ करना और कराना इन पापों से निवृत्त ते हैं. इन की पाप कार्यो में सहज अरुची उत्पन्न होजाती है. अर्थात्— फिर इनको पापारंभी वो उत्पन्न हुवा काम अच्छा नहीं लगता है. तब अनुमोदन-अच्छा जानना और व्याख्यान करना इस में निवृत्ति करने दशवी 'उदिष्ट कृत प्रतिमा' धारण करते हैं:—

आर्या—अनुमती रारंभ । व परिग्रहे वैहिकेषु कर्म सुवा ॥
नास्ति खलु यश । समाधीर नुमति विरतः मन्तव्य ॥१०॥

अर्थात्—उपरोक्त भूमीका में दर्शाये मुख्य आत्म साधन करते २ जब मनपर पूरा काबु जमाता हैं, तब मनकी सारंभी कार्य के अन्मोदन से सहज निवृत्ति होतीहै. वो - अर्थात्—घर के और परके, आरंभी और सपरिगृही जो कामों सुनने में देखने में जानने में आइ हुइ बातों की, तथा आरंभ से निपजी हुइ वस्तु आहार वस्त्रादि जो भोगव ने में आवे उन की-परसंस्या-गुणानु वाद करने से-मन कर उस कार्य को अच्छा जान ने मे निवृतते हैं. आप हाथ से आरंभ करते नहीं, दुसरे के पास कराते नहीं, और इन के वास्ते किसी ने कुछ आरंभ कर कोइ वस्तु निपजाइ होवे तो वो उसे ग्रहण करते नहीं-भोगवते नहीं. शुद्ध निर्दोष फ्रासुक वक्त सिर जो आहार पाणी वस्त्रादि मिल जावे, उसे ग्रहण कर धर्मार्थ शरीर का निर्वाह करे सदा आत्मानन्द में तल्लीन बने रहते हैं.

ऐसी तरह प्रवृत्ति करते जब मन पर पूरा कबू पहोंच गया, तब निश्चय होगया कि-अब मैं साधु वृत्ति - मुनि धर्म का सुख से निर्वाह कर पार पहोंचा सकूंगा ऐसा निश्चय होते प्रथम साधु धर्म को अजमाने इग्यारामी "समण भूए" प्रतिमा में-साधु तो नहीं परन्तु साधु जैसे (नकली साधु) बनते हैं.

वनूं और उसवक्त साधु आवेतो उलट भावसे दान देवे. ऐसे दानार्थि श्रावकको इस व्रत के आराधन निमित ५ अतिचार वर्जने चाहीये:—"सचित्त निक्षेपा-पिधान पर व्यपदेश मात्सर्या कालातिक्रमाः–अर्थात्-जो वस्तु फ्रासुक-निर्दोष-साधु को देने जैसी होवे उसे सचित्त वस्तुपर रक्खे. २ सचित्त वस्तु कर ढके. ३ आप देने योग्य हो दुसरे पास दान दिरावे. ४ दान दिये पहिले या बाद् मत्सर भाव धारन करे. और ५ काल अतिक्रमे-उल्लंघे तो इन व्रत में दोष लगे. ऐसा जान सुपात्र दानार्थि इन पांचों कामों को वर्जते हैं.

यह बारवा व्रत सर्व स्थानों में जीवों के आदरनीय हैं. इस लिये प्रथम प्रतिमासे लगाकर इग्यारवी प्रतिमा के धारक भी अतिथी सम विभाग व्रत का अवसरसे आराधना करते हैं.

इन सिवाय और पांचवे गुणस्थान के लक्षणों का संक्षेपित अर्थ तो मूलपद से ही समझ में आवे जैसा है. विशेषार्थ जानने के लिये जैन तत्व प्रकाश आदि ग्रन्थों को देखीये.

छठे - प्रमत संयति गुणस्थान के लक्षण.

पांच महाव्रत—२५ भावना युक्त.

१ " सव्वं पाणाइ वाया ओ वेरमनं"—अर्थात्—सर्व-सूक्ष्म-बादर, त्रस-स्थावर जीवों की हिंसा से विकरण त्रियोग से निवृत्त-त्यागे. इस व्रत की रक्षा के लिये ५ भावनाः"—वाङ्मनो गुप्ती र्यादान निक्षेपण समित्या लोकित पान भोजनानि पञ्च" अर्थात्—१-२ मनको और वचन को पापके कामों से गोपे (छिपा) कर रक्खे. ३-४ चलती वक्त उपकरण शरीर को धरते उठाते और आहार आदि भोगवते यत्न सहित प्रवृतने से अहिंसा व्रत शुद्ध पलताहै.

(२) " सव्वं मुसा वायाओ वेरमनं " अर्थात्—किसी को अप्रिय कारी. और मृषा—झूठा वचन बोलने से त्रिकरण त्रियोगसे निवृते. इस व्रत के रक्षणार्थ पांच भावनाः—"क्रोध लोभ भीरुत्व हास्य प्रत्याख्यानान्य—नुवीचि भाषणं पंच" अर्थात्—१-४ क्रोध का—लोभ का-भयका-हांस्यका उदय होवे तव बोलना नहीं-मौन धारन करना. और ५ बोलते पहिले वचन का फल विचारना. यो पांचों यत्ना युक्त प्रवृतने से सत्य व्रत शुद्ध पलताहै.

(३) " सव्वं अदिन्न दाणाओ वेरमनं " अर्थात्—मालक के दिये बिना या म-

हार चौथे पहर में भोगवे नहीं. और, (४) भावसे—अच्छे बुरे आहार वस्त्र मकान पर रागद्वेप नहीं करे.

४ आदान-निक्षेपना समिति सो-उपकरणो—(१)—द्रव्य से यत्ना से गृहण करे और रक्खे, (२) क्षेत्र से-गृहस्थ के घर रक्खकर अन्य ग्राम जाय नहीं, (३) कालसे दोनों वक्त प्रति लेखना करे, और (४) भाव से-ममत्व मूर्च्छा रहित उपयोग में लेवे.

५ परिठावणिया समिति सो—लघुनीत वडीनीत अयोग्य आहार उपद्धी आदि-(१) द्रव्य—यत्नसे परिठावे (डाले) (२) क्षेत्र से-ग्रहस्थ निन्दा करे ऐसे स्थान परिठवै नहीं. (३) कालसे-दिन को देखकर रात को दिने देखी भूमीकामे परिठावे, और (४) भाव से शास्त्रोक्त विधि से परिठावे.

"सम्यग्योग निग्र हो गुप्तिः"—अर्थात—मन को वचन को और काया को संरम्भ सम्भारम्भ और आरम्भ से सम्यक प्रकार से रोक रखना—कु कर्मोंमे प्रवृता ना नहीं सो तीनो गुप्ति है,

पांच आचार.

१ ज्ञाना चार सो-ज्ञान को—(१) अकालकी वक्त गृहण नहीं करे, (२) अविनय नहीं करे, (३) बहूत मान पूर्वक गृहण करे, (४) यथा विधि ग्रहण करे, (५) ज्ञान दाता का उपकार न छिपावे. (६) अशुद्ध उच्चारन न करे. (७) विपरीत अर्थ नहीं करे. और (८) पाठ और अर्थ को प्रमाण भूत जाणें.

२ दर्शनाचारः—(१) जिन वचनों में शंका नहीं लावे, (२) अन्य मत की वांच्छा नहीं करे. ३ करणीका फलका वेम नहीं लावे, (४) मूढ समान धर्माधर्मका अज्ञान न होवे, (५) स्वधर्मीयों की भक्ति करे, (६) धर्म से डिगे को स्थिर करे, (७) चारों संघकी वत्सलता करे, और (८) जैन धर्म की उन्नति करे.

३ चारित्रा चारसो, समिति ३ गुप्ति युक्त सदा प्रवृते.

४ तपाचारसो - १२ प्रकार का विशुद्ध तप करे.

५ विर्याचार सो - धर्मार्थ आप उद्यम करे, दुसरे पासकरावे.

सत्तर प्रकारका-संयम.

पुढवी दग अगणि मरुय । वणसइ वितिचउ पणिन्दि अजीव ॥
पहुप्पेहा पमज्जणा । परिठ्ठणा मणो वय काय संयमे ॥ १ ॥

हो! मेरा वमन आहारकी तरह त्याग कर जाने वाले, देविन्द्र नरिन्द्रके पूज्य, इन महा हु भाग को सताकर क्यों दुःखी होते हो. यह कोपेंगे तो सब को जलाकर भस्मकर देंगे. ऐसे भद्रा के वचन को जब उन कुमारों न नहीं माना. तब यक्षने उनको जमीन पर पछाड रुद्र वमन करते हुवे सुला दिये! और मुनि के शरीर में से निकल आकाश में खडा तमाशा देखने लगा.

यह अनर्थ निपजा देख यज्ञ कर्ता ब्राम्हणों दोड आये, और मुनिको नमस्कार कर कहने लगे. अहो क्षमा समण मुढ बालकों पर इतना कोप करना उचित नहीं है. अपराध माफ करो. और इस यज्ञ शाला में से इछित आहार ग्रहण कर हमे कृतार्थ करो.

मुनि बोले—मेरे मन में किञ्चित ही क्रोध नहीं है, परन्तु मेरी वेयावच के लिये यक्ष ने यह किया दिखता है. फिर मूनि शुद्ध आहार ग्रहण किया वहां देवों नें पंच द्रव्य की वृष्टि करी, देव दुंदभी बजाइ, और अहो दान महा दान ऐसा शब्दोचार करते अकाश में नृत्य करने लगे.

आश्चर्य चकित हो ब्राम्हणों आपस में कहने लगे कि–तप का फल तो यह प्रत्यक्ष ही दिखता हैकि–चाण्डाल जाति में उत्पन्न हुवे मुनि देवों से पूजित हो रहे हैं. और यज्ञका फलतो कुछ भी दृष्टि नहीं आता है.

तब मुनि बोले कि–अहो ब्राम्हणों बाय शुद्धि से और हिंसक ज्ञय से किसीभी प्रकार का कल्याण होणे वाला नहीं है. जो आत्म कल्याण चाहाते होवो तो धर्मतीर्थ के ब्रम्हचर्य रूप द्रह में स्नान कर, जीव रूप कुंड में तप रूप अग्नि प्रज्वालित कर कर्म रूप इन्धन को जलावो. सर्व जीवों शान्ति रूप मन्त्र का पठन कर पवित्र बनो!

ब्राम्हणों ने यह बोध सहर्ष धारण किया, मुनि बहुत वर्ष संयम पाल बहुत जीवोंका उद्धार कर मोक्ष प्राप्त किया.

सारांश यह हैकि–नीच कुल, कुरूप, बलवन्त, सुख की प्राप्ति के लिये मरण सन्मुख हुवे. ऐसों को अत्युत्तम कुली दिव्य सुन्दराङ्गी राज ऋद्धि आदि सम्पूर्ण जीवित तक के सर्व द्रव्य सुखों को प्राप्ति बलत्कार (अग्रह) से होते ही, उसका विष्टाकी माफिक त्याग कर निजात्म सुख में रमण किया!! ऐसे निर्विषयी निर्वाछक होवे सो निहाचे करणी जानना.

न विना हुक्म के लेना जिसे चोरी कहते हैं, उस से निवृते. इस व्रत के रक्षणा
भावना:-"शून्यगार विमोचिता वास परोपरोधाकरण भैक्ष्य शुद्धि सधर्म्माऽवि
दाः पंच." अर्थात्-१ सूने घर में मालक की रजा से रहे, २ पहिले रहते को नि
ल कर न रहे, ३ कोइ मना करे वहां न रहे, ४ आहार आदि शुद्ध ग्रहण क
और ५ धर्मात्मा से तो क्या परन्तु किसी के साथ भी विसंवाद (झुठ-झगडा) न
करे. यों प्रवर्तने से दत्त व्रत शुद्ध पलता है.

४ "सव्वं मेहुणा ओ वेरमणं" देवता मनुष्य और तिर्यंच की स्त्रीके साथ या
नपुंसकके साथ मैथुन करने से निवृते. इस व्रतके रक्षणार्थ ५ भावना:-"स्त्री राग क
था श्रवण तन्मनोहराङ्ग निरीक्षण पूर्वरतानुस्मरण वृष्येष्टरस स्वशरीर संस्कार त्याग-
पंच" अर्थात्- १ विकार उत्पन्न होवे ऐसी कथा सुणे नहीं, २ गुप्त अंगोपांग निरखे
नहीं, ३ पहिले की हुइ क्रिडाको याद नहीं करे, ४ कामो तेजक आहार करे नहीं,
और ५ सिणगार सजे नहीं. यों रहने से ब्रह्मचर्यव्रत शुद्ध पलता है.

५ "सव्व परिग्गहाओ वेरमणं"-अर्थात-सजीव निर्जीव किसीभी तरह का
परिग्रह (द्रव्य) रक्खे नहीं. इसके रक्षणार्थ ५ भावना "मनोज्ञामनोज्ञे न्द्रिय विषय रागद्वेष
वर्ज्जनानि पंच" अर्थात-मनोहर-शब्द रूप गन्ध रस स्पर्श पर राग करे नहीं. और
खराब पर द्वेष करे नहीं. तोही निष्परिग्रह व्रत शुद्ध पलता है.

पांच समिति - तीन गुप्ति.

"इर्या भाषैषणा दान निक्षेपोत्सर्गः समितयः"-अर्थात-१ इर्याम मिती सो
(१) द्रव्य से-३॥ हाथ आगे की जमीन देखकर चले, (२) क्षेत्र से-रस्ता छोड चले
नहीं. (३) कालसे-दिनको प्रकाशीक स्थान में आँखो से देखकर, अप्रकाशीक स्थान
में और रात को पूंज कर चले, (४) भाव से-पांचो इन्द्रिय की विषय का और कि
सी भी बात का चिन्तवन रस्ते चलता करे नहीं.

२ भाषास मितिसो-(१) द्रव्य से दुःख और राग द्वेष उत्पन्न होवे ऐसा वचन
बोले नहीं. (२)क्षत्रसे-रस्ते चलता विशेष वार्तालाप करे नहीं, (३) काल से-पहर रात्री
गये बाद जोर से बोले नहीं, और (४) भाव से-विना विचारा शब्द नहीं उचारे.

३ एषणा समितिसो-(१) द्रव्य से प्रासुक निर्दोष आहार गृहण करे. (२)
क्षेत्रसे-दो कोश से आगे आहार लेजाय नहीं, (३) कालसे-पहिले पहरका लाया आ-

हार चौथे पहर में भोगवे नहीं. और, (४) भावसे–अच्छे बुरे आहार वस्त्र मकान पर रागद्वेष नहीं करे.

४ आदान-निक्षेपना समिति सो-उपकरणो–(१)–द्रव्य से यत्ना से गृहण करे और रक्खे, (२) क्षेत्र से-गृहस्थ के घर रक्खकर अन्य ग्राम जाय नहीं, (३) कालसे दोनों वक्त प्रति लेखना करे, और (४) भाव से-ममत्व मूर्च्छा रहित उपयोग में लेवे.

५ परिठावणिया समिति सो–लघुनीत वडीनीत अयोग्य आहार उपद्धी आदि-(१) द्रव्य–यत्नसे परिठावे (डाले) (२) क्षेत्र से-ग्रहस्थ निन्दा करे ऐसे स्थान परिठावे नहीं, (३) कालसे-दिन को देखकर रात को दिने देखी भूमीकामे परिठावे, और (४) भाव से शास्त्रोक्त विधि से परिठावे.

"सम्यग्योग निग्र हो गुप्तिः"—अर्थात्—मन को वचन को और काया को संरम्भ सम्भारम्भ और आरम्भ से सम्यक प्रकार से रोक रखना–कु कर्मोमे प्रवृता ना नहीं सो तीनो गुप्ति है,

पांच आचार.

१ ज्ञाना चार सो-ज्ञान को–(१) अकालकी वक्त गृहण नहीं करे, (२) अविनय नहीं करे, (३) बहूत मान पूर्वक गृहण करे, (४) यथा विधि ग्रहण करे, (५) ज्ञान दाता का उपकार न छिपावे. (६) अशुद्ध उच्चारन न करे. (७) विपरीत अर्थ नहीं करे, और (८) पाठ और अर्थ को प्रमाण भूत जाणें.

२ दर्शनाचारः—(१) जिन वचनों में शंका नहीं लावे, (२) अन्य मत की वांच्छा नहीं करे. ३ करणीका फलका वेम नहीं लावे, (४) मूढ समान धर्माधर्मका अज्ञान न होवे, (५) स्वधर्मीयों की भक्ति करे, (६) धर्म से डिगे को स्थिर करे, (७) चारों संघकी वत्सलता करे, और (८) जैन धर्म की उन्नति करे.

३ चारित्रा चारसो, समिति ३ गुप्ति युक्त सदा प्रवृते.

४ तपाचारसो - १२ प्रकार का विशुद्ध तप करे.

५ वियाचार सो - धर्मार्थ आप उद्यम करे, दुसरे पासकरावे.

सत्तर प्रकारका-संयम.

पुढवी दग अगणि मरुय । वणसइ बिति चउ पणिन्दि अज्जीव ॥
पहुप्पेहा पमज्जणा । परिठ्ठवणा मणो वय काय संयमे ॥ १ ॥

आदि सब कालाधीन है. प्रत्यक्षःदेखीये! योग्य काल (वय) को प्राप्त होने स्त्री ऋतु प्राप्त होती है, उसे योग्य वय के पुरुष के संयोग सेही गर्भ रहता है. और नियमित काल पूर्ण हुवे ही पूर्ण पुत्र की प्राप्ति होती है. वो लडका योग्य काल जाते ही योग्य वा बडता खाता पढता द्रव्योत्पत्ति कुटुम्बोत्पत्ति कर वृद्ध हो मरजाता है. ऐसा काल का सम्राज त्रस स्थावर सर्व प्राणीयों पर और जडोंपर अखण्ड प्रवृतता है.

२ स्वभाव वादी–कहता हैकि–जगतोत्पत्ति आदि सर्व काम स्वभावाधीन है, काल से कुछ भी नहीं होता है. जो होता होतो योग्य काल संयोग हुवेही वन्ध्या के पुत्र क्यों नहीं होता है? स्त्रीके दाढी मुछ क्यों नहीं आती है! इत्यादिसे प्रत्यक्ष जाना जाता है कि वो उनका स्वभाव नहीं है. ईखमें शरबता, बुगले में श्वेतता, कोकीलाका मधुर स्वर, कागका कटुक स्वर, सर्प के मुख मे जहर मणी में अमृत, पृथ्वी-कठीण, पाणी प्रवाही, अग्नि उष्ण, वायु चलन, इत्यादि सर्व श्रेष्टी के पदार्थों स्वभाव सेही प्रवृत रहे प्रत्यक्ष दिखते हैं!

३ नियत (होनार) वादी-कहता हैकि–जगत का सब कार्य होनार मुजब ही होता है. जो काल और स्वभाव से होता होतो-अम्ब वृक्ष का काल पके स्वभाव से मोर (फूल) तो बहुत आते हैं, परन्तु फल तो होनहार जितने ही लगेंगे! देखीये! नियत कैसा प्रबल हैकि-रावण को भबिष्यण ने मन्दोदरी ने बहुत ही समझाया, परन्तु होनार के सबबसे किसी काभी नहीं माना. और मारा गया. इत्यादि अनेक दाख-लेसे जाना जाता हैकि-सब होनार मुजबही होता है.

४ कर्म वादी—कहते हैकि–जगत के सब कार्यो पूर्व कर्मानुसारी होते हैं. जो काल स्वभाव और नियत प्रमाणें होते हैतो- काल स्वभाव नियत एकसा जि-ससे पुत्रोत्पत्ति होती है. फिर वो अच्छा बुरा. सुखी दुःखी हो कर्मों प्रमाणे ही होता है प्रत्यक्ष ही देखीये-राजा रंक. [illegible] मूर्ख पण्डित इत्यादि विचित्रता पशु मनुष्य और देवों मे भी देखी जाती है सो सब कर्मों जनित ही है!

५ उद्यमवादी-कहता हैकि-जगत के सब कार्यों उद्यम प्रमाण किये सेही निपज-ते है. जो काल स्वभाव नियत और कर्मों से होतोहो-[illegible] आदि [illegible] [illegible] स्वयम ही उद्यम करने से [illegible] [illegible] हो [illegible] [illegible] के सब [illegible] करते है. और [illegible] [illegible] [illegible] भूषण मकान आदि सब उद्यम से [illegible] [illegible] ही

=८४ भेद होते हैं. यह कि कहते हैंकि-जगत् के सर्व पदार्थों क्षीण २ में पराष्टत पाते दृष्टि आते हैं. पदार्थों की अस्थिरता के सबब से उनको क्रिया नहीं लगतीहैं- न कर्म बन्ध होता है और न उन के फल भुक्तना पडता है.

३ अज्ञानवादीके ६७ भेदः—(१) सत्वं-क्या जीव सत्य है? (२) असत्वं क्या असत्य है?(३)सदसत्वं क्या सत्यासत्यहै? (४) अवाच्यत्वं-जीवको सत्य कैसे कहना? (५) सद्वाच्यत्वं-असत्य कैसे कहना? (६) 'असद्वाच्यत्वं'-सत्यासत्यभी कैसे कहना? और (७) सदा सदा वाच्यंत्व-सत्य भी नहीं असत्य भी नहीं. यह विकल्पों जीव के किये, तैसे नव पदार्थ के करने से ७×९=६२ भेद हुवे, और सत्व, २ असत्व, ३ सदत्वं. ४ अवाच्यत्वं यह × मिलाने से ६७ भेद होते हैं. यह कहते हैंकि-"जानेसो ताने" यह अच्छा, यह बुरा, ऐसे राग द्वेष में ज्ञानी फस मरते हैं. अपन अज्ञानी अच्छे हैं जो किसीकी के झगडे में न फसे, न पाप को जानें, और न पाप लगे.

४ विनयवादी के ३२ भेदः—(१) सूर्य, (२) राजा, (३) ज्ञानी, (४) ज्ञाति, (५) स्थविर. (६) धर्मी, (७) मातित्र, और (८) गुरु, इन आठोंको—(१) अच्छे जानना, (२) गुणानुवाद करना, (३)नमस्कार करना, और (४)उचित दान देना. इन ४से चौगुन करने से ८×४=३२ भेद होते हैं, यह कहते हैंकि-सब को अपने से अच्छे जान वंदन नमन आदि विनय करने से ही सब सुख की प्राप्ति होती है.

यों चारों वादीयों के मिलकर ३६३ मत भेद होते हैं.

कृष्ण वासुदेव श्रेणिक महराज.

सोरठ देश में देवताकी वसाइ हुइ देव लोक भूत द्वारका नगरी में तीन-खन्ड राज के भुक्ता ४२०००, हाथी, ४२००० अश्व, ४२००० रथ ४८००००००, पायदल, श्री समुद्रविजय आदि १० दशारमहराज, बलभद्रजी प्रमुख ५०० महावीर, प्रद्युमन प्रमुख ३५००००००० कुमर, संब प्रमुख ६०००० दुर्दन्त, महासेन प्रमुख ३६००० बलवन्त, वीरसेन प्रमुख २१००० वीर, उग्रसेन प्रमुख १६००० मुकुट बन्ध राज चाकर, रुकमणी प्रमुख १६००० राणीयों, अनंगसेना प्रमुख अनेक हजारों गणीका, ५६०००००० जादव का परिवार, और भी महा ऋद्धि सिद्धि के

× यहां कितनेक सत्य, २ वेद, ३ शिव, और विष्णव यह ४ गिनता है.

रण ने कर श्रावक की इग्यारेही प्रतिमा का अधिकाधिक विशुद्धी से आराधन किया और आयु का अन्त नजीक आया जान संलेषण युक्त संथारा किया-पेरे बर्तीक चारों आहार के त्याग कर एकस्थान स्थिर रह धर्म ध्यान में निमग्न हुवे, जिस से ज्ञानावरणीय कर्मदल पतले पडने से ऊपर प्रथम स्वर्ग नीचे प्रथम नरक और चारों दिशीयों पांचसो २ योजन तक देखे ऐसा अवधिज्ञान उत्पन्न हुवाहै. शक्रेन्द्र महाराजने इन की प्रशंस्या करी तब देवताओं इनको डिगाने आये महा विकराल रूप बनाकर महा दुःख दिया, तीव्र भयंकर वेदना उपजाइ, कितनेक श्रावकों के पुत्रों का रूप बना कर उनके सन्मुख लाकर मारे, घरका धन हरण किया, वगैरा अनेक परिसह उपजाये, परन्तु यह धर्म से किंचित मात्रही चलित नहीं हुवेहै. ऐसी तरह से दृढ श्रावक व्रतों की आराधना कर दशोंही प्रथम स्वर्ग के अरुण नामे विमाण में चार पल्योपम के आयुष्य वाले देवों हुवे वहां से चवकर दशोंही महाविदेह क्षेत्रमें उत्तम गुणस्थान में जन्म लेकर संयमले करणीकर कर्मक्षया मोक्ष पावेंगे.

धन्नावा सार्थवाही का दृष्टान्त.

राजग्रही नगरी के प्रमुख धनी धन्नावा सार्थ वाही की भद्रा भार्या के नागदेव की मान्यता किये बाद एक पुत्र हुवा जिसका " देवदत्त " नाम रखया. उसे सेठ का विश्वासु पंथक दास सिणगार सजा क्रिडा के लिये बाजार में लेगया. बहुत बच्चों में मिलता पंथक आप खोगया. वहां तस्कर कला में कौशल्य " विजय " चोर उसदेवदत्त को निर्जीव देख उठलेगया- उसके भूषण लेकर उसेपटकर भग्नारे कूवेमें डाल आप वृक्षोंकी कच्छा में छिप गया. पीछे दास जागृत हुवा बच्चा नहीं मिलने से रुदन करता सेठ से कहा. सेठने राज में इत्लाकी, राज सभों सन्मुख पुत्र को और चोर को हस्ताये सेठ सपरिवार अत्यन्त शोकसे पीडित हो पुत्र का मृत्य कार्य किया: और चोर को दिवसार ने काष्ठके खोड में केद किया. कितनेक दिन बाद सेठ भी राज की चोरी का राजा के गुन्हेगार हुवे.. उनको राज सभने जिस चोर व विजय चोर का बाद रमाया था उसी खोडे के एक छिद्र में सेठ के पग का रखाता पोमनहो वह कुदासी ने पंथक दास के हाथ सेठ के लिये तइयार आया व भोजन रखाया. उसे सेठ खोलने लगे तब वो चोर बोला की इस भोजन का कुछ हिस्सा मुझे भी दीजिये. परन्तु सेठने उसे अपने प्यारे पुत्र का घातिक जान भोजन नहीं

दिया. कुछ देर बाद शेठ को दिशा मात्र (मल मूत्र) की हाजत हुइ, तब चोर से बोले चलो वाहिर में कारण से निवृत होआवुं. चोर बोला तुम ने खायासो तुमही जावो. परन्तु दोनों का एकही खोडे में पाय होने के सबब से एकले शेठ जा सके नहीं, नम्र हो बोले कि अब भोजन का हिस्सा तुझें देवुंगा चल वाहिर चल. भोजन के रस के लालच से चोर शेठ के साथ वाहिर आया कारण निवेडा, दुसरी वक्त दास भोजन लाया तब उसमें से हिस्सा चोर को भी दिया, यह देख दास ने शेठाणी से कहा. शेठाणी को बहुत बुरा लगा, जब शेठ छूट कर घर आये तब शेठाणी के पूछने से शेठने खुलासा किया कि-मैंने कुछ प्रेम भाव से चोर को भोजन न दिया, परन्तु क्या करूं एक खोड मे होनेसे कारण से निवृत उस के सङ्ग विना न हो सका तब लाचार हो उसे भोजन न देना पडा! यों सुन सब संतोष पाये.

विजय चोर मरकर नरक में गया. धन्ना सार्थ वाही-धर्म घोप ऋषि के पास दिक्षा धारन कर प्रथम देव लोक में गये. आगे महा विदेह क्षेत्र में अवतार ले संयम धारण कर मोक्ष पावेगे.

गाथा—सिव सुहा साहेणेसु । आहार विहिओरिओ जनवट्टएदोए ॥
तमा धणोव्व विजयं । साहुणं तेण पोसिज्जं॥ ज्ञाता सूत्र अ०२

अर्थात्—राजग्रही नगरी समान-मनुष्य लोक, धन्ना शेठ समान साधु, विजय चोर समान-शरीर, भद्राखी समान आचार्य, देव दत्त कुमर समान संयम, पंथक दास समान-सहचारी साधु, राज समान-कर्म, राज भटों समान-कर्म प्रकृत्ति. यों मोक्ष सुख साध ने साधु शरीर पोपते हैं.

आचार्य धर्म घोप ऋषि जीका दृष्टान्त.

चम्पा नगरी में नागश्री नामक ब्राह्मण की स्त्रीने भूल कर कडुवा तुम्बा का शाख बनाये बाद मालुम पडने से जेठाणीयों से डर छिपाकर रख दिया. उसवक्त धर्मघोष आचार्य के शिष्यवर्य धर्म रुचि नामे साधु मांसोपवासी पारणे निमित उस के घर आये, नग श्री साधु को देख खुशी हुइ कि-सहजही उकरडी घर आगइ. तुर्त उठ मुनि के पात्र में सब शाख डालादिया, मुनि पूर्ण आहारकी प्राप्ति हुइ जान तुर्त गुरुजी के पास आकर बताया. बहुत शाख देख गुरुजी को वेम आने से पूछा कर्ति

पत से ८ महीने में जिनका शरीर सूककर रक्त मांस राहित फक्त हड्डीयों का पिंजरा रह गया. जिनके-पांव-सूके वृक्ष की छाल जैसे, पांव की अङ्गुलीयों-सूकी मूंगकी फली जैसी, पीन्डी-कागले की जंघा जैसी, ढींचण-काग जंघा वनस्पति की गांठ जैसी, कम्मर बुढे बेल के पांव जैसी, पेट चमडे की सूकी मशक जैसा, पांसलियों-कांच के दग जैसी अलग २ दिखे, छाती पंखे के पंते जैसी, बाहां-अगथीये की फली जैसी, हथेली-वड के सूके पत्ते जैसी, हस्तांगुली मूंगकी सूकी फली जैसी, गरदन-कमन्डल के गरदन जैसी, जिव्हा-पलासके सूके पत्ते जैसी, होट-सूकी इमली जैसे, नासीका अम्ब की सूकी गुटली जैसी, आंख वीणाके छिद्र जैसी, कान प्याज के पत्ते जैसे, मस्तक-सूके तुम्ब फल जैसा. ऐसी तरह सर्व शरीर सूक गयाथा! तोभी-सज्झाय ध्यान भिक्षा प्रति लेखना आदि साधु की सर्व क्रिया ओंका यथा विधि वक्तोवक्त आराधन-पालन करते थे. तब ही खुद श्री महावीर परमात्मा ने श्रेणिक राजा के सन्मुख १४००० साधुओं में उत्कृष्ट करणी के कर्ता धन्ना अणगार कोंही बताये हैं. वह एक मास का संथारा कर कुल नव महीने की करणी से सर्वार्थ सिद्ध विमान में एकाभवतारी देव हुवे हैं.

मेघ कुमारका दृष्टान्त.

राजग्रही नगरी के श्रेणिक राजा की धारणी नामक राणी के अङ्ग से उत्पन्न हुवे मेघ कुमार आसुन्दर स्त्रीयों और बहुत ऋद्धि का त्याग कर श्री महावीर भगवंतके समीप्य दीक्षा ली, सब से छोटे होने के सबब से अन्तिम बिछाना कर सूते, रात्रि के स्वध्याय ध्यान परिठावणीया आदि क्रिया के लिये मुनियों के अवागमनसे और पतले बिछोने से जमीन चुबनेसे निद्रा नहीं आइ, तब पीछा घर जानेका विचार कर भगवन्त सन्मुख आकर रजा लेते, शरमागये. तब भगवन्त ने फरमाया कि-अहो मेघ मुनि! इससे पहिले तीसरे भव में तुम वेताढ पर्वत के नजीक एक हजार हाथणीयों के मालक श्वेतरंगवाले सुमेर नामे गजराज थे. एकदा उष्ण ऋतु में पाणी पीने को तलाव में प्रवेश करते कीचड में फस गये, तब दुसरा वैरी हाथीने आकर तुमारे को दांतों से बहुत मारा, जिस से सात दिनों में तुम मरकर विंघाचल पर्वत के नजीक पुनः सातसो हथणीयों के मालक लालरंगवले गजराज हुवे. वहा तुम ने अग्नि के उपद्रव से बचने एक चार कोश भूमी में तृण वृक्ष राहित मन्डल बनाया था. जब उ-

हो! मेरा वमन आहारकी तरह त्याग कर जाने वाले, देवेन्द्र नरेन्द्रके पूज्य, इन महा नु भाग को सताकर क्यों दुःखी होते हो, यह कोपेंगे तो सब को जलाकर भस्मकर देंगे. ऐसे भद्रा के वचन को जब उन कुमारों न नहीं माना. तब यक्षने उनको जमीन पर पछाड रुद्र वमन करते हुवे सुला दिये! और मुनि के शरीर में से निकल आकाश में खडा तमाशा देखने लगा.

यह अनर्थ निपजा देख यज्ञ कर्ता ब्राम्हणों दोड आये, और मुनिको नमस्कार कर कहने लगे. अहो क्षमा समण मुढ वालकों पर इतना कोप करना उचित नहीं हैं. अपराध माफ करो. और इस यज्ञ शाला में से इछित आहार ग्रहण कर हमे कृतार्थ करो.

मुनि बोले-मेरे मन में किञ्चित ही क्रोध नहीं है, परन्तु मेरी वेयावच्च के लिये यक्ष ने यह किया दिखता है. फिर मुनि शुद्ध आहार ग्रहण किया वहां देवों ने पंच द्रव्य की वृष्टि करी, देव दुंदभी वजाइ. और अहो दान महा दान ऐसा शब्दोचार करते अकाश में नृत्य करने लगे.

आश्चर्य चकित हो ब्राम्हणों आपस में कहने लगे कि-तप का फल तो यह प्रत्यक्ष ही दिखता हैकि-चाण्डाल जाति में उत्पन्न हुवे मुनि देवों से पूजित हो रहे हैं. और यज्ञका फलतो कुछ भी दृष्टि नहीं आता है.

तब मुनि बोले कि-अहो ब्राम्हणों बाय शुद्धि भे और हिंसक द्रव से किसीभी प्रकार का कल्याण होणे वाला नहीं है. जो आत्म कल्याण चाहते होवो तो धर्मतीर्थ के ब्रम्हचर्य रूप द्रह में स्नान कर. जीव रूप कुंड में तप रूप अग्नि प्रज्वाल्लित कर कर्म रूप इन्धन को जलावो. सर्व जीवों शान्ति रूप मन्त्र का पठन कर पवित्र वनो!

ब्राम्हणों ने यह बोध सहर्ष धारण किया, मुनि बहुत वर्ष संयम पाल बहुत जीवोंका उद्धार कर मोक्ष प्राप्त किया.

सारांश यह हैकि-जीव कुल, रूप, बलवन्त, सुख की प्राप्ति के लिये मरण सन्मुख हुवे. ऐसों को अनुपम कुली दिव्य सुन्दराङ्गी राज ऋद्धि आदि सम्पूर्ण जीवित तक के सर्व द्रव्य सुखोंकी प्राप्ति बलत्कार (अदृष्ट) से होते ही, उनका विष्टाकी माफिक त्याग कर निजात्म सुख में रमण किया!! ऐसे निर्विषयी निर्वाछिक होवे सो नियाणे करणी जानना.

भगवन्त महावीर स्वामी अपने आयुष्य का अन्तिम अवसर जान गोतस्वामी को देव सम्न ब्राम्हण को माति बोधने भेजे, और फिर आधी रात्री को मोक्ष पधार गये. देवगमके आवागमन से भगवन्त निर्वाण प्राप्त हुवे यह समाचार गोतम श्वामी को मालुम होतेही मूरछा खाभरती पर पड गये, और सावध हो कहने लगे कि-हे भगवन्! मुझे अन्तिम अवसर में दूर किया क्या में-आपका पल्ला पकड रोकता कि ज्ञानका हिस्सा मांगता. वगैरे शोक करते २ भान में आ विचारने लगे कि-वो वीतराग सर्वज्ञने जैसा देखा वैसा किया. रे आत्मान्! तूं रागीद्वेषी बन क्यों कर्म बन्ध करता है. वगैरा शुभ ध्यान ध्याते चारों घन घातिक कर्मोंका क्षय कर केवल ज्ञान पाये. और १२ वर्ष बाद मोक्ष पधारे.

सारांश-श्री भगवन्त समान परम विशुद्ध पदार्थपरही धर्म प्रेम भी केवल ज्ञान को आवरण भूत होता है!!

कुंडरिक पुंडरीक का दृष्टान्त.

जम्बु द्वीप की पूर्व महा विदेह की पुष्कलावती विजयकी पुण्डरीकणी राज्यधानी के पद्मनाभ राजा के कुंडरीक कुंवर ने परम सम्वेगी बन दीक्षा धारण कर अत्यन्त दुक्कर तप क्रिया के आचारण से शरीर को कष्ट-शुष्क करडाला. एकदा अपने छोटे भाइ पुण्डरीक को राज्य सुख भोगवता देख मन ललचाया-संयम से परिणाम पडित हुवे, और गुप्त गुरुजी का संग छोड मेहल के पीछे की आशोक वाडी में आकर बैठे. पुंडरीक राजा यह खबर पातेही तुर्त मुनिके पास आये और मन विग्रह देख प्रश्न करने से मुनिने राज्य वैभवकी परसंस्या करी. जिस से भाइ मुनि का मन पडित देख, अपना राज्य भेष (पोशाक) मुनिको दिया. और मुनिका-उतारा हुवा भेष आप धारन कर तीन दिन के उपवास से गुरुजी के दर्शन कर क्षमुख लुक्खम सुक्खम शुद्ध आहार मिला सो खाने से एकदम शरीर में महावेदन प्रगटी और आयुष्य पूर्ण कर सर्वार्थ सिद्ध विमान में देव हुवे.

पीछे कुण्डरीक राज्य भोग में लुब्ध हो ताकत बढने मदिरा मांस का सेवन किया, जिस से अत्यन्त असाध्य वेदना उत्पन्न हुइ सोभी तीन दिन में मरकर सातवी नरक में गये!!

सारांश-शुद्धाचार पाल पडवाइ होने से भी मिथ्यात्वी होजाते हैं.

रिषद् के मध्य भगवन् ने फरमाया कि-अहो हितार्थिओं! "कड्डाण कम्मा न मोक्ख अत्थि" अर्थात्—कृत कर्म का फल भोगवे विन छूटका नहीं! सो मत्यक्षही देखीये कि खन्धक मुनिके जीवने तेरह१२ क्रोड भवके पाहिले एक काचरे फलकी त्व(छाल)चा उतारी थी वोही काचरा यहां पुरिष क्षेण राजा होकर मुनि की खाल उतारी!! ऐसा जान कर्म बन्ध से डरो! इत्यादि बोध श्रवण कर राजा राणी और ५०० सुभटोंडे दीक्षा धारण करी. करणी कर स्वर्ग प्राप्त किया.

सारांश—सब शरीरकी खाल उतार डाली तोभी नाक में शल्य और मनमें द्वेष किंचित माव ही नहीं लाये. ऐसी तरह जो कषाय ज्वाला को बुझाकर शान्त करतेहैं सो क्षीण कषायी कहे जाते हैं.

श्री महावीर स्वामीका दृष्टान्त.

क्षत्री कुण्ड ग्राम के सिद्धार्थ महाराजाकी सुलक्षणी त्रसला देवी को १४ महा स्वप्न को दे, दशवे स्वर्गसे चवकर अवतरे, अत्युत्तम ऊंच ग्रहोके संयोगसे जन्मे, छप्पनदिग् कुमारि का और चौसठ इन्द्र आदि देवों ने जन्म उत्सव किया, पग के अंगुठे के दबाने से लक्ष योजनका मेरु पर्वत हलाने से 'महावीर' नाम पाये, जन्मसेही तीन ज्ञान युक्त होने से विद्याभ्यास की कुछ जरूर नहीं . युवावस्थान में यशोदाजी नामक स्त्रीके सथ पाणी ग्रहण किया, जिससे एक पुत्रीकी प्राप्ति हुइ; मात पिता स्वर्गस्थ हुवे बाद नंदीवर्द्धन भाइ को संतोष ने ब्रह्मचर्यादि नियम युक्त घर में रहे. फिर बारह महिने तक-३,८८,८०,००,००० इत ने मोनैये का दान दे संयमलिया. उसीवक्त मनः पर्यव ज्ञान की प्राप्ति हुइ. फिर कर्मों का क्षय करने साढी बारा वर्ष और १५ दिन तक अति दुष्कर तप किया, इतने दिन में फक्त इग्यारे महीने उन्नीस दिन आहार लिया और फक्त दो घडी ही निद्राली. देव मनुष्य तिर्यंच सम्बन्धि अति दुःख अनुकुल प्रतिकूल परिसह सहे. जहां २ परिसह उत्पन्न होने का जाना वहां २ सन्मुख होगये. और परिसह दाताओंपर पुनः उपकार कर स्वल्प बोध से स्वर्ग गामी बनाये. ऐसे क्षमा शूर अर्हत भगवन्त चारों घन घातिक कर्मोंका समूल नाश कर. केवल ज्ञान. केवल दर्शन. चौंतीस अतिशय. आदि महान ऋद्धि को प्राप्त हो द्वादश जाति की परिषद् में पैंतीस गुणयुक्त दिव्य ध्वनीका प्रकाश किया. जिन के महान प्रताप से अद्यावधि धर्मउद्योत होरहा है. और अन्तिम आठों कर्म क्षय कर मोक्ष पधारे.

गजसुकुमाल मुनीजीका दृष्टान्त.

पुद्गल परावर्तन का स्वरूप.

१ द्रव्य से, २ क्षेत्रसे, ३ काल से, और ४ भाव से में यह ४ सूक्ष्म, ४ बादर, यों ८ तरह से पुद्गलों का परावर्तन होताहै और कितनेक स्थान भावमे के स्थान भव से पद्गल परावर्तन के दो भेदरक्खे है, और कितनेक स्थान उन८ में भवसे के दोभेद मिलाकर १० भेद पुद्गल परावर्तन के किये हैं. सो अलग २ यहां कहते हैं:—

१ द्रव्य से बादर पुद्गल परावर्तन सो-(१) औदारिक, (२) वैक्रिय (३) तेजस, (४) मन. (५) भाषा. (६) कार्मण, और (७) श्वासोश्वास, इन ७ प्रकार के पुद्गलोंके सर्वलोक व्यापी प्रमाणुओं को भेद संघात तथा बादर सूक्ष्म परिणमन कर स्व-स्व वर्गणा योग्य परिणत स्कन्ध औदारिकादि नो कर्म पणे जितने काल में एकजीव अनन्त भव भ्रमण करता परिणमाकर-ग्रहणकर स्पर्श कर-छोडे, उसे बादर द्रव्य पुद्गल परावर्तन कहना. इस में जो एक वक्त ग्रहण किये हुवे पुद्गलों को दूसरी वक्त ग्रहण करे उसे ग्रहीत ग्रहणी द्वार कहना. तथा पहिले कितनेक ग्रहण किये और कितनेक विना ग्रहण किये ऐसे दोनों तरह के मिले पुद्गलों ग्रहण करे उसे मिश्र ग्रहण द्वार कहना. और पहिले ग्रहण नहीं किये ऐसे पुद्गलों को जो ग्रहण करे सो अग्रहीत ग्रहण द्वार कहना. इन तीनों में से ग्रहित ग्रहणद्वार और मिश्र ग्रहण द्वार इन दोनों तरह के पुद्गलोंको छोड कर, अग्रही ग्रहणाद्वार जो पुद्गलों ग्रहण करे, वो पुद्गलों ही यहां गिनती में आते हैं, बाकी के गिनती में नहीं लेना. यों एक औदारिक पणे, दुसरे वैक्रिय पणे, जावत सातवे श्वासोश्वास पणे सात परिणाम एकेक अणु के होते हैं. यों सर्व वर्ती द्रव्य के सात परिणमव एक जीव पूर्ण करे तब बादर द्रव्य पुद्गल परावर्तन पूर्ण होता है. +

२ द्रव्य से सूक्ष्म पुद्गल परावर्तन सो-सर्व लोक; वर्ती अणुको औदारिकादि पणे परिणमावे. परन्तु इतना विशेष. जो औदारिक पणे परिणमावते बीचके भवों में जो जो वैक्रियादि पणे पुद्गल ग्रहण करे वो यहां गिनती में नहीं लेना. यों अनन्त

+ इस में आहारिक शरीर ग्रहण नहीं किया, इसका यह सबब हैकि-एक जीव आहारक शरीर चार वक्त से अधिक नहीं करता है, इसलिये इसके सब पुद्गलों के साथ परावर्तन होता नहीं है. इसलिये गिना नहीं.

गुल आकाश खण्डके प्रदेशों का समय २ प्रते हरण करते असंख्यात काल चक्र वीत जावे, ऐसे सूक्ष्म आकाश के प्रदेश हैं. इन सर्व लोक के आकाश के प्रदेशों को जिस वक्त एक जीव अनेक भवकर स्पर्शे अर्थात्–सर्व आकाश प्रदेशों पर मृत्य पावे, उस में जिस आकाश प्रदेश पर एक वक्त मृत्यु पाया, उसही आकाश प्रदेश पर दुसरी वक्त मरण पावे, वो गिनती में नहीं. यों सर्वाकाश प्रदेश को मरण कर स्पर्शे × जिसे बादर क्षेत्र पुद्गल परावर्तन कहना.

४ क्षेत्र से सूक्ष्म पुद्गल परावर्तन सो-अनुक्रम से अर्थात्-जिस आकाश प्रदेश की श्रेणीपर एक वक्त मृत्यू पाया, उस ही आकाश प्रदेशपर किंचित ही अन्तर नहीं छोडता नजीक दूसरी वक्त मृत्यु पावे, यों मरण कर एक आकश श्रेणी पूर्ण स्पर्शे, फिर दूसरी आकाश श्रेणी इसही तरह से मरण कर सम्पूर्ण स्पर्शे, इस में प्रथम मरण किये स्थान में दुसरी वक्त मरण करे सो गिनती में नहीं, यों अनुक्रम से श्रेणि बन्ध प्रतर बन्ध प्रदेशों मरणकर स्पर्शता हुवा सर्व लोकके सर्व (असंख्यात) आकाश प्रदेश स्पर्शे सो क्षेत्रसे सूक्ष्म पुद्गल परावर्तन.

५ काल से बादर पुद्गल परावर्तन सो-वीस क्रोडा क्रोडी सागरोपम प्रमाण काल चक्र है, उसके सब समय मरण कर जीव स्पर्शे. अर्थात्-जब काल चक्र शुरू होवे उस के आदि समय से लगाकर अन्तिम समय तक के सब समयों में मरण करे, जिस समय एक काल चक्र में मरण पाया उसी समय बहुते काल चक्रों में मरण पाया वो गिनती में नहीं आते हैं, परन्तु अन्य दूसरे तीसरे चौथे आदि अन्तिम समयतक मरे सो ही गिन्ती में गिने जाते हैं. यों सब काल चक्र के समयों को मरण कर स्पर्शे सो काल से बादर पुद्गल परावर्तन.

६ काल से सूक्ष्म पुद्गल परावर्तन सो–एक काल चक्र के प्रथम समय में मरण कर फिर दुसरे चक्र के दूसरे समय में मरण करे. फिर तीसरे चक्र के तीसरे समय में मरण करे. यों एकेक काल चक्रका एकेक समय ही गिनती में आता है, परन्तु बीच के संख्यात असंख्यात जावत अनन्त काल चक्र तक मरण करे सो गिनती में नहीं आता है. यों असंख्यात मरण में भी अनन्त चक्र वीत जाते हैं. क्योंकि पल्यो

× इतने के जिन असंख्यात प्रदेशों है वे असंख्यातका प्रदेश अवगाह रहा है, तद-नि कर्ष की तुलनाकर एक प्रदेश ही लिया है.

दाणा लवण समुद्र में, तीसरा दाणा धातकी खण्ड में, यों एकेक दाणा अ-
नुक्रम से आगे के द्वीप समुद्रों में रखता हुवा चला जावे. जब उस अनव स्थित प्रेप-
ले में एक दाणा बाकी रह जावे तब उस दाणे को दुसरे शाल का नामक प्रेपले में
रक्खे, और जिस स्थान वो प्रथम प्रेपला खाली हुवाथा उस स्थान (द्वीप व समुद्र+की
सूची प्रमाणे लम्बा चौडा (गोल) और एक हजार आठ योजन का ऊंड उस अनव
स्थित प्रेपल को बनाके. सरसों के दाणों से शिखाऊ भरे, और फिर आगेके द्वीप
समुद्र में एकेक दाणा रखता जावे. जब उस अनवस्थित प्रेपल में दुसरी वक्त एक
दाणा बाकी रहजावे, वो दाणा बाकी रहा जावे. वो दाणा उठा कर प्रथम प्रमाणे
उस दुसरे शालाका प्रेपले में रक्खे. शाला का मे दो दाणे हुवे. और जिस स्थान वो
अनवस्थित प्रेपला खाली हुवा. उस स्थान की सूची प्रमाणे तीसरी वक्त
उस अनवस्थित प्रेपले को बनाकर सरसों के दाणों से शिखाऊ भर कर फिर एकेक
दाणा आगे के द्वीप समुद्रों में रखता हुवा जावे. उस में एक दाणा बाकी रह जावे
तब वो दाणा लेकर फिर दुसरे शालाका प्रेपल में रक्खे; यों शाला का में तीन दा-
णे हुवे. एवं इस तरह अनवस्थित प्रेपल में बाकी रहे एकेक दाण कर शाल का नामक
प्रेपले को सम्पूर्ण शिखाऊ भरे. और फिर उस शालका नामक पाले (प्रेपले) को
उठाकर पूर्वोक्त रीति प्रमाणें ही एकेक दाणा आगे के द्वीप समुद्रों में रखता जावे.
जब उस शाला का में एक दाणा बाकी रहजावे, तब वो दाणा लेकर तीसरे 'प्र
तिशलका' नामक प्रेपले में रक्खे. और शलाका को बाजू रखकर. फिर उसही स्था-
न की सूची प्रमाणे अनवस्थित प्रेपला पहिला बनावे. और सरसों के दाणों से शि-
खाऊ भर, आगेके द्वीप समुद्रों में एकेक दाणा रखता जावे. जब के उसमें एक दा-
णा बाकी रह जावे तब उस दाणे को लेकर दूसरे शलाका नामक प्रेपले में रक्खे.
ऐसेही पूर्वोक्त रीतिसे अनवस्थित प्रेपले के एकेक दाणे कर शलाका को परिपूर्ण शि
खाऊ भरे. और फिर दूसरी वक्त शलाका को उठाकर आगेके द्वीप समुद्रों में एकेक
दाणा रखते आगे जावे वो 'शलाका' में एक दाणा रह जावे तब, उस दाणे को 'प्र-

---

+ द्वीप व समुद्र की गोलाई के एक तट से दूसरे तट के तरफ लम्बाई के प्रमाण
को सूची कहते हैं. जैसे लवण समुद्र की सूची ५ लक्ष योजन की, और धात की
खण्ड द्वीप की सूची १३ लक्ष योजन की.

तिशलाका' नामक तीसरे टोपले में रखवे. और फिर जिस्थान में शलाका खाली हु-
वा उसी स्थान की सूची प्रमाणे 'अनवस्थित' प्रथम पाला बना, शिवाऊ दाणे से भ-
र, एकेक दाणा आगेके द्वीप समुद्रों में रखता जावे. जहां वो अनवस्थित में एक दा-
ना रह जावे उसे दूसरे 'शलाका में' रक्खे. यों अनवस्थित कर फिर शलाका को
भरे. और फिर शलाका को उठा एकेक दाणा आगेके द्वीप समुद्रों में रखते एक दा-
णा रहजावे, उसे तीसरे प्रतिशलाका में रखे. और फिर अनवस्थित 'कर' 'शलाका'
को भरे. और यों बचते हुवे एकेक दाणे कर प्रतिशलाका को भरे. प्रतिशलाका शि-
वाऊ भराये बाद, उसे उठा कर उसमें का एकेक दाणा आगेके द्वीपमें रखते २ जब
एक दाणा उसमें रह जाय, तब वो दाणा चौथे 'महा शलाका' नामें डाले में रखे.
और फिर अनवस्थित के बचेहुवे एकेक दाणे कर 'शलाका' को भरे, और 'शलाका
के बचे हुवे एकेक दाणेकर 'प्रतिशलाका' को भरे. और योंही 'प्रतिशलाका' के ब-
चे हुवे एकेक दाणे कर 'महा शलाका' नामक चौथे डाले को भरे. जब महाश-
लाका भरा जावे, तब उसे उठा नेकि कुछ जुरूरत नहीं, क्यों कि उसमें बचा हुवा
दाणा रखने कोइ पांचवा पाला नहीं है. इसलिये उस भरे हुवे 'महा शलाका' ना-
मे चौथे पाले को एक तरफ रख कर, फिर अनवस्थित कर पूर्वोक्त रीतिमें बचे हुवे
एकेक दाणें कर, 'शलका' नामक दूसरे टोपलेको भरे. और शलका के बचे हुवे ए-
केक दाणे कर प्रतिशलाका को भरे, वो प्रतिशलाका तीसरा पालाभी भरा जावे तब
उसे उठा करभी उस महाशलाका नामक चौथे डालेके पास रख देवे. और फिर अ-
नवस्थित के बचे हुवे एकेक दाणे से 'शलाका' को भरे, यों वो दूसरा टोपला शला-
का भी भरा जावे, तब उसेभी उठा कर उस प्रतिशलाका पाले के पास रखदेवे औ-
र जिसस्थान वो शलाका भरायाथा उसस्थान प्रमाणे उस अनवस्थित नामक प्रथम
टोपले को बना कर, शिवाऊ सरसों के दाणे से भर कर, उस शलाका नामक दूसरे
टोपलेके पास रखे, क्यों कि अब इसमें के बचे हुवे दाणे को भी रखने स्थान नहीं
रहा. यों चारोंही टोपले डाले पाले भरा जावे. तब चारों टोपले के दाणे को उठाक-
र एकस्थान इगला करे, और जो प्रथम द्वीप समुद्रोंमें दाणे डाले है उन सब को चु-
न कर भेले करे, इन दाणे की राशी (ढग) में मिलावे, और फिर उस सरसों के
ढग में से एक सरसों कमी करने से उस ढग में—७९८२६ [illegible]
[illegible]

३२९६ ००० ०००० ०००००००० ०००००० ००० ०० ००००० ००
००
०००
०००००००००००० ००००, इतने सरशों के दाणें हैं, इतनी संख्या को उत्कृष्ट संख्याते कहना. इनका उच्चारः—एक में एक का भाग देनेसे या एक को एक से गुण कार करने से कुछ भी हानी वृद्धि नहीं होतीहैं. इस लिये एक को तो संख्याका वाच कहा जाताहै, और दो (२) के अङ्क से संख्या का प्रारम्भ होताहै, इसलिये दोके अङ्क को (१)संख्या को जघन्य संख्याते कहना. और तीन चार पांच जावत सो, दश सो का एक हजार, सो हजार का—एक लक्ष, एसे चौरासी (८४) लक्षका-एक पूर्वांग. चौरासी लक्ष पूर्वांग का-एक पूर्व + चौरासी लक्ष पूर्व का-एक त्रुटि तांग, चौरासी लक्ष त्रुटितांग का-एक त्रुटित, चौरासी लक्ष त्रुटित का-एक अडडांग, चौरासी लक्ष अडडांग का-एक अडड, चौरासी लक्ष अडड का-एक अववांग, चौरासी लक्ष अववांग का-एक अवव, चौरासी लक्ष अवव का-एक हुहुकांग, चौरासी लक्ष हुहुकांग का-एक हुहुक. चौरासी लक्ष हुहुक का-एक उत्पलांग, चौरासी लक्ष उत्पलांग का-एक उत्पल चौरासी लक्ष उत्पल का-एक पद्मांग, चौरासी लक्ष पद्मांगका-एक पद्म, चौरासी लक्ष पद्मका-एक नलीनांग, चौरासी लक्ष नलीनांग का-एक नालीन, चौरासी लक्ष नलीनका-एक निपुरांग, चौरासी लक्ष निपुरांगका-एक अर्थ नेपुर, चौरासी लक्ष अर्थ नेपुरका-एक आयुतांग चौरासी लक्ष आयुतांग का-एक आयुत, चौरासी लक्ष आयुतका-एक मयुतांग, चौरासी लक्ष मयुतांग का-एक मयुत, चौरासी लक्ष मयुतका-एक चुलीकांग. चौरासी लक्ष चुलीकांग का-एक चुलिक, चौरासी लक्ष चुलिक का-एक शीर्ष पाहेली तांग (यह मध्य के १९२ अंकसे (२) मध्यम संख्याते जानना) और चौरासी लक्ष शीर्ष पहलीतांग का-एक शीर्ष प्रहेली का होती है. सो (३) उत्कृष्ट संख्याते जानना. १९४ अंक के आगे संख्या नहीं होती है. यह संख्याते के ३ भेद हुवे.

अब असंख्यात के ९ भेद कहते हैं:—ऊपर कहे मुजब चारों टोपले में के शरशों के दाणों का, और सब द्वीप समुद्रों पें डाले हुवे दाणों को चुनकर उस में

+ एक पूर्वकी संख्याके ७०५६०००००००००० इतने अंक होतेहैं.

मिलकर जो राशी (ढग) करी थी, और उस में से एक दाणा निकाल लियाथा, वो दाणा पीछा उस राशी में डाल देने से-(१) जघन्य परिता असंख्याते होते हैं. और इस जघन्य परिता असंख्याते की राशी को रास गुणाकरे × फिर उसमें से एक दाणा निकाले कम करे सो-(३)उत्कृष्ट परिता असंख्याता. और जघन्य परिता असंख्याता से एक अधिक, तथा उत्कृष्ट परित असंख्याता से एक कमी उसे (२)मध्यम परिता असंख्याता कहा जाता है. फिर उस उत्कृष्ट परित असंख्याते की राशीमें से वो निकाला हुवा-कम करा हुवा दाणा पीछा उस राशी में डाल देवे सो (४)जघन्य युक्ता असंख्याता. (इतने एक आवली का के समय होते हैं) फिर इस जघन्य युक्ता की राशी को राशगुणा करे, और उसमें से एक दाणा कम करे-निकाल लेवे सो (६) उत्कृष्ट युक्ता असंख्याता, और जघन्य युक्ता असंख्याता से एक अधिक उत्कृष्ट युक्ता असंख्याता से-एक कमी सो(५) मध्यम युक्ता असंख्याता. फिर उत्कृष्ट युक्ता की रासी मेंसे निकाला हुवा दाणा डाल देवेसो-(७) जघन्य असंख्यात असंख्याता. और इस जघन्य असंख्यात असंख्याते की राशी को राश गुणा कर, एक दाणा कम करे सो-(९) उत्कृष्ट असंख्याता, (इतने धर्मास्ति, अधर्मास्ति, लोकाकास्ति, और जीवास्ति के प्रदेश हैं.) और जघन्य असंख्यात असंख्याते से एक अधिक उत्कृष्ट असंख्यात असंख्यातेसे एक कमी सो-(८) मध्यम असंख्यात असंख्याते. यह असंख्याते के ९ भेद हुवे.

अब अनन्त के ९ भेद कहते हैंः—फिर उत्कृष्ट असंख्यात असंख्याते की राशी में से निकाला हुवा दाणा पीछा उस में मिला देवे सो (१) जघन्य परिता अनन्ता (इतने अभव्य जीवों है) फिर इस जघन्य परिता अनन्ते की राशी को रास गुणाकर, उस में से एक दाणा निकालने से, जो रहे सो-(३) उत्कृष्ट परिता अनन्ता, और जघन्य परिता अनन्ता से एक अधिक, उत्कृष्ट परित अनन्त से एक कम सो, (२) मध्यम परिता अनन्ता. फिर उत्कृष्ट परिता अनन्ता की राशी में से निकाला हु-

× जैसे ४ को ४ गुणा करने से १६ होते हैं. तैसेही जितने दाणे का [illegible] है उन सब दाणों को अलग २ एकेक बिखेर कर, उस एकेक दाणे के ऊपर [illegible] जितना एकेक ढगला करे, उन दाणे जितने सब ढगले को भेले करे उसे [illegible] कहा जाता है.

वा दाणा पीछा उस में डाल देवे सो-(४) जघन्य युक्ता अनन्ता, और जघन्य युक्ता अनन्ता की राशी को राश गुणा कर उस में से एक दाणा निकाल लेवे सो (६)उत्कृष्ट युक्ता अनन्ता, और जघन्य युक्ता अनन्ता से एक अधिक, उत्कृष्ट युक्त अनन्ता से एक कमी सो (५) मध्यम युक्ता अनन्ता जाणना, फिर उत्कृष्ट युक्ता अनन्ता की राशी में से निकाला हुवा दाणा उस राशी में पीछा मिलावे सो (७) जघन्य अनन्त अनन्ता कहते हैं.

अब आगे केवल ज्ञान के अभिगम परिछेदों के प्रमाण स्वरूप बताने उत्कृष्ट अनन्तान्तका स्वरूप कहते हैं:-जघन्य अनन्ता अनन्त राशी को राश गुणा करने से जो राशी उत्पन्न होवे वहा अनन्तान्त का+मध्य भेद है, इस राशीमें-जीव राशीके अनन्तवे भाग सिद्ध राशी,सिद्ध राशीसे अनन्त गुणी निगोद राशी-वनस्पति काय राशी, जीव राशी से अनन्त गुणी पुद्गल राशी, पुद्गल सेभी अनन्त गुणे तीन काल के समय, और अलोका काश के प्रदेश, यह ६ राशी मिलाना और इस में धर्म द्रव्य के अगुरु लघु गुणके अनन्तान्त अविभाग प्रतिच्छेद मिलाकर जो राशी होवेसो(८)मध्यम अनन्ता अनन्त. इस राशी को केवल ज्ञान के अविभाग प्रतिछेदों के समोह रूप राशी में से घटाना, और जो शेष बचे उस में पुनः वही महा राशी मिलाने से केवल ज्ञान के अविभाग प्रति छेदों का प्रमाण स्वरूप उत्कृष्ट अनन्तानन्त होता है. उक्त महाराशी को केवल ज्ञान में से घटाकर फिर मिलाने का सबब यह है कि-दुसरी राशी से गुणाकार कर ने पर भी केवल ज्ञान के प्रमाण से बहुत कमती रहता है. इस लिये केवल ज्ञान के अविभाग परिछेदों का प्रमाण का महत्व दिखलाने ऊपर युक्त विधान किया है.

इस प्रकार से संख्यामान के २१ भेदोंका कथन समाप्त हुवा.

अब उपमा प्रमाण के ९ भेद कहते हैं:—१ पल्य, २ सागर, ३ सूच्यांगुल,

---

+ अनन्त के दूसरे दो भेद होते हैं:-१ सान्त अनन्त, और अक्षय अनन्त. यहां तक जो संख्या हुई सो सान्त अनन्त की हुई. अब इनके आगे के भेद कहते हैं सो अक्षय अनन्त के जानना. क्योंकि इन असंख्य महाराशी में आगे से राशी अक्षय अनन्त की निपजती है. नवीन वृद्धि न होने पर भी खर्च करते २ जिस राशीका अन्त पार नहीं आवे उसको अक्षय अनन्त कहते हैं.

धनुष्य, २००० धनुष्यका-१ गाऊ (कोश), ४ कोशका-१ योजन.

ऐसे प्रमाणांगुल से निष्पन्न एक योजन का लम्बा-एक योजन काही चौडा (गोळ) और एक योजन का ऊंडा गोळगर्त (कुवे) में-देव कुरु उत्तर कुरु क्षेत्रके युगल मनुष्य के ७ दिन के बच्चे के वालाग्र-ऐसे बारीक कतरे कि-जो आँखों में डालने से खट के नहीं (काजल जैसे) इन से इस कूवे को ठसोठस भरे कि-जिसपरसे जो कभी चक्रवर्ती राजा की सब सेना निकल जायतो भी वो बिलकुल दबे नहीं. गंगानदी का पूर उस पर से निकल जायतो उस में पाणी प्रवेश कर सके नहीं. उस कूवे में—
४१३४५२६३०३०८२०३१७७७४९५११२१९२००००००००००००००००००
इतने वालाग्र समाये. इन में से सो सो वर्ष में एकेक वालाग्र निकालते वो कूवा साफ खाली होजाय. एकभी वालाग्र नहीं रहे, उतने वर्षोंका-१ व्यवहार पल्योपम होता है. (इस पल्योपम से देवता नरक और युगलीयों का आयुका प्रमाण किया जाताहै.)

(सो वर्षका प्रमाण-शीघ्रतासे) आँख मीच कर उघाडे (आँख टमकावे) इतने में असंख्यात समय बीत जातेहैं. ऐसे असंख्यात (जघन्य युक्ताप्रमाण) समय की-१ आवलिका, ४४४६ हाजेरी (कुछ ज्यादा) आवलीका×-१ श्वासोश्वास, ७श्वासोश्वासका एक थोव, ७ थोव की-१लव (घांस काटते एक वक्त में जितना काल लगे उतना काल) ७७ लवका-१-मुहूर्त, ३० मुहूर्त की-१अहो रात्र (दिनरात) १५ अहो रात्र का-१पक्ष, २ पक्षका-१मास, २ मासकी-१ऋतु (ग्रीष्मादि) ३ ऋतु की-१अयन (दक्षीणायन-उत्तरायन), २ अयन का-१ वर्ष, ५ वर्षका-१ युग, २० युगके सो वर्ष होतेहैं.)

(२)अब ऊपरोक्त व्यावहार पल्योपमके वर्षोंको असंख्यात कोटी वर्षोंके समयों से गुणा कार करने से-१ उद्धार पल्योपमके वर्षों का प्रमाण होता है. (इस उद्धार पल्य के समयों को २५ क्रोडा क्रोड (२५ क्रोडको २५ क्रोड से) गुणा करने से जितने समय होवें, उतने सब द्वीप समुद्रों हैं.)

× २५६ आवलिका का—१ क्षुल्लक भव (निगोदके जीवों का—१ भव) होता है, ६५५३६ भवका—१ अन्तर मुहूर्त होता है, इसमें २५६ को ६५५३६ से गुणाकार कर देने—१६७७७२१६ इतनी आवलिका होती है. इसमें एक अन्तर मुहूर्तके श्वासोश्वास के भाग देने से ४४४६ एक श्वासोश्वास की आवलिका होतीहै. बाकी २४५८ आवली का रही है. इसे ३७७३ का भाग नहीं लगता है. इसलिये १ आवलीका के ३७७३ भाग करनेसे २४५८ अंश ४४४६ आवली पर आते है. ऐसो जबीद जानना चाहिये.

जानना. ३ जहां कालका प्रमाण कहा जाय, वहां इतने समय जानना. और ४ जहां भाव का प्रमाण कहा जाय, वहां इतने अविभाग प्रतिच्छेद जानना.

यह लोकोत्तर (अलौकिक) गणितका कथन हुवा.

१२–१३ क्षेत्र स्पर्शना और क्षेत्र प्रमाण द्वारका अर्थः

लोकालोक का स्वरूप.

संक्षेपमें लोकालोक का स्वरूप इसतरह से हैः— अलोक-अ=नहीं+लोक=वि-लोकने-देखने जैसा, अर्थात्-अलोक में फक्त एक आकाश (पोलार) ही है, और कुछ भी नहीं है. इसलिये अलोक कहा जाता है. सो अनन्तानन्त—अपरम्पार—आद्य—न्त रहित है.

इस अलोक के अत्यन्त मध्य विभाग में षट्द्रव्यों के पिण्ड रूप नीचे से ऊपर तक १४ राजू का लम्बा और. नीचे सात राजु चौडा, मध्य मे १. राजू चौडा, ऊपरके अर्ध विभागमें-५ राजू चौडा, ऊपर अन्त में १.–राजू चौडा-जैसे एक दीवा उलटा, उसपर दुसरा दीवा सुलटा और उसपर एक दीवा उलटा रखा हो, इस आकार ३४३ राजू घनाकार मपति रूप सर्व चराचर पदार्थों का स्थान लोक है. इसके तीन विभाग कल्पे हैं :—१ अधो-नीचालोक, २ मध्य—बीचका लोक, और ३ उर्द्ध ऊंचा लोक. इन तीनोंका अलग २ संक्षिप्त स्वरूप बताते हैंः—

१ नीचा लोक का स्वरूपः—अलोक के ऊपर आकाश और घनोदधी घनवाय तनुवाय के तीनों वलीये अर्ध चन्द्रकार मध्य में बीस २ हजार योजन के जाडे. घटते २ अन्त में ६ योजनके रहगये हैं, जिसपर अव्यवहारराशी-इतरीय निगोद का पिण्ड अनन्त अक्षय जीवों से भरा हुवा है. जिसपर सातवी नरक-सात राजूकी लम्बी चौडी और एक राजू जडी (उंचास) में, सब ४९ राजू घना कार में है, इस के मध्य में–१ लक्ष ८ हजार योजन का जाडा और १. राजू का चौडा पृथ्वी का पिण्ड है. जिसके ५२॥ हजार योजन नीचे और ५२॥ हजार योजन उपर छोड, बीच में ३ हजार योजन की पोलारहै, जिसके एक पांथडे में ५ नरकावासे में असंख्यात नेरीये हैं. जिनका ५०० धनुष्य का शरीर और ३३ सागर का आयुष्य है.

जिसपर छट्ठी मघा नरक-छे राजू लम्बी चौडी, एक राजू जाडी, ४० राजू

घनाकार विस्तारमें है. जिसके मध्यमें-१लक्ष१६०००योजन जाडा, और१राजू ल
चौडा पृथ्वी पिण्ड है, जित में एक हजार योजन उपर एक हजार योजन नीचे छो
कर बीच में १ लक्ष १४ हजार योजनकी पोलारहे, जिसमें ३ पाथडे, २
आन्तरे, ९ कम १ लक्ष नरकावासे में असंख्यात नेरीये हैं-जिनका ३६० धनुष्य
शरीर और २२ सागर का आयुष्य है.

जिसपर पांचवी रिठा नरक—पांच राजूकी लम्बी चौडी, एक राजू की जाडी
१४ राजू घनाकार में है. जिसके मध्य-१ लक्ष १८ हजार योजनका पृथ्वी, पिण्ड.
जिस के एक हजार योजन ऊपर एक हजार योजन नीचे छोड बीच में १ लक्ष
१६ हजार योजन की पोला रहे, जिस में पांच पाथडे, ४ आन्तरे, ३ लक्ष नरका
वासे में असंख्यात नेरीये रहते हैं, जिनका १२५ धनुष्य का शरीर, और १८ सागर
का आयुष्य है.

जिसपर चौथी अंजना नरक-चार राजू की लम्बी चौडी, एक राजूकी उंची
२८ राजु के विस्तार में है जिसके मध्य में १ लक्ष २० हजार योजनका पिण्ड है,
जिसके एकेक हजार योजन उपर नीचे छोड के बीच में १० लक्ष १८ हजार योज
न की पोलार है. जिसमें ७ पाथडे, ६ आतरे, १० लक्ष नरकावासे असंख्यात नेरीये
है. जिनोंका ६२॥ धनुष्यका शरीर, और१०सागरोपम का आयुष्यहै.

जिसपर तीसरी सीला नरक तीन राजूकी लम्बी चौडी एक राजूकी उंची२१
राजू के विस्तार में है. जिसके मध्य में १ लक्ष २८ हजार योजनका पृथ्वी पिण्ड है,
एकेक हजार योजन उपर नीचे छोड बीच में १ लक्ष २६ हजार योजनकी पोलार
है. जिस में ९ पाथडे ८ आंतरे. १५ लक्ष नरकावासे में असंख्यात नेरीये हैं. जिनके
३१। धनुष्य का शरीर और ७ सागरका आयुष्य है.

जिसपर दुसरी वंसा नरक-दो राजूकी लम्बी चौडी, एक राजू की उंची. १६
राजू घनाकार में है. जिसके मध्य १ लक्ष, ३२ हजार योजन का पृथ्वी पिण्ड है.
जिनके एकेक हजार योजन उपर नीचे छोड बीच में-१ लक्ष ३० हजार योजनकी
पोलारहै, जिसमें-११ पाथडे, १० आन्तरे, २५ लक्ष नरकावासे है में असंख्याते नेरीये
है. जिनका १५॥ धनुष्य १२ अंगुल का देहमान और ३ सागर का आयुष्य है

जिसपर पहिली घम्मा नरक-एक राजूकी लम्बी चौडी. और १ राजूका उं-
ची, १० राजू घनाकार में है, इसके मध्य १ लक्ष ८० हजार योजन का पृथ्वी पि

ण्ड है, जिसमे से एकेक हजार योजन ऊपर नीचेका छोडा बीच में १ लक्ष ७८ हजार योजन की पोलाड है, जिसमें १३ पांथडे, १२ आन्तरे ३० लक्ष नरक, वासेमें असंख्यात नेरीये हैं. जिनकी ७॥। धनुष्य ६ अंगुल का शरीर, और उत्कृष्ट १सागर का आयुष्य है.

सातों नरक के-४२ आन्तरमें से प्रथम नरक के १०अन्तर छोड बाकीके सब खाली पडे हैं. और ४९ पांथडे हैं सो सब पोले हैं. जिन में ८४ लक्ष नरकावासे हैं उन में नेरीये रहते हैं.

पहिली नरक के दश अन्तरमें ११ हजार ५ सो ८३ योजन कुछ झाजेरी जगह है. जिसमें १ क्रोड ७२ लक्ष भवन हैं. उन में असंख्यात, भवन पति देवों १० जाति के रहते हैं. जिनका ७ हाथ का शरीर और एक सागरका आयुष्य है.

२ तिरछा लोकका वरणन्-एक राजू का लम्बा चोडा गोळ. १८०० योजन का ऊंच १० राजू घनाकार में तिरछा लोक है.

पहिली नरकके उपर जो १००० योजनका पृथ्वी पिण्ड छोडाहै. उसमें १०० तो योजन नीचे छोडना. जो नीचे लोककी हदीमेंही हैं, और १०० योजन उपर छोडना, बीचमें८०० योजनकी पोलारमें आठ जातिके व्यन्तर देवोंके असंख्यात नगरेहैं. और उपर१००योजन छोड उसमेंके१० योजन उपर छोडना, और१०योजन नीचे छोडना.बीच में८० योजनकी पोलारहै: जिसमे ८ जातिके वाण व्यन्तरके असंख्याते नगरे हैं. यह दोनों स्थान में रहने वाले देवोंका ७हाथका शरीर और एक पल्योपमका आयुष्य है.

१० योजनके छोडे हुवे पिन्ड पर समभुमी है. सो एक राजू की लम्बी चोडी गोळ है. इस के बहुतही मध्य भाग में सुदर्शन मेरु पर्वत मलस्थंभ जैसा गोळ नीचे १० हजार योजन चौडा. और कम होता २ उपर शिखरपर १ हजार योजन चौडा रह गया है. और मूल में से शिखरतक १ लक्ष योजन का ऊंचा है. इस के मूल में समभूमी पर तो-१ भद्रशालवन है. ५०० योजन उपर नंदनवन है. ६२५०० योजन उपर सोमानस वन है. और ३६००० योजन उपर पडंग वन है. (यहां तीर्थंकरोंका जन्माभिषेक इन्द्रादि देव करते है) इस वनके मध्यमें ४० योजन की ऊंची चूली का (चोटी जैसी टोंगरी) है.

इस मेरु पर्वत के चारों तरफ चूडीके आकार फिरता हुवा १ लक्ष योजनका लम्बा चोडा गोळ जम्बुद्वीप है. मेरु पर्वत पास पूर्व पश्चिममें महा विदेह क्षेत्र है. जि-

पास उत्तर में रूपी पर्वत-२०० योजन उंचा, ५४१२२ योजन १६ कला लम्बा: ४२१० योजन १० कला चौडा है.

महा हेमवन्त पर्वत के पास दक्षिण में हेमवय क्षेत्र और रूपी पर्वतके पास दक्षिण में एरणवय क्षेत्र ३७६७७४ योजन १६ कला लम्बा, और २१०५ योजन ५ कला चौडा है. इसमें तीसरे आरेकी रचना सदा रहती है, यहांके युगल मनुष्योंका १ गाउका शरीर, और १ पल्योपम का आयुष्य होता है.

हेमवय क्षेत्र के पास दक्षिण में चूल हेम पर्वत और एरणवय क्षेत्रके पास उत्तर में शिखरी पर्वत-१०० योजन उंचा, २४९२५ योजन लम्बा, और १०५२ योजन १२ कला चौडा है.

चूल हेम पर्वत के पास दक्षिणमें भरत क्षेत्र और शिखरी पर्वत के पास उत्तरमें एरावत क्षेत्र-१४४७१ योजन लम्बा, ५२६ योजन ६ कला चौडा है, इसमें ६ आरे सर्पिणी कालके सुलटे और ६ आरे उत्सर्पिणी काल के उलटे सदा वारे सिर पवर्तते हैं. जिस में शरीर और आयुष्य आरा प्रमाणें होता है.

इन भरत एरावत क्षेत्र के मध्य वीच में वेताड पर्वत १०७२० योजन १२ कला लम्बा, ५० योजन चौडा, और २५ योजनका उंचा है, इस पर्वतपर १० योजन जावे वहां १० योजन चौडी पर्वत जितनी लम्बी दो श्रेणियो (बरोबर जगह) है. वहां दक्षिण में ५० और उत्तर में ६० नगर है, जिसमें विद्याधर मनुष्य रहते हैं; इसके उपर और भी दश योजन जावे वहां दो श्रेणियों है. उस में १० जाति के विज्ञमक देवता रहते हैं. इस पर्वत में नीचे जमीनपर तमस और खन्ड प्रास नामक दो गुफा १२ योजन चौडी और पर्वत जितनी लम्बी है. (इस में सचक्रवर्ति राजा खन्ड साधने को आते जाते हैं-

जम्बु द्वीपके चौगिरदा जगति (कोट) ३१६२२७ योजन ३ गाउ १२८ धनुष्य १३॥ अंगुल झाजेरा घेराव लिये हैं.

इस जगति के पास बाहिर चौगिरदा फिरता गोळ चूडी जैसा २ लक्ष योजन का चौडा लवण समुद्र है. यह किनोरपर वालाग्र जितना उंडा है, और वढतेर मध्य ९५ हजार योजन जावे वहां १ हजार योजन उंडा है.

जम्बु द्वीप में रहे चूलहेम शिखरी पर्वत के चारों छेडों से आठ दाडों (डोंगरीयों) निकल कर लवण समुद्र में ८४००० योजन लम्बी गइ है, उन एकेक दाडों पर

संख्यात द्वीप और असंख्यात समुद्र है. अन्तिम सयंभु रमण समुद्र एकही अर्ध राजू प्रमाण चौडा है. उस के आगे १२ योजन अलोक है.

मेरु पर्वत के सम सम भूमी से ऊपर ७९० योजन तारा मंडल है उसपर १० योजन सूर्य है. उसपर ८० योजन चंद्रमा है. उपर ४ योजन नक्षत्र माल, उपर ४ योजन ग्रह माळ. उपर ४ योजन बुद्ध. उपर तीन योजन शुक्र. उपर तीन योजन बृहस्पति, उपर तीन योजन मंगल. उपर तीन योजन शनी, यों ११० योजन में जोतिषी चक्र है.

ऊंचा लोकका वरणनः–शनिश्वर के विमान से १॥ राजु उपर, १९॥ राजू के विस्तार में जम्बु द्वीप के मेरु से दक्षिण की तरफ तो पहिला सुधर्मा देवलोक १३ प्रतर ३२ लक्ष विमानों असंख्यात देव युक्त है. और उत्तर में ईशाण देवलोक १३ प्रतर २८ लक्ष विमान. असंख्यात देव युक्त है. दोनों देवलोक के देवताओंका ७ हाथ का शरीर. और २ सागरोपम का आयुष्य है.

इन दोनों देवलोक की हद के उपर-१ राजू ऊंचाल में और १६॥ राजू घनाकार में मेरु से दक्षिण में तीसरा 'सनत्कुमार' देवलोक बारे प्रतर. और १२ लक्ष विमान, उत्तर मे चौथा महेन्द्र देवलोक १२ प्रतर. ८ लक्ष विमान. असंख्यात देव युक्त है. दोनों देवलोकोंके देवका ६ हायका शरीर,७और सागरोपम का आयुष्य है.

इन दोनों देव लोककी हद से आधा राजू उपर, २० राजू घनाकार मे मेरुपर बरोबर पांचवा देवलोक ६ प्रतर. और ४ लक्ष विमान में असंख्यात देवों ५हाथ का शरीर और १० सागर के आयु वाले रहते है.

पांचवे देवलोक की तीसरी अरिष्ट प्रतर के पास. दक्षिण दिशा में आठ कृष्ण राजी पृथ्वी परिणाम रूप श्याम वर्ण की है. जिस में आठ विमान आठों दिशी में और एक विमान मध्य में यों ९ विमानों में. ९ लोकान्तिक देव २०७०९ देवोंके परिवार से. ५ हायका शरीर और "लोकान्तिका नाम्ही सागरोपमानि सर्वेषाम" इस सूत्रानुसार-सर्व देवोंका आठ सागरोपम का आयुष्य है. (यह तीर्थंकरोंको दिक्षा के अवसर में चेताते हैं.)

पांचवे देवलोक के उपर बरोबर आधा राजु ऊंचा. और [illegible] राजू के विस्ता-

+ [illegible] होते हैं. वैसे देवलोक [illegible] करते हैं.

वर्ण की ४५ लक्ष योजन की लम्बी चौडी गोळ है.

सिद्ध शिला के उपर सिद्ध क्षेत्र एक योजन उपर और सब १४ राजू के विस्तार में है. यहां उपर के ३३३ धनुष्य ३२ अंगुल जितने जाडे और ४५ लक्ष योजन जितने लम्बे चोडे स्थान में अनन्त सिद्ध भगवन्त परमात्म हैं. उन सबों-का सिर आलोक से लगा है. यह संक्षेप में लोकालोक का वर्णन् समाप्त हुवा.

☞ काल प्रमाण द्वारका खुलासातो पीछे कहे प्रमाण बोधसे जाणना. बाकी के आगे कहे सब द्वारोंका खुलासा मूल मुजवही जाणना. तथा उपरोक्त द्वारोंके खुलासे से जाणना.

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज के सम्प्रदाय के बालब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलख ऋषिजी महाराज रचित मुक्ति सोपान श्री गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारी प्रथम अर्थ काण्ड का मूल द्वारा रोहण का अर्थ नामक

जगत में अनन्त जीवों हैं. एकेक जीव अनन्त कर्म पुद्गल की वर्गणा कर घेरा हुवाहै इसलिये अनन्तानन्त भी कर्मोंके भेद होते हैं.

यहां मुख्यत्व ८ कर्मोंकी १४८ प्रकृत्तियों कहते हैं.

इह नाण दंसग वरण । वेअ मोहाउ नाम गोआणी ।
विग्घं च पग नव दु। अठवीस चउ तिसय पण विहं॥ गोमठसार

अर्थ—१ ज्ञानावरणीय कर्म की ५ प्रकृत्ति, २ दर्शनावरणीय कर्म की ९ प्रकृत्ति, ३ वेदनीय कर्म की २ प्रकृत्ति, ४ मोहनीय कर्म की २८ प्रकृत्ति, ५ आयुष्य कर्म की ४ प्रकृत्ति, ६ नाम कर्म की ९३ प्रकृत्ति, ७ गोत्र कर्म की २ प्रकृत्ति, और ८ अन्तराय कर्म की ५ प्रकृत्ति. यों ८ कर्मों की १४८ प्रकृत्तियों होती है. इन सबोंका खुलासे वार आगे वरणन् करते हैं:—

ज्ञानावरणीय कर्म.

जिससे वस्तु का स्वरूप जाना जावे सो 'ज्ञान' यह आत्मा का निजगुण है. सब गुणोंमें अव्वल दरजे का गुन है. इसलिये यह पूज्य होनेसे प्रथम ग्रहण कियाहै. जीव रूप लोकालोक प्रकाशी सूर्य को केवल ज्ञानावरणीय रूप बदलोंने ढका है. तो भी अक्षर का अनन्तवा भाग सब जीवों के उघाडा रहता है; + वो बदलों पतले पडते हैं त्यों सूर्य का प्रकाश बढता है. तैसेही ज्ञानावरण कम होने से मति श्रुति आदि ज्ञान प्रगटताहै. और बदलों जाडे होनेसे सूर्यका तेज आवरना-कमी पडताहै. तैसे ही ज्ञानावरण से पंचज्ञान की मन्दता होती है. सोही ज्ञानावरणीय की ५ प्रकृत्ति.

१. 'मति ज्ञानावरणीय'—पांचों इन्द्रिय और मन कर जो भाव जानने में आवे सो मति ज्ञान. इसके दो भेद:—(१) व्यंजनावग्रह और (२) अर्थाव ग्रह. व्यंजन-अ-

---

+ यहां श्रुत केवल ज्ञान साधारण पर्यायाक्षर लेना. जिसलिये अभिलेप्य वस्तु धर्म सो स्वपर्याय है. और अनभिलेप्य वस्तु धर्म सो पर पर्याय है. और केवल ज्ञानवाले अनभिलेप्य अभिलेप्य दोनो पर्याय हैं, यो दोनों ज्ञान के पर्याय एक से होते हैं, सो पर्यायाक्षर. उस का अनन्तवा भाग उत्कृष्ट तो श्रुत केवली के होता है, और अनन्त भाग निगोद में अतीन्द्रि आहार सज्ञादि चेतना रूप होता है. जो कभी इतना ढक जाय तो जीव चैतन्य पनके अभाव से अजीव कहलाने लगजाय परन्तु ऐसा होताही नहीं है.

जगत में अनन्त जीवों हैं. एकेक जीव अनन्त कर्म पुद्गल की वर्गणा कर घेरा हुवाहै इसलिये अनन्तानन्त भी कर्मोके भेद होते हैं.

यहां मुख्यत्व ८ कर्मोंकी १४८ प्रकृत्तियों कहते हैं.

इह नाण दंसण वरण । वेअ मोहाउ नाम गोआणी ।
विग्वं च पण नव दु। अठवीस चउ तिसय पण विहं॥गोमठसार

अर्थ—१ ज्ञानावरणीय कर्म की ५ प्रकृत्ति, २ दर्शनावरणीय कर्म की ९ प्रकृत्ति. ३ वेदनीय कर्म की २ प्रकृत्ति, ४ मोहनीय कर्म की २८ प्रकृत्ति, ५ आयुष्य कर्म की ४ प्रकृत्ति. ६ नाम कर्म की ९३ प्रकृत्ति, ७ गोत्र कर्म की २ प्रकृत्ति. और ८ अन्तराय कर्म की ५ प्रकृत्ति. यों ८ कर्मो की १४८ प्रकृत्तियों होती हैं. इन सर्वोका खुलासे वार आगे वरणन् करते हैं:—

ज्ञानावरणीय कर्म.

जिससे वस्तु का स्वरूप जाना जावे सो 'ज्ञान' यह आत्मा का निजगुण है, सब गुणों में अव्वल दरजे का गुण है. इसलिये यह पूज्य होनेसे प्रथम ग्रहण कियाहै, जीव रूप लोकालोक प्रकाशी सूर्य को केवल ज्ञानावरणीय रूप वदलोंने ढका है. तो भीं अक्षर का अनन्तवा भाग सब जीवों के ज्याडा रहता है; + वो वदलों पतले पडते हैं त्यों सूर्य का प्रकाश बढता है. तैसेही ज्ञानाभरण कम होने से मति श्रुति आदि ज्ञान प्रगटताहै. और वदलों जाडे होनेसे सूर्यका तेज आवरना-कमी षडताहै, तैसे ही ज्ञानाभरण से पंचज्ञान की मन्दता होती है. सोही ज्ञानावरणीय की ५ प्रकृत्ति.

१ 'मति ज्ञानावरणीय'—पांचों इन्द्रिय और मन कर जो भाव जानने में आवे सो मति ज्ञान. इसके दो भेदः—(१) व्यंजनावग्रह और (२) अर्थाव ग्रह. व्यंजे=प्र-

---

+ यहां श्रुत केवल ज्ञान साधारण पर्यायाक्षर लेना. जिसलिये अभिधेय वस्तु धर्म से स्वपर्याय है. और अनाभिधेय वस्तु धर्म से पर पर्याय है, और केवल ज्ञानवाले अनाभिधेय अभिधेय दोनों पर्याय हैं, यो दोनों ज्ञान के पर्याय एक से होते हैं, सो पर्यायाक्षर. उस का अनन्तवा भाग उत्कृष्ट तो श्रुत केवली के होता है, और जघन्य नाना निगोद में जीवोंके आहार सज्ञादि चेतना रूप होता है, जो कभी इतना ढक जाय तो जीव चैतन्य पनके अभाव से अजीव कहलाने लगजाता परन्तु ऐसा होताही नही हैं.

(१) अक्षरश्रुत–पत्रादि पर लिखे सो–'सन्नाक्षर,' मुखसे उचारन करेसो 'व्य-जनांक्षर', यह दोनों द्रव्य श्रुत. और इन से अर्थात् पढकर-देखकर, या सुनकर इन्द्रियावरण की क्षयोपशम लब्धिद्वारा अनाभिदेय पदार्थ के अनन्तवे भाग अभिधेय पदार्थ को जाने सो-'लब्धाक्षर', यह भाव श्रुत. इन तीनों प्रकारके अक्षरों को जाने सो अक्षर श्रुत.

(२) 'अनक्षर श्रुत'–अक्षर के उच्चार विना खाँसी छींक डकार बगासी आदि किसी भी चेष्टासे मतलब समझे सो अनक्षर श्रुत.

(३) 'सन्नीश्रुत'–विचारे, निर्णय करे, समुचय अर्थ करे, विशेप अर्थे, चिन्तवे और निश्चय करे, यह ६ बोल सन्नी में पातेहैं, इन६ बोल सहित सूत्र धारेसो सन्नीश्रुत

(४) 'असन्नी श्रुत' ऊपरोक्त ६ बोल विना पूर्वापर अलोचविना पढे पढावे सुने सुनावे सो असन्नी श्रुत.

(५) 'सम्यग श्रुत'—सर्वज्ञ या दश पूर्वतक पाढे हुवेके वचनोको या कथित सूत्र ग्रन्थोंको यथा तथ्य श्रद्धे सो सम्यग श्रुत ÷

(६) 'मिथ्याश्रुत'–अज्ञानता से मन काल्पित कथनया करे रचे हुवे काम शास्त्र जोतिष वेदके आदि पाप शास्त्र हैं सो मिथ्याश्रुत.

(७–१०) सादि, अनादि, शान्त, और अनन्त, इनो चारों श्रुतका अर्थ, द्रव्य क्षेत्र, काल, और भाव कर बताते हैं:–(१) द्रव्य से कोइ जीव मिथ्यात्व को छोड सम्यक्त्व में आया तब श्रुत ज्ञान की आदि हुइ, और पडवाइ हो पीछा मिथ्यात्व में गया तब अन्त हुवा. तथा केवल ज्ञान पाया तब अन्त हुवा. और बहूत जीवों आश्रिय-अनादि अनन्त है, क्योंकि ऐसा वक्त कदापि नहीं था और न होगा कि जब श्रुत ज्ञान नथा और न रहेगा. (२) क्षेत्रसे-भरत ऐरावत क्षेत्र में तीर्थ की प्रवात्ति होवे तब श्रुत की आदि होवे, और तीर्थ का व्यच्छेद होवे तब श्रुतका अन्त होवे. और महा विदेह आश्रिय अनादि अनन्त है. (३) कालसे-उत्सर्पिणी अवसर्पिण काल मे तीसरे आरे के अन्त तथा आदि में श्रुतकी आदि होती है, और छट्टे आरे की आदि में

÷ यथार्थ जानने के सबब से सम्यग दृष्टि को मिथ्याश्रुत भी सम्यगश्रुत हो परगम जाता है. और कदाग्रही होनेके सबब से मिथ्यादृष्टि को सम्यगश्रुत भी मिथ्याश्रुत हो परगम जाता है.

(३) 'संठाण'—नरक-त्रिपाई के, भवनपति-पाला के, व्यन्तर-पडह के, जोतिषी-झालरके, देवलोकके देव-मृदंग के, ग्रीवेकके देव-फूलचंगेरीके, अनुत्तर विमान के देव-कंचूकीके, और मनुष्य तिर्यंच जालीके आकार से नानाप्रकारसे देखते हैं.

(४) 'बाह्यभ्यन्तर'—नरक देव के अभ्यन्तर अवधी ज्ञान, तिर्यंच के बाह्य अवधि ज्ञान, मनुष्यके-बाह्य अभयन्तर दोनों तरह का अवधि ज्ञान.

(५) 'अणुगामी-अणाणुगामी'—जो आँखों की तरह जहां जावे वहां साथ रहे, और चारों तरफ देखे सो अणुगानी अवधि ज्ञान. यह चारों ही गति के जीवों को होवा है. और जो स्थापित-दीवेके जैसा उत्पन्न होवे उसी स्थान से या हरेक एक दो दिशीमें विक्रम से देखे सो अणुणाणुगामी अवधिज्ञान, यह मनुष्य तिर्यंच दोनों गति में होता है.

(६) 'देशसे सर्वसे'—जो मर्याद सहित देखे सो देशसे. और सर्वलोक तथा कुछ अलोक देखे सो सवसे. नरक देव तिर्यंच के देशसे अवधिज्ञान. मनुष्य के देशसे सर्व से दोनों तरहका अवधिज्ञान.

(७) हायमान वृद्धमान अवस्थितः—परिणामोंकी संक्लेशता कर घटता जाय सो 'हायमान,' विशुद्धता कर बढता जाय सो वृद्धमान, मध्यस्ताकर उपजे उतनाही बना रहे सो 'अवस्थित,' नरक देव के अवस्थित अवधीज्ञान, और मनुष्य तिर्यंचके दोनों तरहका.

(८) 'पडवाइ अपडवाइ'—जो उपजकर चलाजावे सो पडवाइ, औरजन्मान्ततक या आगेके भवों तक बना रहे सो अपडवाइ, नरक देव के अपडवाइ, मनुष्य तिर्यंच के पडवाइ अपडवाइ दोनों तरहका.

अवधि ज्ञानी—(१) द्रव्य से जघन्य अनन्त में भाग रूपी द्रव्यको जाने-देखे, उत्कृष्ट-सर्व रूप द्रव्य जाने. एकेक प्रमाणुओं चडते अनन्त द्रव्यों हैं, यों द्रव्यविधि के अनन्त भेद होते हैं. (२) क्षेत्र से जघन्य अंगुलके असंख्यातवे भाग क्षेत्र से लगा कर प्रदेशाधिक होते उत्कृष्ट संपूर्ण लोक और लोक जैसे अलोक में असंख्यात खंड वे देखें-यों क्षेत्रसे असंख्यात भेद होते हैं. (३) कालसे-जघन्य आंवलीका के. असंख्यातवे भाग से समयाधिक होकर उत्कृष्ट अतीत अनागत असंख्यात काल चक्रतक जाने यों, कालमे भी असंख्यात भेद होते हैं. और (४) भाव से-जघन्य अनन्त भाव उत्कृष्ट अनंत भावोंको जाने, यों भाव से अनंत भेद ऐसे अवधि ज्ञान का आवरण—

से किसीभी वस्तुको देख सकता नहीं है और उस पट्टे में छिद्र होने से कुछ प्रतिभाप होता है, और सर्वथा पट्टा दूर होनेसे पुर्ण प्रकाश होता है, त्यों दर्शनके भी चार प्रकार होते हैं.–(१) आँखों से पटादि पदार्थ का सामान्य रूप देखा जावे सो चक्षु दर्शन, उसे नहीं देखने देवेसो चक्षु दर्शनावरणीय. (२) आँखोविना चारों इन्द्रियों से तथा मन से जो शब्दादि अर्थ का सामान्य बोध होता है. तथा परभव से आते हुवे रस्ते में द्रव्येन्द्रिय की सहायता विना जो बोध होवेसो अचक्षु दर्शन. इसका जो आवरण-ढकन करे सो अचक्षु दर्शनावरणीय, (३) द्रव्यादि की मर्याद सहित जो रूपी पदर्थो हैं, उनको देखे सो अवधि दर्शन. इसका आवरण करे सो अवधि दर्शनावरणीय, (४) सर्व द्रव्योंका सामान्यंश का बोध होवेसो केवल दर्शन-इसका-निरूंधन-आवरण करे सो केवल दर्शनावरणीय.+

और निद्रासे सर्व दर्शनोंका घात होनेके सबबसे निद्राको भी दर्शनावरणीयका उदय कहा जाता है, और कर्मों की मन्दता कर शब्दादि से जाग्रत होता है. प्रबलता कर मुर्छित होता है इस कारण से निद्राके पांच भेद कहे हैं. (१) जो मद खेद आदि दूर करने सोवना. सोवतेही तुर्त निद्राका आना, शब्द मात्र से तुर्त जाग जाना, उस 'निद्रा' कहते हैं. (२) जो लोट पलोट आदि अनेक दुःख से आवे, बुलन्द आवाज शरीर धुणधुणादि अनेक दुःख से जागावे तो भी मुशकिल से आँख उघडे, सो 'निद्रा निद्रा' (३) उभे २ बैठे २ निद्रासे झोके, खावे कुत्ते की तरह निद्रा में अंगका वचन का चलन होवे सो 'प्रचला;—(४) अत्यन्त चिन्तासे नशे से निद्रा के वश बिलकूल बे सावधानी रहे, अंगपछाडे या घोडे की तरह रस्ते चलता उंघे × सो प्रचला प्रचला, ५ जो–(१) निद्राके अच्चल चिन्तवन किया कार्य निद्रामें करे सो 'थीनद्दी' निद्रा. (२) स्त्यान=एकस्थान+गृद्ध=लुब्ध होना, अर्थात्– आत्माकी ऋद्धिको एक स्थान रोक अचेत बनादेना सो

+ मनके विषय चिन्तवन किया द्रव्य विशेष रूप होता है इसलिये मनः पर्यव ज्ञान का दर्शन नहीं कहहै. और श्रुतिज्ञान मतिज्ञान पूर्वक होता है इसलिये मतिज्ञानके चक्षु और अचक्षु दो दर्शन कहे हैं.

× कहते हैंकि–घोडा दो स्थान जागता है एकतो दागा खाते वंकर दांत नीचे आवे तब और संग्राम होवे तब.

से उस मादक पदार्थका आधा नशा कमी होने से-विकलता कम होती है जिससे सु-कार्य करता २ कुकार्य भी करने लग जाता है. तैसे "मिश्र मोहनीय" के उदय कर दो ठाणीया रस रहने से कुछ सम्यक्त्व के कार्य करता २ मिथ्यात्व का भी, कार्य करने लगजाता है. और इन दोनोंको एकसा-अच्छा श्रद्धान करता है. (३) जैसे मा-फ नशा उत्तर गये बाद उसकी खुमारी पत्किंचित रहती है जिससे जरा विचार उ-चार आचार में तफावत आजाती है. तैसे ही "सम्यक्त्व मोहनीय" वालेने मिथ्यात्व के दलको यथा प्रवृत्ति करण, अपूर्व करण और अनिवृत्ति करण कर मन के परि-णाम उज्वल कर चौठाणीया त्रिठाणीया और दो ठाणीयां रसःको निवार कर फक्त एक ठाणीया रस बाकी रखा है वो जीव, जीवादि की परिक्षामें मुरझाय तो नहीं, प-रन्तु आत्म स्वभाव रूप उपशम क्षायिक सम्यक्त्वकी इन के प्राप्ति होवे नहीं. सूक्ष्म पदार्थो में विशेषादेश शंकित हो सम्यक्त्व में मेल लगालेता है.

(२) चारित्र मोहनीयकी २ प्रकृतिः—(१) कषाय. और (२) नो कषाय. इसमें कषाय की १६ प्रकृत्ति और नोकषाय की ९ प्रकृत्ति. दोनों मिल चारित्र मोहनीय की २५ प्रकृत्ति होती है. सो कहते हैंः—

कष=रस+आय=आवे. जिनसे संसार का कष आकर आत्म प्रदेशोंपर जमें और जिससे संसार परि भ्रमण का कार्य निपजे सो कषायचार प्रकार की होतीहैः— १ क्रोध. २ मान. ३ माया और ४ लोभ. इन चारों को अनन्त बन्धि, अप्रत्याख्या-नावरणीय. प्रत्याख्यानावरणीय. और संज्वलन इन चारों से चौगुने करने से १६ भेद होते हैं. सो आगे दृष्टान्त युक्त कहते हैं.

(१) अनन्तान बन्धि कषाय सो+अनन्तान=अनन्त संसारकी अनुबन्धि वृ-द्धि करे. इस कषायवाला कदाग्रह रूप कुयुक्ति से बुद्धिके शुन्य पणे कर-एकान्तम-तिकी रुचि रहे नहीं. अन्यमतपर रागयुक्त, सन्मतपर द्वेषी. ऐसाजीवे बाह्य वृत्ति कर कदापि कषायोदय मन्दभी देखाय तो भी युक्ति हीन पक्षपाति को नियमा से अन-

---

+ अनन्तान बन्धि चौक और तीनों दर्शन मोहनीय इन से श्रद्धान में फरक पडता है. इसलिये इन सातो प्रकृति को दर्शन मोहनीयमें गृहणकी जाती है. और, यहां जो २५ प्रकृति को चारित्र मोहनीयकी कही है सो फक्त सन्मत अपेक्षाकर जानना. निश्चय नयसे तो अनन्तान बन्धि चौक बिना २१ ही प्रकृति चारित्र मोहनीयकी है.

तिर्यंच गति में जावे. इसका उदय रहे वहांतक देश व्रत भी धारण नहीं कर सके.

(३) 'प्रत्याख्यानावरणीय कषाय'—प्रत्याख्यान=पच्चखाणके+आवरणीय=अन्तर करनेवाली, इस कषाय के उदय में सम्पूर्ण ममत्व को त्याग सर्व व्रति न होने दे. और व्रति (साधु) हुवे बाद जो कभी इस कषाय का उदय होवे तो वो उदय रहे वहां तक संयम करणी के यथा तथ्य फल निर्जरा रूप न होते पुण्य वृद्धि हो जावे. इसके ४ भेदः—(१) प्रत्याख्यानी क्रोध सो—धूल में खेंची हुइ लकीर के जैसा हवा चलने से मिटजावे, त्यों क्रोध कर थोडे सद्बोध से क्षमा कर लेवे. (२) प्रत्याख्यानी मानसो वेंतके स्थंभ समान थोडा जोर देनेसे नम जावे, त्यों वो थोडा समझानेसे मान तज विनीत बन जावे. (३) प्रत्याख्यानी माया सो चलते हुवे बेलका मात्र (पेशाव) समान हवालगने से सूक जावे. त्यों थोडे उपाय से माया-कपट त्याग देवे. (४) प्रत्याख्यानी लोभ सो कीचड के रङ्ग के जैसा सूक ने से झड जाय, त्यों थोडे बोधसे लोभ त्याग सन्मार्ग में द्रव्य व्यय करे. इन चारों की स्थिति-४ महीने की, इस कषाय में मरेतो मनुष्य होवे. और इन कषाय का उदय वाला साधू व्रति धारण नहीं करसके.

४संज्वलन कषाय—सं=थोड+ज्वलन=प्रज्वले. प्रकट होकर तुर्त विरलयहो जावे, इसके उदय में संयमी भी शुद्ध चारित्र का आराधन नहीं करसकते हैं. इसके ४ भेदः—(१) संज्वलन क्रोध सो पानी की लकीर के समान तुर्त मिट जावे. त्यों क्रोध के कडवे फल जान तुर्त शान्त पडजावे. (२) संज्वलन मान सो तृण के स्थंभ जैसा हवा लग ने से तुर्त झुकजाय. त्यों उनकी आत्मा मृदुकोमल होवे. (३) संज्वलनमाया सो वांसकी छोती के जैसी तुर्त सीधी होजाय, त्यों तुर्त निष्कपटी-सरल बन जावे. और (४) संज्वलन लोभ सो हलद पतंग के रङ्ग समान धूप लगे उड जावे. त्यों निर्लोभ अवस्था में सदा रहे. इन में क्रोधकी स्थिति दो महीनेकी. मानकी एक महीनेकी. माया की १५ दिनकी. और लोभकी अन्तर मुहूर्त की. इन कषाय के उदय में मरेतो देवगति पावे. और इनका उदय रहे वहांतक यथाख्यात चारित्रकी, व केवल ज्ञानकी प्राप्ति नहीं होवे.

जिस कषाय का जिस स्थान में उदय होने की मना है वहां उसका उदय होनेसे अनाचार लगता है. होनी कषाय के उदय से अतिचार लगता है. जैसे-संयमी के संज्वलनका उदय होतो अतिचारलगे और १२कषायका उदय होवेतो अनाचार जानना

पंच गतिका आयुष्य बंधकर तिर्यञ्च गतिमें जाकर रहैसो-'तिर्यचायु.' ३भेद्रिक, विनित, शरल दयालुता कर मनुष्यायु बन्धकर मनुष्य गतिमें रहैसो मनुष्यायु. ४सराग संयम, संयमा संयम, अकाम निर्जरा, बाल तप कर देवायु बान्ध देवगतिमें जाकर सुख भोगवे सो 'देवायु.' (यह आयु कर्म की चार प्रकृति जानना.)

६ नाम कर्म.

जैसे चित्रकार विचित्र रङ्ग और विचित्र उपकारणों कर सुपद अपद आदि, विचित्र प्रकार के चित्र चित्रता है, तैसे नाम कर्मोदय कर जीवों के एकेन्द्रियादि विचित्र जातिमें सूक्ष्म स्थूल स्थावर जंगमादि विचित्र रूप रङ्ग आकार स्वभा विभाव मय शरीरों की प्राप्ति होती है. इसकी मुख्यतो दो प्रकृति हैः-(१)शुभ नाम. और (२) अशुभ नाम. और उत्तर-प्रकृति ९३ होती है सो अलग २ कहते हैं.

पिण्ड समुदाय-दो चार आदि अनेक प्रकृतियों मिल जो एकही नाम से बोलाइ जावे उन्हे पिन्ड प्रकृति कहते हैं, ऐपिण्ड प्रकृति के मूल तो १४ भेद हैं, औ-उत्तर ६१ भेद होते हैंः—

(१) गति नाम कर्म. गति-जावे, जो एक पर्याय में से दूसरी पर्यायमें जावे उसे गति नाम कर्म कहते हैं, जिसके४ भेदः-(१) नरक-न-नही ऽर्म-सुर्क-जहां प्रकाश नहीं, फक्त अन्धाराही होवे सो नर्क, और उसमें रहे सो नेरीये-न=नही+रइ=रति=सुख. जिनको सुख नहीं सो नेरीया. ऐसा स्थान और नाम पावे सो "नरगति नाम कर्म." (२) तिर्यच-जो तिरछे विशेष बढे, या तिरछे लोक में विशेष पावे. ऐसा जन्म पावे सो "तिर्यच गति नाम कर्म" (३) मनुष्य-जो मनोच्छित कार्य को साध सके एसी गति में अवतरे सो "मनुष्य गति नाम कर्म" (४) देव-दिव्य-प्रकाशिक शरीर के धारक. ऐसी गति में अवतरे सो "देवगति नाम कर्म."

(२) "जाति नाम कर्म"-इन्द्रियावरण कर्म के क्षयोप शमकर जो, इन्द्रियों में जान ने की शक्ति प्रगट होवे सो भावे न्द्रिय. और इन्द्रिय पर्याप्ति नाम कर्मोदय कर जो प्रत्यक्ष में स्पर्शादि इन्द्रियों देखने में आवे सो द्रव्ये,इन्द्रिय. इनदोनों करजीव पहचान ने में आवे कि यह एके न्द्रियादि. जातिका है सो जातिका नाम कर्म. इस के ५ भेदः-(१) जो फक्त एक स्पर्शेन्द्रिय के धारक पृथव्यादि पांच स्थावरों है सो-"एकेन्द्रिय नाम" (२) जो स्पर्श और रस इन दोनों इन्द्रियों के धारक किटकादि जी-

तैसेही जिम कर्मोदय कर शरीरमें परिणमें हुवे पुद्गलोंका कितनेकका पाहिले बन्ध किया, और कितनेक पुद्गलों ग्रहण कर नवीन बन्धन करता है, उन पुद्गलोंका जो आपस में बन्ध पड कितनेक काल (शरीर की स्थिती) तक टिक रहे और भी नवे २ पुद्गलोंको ग्रहणकर शरीर की वृद्धि होती है सो बन्धन नाम कर्म है. इस बन्धके दो प्रकार भगवति सूत्र में किये हैं. (१) शरीरकी उत्पति के समय जितने पुद्गल पूर्वोपार्जन किये थे उतने सब उस समय होते हैं. इसलिये उस वक्त के बन्ध को सव बन्ध कहना. और (२) फिर समय २ उस बन्ध पुद्गलोंमेंसे हीनता होती रहे, इसलिये शरीर के अन्ततक देश बन्ध किया जाता है. इस बन्ध के-५ भेद:— * (१) औदारिक पुद्गल गृहण कर के जो शरीर की वृद्धि होवे सो "औदारिक बन्धन" (२) वैक्रिय पुद्गल ग्रहण कर जो वैक्रिय शरीर बन्धे सो, 'वैक्रिय बधन.' (३) आहारक पुद्गल ग्रहण कर जो आहारक शरीर बन्धे सो "आहारक बन्धन." (४) तेजसके पुद्गलों ग्र-

*प्रकारन्तर से इन पांचों बन्धन के-१५ भेद होते हैं. (१) पाहिले गृहण किये औदारिकके पुद्गलों उनके साथ नवीन औदारिकके पुद्गलोंका बन्ध पडेसो औदारिक औदारि बन्धन. (२)औदारिकके साथ तेजसका बन्ध पडेसो औदारिक तेजस बन्धन.(३)औदारिकके साथ कार्मण का बन्ध पडे सो "औदारिक कार्मण बन्धन" (४) औदारिक साथ तेजस और कार्मण दोनों का बन्धन पडे सो "औदारिक तेजस कार्माण बन्धन."(५) वैक्रिय के साथ वैक्रिय के पुद्गल बन्धे सो "वैक्रिय वैक्रिय बन्धन" (६) वैक्रियके साथ तेजस का बन्धन पडे सो "वैक्रिय तेजस बन्धन." (७)वैक्रियके के साथ कार्मणका बन्ध पडेसो "वैक्रिय कार्माण बन्धन" (८) वैक्रिय के साथ तेजस और कार्मण दोनों का बन्ध पडे सो "वैक्रिय तेजस कार्मण बन्धन." (९) आहारक के साथ आहारक का बन्धन पडेसो "आहारक आहारक बन्धन." (१०) आहारक के साथ तेजस का बन्ध पडे सो "आहारक तेजस बन्धन ." (११) आहारक के साथ कार्मण का बन्ध पडे सो "आहारक कार्मण बन्धन." (१२) आहारक के साथ तेजस और कार्माण दोनों का बन्ध पडे सो "आहारक तेजस कार्माण बन्धन" (१३) तेजस के साथ तेजस का बन्ध पडे सो "तेजस तेजस बन्ध"न(१४) तेजस के साथ कार्मण का बन्ध पडे सो "तेजस कार्मण बन्धन" और (१५) कार्मण के साथ कार्मणका बन्ध पडे सो" कार्मण कार्मण बन्धन" यों बन्धन को ५ के स्थान १५ प्रकृति ग्रहण करने से नाम कर्म की सब १०३ प्रकृति होतीहै.

बन्धन से बन्धि होवे. परन्तु हाड पट्टी और हाड खीली दोनों नहीं होवे सो "नाराच संघयण."(४)एकही तरफ मर्कट बन्ध होवेसो "अर्धनाराचसंघयण."(५) फक्त हड्डीयों की सन्धि मिली हो–केल वृक्षकी तरह तुर्त अम जावे-सो–कीलिका संघयण. और(६) जिसके शरीर की हड्डीयों-एकेक हड्डीके आधार से रही होवे, जराक धक्का लगने से अलग हो जावे, सो-"छिवट्टा संघयण." कहा जाता है.

८ "संस्थान नाम कर्म"–जो प्रत्यक्ष में शरीका आकार देखने में आवे उसे 'संस्थान' कहते हैं, जिसके ६ प्रकार:–(१) 'समचतुरस्र संस्थान'–सम–बरोबर+चतु =चारों तरफ के+अस्र=खोनें. अर्थात् पद्मासन लगाकर बैठे बाद्-दोनों घुटने और दोनों स्कन्ध के बीच के चारों तरफ के अन्तर की डोरी बराबर आवे सो-'समचतुरस्र संस्थान.' (२) जैसे (निग्रोध-वड) के वृक्ष का ऊपरका भागतो अच्छा देखाता है. और नीचेका विभाग चड़ें आदि के सबब से खराब लगता है. तैसेही जिसके शरीर का नाभी ऊपर का भाग विलक्षणों पेत पूर्ण प्रमाण युक्त होवे, और नीचे का भाग बरोबर न होवे सो "निग्रोध परिमन्डल संस्थान."(३) जैसे खुरसाणी इमलीका झाड नीचे तो शाखा प्रतिशाखादि कर अच्छा देखाता है. और ऊपर टूटा निकलनेसे खराब देखाता है. तैसेही जिसके शरीरका नाभी नीचेका भाग अच्छा होवे और ऊपरका आकार अच्छा नहोवे विद्रूप होवेसो-'सादि संस्थान'(४)जिसके हाथ पैर मुख ग्रीवादि अङ्ग सुन्दर होवे. और हृदयपर तथा पृष्टपर हड्डीका पिन्ड निकला होवेसो.-'कुब्ज संस्थान.' (५) जिसके फक्त हाथ पैर छोटे होवें, बाकीका सब शरीर बरोबर होवे–जो ठेंगणा होवे सो-"वावना संस्थान." और (६) जिसके सर्व अङ्गोपाङ्ग अशोभनीक होवे, अग्र भस्माग्नि मुरदे के जैसा भयंकर देखाता होवे सो "हुंड संस्थान."

९ 'वर्ण नाम कर्म'—शरीर के विषय पुद्गलों का बाह्य रूप में रङ्ग परिणाम होवे सो 'वर्ण नाम' इसके ५ भेद:–(१) कोयले या काजल जैसा शरीर का काला रङ्ग होवे सो–"कृष्ण वर्ण नाम." (२) सूवे की पंख जैसा हरे रङ्ग का शरीर होवे सो-"नील वर्ण नाम." (३) हिंगलु के जैसा लाल रंग का शरीर होवो सो "रक्त वर्ण नाम." (४)हलद जैसा पीले रंग का शरीर होवे सो- "पित वर्ण नाम." (५) और चन्द्रकीर्ण जैसा गौर वर्ण शरीर होवे सो-"श्वेतवर्ण नाम."

१० "गन्ध नाम कर्म"–घ्राणेन्द्रिय के ग्रहण करने योग्य वास मद जो शरीर के पुद्गलों होवे सो गन्ध नाम कर्म. इसके २ भेद:–(१) केसर कस्तूरी जैसी शरीरकी

खेंचकर लेजाय उसे अनुपूर्व्वी कहते हैं; इसके ४ भेदः-(१) जीव को नरक गति में खेंच करले जावे सो "नरकानुपूर्वी" (२) तिर्यच गतिमें खेंच करले जावे सो- "तिर्यचानुपूर्वी" (३) मनुष्य गतिमे खेंचकर लेजावे सो मनुष्यानुपूर्व्वी. (४) और ४ देवगति खेंचकर ले जावे सो देवगतियानुपूर्व्वी.

१५ .विहायोगति नाम कर्म."—विहायो—आकाश में या अवकाश में ÷ गति गमन करे सो विहायो गति (इस में आकाश नाम आने से इसे 'खगति' नाम मे भी बोलाते हैं:—) इस के दो भेदः—(१) राजहंस. सिंह. हस्ती आदि जैसी शुभ चालसे चलेसो - शुभ विहायोगति. और (२) गर्धव ऊंठ आदि जैसी खराब चालसे चलेसो अशुभ विहायोगति. +

यह सामन्य से १४ तथा विशेषसे ६५ पिण्ड प्रकृत्ति कही.

अब प्रत्येक प्रकृतियों अर्थात् जिसके दो भेद नहोवे. एक अपने रूपमें ही बनी रहे. जिसके ८ भेदः-(१) "परायातनाम" सो-जिसके सन्मुख बोलते हुवे बडे सामर्थ भी शंक लावे, उस के शब्द मातसे शत्रुओं कम्पाय मान होजावे, जो बडी राज सभा में भी बोलता हुवा डरे नहीं. सोपराघात* २ 'उश्वास नाम' सो-शरीर के अभ्यन्तर का वायु मुखद्वारा और नाकद्वारा सुख से आगमन होवे. ऐसा लब्धि × वन्त जीव होवेसो—उश्वास नाम. (३) 'आतान नाम'—सूर्यके विमानके जो रत्नहैं वो बादर एकेन्द्रिय पर्याप्ता पृथवीके जीवहैं. उनके शरीरका स्वभाविक स्पर्श तो शीतहै, तोभी उनका प्रकाश उष्ण पडता है. येही आताप नामकर्म. ×(४) 'उद्योतनाम कर्म'-उपर कहा आताप नामकर्म उसका सूर्य जैसा उष्ण प्रकाश जानना. और यह जैसा चन्द्रमा ग्रह नक्षत्र ताराओंके विमानका शीतल प्रकाश. तथा देवताओं वैक्रिय रूप बनावे, लब्धि वन्त मुनि वैक्रिय रूप बनावे, तथा आ-

---

+ पहिले जो ४ गतिका वरणन् कहा सो-परभव गमन आश्रिय जानना. और यहां इस प्रकार की गति कहीसो-इस भव आश्रिय जानना. गोमट सारमेंतो आकाश में गमन करनेकोही विहायो गति कही है.

* गोमट सार के कर्म काण्ड में लिखा है कि-तीक्ष्ण सींग, नख दाढ, सर्प, सिंह, आदि जीवों के शरीर से दूसरे के शरीर की घात होतिहै. इसलिये उसे परा घात नाम कहना.

× शास्त्र में लब्धिको क्षयोपशमिक कही है सो प्रधानिक शब्दहै. क्यों कि-वैक्रय आहारक लब्धि उदायिक भाव में है, तथा शिर्पादिकपने क्षयोपशम से भी होती, है इसलिये उदायिक क्षयोपशमिक कहने में कुछ हरकत नहीं.

४३	स्त्रीवेद्	२६
४४	पुरुष वेद्	२७
४४	नपुंसक वेद्	२८

५ आयुष्य कर्म की ४ प्रकृति.

४५	नरकका आयुष्य	१
४६	तिर्यचका आयुष्य	२
४७	मनुष्यका आयुष्य	३
४८	देवता का आयुष्य	४

६ नाम कर्म की ९३प्रकृत्ति.

४९	नरकगति	१
५०	तिर्यच गति	२
५१	मनुष्य गति	३
५२	देव गति	४
५३	एकेन्द्रिय जाति	५
५४	बेन्द्रिय जाति	६
५५	तेन्द्रिय जाति	७
५६	चौरिन्द्रिय जाति	८
५७	पचेन्द्रिय जाति	९
५८	औदारिक शरीर	१०
५९	वैक्रिय शरीर	११
६०	आहारक शरीर	१२
६१	तेजस शरीर	१३
६२	कार्मण शरीर	१४
६३	औदारिक अङ्गोपाङ्ग	१५
६४	वैक्रिय अङ्गोपाङ्ग	१६
६५	आहारक अङ्गोपाङ्ग	१७
६६	औदारिक बन्धन	१८
६७	वैक्रिय बंधन	१९
६८	आहारक बंधन	२०
६९	तेजस बंधन	२१
७०	कार्मण बंधन	२२
७१	औदारिक संघातन	२३
७२	वैक्रिय संघातन	२४
७३	आहारक संघातन	२५
७४	तेजस संघातन	२६
७५	कार्मण संघातन	२७
७६	वज्र वृषभ नाराच संघयन	२८
७७	ऋषभ नारच संघयण	२९
७८	नारच संघयण	३०
७९	अर्ध नारच संघयण	३१
८०	कोलिक संघयण	३२
८१	छेवटा संघयण	३३
८२	समचतुरस्र संस्थान	३४
८३	निगोद् परिमंडल संस्थान	३५
८४	सादिया संस्थान	३६
८५	वावना संस्थान	३७
८६	कुबडा संस्थान	३८
८७	हुंड संस्थान	३९
८८	कृष्ण वर्ण	४०
८९	नील वर्ण	४१
९०	रक्त वर्ण	४२
९१	पित वर्ण	४३
९२	श्वेत वर्ण	४४
९३	सुरभीगन्ध	४५
९४	दुर्भिगन्ध	४६
९५	कटुक रस	४७
९६	तिक्त रस	४८
९७	कषायला रस	४९
९८	अम्लान रस	५०

" द्वितीय कर्मारोहण द्वारार्थ. "

३४—प्रथम क्रियाद्वार का अर्थ.

मूल कर्मोत्पत्ति का कारण क्रियाही है. अर्थात्–मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग इन पांचों में-उठाण कम्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम इन पांचोंका संयोग होने से क्रिया निपजती है. वो किरिया इस विश्व में भरे हुवे कर्म वर्गणाके अनन्तान्त पुद्गलोंका परावर्तन होरहा है उन्हे खेंच कर आत्म प्रदेशोंके साथ सम्बन्ध करतीहै. "सकषाया कषाययोः साम्परायिके र्यापथयो" इस तत्वार्थ सूत्रके वचनानुसार क्रिया दो प्रकारकी है;–सकषाइ जीवोंके जो क्रिया लगती है उसे सम्पराय क्रिया कही जाती है, वो कषाय के योग से बन्ध स्थिति प्राप्त करती है. और कषाय रहित महात्मा को जो फक्त जोगों प्रवृत्ति कर क्रिया लगती है सो इर्यावही क्रिया कही जाती है. सो कषाय रूप रस-विकार के अभाव से बन्ध स्थिति नहीं पाती है. काँच पर लगी रज (धूल) की तरह तुर्त दूर होजाती है.

इस में प्रथम सम्पराय क्रिया कही जिस के २४ भेद कहते हैं.

१. काइया क्रिया. इसके दो भेदः–(१)काया-शरीर पर ममत्व भाव धारन कर व्रत प्रत्याख्यान तप संयम करता डरे, कि रखे धर्म करने से मेरा शरीर दुर्बल होजायगा. और शरीर के पोषणार्थ छेही काया का कुटारम्भ करता डरे नहीं सो अणाउत काया क्रिया. (२) उठते बैठते हलन चलनादि करते यत्ना नहीं रक्खे सो दुपयुक्त काइया क्रिया.

२ आहिगरणीय क्रियाः-शस्त्र से लगे जिसके दो भेदः–(१) शस्त्र की धारा तीक्ष्ण करावे, हाथा आदि लगावे सो संयोजनाधि करणी. और (२) नवीन शस्त्र निपजावेसो निर्वतनाधि करणी. ऐसेही इसके वचनाश्री दो भेदः–ज्यूना क्लेश-खमाया क्लेश ऊदीरेसो संयोजनाधि करणी, और (२) नवा क्लेश करेसो निर्वतनाधि करणी

१२"पुठियाक्रिया" स्पर्शने से लगे-इस के दो भेदः-(१) स्त्री पुरुष धान्य आदि सजीव वस्तु का स्पर्श करने से लगे सो जीव पुठिया. और (२) वस्त्र आभरण आदि स्पर्शने से लगे सो अजीव पुठिया.

१३ "पाडोचिया क्रिया"-बुरा चिन्तवने से लगे, इसके दो भेद- (१) भयंकर र सिंह आदि सजीव वस्तु का बुरा चिन्तवे सोजीव पाडोचिया; और (२] अशुची मलादि निर्जीव का बुरा चिन्तवे सो अजीव पाडो चिया क्रिया.

१४ सामन्तवणिया क्रिया-नजीक की वस्तु से लगे, इसके दो भेद-(१] स्व-क्रिय मनुष्य पशु पक्षी मकान भूषणादि की पर संस्त्या सूणकर प्रमोद पावे सो जीव सामन्तवणीया, और (२) दूध तेल आदि प्रवाही [पतले] पदार्थ उघाडे रखनेसे लगे सो पर सामन्तवणिया.

१५ निसथीया क्रिया-निक्षेप करने से-डालने से लगे, इसके दो भेद-[१] पृथ्वी पाणी आदि सजीव वस्तु अयत्ना से डालने से लगे सो सजीव निसथीया. और [२] तीर गोळी आदि फेंकने से-डालने से लगे सो अजीव निसथीया.

१६ "सहत्थिया क्रिया" अपने हाथ से लगे, इसके दो भेद-(२) सिंहसर्प स्वान मंजार गौ अश्वादि का तथा अपने शरीर का वध बन्धनादि करने से लगे सो-जीव सहत्थिया. और (२] सोनार लोहकार कुंभकार आदि कुटन पीटन करेसो अ-जीव सहत्थिया.

१७ आणवणीया-आज्ञादे काम कराने से लगे, इसके दो भेद-[१] दास आदि को आज्ञादे काम करावे सो जीव आणवणीया. और (२] यंत्रादि की सहाय से कामलेवे सो अजीव आणवणीया.

१८ विदारणीया क्रिया-वस्तु के विदारने-फोड तोड करने से लगे, इसके दो भेदः-(१)सही पुष्प फलादि सजीव वस्तु को विदारे सो जीव विदारणीया. और(२) धातु काष्ट वस्त्रादि का छेदन भेदन करेसो अजीव विदारणिया. सिणगारिक रस, वि-भत्स रस, हास्य रस, आदि कुरसों से पूरीत कथा रागादि कर विषय कषाय की प्रेरणा से दूसरे का हृदय विदारे सो भी विदारणीया क्रिया.

१९ अना भोग क्रिया-बिना भोगवती क्रिया लगे, जिसके दो भेद-(१) शून्य चित्त-अनावधान पणे किसी भी वस्तु को ग्रहण करे निक्षेप करेसो शून्य अनाभोगी. और (२) अन्य के काम भोग देख सुन उन आर भोगवने की अभिलाषा करे, सो

ह-हट करे सो मिथ्यात्व.

२ "अविरति"-तृष्णाका अपरिमाण-इच्छाका अनिरुंधन-छूट्टा पणा, आरंभ और विषय में लोलुप्ता सो अविरति.

३ "प्रमाद"-सत्प्रवृत्ति में निरुद्यमी. कुप्रवृत्ति में सहाशिक, वाचाल, आलसी पणा सो प्रमाद.

४ "कषाय"-प्रकृत्ति-स्वभाव की वक्रता सो कषाय.

५ "योग"-मन वचन काया की मलीनता सो योग.

३६ तीसरे से सातवे-तक-हेतुद्वार का अर्थ.

ऊपर जो ५ कारण कर्म बन्ध के कहे सो सामान्य सूत्र, और आगे जो हेतु कहते हैं सो इनही ५ कारणों में से तीसरा प्रमाद कारण छोड कर + बाकी के ४ कारणों के विशेषार्थ रूप ५७ भेद होते हैं, उन्हे कर्मों के हेतु (कर्मो का कार्य साधने वाले सज्जन) कहते हैं:-

प्रथम मिथ्यात्व कारण से पांच हेतु हुवे:-१ अभिग्रही मिथ्यात्व-हटीला, २ अनाभि ग्रहीमिथ्यात्व-भोला, ३ अभिनिवेशिक मिथ्यात्व-कदाग्रही, ४ सांशयिक मिथ्यात्व-वैमी. और ५ अना भोग मिथ्यात्व-अजान.(इन पांचों मिथ्यात्व का कथन मिथ्यात्व गुणस्थान के लक्षण. लक्षण द्वार में विस्तारसे कियाहै.)

द्वितीय अविरति के कारण से-१२ हेतु हुवे:-१ मनकी २ श्रोत इन्द्रियकी, ३ चक्षुइन्द्रिय की. ४ घ्राणेन्द्रिय की, ५ रसेन्द्रिय की, ६ स्पर्शेन्द्रिय की, ७ पृथ्वी काय-की. ८ अपकाया की, ९ तेउकायकी, १० वायुकायकी, ११ वनस्पति कायकी और १२ त्रसकायाकी अर्थात्-मन को पांचों इन्द्रियों के विषय में और छेकाय के आरंभमें प्रव्रत तेहुवेको रोके नहीं. परन्तु छुट्टा छोडदेवे-अमर्यादित रहेसो १२अविरतिहै

तृतीय कषाय के कारण से २५ हेतु हुवे:-१-४ अनन्तानुबंधी चौक- जिसका अनन्त नहीं आवे ऐसे क्रोध मान माया लोभ: ५-८ अप्रत्या ख्याना वरणी चौक-जो व्रत प्रत्याख्यानके निर्झरा रूप फलको न होनेदे ऐसे-क्रोध, मान, माया. लोभ;९-१२

+पांच प्रमादों मेंसे-मद कषायका समावेश कषायमें हुवा. और विषयका समावेश अविरति मे हुवा. वी कथाका समावेश वचन जोग में हुवा. इसलिये प्रमाद को छोड बाकीके४ कारणोंके ही ५७ हेतु किये गये हैं.

बन्धातीहै. । ४ अनन्तान बन्धि चौक, ४ बीच के चार संस्थान, ५ पहिले पांच संघयण, १अशुभ विहाय गति, १दौर्भाग्य नाम,२ तिर्यंच द्विक, ३ मनुष्य त्रिक, २ औदारिक द्विक, १ स्त्रीवेद, १ नीच गोत्र, ३थीणद्धी त्रिक, १ उद्योत नाम, ४अप्रत्याख्याना वरणीय चौक. यह ३३ प्रकृत्ति का मिथ्यात्व गुणस्थान में होवे तो मिथ्यात्व प्रत्यय बन्ध होवे, और मिथ्यात्वके आगे अव्रत करके भी इन प्रकृत्तियोंका बंध होता है. तथा मिथ्यात्व और अव्रत दोनोंके कारण से भी इनका बन्ध होता है, परन्तु बाकी रहे तीनों कारणों कर इनका बन्ध नहीं होताहै ज्ञानवरणीय ५, दर्शनावरणीय-६, असातावे दनीय१ मोहनीय १५ (जिन नाम, और आहारक द्विक छोड कर) नाम कर्म की ३२, ऊंचगोत्र १, और अन्तराय की ५, इन+६५ प्रकृत्ति का मिथ्यात्व अविरति और कषाय इन तीनों में के एक कारण के सेवन से या दोनों तीनों कारणोंके सेवन से बन्ध पडताहै, परन्तु फक्त इकेले योग करकेही बन्ध नहीं पडताहै। एक साता वेदनीय का बन्ध चारोंही कारण कर होता हैं. क्यों कि इसका बन्ध तेरवे गुणस्थान तक होताहै. । अहारक द्विकका बन्ध निर्वध योग सराग संयम कर होताहै । और "दर्शन विशुद्धि. विनयसम्पन्नता, शील व्रतेष्वनती चारो,ऽ भीक्ष्ण ज्ञानो पयोग, संवेगौ. शक्ति तस्त्याग, तपसी साधू समाधि वैयावृत्य करण, महर्दाचार्य बहुश्रुत प्रवचन भक्ति रावश्यका परिहाणि, मार्ग प्रभावना, प्रवचन वत्सलत्व, मिति तीर्थंकरत्वस्य. अर्थात्-निर्मळ सम्यक्त्व पालने से, विनय-नम्र भाव रखने से, शील आदि सर्व व्रतों आतिचार दोष रहित पालने से, वारम्वार ज्ञान में उपयोगका रमण करणे से, वैराग्य भाव रखने से, स्वशक्त्यानुसार उल्ट भाव दान देनेसे, दुक्कर तपश्चर्या करनेसे, साधु के चितको समाधी शान्ती प्राप्त होवे ऐसी तरह वैयावृत्य भाक्ति करने से, अर्हत आचार्य बहुसुत्री शास्त्र इनो की भाक्ति करने से, दोनों वक्त के प्रतिक्रमण में हानी नहीं डालने से अर्थात् दोनों वक्त प्रतिक्रमण करने से जैन मार्ग की प्रभावना महिमा की वृद्धि और जिन वचनों कोवत्सलता करनेसे तीर्थ कर गौत्र का उपार्जन होताहै. और आहारक शरीरका बन्ध अप्रमत साधुकेही होताहै(यह१२० .उत्तर प्रकृत्ति बंधकेकारण.)

+ आगे देश विरति गुणस्थानमें ६७प्रकृतिका बन्ध कहा जायगा, [illegible] और साता वेदनीय यह प्रकृत्ति ग्रहण नहीं करीहै.

२ अल्पतर बन्ध-आयुष्यका बन्ध किये बाद पहिले समय ७ कर्म का बन्ध करे सो प्रथम समय प्रथम अल्पतर बन्ध. और नववे गुणस्थान के प्रान्त में सातक-र्मो का बन्ध कर दशवे गुणस्थान के प्रथम समय मोहनीय हीन कर छे कर्मोका बन्ध करे सो दूसरा अल्पतर बन्ध. और छे कर्मो के आगे उपशान्त मोह क्षीण मोहमें एक वेदनीय कर्म का का बन्ध करते तीसरा अल्पतर बन्ध.

३ "अवस्थित बन्ध:"-आठ कर्मो का बन्ध किये बाद सात कर्मों का बन्ध करे तव प्रथम समय अल्पतर बन्ध, और फिर उसस्थान में जीव जितने काल रहे ताहंलग पहिला अवथित बंन्ध. इन सात के पीछे छे कर्म का बन्ध करे तव प्रथम समय अल्पतर बन्ध. और फिर दूसरा अवस्थि बन्ध. और ६ कर्मो बान्धे बाद एक का बन्ध करे तव प्रथम समय अल्पतर बन्ध, और फिर तीसरी अवस्थित बन्ध. और सात कर्मो का बन्ध किये बाद आठ कर्मों का बन्ध करते प्रथम समय भूयस्कार, बन्ध और फिर चौथा अवस्थित बन्ध.

४ "अव्यक्त बन्ध"-मूल प्रकृत्तियोंका सर्वथा अबन्धक पणाते चउदवे अयोगी केवली गुणस्थान में होता है, और फिर वहां से कोइभी जीव कदापि पडताहीं नही है. इसलिये चौथा जो अव्यक्त बन्ध है सो कही भी पाता नहीं है.

ॐ उत्तर प्रकृत्तियों पर चारों प्रकार के बन्ध. ॐ

१ज्ञानावरणीय, २वेदनीय, ३ आयुष्य, ४ गोत्र, और ५अन्तराय, इन पांचों कर्मोका एकही बन्ध स्थान है. क्यों कि ज्ञानवरणीय और अन्तराय यह दोनों कर्मो तो ध्रुव बन्धि हैं, इस लिये दशवे गुणस्थान तक इन दोनों कर्मोकी पांच २ प्रकृत्ति का साथही बन्ध होता है. वहां भूयस्कार और अल्पतर बन्ध नहीं होता है. और वेदनी, आयुष्य, गोत्र इन तीनों कर्मोकी प्रकृत्तियों बन्ध विरोधनी है, इसलिये एक समय में एकही का बन्ध होता है, और इसहि लिये इन तीनों कर्मो का बन्ध स्थानभी एकही होताहैः भूयस्कार अल्पतर बन्ध नही होता है, और वेदनीय तो तेरवे गुणस्थान तक बन्ध तीहै. इसलिये इन बिना बाकी रहे चारों कर्मो की प्रकृत्तियों का फक्त अव्यक्त बन्ध एक होता है क्योंकि-इग्यारवे गुणस्थान में अबन्धहो फिर बन्ध करते प्रथम समय में अव्यक्त बन्ध जानना, और फिर अवस्थित बन्ध जाणना.

अब बाकी रहे दर्शनावरणीय, मोहनीय, और नाम इनों तीनों कर्मो की उत्तर प्रकृत्तियों पर चारों प्रकार के स्थान बन्ध उतारते हैं:—

नाम कर्म के ८ वन्ध स्थान:-(१) मिथ्यात्वी जीव मनुष्य तिर्यंच अपर्याप्ताए- केन्द्रिय. प्रायोग्य-१., वर्ण, २ गंध, ३ रस, ४ स्पर्श, ५ तेजस, ६ कार्माण, ७ अगु रुलघु. ८ निर्माण. ९ उपघात, १० तिर्यंच गति, ११ तिर्यंचानु पूर्वी, १२ एकेन्द्रि य जाति, १३ औदारिक शरीर, १४ हुंड संस्थान, १५ स्थावर नाम, १६ वादर; नाम. अथवा ÷ सूक्ष्म नाम, १७ अपर्याप्ता नाम. १८ प्रत्येक नाम, अथवा-साधारण नाम. १९ अस्थिर नाम, २० अशुभ नाम, २१ दौर्भाग्य नाम, २२ अनादेय नाम, और २३ अयशःकीर्ति नाम. इन २३ प्रकृतिका प्रथम बन्ध स्थान. (२) इन २३ में पराघात नाम और उश्वश नाम यह दोनों प्रकृत्ति मिलाने से और अपर्याप्ता के स्था न पर्याप्ता कहने से यह २५ प्रकृत्ति पर्याप्ता एकेन्द्रिय प्रायोग्य मिथ्यात्वी देव मनुष्य तथा तिर्यंच बान्ध तेहैं; (३) इन २५ प्रकृत्ति मे आताप नाम, अथवा उद्योत नाम इ न दोनों में से एक नाम मिलाने से २६ प्रकृत्तिका वन्ध पर्याप्ता एकेन्द्रिय प्रायोग्य तीनों गतिके मिथ्यात्वी जीवों बान्ध तेहैं. (४) २ देव द्विक, ३ पचेन्द्रिय जाति, (४) वैक्रिय शरीर, ५ वैक्रिय अङ्गो पाङ्ग, ६ सम चतुरस्र संस्थान, ७ पराघात नाम, ८उ छ्वास नाम, ९ शुभख गति, १० त्रस, नाम ११ वादर नाम, १२ शुभ पर्याप्ता नाम, १३ प्रत्येक नाम, १४ स्थिर अथवा अस्थिर नाम, १५ शुभ अथवा अशुभ नाम,१६ यशःकीर्ति अथवा अयशःकीर्ति नाम, १७ सुभग नाम, १८ सुस्वर नाम १९ आदेय नाम. २३ वर्णचतुष्क, २४ तेजस शरीर. २५ कार्मण शरीर. २६ अगरुलघु नाम २७ निर्माण नाम. और २८ उपघात नाम. यह २८ प्रकृत्ति देवगति प्रायोग्य मिथ्या त्वी तथा सम्यग्दृष्टि मनुष्य और तिर्यंच बान्ध तेहैं. और ऐसेही नरक गति प्रयोग्य भी २८ काही वन्ध होता है, जिसमें विशेष इतना है किन्देव द्विक के स्थान नरक द्विक कहना. समचतुरस्र संस्थान के स्थान हुंड स्थान कहना, और अपरावर्त मान प्र कृत्तियों अशुभ गृहण करनी. यह २८ प्रकृत्तियों का चौथा स्थान हुवा. (५) सम्य- ग्दृष्ठि जिन नाम सहित देव प्रायोग्य २८ का वन्ध करते २९ का वन्ध स्थान होता है. अथवा २ मनुष्य द्विक. ३ पचेन्द्रिय जाति, ५ औदारिक द्विक. ६ छे-संघयण में का एक संघयण. ७ छेस्थान में का एक संस्थान; ८ त्रस, ९ वादर, १० पर्याप्ता.११ प्रत्येक, १२ स्थिर अथवा अस्थिर. १३ शुभ अथवा. अशुभ. १४ सौभाग्य अ-

---

÷जहां दोदो प्रकृत्तिके साथ नाम अथवा प्रथम लगाकर लिखेहै वहां कौनसी भीकोई लेना.

५९ औदारिक कार्मण बंधन, ६० औदारिक तेजस कार्मण बंधन, ६१ नरक गति ६२ नरकानु पूर्व्वी, ६३ तेजस शरीर, ६४ कार्मण शरीर, ६५ अगरुलघु ६६ निर्मा- ण, ६७ उपात, ६८ तेजस संघातन, ६९ कार्मण संघातन, ७० तेजस तेजस बंधन, ७१ कार्मण कार्मण बंधन, ७२ तेजस कार्मण बंधन, ७३ अस्थिर, ७४ अशुभ ७५ दौर्भाग्य, ७६ दुस्वर, ७७ अनादेय, ७८अयशःकीर्ति, ७९ त्रस, ८० बादर, ८१ पर्या- प्ता, ८२ प्रतेक, ८३ स्थावर, ८४ एकेंद्रिय जाति, ८५ पचेंन्द्रियजाति, ८६ अशुभ विहायो गति. ८७ उच्छ्वास ८८ आताप, ८९ परायात ९१ गुरु स्पर्श, ९२ कठोर स्पर्श, ९३ रुक्षस्पर्श्य. ९४ शीत स्पर्श, और ९५ दुर्गन्ध, इन ५० प्रकृत्ति की २० क्रोडा क्रोड सागर. ९६ तीर्थ कर नाम. ९७ आहारक शरीर, ९८ आहारक अङ्गो पाङ्ग; ९९ आहाराक संघातन १०० आहारक आहारक बंधन, १०१ आहारक ते- जस बंधन. १०२ आहारक कार्मण बंधन, १०३ आहारक तेजस कार्मण बंधन. इ न ८ प्रकृत्तिकी-एक क्रोडा क्रोड सागर की स्थिति.

७ गोत्र कर्म की जघन्य स्थिति ८ मुहूर्त की, उत्कृष्ट ऊंच गोत्र की १० क्रो- डा कोड सागर की और नीच गोत्र की २० क्रोडा क्रोड सागर की.

८अंतराय कर्म की पांचों अंतराय की-जघन्य स्थिति अंतर मुहूर्त की, उत्कृष्ट- तीस कोडा कोड सागर की.

यह १४८ प्रकृत्ति जघन्य उत्कृष्ट स्थिति जाननी.

उत्कृष्ट स्थिति बंधके स्वामी-पहिले नरकयुका बंध किया हुवा मनुष्य क्षयोपश- म सम्यक्त्व प्राप्तकर तीर्थंकर नाम कर्म की उपार्जना करे, और फिर पूर्व बंधानुसार नरक में गमन करते सम्यक्त्व का वमन करता अंतिम समय में तीर्थंकर नाम की उ- त्कृष्ट स्थिति का बंध करते हैं. और आहारक द्विक का उत्कृष्ट स्थिति बंध अप्रमत गुणस्थान चरम बंध मुनि के होता है. क्योंकि-इस बंध में येही अति संक्लिष्टहै. औ- र देवायु तो प्रमत गुणस्थान में आयु बंध का आरंभ कर अप्रमत गुणस्थान में च- ढते हुवे साधु के होता है. क्योंकि-शुभ आयु बंध के स्थानक में येही अति विशुद्ध स्थानक. है इन चारों प्रकृत्ति सिवाय बाकी की प्रकृत्तियों का उत्कृष्ट स्थिति बंध स- ज्ञी पर्याप्ता मिथ्यात्व दृष्टिके होता है. क्योंकि मनुषायु और तिर्यचायु विना बाकी की सब प्रकृत्तियों का उत्कृष्ट स्थिति बन्ध उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम से होता है, और मिथ्यात्वी से अधिक कोइ संक्लेश परिणामी होता नहीं है, इसलिये. इस में भी अनं-

का जघन्य रसबन्ध तो आठवे गुणस्थान के सात भाग में से छठे भाग के मान्त सम-
य में जानना. और निद्रा तथा प्रचलाका जघन्य रस बन्ध आठवे गुणस्थान के प्रथम
भाग में अपणे बन्ध के प्रबन्ध व्यावछेद् से प्रथम समय होता है, यहां उपशम श्रेणि
प्रवर्तक ग्रहण करना. यद्यापि उपशम श्रेणिसे क्षपक श्रेणी की विशुद्धता अधिक है,
परन्तु जघन्य रस बन्ध सादि सान्त होता है. और क्षपक श्रेणी प्रवर्तक सादि अनन्त
होतेहै (क्योंकि पडते नहींहै) इसलिये ग्रहण नहीं किये पुरुष वेद और संज्वलका चौ
क इन पांचोका जघन्य रसबन्ध नववे गुणस्थान के पांचों भाग में अलग २ होता है.
अर्थात्-पहिले भाग में पुरुषवेद का, दुसरे में संज्वलके क्रोधका. तीसरे में संज्वल के
मानका. चौथे में संज्वल की माया का और पांचवे में संज्वलके लोभ का. यों अलग
२ बंध विच्छेद करने के अंतिम समय अपने २ बंध के अंतिम बंध में जघन्य र-
स बंध होता है. । ५ ज्ञानावरणीय, ४ दर्शनावरणीय. ५ अंतराय इन १४ का ज-
घन्य रसबन्ध दसवे गुणस्थान वर्ती क्षपक श्रेणि प्रतिपन्न अपने बन्ध के अन्तिम स-
मय करता है. सूक्ष्म. अपर्याप्ता. साधारण. तीनों विक्लेन्द्रिय. चारोंगतिका आयुष्य,
वैक्रिय शरीर. वैक्रिय अंगो पांग. देवगति. देवानु पूर्वी. नरगति. नरकानु पूर्वी. इ-
न १८ प्रकृति का मन्द रसबन्ध मनुष्य और तिर्यच तत्प्रायोग्य विशुद्ध संक्लेश में व
र्तते होता है. इन १८ में से ७ तो पुन्य प्रकृति है. इनका मंद रस मलीन परिणा
मों से होता है. और ९ पाप प्रकृति हैं जिनका मन्दरस बहुत विशुद्ध अध्यावसाय,
से होता है. इन १८ प्रकृति में से मनुष्यायु. तिर्यचायु छोडकर १४ प्रकृतिका बंध
तो देवता तिर्यच के भव मध्य नाहि. और मनुष्य तिर्यचायुका जघन्य स्थिति बंध
करते मंद रस होता है सो भी युगल भव देवता नरक के नहीं होता है. इसलिये इ-
न १६ प्रकृतिके मंदरस बंध स्वामी मनुष्य तिर्यची है. उद्योत नाम. औदारिक श-
रीर. औदारिक अङ्गो पाङ्ग. इन तीनों प्रकृतिका रसबंध मिथ्यात्वी देवता और ना-
रकी तिर्यच प्रयोग्य करते संक्लिष्ट परिणामों कर करते हैं. मनुष्य और तिर्यचसं-
क्लिष्ट ऐसे सावेदन कर नरक प्रयोग्य का बंध करे परन्तु नरक में यह प्रकृतियों न-
ही है. इसलिये नहीं कही. । तिर्यच गति. तिर्यचानु पूर्वी. और नीच गोत्र. इन प्रकृ-
तिका जघन्य रस बन्ध सातवी नरक के नेरिये सम्यक्त्व सन्मुख हुवे मिथ्यात्व के च-
रम समय में करते होता है. क्योंकि-ऐसे प्रयोग्यमें वहीं देवता या दूसरी नरक [illegible]
के वो मनुष्य प्रयोग्य करते है. और सातवी नरक वाले [illegible]

न्धते है. यों १५ प्रकृत्ति के मन्द रसके श्वामी चारों गति के मिथ्यात्वी होतेहैं. और स्त्री वेद तथा नपुंसकवेद का मन्द रस चारों गति के मिथ्यात्वी जीवों सम्यक्त्वसन्मुख हुवे विशुद्धि से करते. हैं क्योंकि यह पाप प्रकृत्ति है। मनुष्य गति, मनुष्यानु पूर्वी. शुभस्त गति. छे संघयण. छे संस्थान, शुभग, दुभग, सुस्वर, दुस्वर, आदेय अनादेय, और ऊँच गोत्र. इन २३ प्रकृत्ति का मन्द रस बन्ध-मिथ्यात्वी जीव घोल के परिणामी परावर्त इस के विरोध की प्रकृत्ति का बन्ध करते ऐसे चारों गति के जीवों जानने; क्योंकि सम्यक्त्व दृष्टि देवता और नारकी तो मनुष्य प्रायोग्य बान्धते तिर्यचादि विरोधी प्रकृत्ति का बन्ध नहीं करते हैं, और ऋषभनाराचादि संघयन भी नहीं बान्धते हैं. और सम्यक् दृष्टि मनुष्य तिर्यच देवता प्रयोग्य बान्धते समचतुरस्त्र संस्थानका बन्ध करे बाकी के पांचों संस्थानो का बंध नहीं करे. इसलिये सम्यक्त्व की विरोधकी प्रकृत्ति के साथ प्रावर्तते बंध नहीं होताहै. और इसही लिये वों मन्द रस बंध के अधिकारी नहीं हैं. और मिथ्यत्वी भी अति संक्लिष्ट परिणामसे बीस क्रोड क्रोड सागरोपम प्रमाण स्थितिबंध अध्यवसाय स्थानक वर्तते तिर्यच द्विक. नरक द्विक, हुंड संस्थान. छेवट्टा संघयण, अशुभस्त गति, और नपुंसक वेदादि प्रकृत्तिका निरन्त्र पणे उत्कृष्ट बंध करे. वहां से भी और १८ क्रोडा क्रोड सागरोपम की स्थिति बंध अध्य वसाय स्थानक होवे तब कुब्ज संस्थान. किलिक संघयण. परावर्त हुंड संस्थान और छेवट्टा संघयण का बंध करै वह मन्द रस बन्ध. और १५ क्रोडा क्रोड सागरोपम की स्थिति बन्धाध्यवसाय स्थानक. में तिर्यच द्विक का मनुष्य द्विक साथ परावर्ति बन्ध करे. तैसेही नपुंसक वेदका स्त्रीवेद के साथ परावर्त कर बन्ध करे. और १० क्रोडा क्रोड सागर स्थिति बन्धाध्यवसाय स्थानक बाद दौर्भाग्य त्रिक. सोभाग्य त्रिक. के साथ परावर्त कर बंध करे. वहां से क्रोडा क्रोड सागर कुछ कमी तक परावर्त कर बन्ध होवे. इसलिये हीन स्थिति बंधाध्यवसाय स्थानक में फक्त मनुष्याद्विक. वज्रऋषभ नाराच संघयण. समच तुरस्त्र संस्थान. शुभ विहायो गति. सोभाग्य त्रिक. पुरुषवेद इन प्रकृत्तियों का निरन्त्र बंध करे; परंतु वहां मंद रसबंध बंध नहीं, होता है. क्योंकि विरोध की प्रकृत्तियों के साथ परावर्त कर बंध करते मंद रस होता है. (यह जघन्य रस बंध के स्वामी कहे.)

अब उत्कृष्ट रस बन्ध के श्वामी कहते हैं:—एकेन्द्रिय जाति. स्थावर नाम, और आताप नाम इन तीनों प्रकृत्तियों का तीव्र (चौठाणीया) रस बन्ध भवन पति,

वर्ती क्षपक के होता है; क्योंकि-इन प्रकृति के बंध के लिये येही अत्यंत विशुद्ध स्थान है. और इन विना बाकी रही जो २९ प्रकृति उनका उत्कृष्ट रस बंध अपूर्व करण के सात भाग में के छट्ठे भाग में ३० प्रकृति का बंध विच्छेद होता है वहां-एक उद्योत विना बाकी की २९ प्रकृति के चरम बंध में क्षपक के अत्यन्त विशुद्ध परिणाम परवर्तते चौठाणी रस बंध होता है. उपशम श्रेणि में भी यह गुणस्थान है. परन्तु क्षपक जितनी विशुद्धि नहीं होने से उत्कृष्ट रस बंध के अधिकारी नहीं है. और देवता नरक तिर्यंच में तो यह गुणस्थान होही नहीं. सो इन प्रकृति यों का उत्कृष्ट रस बंध होवे कहां से. । उद्योत नाम कर्म का उत्कृष्ट रस बंध सातवी नरक के जीवों अकाम निर्जरा कर कर्म क्षय करते विशुद्ध परिणाम कर सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये अनिवृत्ति करण कर मिथ्यात्व की स्थिति के दो भाग करे. उस अंतकरण की प्रथम स्थिति के चरम समय उद्योत नाम का उत्कृष्ट रस बंध करे, और दूसरे नरक के या देवता के जीवों तो ऐसे परिणाम में प्रवर्तते मनुष्य प्रायोग्य का बंध करते हैं. सो बंध इस सप्तम नरक मे नहीं है. फक्त तिर्यंचायु ही बांधते हैं. इसलिये तिर्यंचायु की सहचारी उद्योत नाम कर्म का उत्कृष्ट रस बंध यहां ही होता है. मनुष्यद्विक, औदारिक द्विक, वज्र ऋषभ नाराच संघयण, यह ५ प्रकृति मनुष्य गति प्रायोग्य अविरति शुद्ध सम्यक्त्व दृष्टि देवता-जिनागम श्रवण करते, जैन मोहिनि का क्षय करते, सम्यक्त्व उज्वल से. यहां बंध की भक्ति करते उत्कृष्ट रस बंध करते हैं. मनुष्य जो ऐसी विशुद्धि में प्रवर्ते सो देवायु बंधे. और देवता में यह प्रकृतियों है नहीं इसलिये यहां सम्यक्त्वी देवही लिये हैं. और नरक के सम्यक्त्व दृष्टि को इस बंध के कारणों का अभाव होने से उत्कृष्ट रस बंध नहीं कर सकते हैं. देवायु का उत्कृष्ट रस बंध ३३ [illegible] का प्रमत्त गुण स्थान से अप्रमत्त गुणस्थानक [illegible] होते हुवे साधु अति विशुद्धि कर बंधते हैं. क्योंकि देवायु में अति विशुद्धि का स्थान यह ही है. इतर बाकी प्रकृतियों में से [illegible] बाकी रही सो-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, १६ कषाय, १ मिथ्यात्वमोहनी, ९ नो कषाय, प्रथम संघयण विना ५ संघयण, प्रथम संस्थान विना पांच संस्थान, अशुभ वर्ण चतुष्क, अप्रशस्त [illegible], उपघात, कु खगति, नीच गोत्र और पांच अंतराय. यो ६८ प्रकृतियां उत्कृष्ट रस बंध चारो गति के पंचेंद्रिय पर्याप्त मिथ्यात्व दृष्टि [illegible] होता है. इन में [illegible] के एकेन्द्र और नरक के [illegible] [illegible], [illegible], [illegible], [illegible]. इन [illegible] प्रकृति [illegible]

ये सांत दुसरा भांगा. तथा यह आठों शुभ प्रकृति है इसलिये इनका जघन्य रस स-र्वोत्कृष्ट संक्लेश में वर्तते मिथ्यात्वी जीव सन्नी पर्याप्त बंध करता है. सो एक अथवा दो समय पर्यन्त. फिर अजघन्य बंध बांधता है. फिर कालांतर में सर्वोत्कृष्ट संक्लेश को प्राप्त हो जघन्य रस बंध करे. यों जघन्य अजघन्य में फिरता जीव को सादि और सांत यह दो भाँगे पाते हैं। ऊपर कहे तेजस चतुष्क विना बाकी रही जो-ज्ञा-ना वरणीय ५. दर्शनावरणीय ९. कषाय १६. मिथ्यात्व मोहनीय १. अंतराय ५. भय १. दुगच्छा. उपघात. और अशुभ वर्ण चतुष्क. यह ४३ प्रकृति ध्रुव बंध की है. सो अशुभ है. इनका जघन्य रस बंध विशुद्धि कर के अपने चरम बंधमें होता है. और उस स्थानक को जो प्राप्त नहीं हुवे उन के अजघन्य रस बंध की अनादि.और जो इस श्रेणि मे पडकर फिर बन्ध करे उनके सादि. और अभव्य जघन्य रस बंध नहीं बंधताहै. उनने उनके अजघन्य रसबंध अनन्त.और भव्य जीव सम्यक्त्वकी प्रा-प्ति करेंगे तब उस स्थान को प्राप्त हो जघन्य रसबंध करेंगे वहां अजघन्य रसबंध का सान्तपणा. ज्ञानावरणीय. दर्शनावरणीय. मोहनीय और अन्तराय यह चारों घातिक कर्म है. इन में से मोहनीय का तो नव वे गुणस्थान के प्रांत में. और तीनों कर्मों का दश वे गुणस्थान के प्रांत में जघन्य रस बंध होता है. बाकी रहे सर्व स्थानों में अ-जघन्य रस बंध होता है. . इनके चार भाँगः—१ जिस के जघन्य रस बंध न हुवा उन के अजघन्य रस बंध अनादि. २ जो जघन्य रस बंध कर फिर श्रेणि मे पडते अजघन्य रस बंध करे-तहां सादि, ३ अभव्य के अजघन्य रस बंध अनंत, और४भ-व्य के अजघन्य रस बंध सान्त. इन चारों कर्मों के अजघन्य रस विना बाकी के तीनों बन्ध में सादि सान्त भाँगा पाता है. । गौत्र कर्म के अनुत्कृष्ट तथा अजन्य इन दोनों रस बंध में चार भांगे:—१नीच गौत्र का जघन्य रस बंध सातवी नरक में ग्रंथी भेद कर मिथ्यात्व के अंतिम समय में बंध करे, उस स्थानक को जो प्राप्त नहीं हुवे उनके अनादि का अजघन्य रस बंध होता है. २ जो एक समय ये अजघन्य रस बंध कर फिर अजघन्य रस बंध करे उनके सादि. ३ अभव्य जीव उस स्थानक को कदापि नहीं स्पर्शे इसलिये उन के अनन्त. और४भव्य जीव जघन्य रस बन्ध करेंगे और रस बंध का विच्छेद भी होगा इसलिये सांत. ऐसेही ऊंच गौत्र का विशुद्धता से उत्कृष्ट रसबन्ध दशवे गुणस्थान के प्रान्त में होता है, उस विना और सब अनुत्कृ-ष्ट रस बंध जानना, वहां जिस ने श्रेणि नहीं करी उस ने उत्कृष्ट रस बंध नहीं किया

केक प्रमाणु अधिक स्कंध की ऐसी दूसरी–तीसरी–चौथी–पांचवी यों बढते २ अनन्त वर्गणा. औदारिक शरीर गृहण योग्य पणे होवे, उस औदारिक शरीर गृहण योग्य जघन्य वर्गणा. से अनतवे भाग अधिक औदारिक शरीर गृहण योग्य उत्कृष्टि वर्गणा होवे. वो अनन्त वा भाग भी अनंत प्रमाणु रूप जाणना. इसलिये औदारिक के ग्रहण करने योग्य भी अनन्त वर्गणा. होती है. ३ औदारिक शरीर की उत्कृष्ट वर्गणा से एकेक प्रमाणु अधिक स्कन्ध की वर्गणा. सो औदारिक की अपेक्षा से बहुत प्रदेशोपाचित तथा सूक्ष्म परिणाम परिणात. उससे औदारिक के अग्रहण योग्य और वैक्रिय शरीर आरंभक स्कन्ध की अपेक्षा से अल्पप्रदेशोपाचित तथा बादर परिणात, इसलिये वैक्रिय शरीरके भी अगृहण योग्य, यों एकेक प्रदेश अधिक होते स्कन्ध अनंत की अभव्यसे अनन्त गुण और सिद्धके अनन्तवे भाग प्रमणा इतनी वर्गणासो वैक्रिय शरीर के अगृहण योग्य जाणना. ४ उससे एक प्रदेश अधिक स्कन्ध की वर्गणा सो वैक्रिय शरीर आरंभ करते जघन्य ग्रहण योग्य वर्गणा जाणना. योंही और एकेक प्रदेश बढते स्कन्ध की अनन्ती वर्गणा वैक्रिय शरीर निष्पादक होती है, वोभी जघन्य वैक्रिय गृहण योग्य वर्गणा से अपने अनन्तवे प्रमाण अधिक वैक्रिय शरीर के गृहण योग्य उत्कृष्ट वर्गणा होती है. इसलिये यह भी अनन्त वर्गणा जाणना. ५ उस वैक्रिय गृहण योग्य उत्कृष्ट वर्गणा से एक प्रदेश अधिक स्कन्ध की वर्गणा सो वैक्रियदल की अपेक्षा से बहुत प्रदेश निष्पन्न तथा सूक्ष्म परिणात होती हैं, और आहारक शरीर प्रायोग्य दल की अपेक्षा अल्प प्रदेशी तथा बादर परिणात होतीहै. इसलिये वैक्रिय तथा आहारक इन दोनों शरीर के काम में नहीं आवे, इसलिये वो अगृहण योग्य वर्गणा जाणना. वो भी एकेक प्रदेश अधिक होते २ स्कन्ध की अभव्य से अनन्त गुण और सिद्धों के अनन्तवे भाग प्रमाण अनन्त वर्गणा जाणना. (यह अनन्ति अगृहण योग्य प्रदेश की वर्गणा होती है) ६ फिर उससे भी एक प्रदेश अधिक स्कन्ध की वर्गणा उस करके वो आहारक शरीर की निष्पति होवे. इसलिये वो आहारक प्रायोग्य जघन्य वर्गणा होती है. वोभी एकादि प्रदेश अधिक होते अनन्त स्कन्ध की अनन्ती वर्गणा होती है, वो जघन्य वर्गणा के अनन्त वे भाग प्रमाण प्रदेश से बढती ऐसी उत्कृष्टि आहारक शरीर के गृहण करने योग्य वर्गणा अनन्ती होती है. ७ उस आहारक गृहण योग्य उत्कृष्ट वर्गणा से एक प्रदेश अधिक स्कन्ध की वर्गणा सो आहारक की अपेक्षा बहुत प्रदेशिक तथा सूक्ष्म और तेजस की अपेक्षा अल्प प्रदेशि

क स्कन्ध उस करके द्रव्य मन उत्पन्न होवे. इसलिये वो जघन्य मनो द्रव्य ग्रहण योग्य वर्गणा जाणना. उससे एकादि प्रदेश अधिक२स्कन्ध सो यावत् निज जघन्य वर्गणा स्कन्धके अनन्त वे भाग जो प्रदेश होवे उतने प्रदेश वृद्धपाति उत्कृष्टि मनो ग्रहण योग्य वर्गणा होवे. १९ उससे एक प्रदेश अधिक पुद्गल स्कन्ध की वर्गणा सो मनो द्रव्य की अपेक्षा से बहुत प्रदेशी सूक्ष्म जाणना. और कर्म दलकी अपेक्षा से अल्प प्रदेशिक बादर जाणना. इसलिये दोनो शरीर के ग्रहण करने योग्य नहीं ऐसी अभव्य से अनत गुणी वर्गणा जाणना.१६ और भी उससे एक प्रदेश वृद्धि होते पुद्गल स्कन्ध की वर्गणा सो कर्म दल ग्रहण योग्य होती है. इसलिये सो कर्म प्रायोग्य जघन्य वर्गणा जाणना. उसेस भी एकादि प्रदेश वृद्धि पाति यावत् अपनी जघन्य वर्गणा के अनन्तवे भाग प्रदेश प्रमाण प्रदेश से बढती उत्कृष्टी कर्म ग्रहण योग्य पुद्गल की वर्गणा जाणनी. उस करके कर्म दलमें कर्म प्रकृत्ति का बन्ध होता है! एक कर्म की जघन्य और उत्कृष्टी के बीच में मध्यम अनन्त वर्गणा होती है. तैसे दल कर कर्म प्रकृत्ति का बन्ध पडता है. इसलिये इसे कर्म ग्रहण योग्य वर्गणा कही जाती है.

उपरोक्त वर्गणा सो जीवको ग्रहण करने योग्य पुद्गल हैं, जीवके आश्रित रहतेहैं इसलिये उपचार से इसको सचित्त वर्गणा कहना. और इससे एकादि प्रदेश अधिक पुद्गलों का स्कन्ध जिसे जीवों ग्रहण करे सके नहीं इसलिये उसे अचित्त वर्गणा कहना. वो अचित्त वर्गणा भी सब जीवोंसे अनन्त गुण अधिक है. इन वर्गणा का स्वरूप सहज में समझाने के लिये कल्पित दृष्टान्त कहते हैं:-जैसे एक से लगाकर दशपर्यन्त प्रमाणु निष्पन्न अग्रहण योग्य वर्गणा जाणना. उससे ११-१२-१३ प्रमाणु निष्पन सो औदारिक ग्रहण योग्य वर्गणा जाणना. उससे १४-१५-१६-१७-१८-१९-और २० पर्यन्त अग्रहण योग्य वर्गणा जाणना. फिर २१-२२-२३ पर्यन्त वैक्रियशरीरके ग्रहण करने योग्य वर्गणा जाणना. यों आठों वर्गणा ग्रहण योग्य, और बीच२ की आठों वर्गणा अग्रहण जोग, यों १६ वर्गणा सचित्त होती है.

१ यह उपरोक्त उत्कृष्ट कर्म वर्गणा से एकादि प्रदेश अधिक स्कन्ध की सर्व जीव से अनन्त वर्गणा. सो निरन्तर-हमेशा मिलती है. परन्तु वैसे स्कन्ध की वर्गणा. जीवों के ग्रहण करने योग्य नहीं होती है. इसलिये उसे ध्रुवाचित्त जघन्य वर्गणा कहना. इन जघन्य वर्गणा से उत्कृष्ट वर्गणा के प्रदेश अनन्त गुणे होते हैं. उसे उत्कृष्ट ध्रुवाचित्त वर्गणा कहना. २ उससे और भी एकादि प्रदेश अधिक स्कन्धकी वर्ग

हैं, यह लोकस्थिति की वर्गणा भी अनन्ती जाणना. १२ इस से भी अधिक प्रदेश स्कन्ध पन्नवणाजी सूत्र में फरमाये हैं.

और एकाणुकादिक द्वणुकादिक अर्थात्-एक प्रमाणु की दोप्रमाणु की वर्गणा, आदि शब्दसे तीन चार पांच जावत् संख्यात असंख्यात और अभव्य से अनन्त गुणी अधिक और सिद्धके जीवों के अनन्त वे भाग प्रमाणु की वर्गणा सो औदारिक शरीर के गृहण करने योग्य होती है, ऐसी अनन्त वर्गणा जाणना. इससे भी एकादि प्रमाणु अधिक बढती ऐसीहि अनन्त सो औदारिक शरीर के अगृहण करने योग्य जाणनी. ऐसेही दूसरी वैक्रिय शरीर के गृहण करने योग्य. तीसरी आहारक शरीरके ग्रहण कर ने योग्य, चौथी तेजस के ग्रहण करने योग्य, पांचवी भाषा के ग्रहणे योग्य. छट्ठी श्वासोश्वास के ग्रहणे योग्य, सातवी मन के ग्रहणे योग्य. और आठवी कार्मण के गृहणे योग्य. इन आठों वर्गणा का अनुक्रम से अवकाश [illegible] केक से एकेक का सूक्ष्म होता है. अर्थात्-औदारिक गृहण योग्य वर्गणा का अवगाहना क्षेत्र से औदारिक अगृहण योग्य वर्गणा का अव गाहना क्षेत्र सूक्ष्म. [illegible] वैक्रिय गृहण योग्य वर्गणा का अवगहना क्षेत्र सूक्ष्म. यों अनुक्रमसे आठों [illegible] ना, यद्यपि इन आठों वर्गणा का क्षेत्र अंगुल के असंख्यातवे भाग है. [illegible] से एकेक की अवगाहना छोटी होती है. क्योंकि ज्यों विशेष पुद्गलों के [illegible] मुदाय मिलता है त्यों विशेष सुक्ष्म परिणाम होता है. जैसे कपास [illegible] देश भी विशेष क्षेत्र को रोकते हैं. और पार के बहुत पुद्गल [illegible]

प्रश्न-अमूर्ती आत्मा को मूर्तीमंत कर्मों से उपघात कैसे [illegible]

उत्तर-जैसे मूर्तीमन्त मदीरापान करनेसे अरूपी ज्ञानका [illegible] ना प्राप्त होता हुवा. और सारस्वत चूर्ण का सेवन करने [illegible] त्यक्ष दृष्टि आती है, तैसे ही अगुरु लघु पुद्गल द्रव्य का [illegible] द्रव्य के साथ सम्बंध होता है. उस से ज्ञानादि गुणों [illegible] नामादि शुभ कर्म कर एश्वर्य पूजादि अनुग्रह की [illegible]

उपरोक्त आठ वर्गण में से-१ औदारिक [illegible] वर्गणा, और ४ तेजस वर्गणा, यह ४ वर्गणा [illegible] स्पर्श यह २० गुण पाते हैं. इसलिये गुरु [illegible] गणा, २ श्वासोश्वास वर्गणा, ३ मन वर्गणा [illegible]

कर(१) कषाय और (२) नो कषाय को बाँट देना. उसमेंसेभी कषाय का भागतो सं-ज्वल के चौक की चारों प्रकृति को देना. और नोकषाय का एकवेद, एक युगल (भय और दुगंछा) इन पांचों प्रकृति को बाँट देना. । आयुष्य कर्म की भी चारों प्रकृतियों बन्ध विरोधनी है-क्योंकि एक वक्त में एकही गति के आयुष्य का बन्ध होता है इसलिये इसका भाग-हिस्सा भी नहीं होता है. । नाम कर्म का मूल भाग प्राप्त होवे उसको २९ हिस्से में बाँट देनाः—१ गति, २ जाति, ३ शरीर, ४ उपाङ्ग, ५ बन्धन, ६ संघयण, ७ संस्थान, ८ अनुपूर्वी, १२ वर्ण चतुष्क, १३ अगुरुलघु, १४ उपघात, १५ उश्वास, १६ निर्म्माण, १७ जिन नाम, १८ आताप, १९ शुभा शुभ विहायो गति, २९ त्रस दशाका, अथवा + स्थावर दशका, इन २९ में से जितनी का बन्ध पडता हो उतनेही भाग में बाँटदेना. और इसमें भी जो शरीर नाम की प्रकृति है उसके तीन या चार भाग करना. उसमें वैक्रिय, आहारक, तेजस, और कार्मण, इन चारों का बंध होवे तब चार भाग करना. तथा औदारिक तेजस कार्मण, या वैक्रिय तेजस कार्मण, इनका बंध होवे तब तीन ३ भाग करना. और बंधन नाम के ७ तथा ११ भाग करना. उसमें मनुष्य और तिर्यच प्रायोग्य बंधते औदारिक के बंधन चार, और तेजस कार्मणके बंधन तीन, सो सात भागसे बंध होवे तब सात भाग में बाँट देना. और देव प्रायोग्य नाम कर्म की २१ प्रकृत्ति का बंध करते वैक्रिय के बंधन चार, तथा आहारक का बंधन चार, और तेजस कार्मण के बंधन तीन, यों ११ भाग से बंध करे तब इग्यारे हिस्से में बाँट देना. और वर्णनाम के ५ भाग, गंधनाम के २ भाग, रस नामके ५ भाग, स्पर्श नाम के ८ भाग, यों २० भाग होते हैं. और बाकी रही प्रकृत्तियों उनका भाग, होता नहीं है, क्योंकि वो सब प्रकृत्तियों बंध विरोध की हैं-एक बंध होते दूसरी का बंध नहीं होता है. जैसे एक गतिका बंध करते बाकी की तीनों गतिका बंध नहीं होता है, ऐसेही जाति संघयण संस्थान आदि, तथा त्रसादिक दशका बंध करते स्थावरादि विरोध की प्रकृतिका बंध नही पडे, ऐसे सबस्थान जानना. । ऐसेही गोत्र कर्म का भी भागीदार दूसरा नहीं होता है, क्योंकि—एक समय

+ त्रस दशके का भाग होवे तब स्थावर दशके का नहीं और स्थावर का होवे तब त्रस का नहीं क्योंकी यह बन्ध विरोधकी प्रकृतियों है.

उससे हांस्य और शोक के विशेष, और आपस मे तुल्य. (१८-१९) उससे रति और अरतिके विशेष. और आपस में तुल्य. (२०-२१) उससे स्त्रीवेद और नपुंसक वेदके विशेष और अपस में स्वस्थान तुल्य. (२२) उससे संज्वल के क्रोधके विशेषाधिक, (२३) उससे संज्वल के मान के विशेषाधिक, (२४) उससे पुरुषवेद के विशेषाधिक, (२५) उससे संज्वल की माया के विशेषाधिक और २६ उससेसंज्वल के लोभ के विशेषाधिक. । ४ आयुष्य कर्म की चारों प्रकृत्तियों के दलिक अपने २ स्थान में तुल्य हैं. । ५ नाम कर्म (गति आश्रिय) (२) सब से थोडे देव गति और नरक गति के दल. आपस में तुल्य (३) उससे मनुष्य गति के विशेष. (४) उससे तिर्यच गति के विशेष. (जातिआश्रिय) (१-४) सब से थोडे बेन्द्रिय तेन्द्रिय चौरिन्द्रय और पचेन्द्रिय. आपस में स्वस्थान तुल्य. (५) उससे एकेन्द्रिय जाति के विशेष (शरीर आश्रिय)-(१) सब से थोडे आहारक के, (२) उससे वैक्रिय के विशेष. (३) उससे. औदारिक के विशेष. (४) उससे तेजस के विशेष. और (५) उससे कार्मण के विशेष (योंहीं पांचों संघातन की भी अल्पा बहुत जानना.)-(उपाङ्ग आश्रिय)-(१) सबसे थोडे आहारक के, (२) उससे वैक्रिय के विशेष. और (३) उससे औदारिक के विशेष. (बन्धन आश्रिय) (१) सर्व से थोडे आहारक आहारक बन्धन, (२) उससे आहारक तेजस बन्धन के विशेष, (३) उससे आहारक कार्मण बन्ध के विशेष. (४) उससे आहारक तैजस कार्मण बन्ध के विशेष, (५) उससे वैक्रिय वैक्रिय बन्ध के विशेष, (६) उससे वैक्रिय तेजस बन्ध के विशेष. (७) उससे वैक्रिय कार्मण बन्ध के विशेष, (८) उससे वैक्रिय तेजस कार्मण बन्ध के विशेष. (९) उससे औदारिक औदारिक बन्ध के विशेष. (१०) उससे औदारिक तेजस बन्ध के विशेष. (११) उससे औदारिक कार्मण बन्ध के विशेष. (१२) उससे औदारिक तेजस कार्मण बन्ध के विशेष (१३) उससे तेजस तेजस बन्धके विशेष. (१४) उससे तेजस कार्मण बन्धके विशेष और (१५) उससे कार्मण कार्मण बन्ध के विशेषाधिक. (संस्थान आश्रिय) (१-४) सब से थोडे निग्रोध, सादि. वामन. कुब्ज इन चार संस्थान के और आपस में तुल्य उससे (५) समचतुरस्र संस्थान के विशेष. और (६) उससे हुंडक संस्थान के विशेष. (संघयण आश्रिय (१-५) सब से थोडे वज्र वृषभ नाराच, वृषभ नाराच, नाराच, अर्धनाराच और किलिक संघयण के (६) उससे छेवटे संघयण के विशेष, (वर्ण आश्रिय) (१) सर्व मे थोडे कृष्णवर्ण के (२) उससे हरेवरण के विशेष, (३) उससे रक्त

विशेप. (३) उससे अप्रत्याख्याता वरणीय माया के विशेप. [४] उससे अप्रत्याख्याना वरणीय लोभ के विशेप [५-८] ऐसेही प्रत्याख्याना वरणीय चौक और (९-१२) ऐसेही अनन्तान बन्धि चौक. (१३) उससे मिथ्यात्व का जघन्य भाग विशेप. (१४) उससे दुगंछाका अनन्त गुणा. [१५] उससे भयके विशेप. [१६] उससे हंस्य के और शोक के विशेप. परस्पर तुल्य. (१९) उससे रति और अरतिका विशेप. परस्पर तुल्य. (२२) उससे तीनों वेदो का भाग विशेप. [२६] उससे संज्वलका चौक विशेप ॥ ५ आयुष्य कर्म [१-२] सब से थोडा तिर्यचायु नरायु. (३४) उससे देवायु नरकायु असंखेज गुणा. ॥ ६ नाम कर्म [गति आश्रिय] (१) सब से थोडा तिर्यच गति का. (२) उससे मनुष्य गतिका विशेप. (३) उससे देवागति का संख्यात गुणा (४) उससे नरक गति का संख्यात गुणा (जाति विषय) (१-४) सब से थोडे बेन्द्रिय, तेन्द्रिय. चौरिन्द्रिय पचन्द्रिय और आपसमें तुल्यः (५) उससे एकेन्द्रिय विशेप. । (शरीर आश्रिय) (१) सब से थोडे औदारिक शरीर के, (२) उनसे वैक्रिय के विशेप. (३) उनसे कार्मण शरीर के विशेप (४) उनसे तेजसके संख्यातगुण (५) उससे आहारक शरीर के संख्यात गुणे ऐसेही ५ संघातन का और १५ बन्धनका उत्कृष्ट पदके जैसा कहदेना. । (अङ्गो पाङ्ग आश्रिय) (१) सब से थोडा औदारिक अङ्गो पाङ्ग (२) उससे वैक्रिय अङ्गो पाङ्ग के असंख्यात गुणे. (३) उससे आहारक के संख्यात गुणा (अनुपूर्व्वी आश्रिय) (२) सर्व से थोडा नरकानुपूर्व्वी देवानुर्व्वी. परस्पर तुल्य (३) उससे मनुष्यानु पूर्व्वी विशेप (४) उससे तिर्यचानु पूर्व्वी विशेप (त्रस विंसंति विषय) (१) सब से थोडा त्रस दगका (२) उससे स्थावर दगका विशेप । यों बादर सूक्ष्म । योंही पर्याप्ता अपर्याप्ता । योंही प्रत्येक साधारण । और बाकी का ४२ प्रकृत्ति की जघन्य पदकी अल्पा बहुत्व उत्कृष्ट पदकी तरहही कहदेना ॥ ७ गोत्र कर्म (१) सर्व से थोडा नीच गोत्र. (२) उससे ऊंच गोत्र के विशेप. ॥८ अन्तराय कर्म (१) सर्व से थोडा दानान्तराय के. (२) उनसे लाभान्तराय के विशेप. (३) उनसे भोगान्तराय के विशेप. (४) उससे उपभोग अनन्तराय के विशेप. और [५] उससे वीर्यन्तराय के विशेप.

☞ प्रकृत्यादि चारों बन्धों के कथन के गहन ज्ञान रूप सिन्धु में दीर्घ दृष्टि से गोता लगाते जीवकी शक्ति की अचिन्त्यता, और पुद्गलो के परिणामों की विचित्रता का अवलोकन करते आत्मा में जिनेश्वर के ज्ञान का अद्भुत चमत्कार भास होता है!

से अवश्य बन्ध पडता है. और अनन्तानु बन्धि कषाय के उदय में अनन्तानु बन्धि-क्रोध-मान-माया-और लोभ इन चारों का अवश्य बन्ध होता है. तैसेही अप्रत्याख्यानी के उदय में अप्रत्याख्यानी क्रोधादि चारों का, प्रत्याख्यानी के उदय में प्रत्याख्यानी क्रोधादि चारों का. और संज्वल के उदय में संज्वल की क्रोधादि चारों कषायों का यों १६ ही कषायों और तीनों मोहनीय मिल १९ ध्रुव बन्ध की प्रकृति हुइ. और १ वर्ण, १ गंध, १ रस, १ स्पर्श, १ तेजस शरीर, १ कार्मण शरीर, १ अगरु लघु नाम, और १ निर्माण नाम. यह ९ प्रकृति नाम कर्म की. चारों गति-के सब जीवोंके अवश्य पाती है, क्यों कि-यह ९ प्रकृति शरीरिक बंध की है. और ऐसे ही अंतराय कर्म की भी ५ प्रकृति दशवे गुणस्थान तक सब जीवोंके अवश्य होती है. यों सब ४७ प्रकृति ध्रुव बंधी जानना. (वेदनीय और गोत्र कर्म मूल प्रकृति की अपेक्षासे तो ध्रुव बंध में लेने में कुछ हरकत नहीं, परंतु उत्तर प्रकृतियों ध्रुव बंधी न होने से यहां नहीं गिनी-

५३–२४ अध्रुव बंध कर्म प्रकृति द्वारोंका अर्थ.

जो प्रकृति अपना बंध हेतु का संबंध मिलने पर भी-कभी बंध करे और कभी बंध नहीं भी करे, तथा उस के स्थान उसके बंध विरोधनी प्रकृति का बंध पड जावे सो अध्रुव बंध की प्रकृति कहना. सोः—१वेदनीय की २ २ मोहनीय की ७ ३ आयूष्य की ४, ४ नामकी ५८, और ५ गोत्रकी २, यों ५ कर्मों की ७३ प्रकृति अध्रुव बंध की होती है. जिसका सबबः—साता और असाता दोनों वेदनीय का बंध एकही साथ नहीं होता है. इसलिये अध्रुव बंधकी जानना. और हाँस्य और रति का। बंध होतीवक्त शोक और अरतिका बंध नहीं होताहै तथा शोक और अरतिका बंध होती वक्त हाँस्य और रति का बंध नहीं होताहै इसलिये यहभी अध्रुव बंध की प्रकृति छट्ठे गुणस्थान तक होतीहै और इसके आगे निरंतर बंध होनेसे अध्रुव बंध की कही जाती है स्त्री पुरुष ओर नपुंसक-इन तीनों वेदों मेसे एक वक्तमें एकही प्रकृति (वेद)का बंध होता है, इस में नपुंसक वेद तो मिथ्यात्व तक, स्त्रीवेद सास्वादन तक, इस के आगे निरंतर पुरुष वेदका ही बंध होता है, इसलिये यह ७ प्रकृति मोहनीय कर्म की भी अध्रुव बंधी जानना. नरकायु, तिर्यचायू, नरायू, और देवायु इन चारो आयुष्य में से एक भवमें तो एकही, आयुष्य का बंध होता है. इसलिये आयु कर्म की चारों प्रकृ-

में अंत होवेगा ॥ और धुव बंध की ४७ प्रकृति बंधकी अपेक्षासे ३ भाँगे होते हैं:— १. जो अभव्य जीवों अनादि काल से इन धुरव बन्ध की प्रकृत्तिका बन्ध करते हैं. इसलिये अनादि. और आगे गुणस्थाना रोहण के अभाव से बन्ध व्यच्छेद कदापि नहोने का इसलिये अनन्त. २ भव्य जीवों अनादि से मिथ्यात्वी हैं. और आगे गुण स्थाना रोहण कर प्रकृत्तियों का घात करेगें सो अनादि सान्त. ३ और भव्य जीवों इग्यारवे गुणस्थान मे इन प्रकृत्तियों का अबन्धक हो पीछे पडते हुवे बन्ध करे सो सादि सान्त. । मिथ्यत्व मोहके बन्ध में और उदय में भी तीन ३ भाङ्गे:—१ अभव्य आश्रिय अनादि अनन्त. २ भव्य आश्रिय अनादि सान्त, ३ पडवाइ आश्रिय सादि सान्त. चौथा अनादि अनन्तका भांगा शून्य जानना

५५६०.घातिक अघातिकर्म प्रकृत्तिके द्वारों का अर्थ.

जो प्रकृत्ति आत्मा के गुणों को आवरे—अच्छादे—ढके उसे घातिक प्रकृत्ति कहते हैं. जिसमें सर्व घातिक प्रकृत्ति के रस स्पर्द्धक तो ताम्र पत्र के जैसे छिद्र रहित और स्फटिक की तरह निर्मळ. द्राक्षकी तरह सूक्ष्म, सार प्रदेशों पर बहुल रस वाले होते हैं. इसलिये सर्व घातिक प्रकृत्तिके प्रदेश थोडे होते हैं. तोभी वीर्य अधिक होता है. जिनके नाम:—१. केवल ज्ञानावरणीय और २ केवल दर्शना वरणीय यह दोनों प्रकृत्ति जैसे सूर्य महामेघ के पडलों कर आवरता—ढकाता है, तैसे चैतन्य के, ज्ञान दर्शन गुणों को सर्वांश से आवरता है, तथापि महामेघ में दबा हुवा सूर्यका मण्डल दिन रात्री के विभाग को दर्शाता है. जिससे जाना जाता है कि—कुछ अंश अना छादित है. तैसेही जीवके ज्ञानादि गुणों सर्व घातिक प्रकृत्तियोंने ढके हैं. तोभी जड और चैतन्य का विभाग जानने में आता है. इतना अंश उघाडा है. और पांचों निद्राभी सर्व घातिक गिनी है. क्योंकि—केवल दर्शना वरणीय से उघाडा रहा दर्शनांश को भी सर्वांश से अच्छादित करती है. पांचों इन्द्रिय के बोधेको रोकती है. इसलिये सर्व घातिक कहीहै यहां भी ऊपरोक्त सूर्य मेघ पट्ल के दृष्टान्त मुजब निद्रा में भी कुछ प्रदेशांश खुला रहाता है. जिस सेही जीवों शब्द स्पर्श आदि से जाग्रत होते हैं. और अनन्तानु बन्धि चौक सो सर्वतः सम्यक्त्व गुणों का अच्छादन करता है अप्रत्याख्यानी चौक—देश विरति गुणों का सर्वतः अच्छादन करता है. और प्रत्याख्यानी चौक—सर्वतः सर्व विरति गुणों का आच्छादन करताहै. यहां भी सूर्य मेघ प

में अंत होवेगा ॥ और धुव बंध की ४७ प्रकृति बंधकी अपेक्षासे ३ भाँगे होते हैं:—
१. जो अभव्य जीवों अनादि काल से इन धुरव बन्ध की प्रकृत्तिका बन्ध करते हैं, इसलिये अनादि, और आगे गुणस्थाना रोहण के अभाव से बन्ध व्यच्छेद कदापि नहोने का इसलिये अनन्त. २ भव्य जीवों अनादि से मिथ्यात्वी हैं. और आगे गुण स्थाना रोहण कर प्रकृत्तियों का घात करेंगें सो अनादि सान्त, ३ और भव्य जीवों इग्यारवे गुणस्थान मे इन प्रकृत्तियों का अबन्धक हो पीछे पडते हुवे बन्ध करे से सादि सान्त. । मिथ्यत्व मोहके बन्ध में और उदय में भी तीन ३ भाङ्गे:—१ अभव्य आश्रिय अनादि अनन्त, २ भव्य आश्रिय अनादि सान्त, ३ पडवाइ आश्रिय सादि सान्त, चौथा अनादि अनन्तका भांगा शून्य जानना

५५६०,घातिक अघातिकर्म प्रकृत्तिके द्वारों का अर्थ.

जो प्रकृत्ति आत्मा के गुणों को आवरे—अच्छादे—ढके उसे घातिक प्रकृत्ति कहते हैं. जिसमें सर्व घातिक प्रकृत्ति के रस स्पर्द्धक तो ताम्र पत्र के जैसे छिद्र रहित और स्फटिक की तरह निर्मळ, द्राक्षकी तरह सूक्ष्म, सार प्रदेशों पर बहुल रस वाले होते है. इसलिये सर्व घातिक प्रकृत्तिके प्रदेश थोडे होते हैं, तोभी वीर्य अधिक होता है. जिनके नाम:—१ केवल ज्ञानावरणीय और २ केवल दर्शना वरणीय यह दोनों प्रकृत्ति जैसे सूर्य महामेघ के पडलों कर आवरता—ढकाता है, तैसे चैतन्य के, ज्ञान दर्शन गुणों कों सर्वांश से आवरता है, तथापि महामेघ में दबा हुवा सूर्यका मण्डल दिन रात्री के विभाग को दर्शाता है. जिससे जाना जाता है कि—कुछ अंश अना छादित है. तैसेही जीवके ज्ञानादि गुणों सर्व घातिक प्रकृत्तियोंने ढके हैं. तोभी जड और चैतन्य का विभाग जानेन में आता है. इतना अंश उघाडा है. और पांचों निद्राभी सर्व घातिक गिनी है. क्योंकि—केवल दर्शना वरणीय से ज्यादा रहा दर्शनांश को भी सर्वांश से अच्छादित करती है. पांचों इन्द्रिय के बोधको रोकती है, इसलिये सर्व घातिक कहीहै यहां भी ऊपरोक्त सूर्य मेघ पटल के दृष्टान्त मुजब निद्रा में भी कुछ प्रदेशांश खुला रहाता है. जिस सेही जीवों शब्द स्पर्श आदि से जागृत होते हैं. और अनन्तानु बन्धि चौक सो सर्वतः सम्यक्त्व गुणों का अच्छादन करता है अप्रत्याख्यानी चौक—देश विरति गुणों का सर्वतः अच्छादन करता है. और प्रत्याक्यानी चौक—सर्वतः सर्व विरति गुणों का आच्छादन करताहै. यहां भी सूर्य मेघ प

२० सर्व घातिक और २७ देश घातिक यों दोंनो मिलकर ४७ प्रकृत्ति घातिक कर्मों की होती है.

अघातिक कर्म प्रकृत्ति-ऊपर कहीसो ४७ घातिक प्रकृति, वाकी रही १०१प्रकृत्ति सो सब अघातिक जानना. क्योंकि यह १०१ ही प्रकृत्तियों से आत्मा के ज्ञानादि गुणों का कुछ घात नहीं होता है, फक्त जैसे चोरों की संगती से साहूकार भी चोर गिना जाता है. तैसेही यह १०१ प्रकृत्तियों भी घातिक प्रकृत्तियों की साथही वेदने में आती हैं. इसलिये घातिक कही जाति हैं.

६१-६४ पुण्य पापकर्म प्रकृत्ति द्वारों का अर्थ.

पुण्य प्रकृत्तिका वन्ध-शुद्ध परिणाम से होता है, संक्लेश परिणमों से मन्द रस वन्ध पडताहै. और विशुद्ध परिणामों से तीव्र रस वन्ध पडता है, उसका उदयमीठे-मधुरे-मनोज्ञ रस में होता है, उसे वेदता जीव सुख मानता है. उसे पुण्य प्रकृत्ति कहते हैं, सो ४२ हैं:—१ साता वेदनीय (यह १ वेदनीय कर्म की) २ देवायु, ३ मनुष्यायु, ४ तिर्यंचायु + (यह ३ आयु कर्म की प्रकृत्तिका वन्ध भी पुण्योदय से होता है, जिस से आगे इन ३ गति में सुखकी विशेषता है.) ५ मनुष्य गति, ६ मनुष्यानु पूर्व्वी, ७ देवगाति, ८ देवानु पूर्व्वी, ९ पचेन्द्रिय की जाति. १०-१४ पांच शरीर १५-१७ तीनों शरीर के अङ्गो पाङ्ग, १८ वज्र ऋषभ नाराच संघयण, १९ समचतुरस्त्र संस्थान, २० शुभवर्ण (श्वेत, पित) २१ शुभ गन्ध (शुर्भी गन्ध) २२ शुभरस (मिष्ट, अम्ल, कषायला) २३ शुभ स्पर्श (लहु, कोमल, चिक्कणा, उष्ण) २४ अगुरु लघु नाम, २५ परायात नाम, २६ उश्वाश नाम, २७ आताप नाम, २८ उद्योत नाम, २९ शुभ चलनेकी गति, ३० निर्माण नाम, ३१ त्रस नाम, ३२ वादर नाम, ३३ पर्याप्ता नाम, ३४ प्रत्येक नाम, ३५ स्थिर नाम, ३६ शुभ नाम, ३७ सोभाग्य नाम, ३८सुस्वर नाम, ३९आदेय नाम, ४०यशो कीर्ति नाम, ४१तीर्थ करनाम, (यह ३७ नाम कर्म की) और ४२ ऊंच गोत्र. यह ४ कर्मकी सब ४२ प्रकृत्ति जीवों को सुख दायक होने से पुन्य प्रकृत्ति गिनी जाती हैं.

पाप प्रकृत्ति वन्ध-अशुभ परिणामों से होता है. संक्लेश परिणामों से तीव्र रस

+ तिर्यंचायु जुगलीये तिर्यंचोकी अपेक्षासे पुन्य प्रकृत्ति में गृहण किया है.

अर्थात्—जब एक जीवके एक समय में-एक क्रोध.का उदय होता है तब-मान माया लोभ इन तीनों कषाय का उदय नहीं होता है. और जब मानका उदय होता है तब क्रोध माया लोभ इन तीनों कषाय का उदय नहीं, ऐसे ही सोले ही कषायों का जानना. तैसे ही २४ हांस्य. और २५ रति. तथा २६ शोक और २७ अरति. यह चारों प्रकृति भी बंध विरोधनी है. क्योंकि—हांस्य के वक्त शोक नहीं. और शोक के वक्त हांस्य नहीं. तैसे ही-रति के वक्त अरति नहीं और अरति के वक्त रति नहीं. । तैसे ही ३० तीनों वेदों भी उदय और बंध विरोधी हैं. एक जीवके एक वक्त में एकही वेद का बंध और उदय होता है. (यह मोहनीय कर्म की २६ प्रकृति) तैसे ही-३१ नरकायु. ३२ तिर्यचायु. ३३ नरायु. और ३४ देवायु. यह आयु कर्म की चारों प्रकृति भी उदय और बंध विरोधि है. क्योंकि-एक ही वक्त में एक जीव एक ही आयु बन्धता है और भोगवता है. तैसे ही-३८ चारों गति. ४३ पांचो जाति. ४६ पहिलेके तीनों शरीर. ४९ तीनों शरीर के अङ्गोपाङ्ग. ५५ छही संघयन, ६१ छ संस्थान. ६३ दोनोंगति. ६७ चारों अनुपुर्वी. ७७ त्रस दशका. ८७ स्थावर दशका+ ८८ उद्योत नाम. और ८९ आताप नाम. यों नाम कर्म की ५५ प्रकृति यों भी उदय और बंध विरोधनी है. और तैसे ही-९० उंच गौत्र और ९१ नीचे गौत्र, यह दोनों गौत्र कर्म की प्रकृति भी बन्ध विरोधनी है. यों सब ९१ प्रकृतिका उदय और बंध का विरोध होनेसे परावर्तमान की कही जाती है.

और अपरा वर्तमान प्रकृति सो इन से उलट स्वभाव वाली जानना अर्थात्-जिस का बंध सदा उदय दूसरी प्रकृतियोंसे विरोध नहीं करते दूसरी प्रकृतियोंका बंध और उदयको बिना रोके ही अपना बंध होयवे अर्थात्—अन्य प्रकृतियों का बंध पड़ती वक्त इनका बंध रहे और अन्य प्रकृतियों के उदय में इनका उदय रहे-अन्यथा है. यहने के आठ ऐसी प्रकृतियों २९ हैं—सो ज्ञानावरणीय की ५, दर्शनावरणीय की ९. यो दोनो कर्मों की १४ प्रकृतियों ध्रुव बन्ध की है. इनका बंध करते वक्त कुछ परिणाम विशेष दूसरी प्रकृति का बन्ध नहीं भी करे तो भी इन बंध में [illegible] करती है. तैसे ही-१५ भय. १६ जुगुप्सा. और १७ मिथ्यात्व मोहनीय. यह ३

+ [illegible] नहीं होता है.

न के दुसरे भाग में आते हुवे दर्शनावरणीय चार प्रकृति का वन्ध करता हुवा-बंध से विच्छेद की हुइ निद्रा और प्रचला का फिर बंध करे तब ६ प्रकृति का बंध होवे,सो प्रथम समय प्रथम भूयस्कार. २ और फिर नवका बंध करे सो दुसरा भूयस्कार बंध. (यह २ भूयस्कार) और नवके बंध में से ३ का बंध विच्छेद कर ६ का बंध करते प्रथम समय पहिला अल्पतर बंध. और फिर अपूर्व करण गुणस्थान के प्रथम ६ प्रकृति का बंध कर फिर निद्रा और प्रचला का विच्छेद कर चार का बंध करे सो प्रथम समय दूसरा अल्पतर बंध. (यह २ अल्पतर बंध) और इन चारों के मध्या मे तीनों बंध स्थान में दुसरे समय से लगाकर उन २ बंध के स्थानों में अन्तिम समय पर्यन्त तीनों अवास्थित बंध जाणना. और इग्यारवे गुणस्थान में दर्शनावरणीय का अबंधकहो वहां से पडते दशमे गुणस्थान में चार प्रकृति का बंध करे नेके पहिले समय पहिला अव्यक्त बंध. तथा उपशांतमोह गुणस्थान में आयुक्षय होने से मरकर अनुत्तर विमान में देव हो छे प्रकृतिका बंध करे उस के पहिले समय दुसरा अव्यक्त बंध.

३ मोहनीय कर्म के १० वन्ध स्थानः—मोहनीय की वन्ध की २८ प्रकृति है, इनमें भी एक समय में तीनों वेदों में का १ वेद, हांस्य और रति. शोक और अरति इन दोनों युगल में का एक युगल काही वन्ध होता है. क्योंकि यह प्रकृतियों वन्ध विरोध की है. इसलिये-१ मिथ्यात्व गुणस्थान में २२ का वन्धहोता है, जिसकी स्थिति-अभव्य आश्रिय अनादि अनन्त. भव्य आश्रिय अनादि सान्त. और पडवाइ आश्रिय सादि सान्त. २ फिर सास्वादन गुणस्थान में मिथ्यात्व मोहनीय का वन्ध नहीं होने से २१ प्रकृति का वन्ध होता है. जिसकी स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट ६ आंवालिका की. ३ फिर मिश्र और अविरति सम्यक् दृष्टि गुणस्थान में अनन्तानु वन्धि चौक का बंध नहीं होने से १७ प्रकृति का बंध होता है, जिसकी स्थिति-जघन्य अंतर मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३३सागरोपम पृथक्त्व पूर्वकोडी अधिककी, क्यों कि-अनुत्तर विमानवासी देवताओं चवकर जहां तक विरति पणा धारन नहीं करे तहां लग यह गुणस्थान रहता है. । ४ फिर देश विरति गुणस्थान में अप्रत्याख्यानी चौक का बंध नहीं होने से १३ प्रकृतिका बंध होता है, जिसकी स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की, उत्कृष्टि पूर्व कोडी वर्षकी । ५ फिर प्रमत्त और अप्रमत गुणस्थान में प्रत्याख्यानी चौक का बंध नहीं होने से ९ प्रकृति का बंध होता है, जिसकी स्थि-

गुणस्थान में २२ प्रकृतिका बंध कर चौथे गुणस्थान में १७ प्रकृति का बंध करे सो प्रथम अल्पतर बंध. २ फिर १३ प्रकृति का बंध रहै सो दूसरा अल्पतर बंध. यों ऊपरोक्त भूयस्कार बंध सब उलट कहना. इसमें विशेष इतनाही है. कि-२१ प्रकृति का अल्पतर बन्ध नहीं होता है. क्यों कि-मिथ्यात्व गुणस्थान मे सास्वादन गुणस्थान में कोइभी आता नहीं है. बाकी के ८ अल्पतर बन्ध होतेहैं। और ऊपर मोह बन्ध के दशस्थान कहे सो दूसरे समय से लगा कर अन्तिम समय पर्यन्त दशोंही अवस्थित बन्ध जानना.॥

४ नाम कर्मके ८बन्धस्थान-१ मिथ्यात्वी जीव मनुष्य तिर्यच अपर्याप्ता एकेन्द्रिय प्रायोग्य-१ वर्ण, २ गन्ध, ३ रस, ४स्पर्श, ५ तैजस, ६ कार्मण, ७ अगुरुलघु ८ निर्माण, ९ उपघात, १० तिर्यच गति, ११ तिर्यचानु पूर्वी, १२ एकेन्द्रिय जाति, १३ औदारिक शरीर, १४ हुंड संस्थान, १५ स्थावर नाम, १६ बादर नाम अथवा सूक्ष्म नाम, १७ अपर्याप्ता नाम, १८ प्रत्येक नाम अथवा साधारण नाम, १९ अस्थिर नाम, २० अशुभ नाम, २१दौर्भाग्य नाम, २२ अनादेय नाम, और २३ अयशः नाम, इन २३ प्रकृतियों का प्रथम बंध स्थान। २ इन २३ में-१ पराघात और २ उश्वास यह दोनों प्रकृतियों मिलाने से, और अपर्याप्ता के स्थान पर्याप्ता कहने से २५ प्रकृति का बंध पर्याप्ता एकेन्द्रिय प्रायोग्य मिथ्यात्वी देवता और मनुष्य के होता है.। ३ इन २५ प्रकृतिमें आताप अथवा उद्योत दोनों मेंसे एक प्रकृति मिलाने से २६ प्रकृति का बन्ध पर्याप्ता एकेन्द्रिय प्रायोग्य तीनों गतिके मिथ्यात्वी जीवोंके होता है.। ४ फिर—२ देव द्विक. ३पंचेन्द्रिय जाति. ४ वैक्रिय शरीर, ५ वैक्रिय अङ्गोपाङ्ग, ६ समचतुरस्र संस्थान. ७ पराघात नाम. ८ उश्वास नाम. ९ शुभ खगति. १० त्रस नाम. ११ बादर नाम १२ पर्याप्ता नाम. १३ प्रत्येक नाम. १४ स्थिर अथवा अस्थिर. १५ शुभ अथवा अशुभ. १६ यशः अथवा अयशः १७ सुभग. १८ सुस्वर, १९ आदेय, २३ वर्ण चतुष्क, २४ तैजस. २५ कार्मण. २६ अगुरु लघु. २७ निर्माण, और २८ उपघात. यह २८ प्रकृति देवगति प्रायोग्य मिथ्यात्वी तथा सम्यक्त्वी मनुष्य और तिर्यच बंधते हैं. ऐसे ही नरक गति प्रायोग्य भी २८ का ही बन्ध होता है. यहां इतना विशेष कि—देव द्विक के स्थान नरक द्विक कहना. और समचतुरस्र संस्थान के स्थान हुंड संस्थान कहना. और अप्रशस्तनाम प्रकृति यों अशुभ ग्रहण करनी. यह २८ प्रकृति का चौथा बन्ध स्थान हुवा. ॥ ५ सम्यग

सहित देवगति प्रायोग्य २९ का बंध करे उस वक्त तीसरा अल्पतर. । कोइ मनुष्य देवगति प्रायोग्य २९ का बंध करते परिणामों की विशुद्धि कर देवगति प्रायोग्य २८ का बंध करे उस समय चौथा अल्पतर. । इनही २८ का बंध करते संक्लिष्ट परिणामों से एकेन्द्रिय प्रायोग्य २६ का बंध करे सो पांचवा अल्पतर. । वोही २६ वाला २५ का बंध करे सो छट्टा अल्पतर. और २५ वाला २३ का बंध करे सो सातवा अल्पतर. (यह ७ अल्पतर बंध हुवे) और ऊपर कहे सो आठों बंध के स्थान कों में दूसरे समय से लगाकर अन्तिम समय पर्यन्त आठों अवस्थित बंध होते हैं (यह ८ अवस्थित बंध) और-१श्रेणिसे पडते हुवे नाम कर्म का सर्वथा अबंध होकर फिर यशः कीर्ती नाम का बंध करे उसके पहिले समय पहिला अव्यक्त बंध. और २ उपशान्त मोहगुणस्थान में मर कर अनुत्तर विमान में देवता होवे, वहां प्रथम समय मनुष्य से मनुष्य प्रायोग्य २९ का बंध करे सो दूसरा अव्यक्त, और वहां ही जिन नाम सहित ३० का बंध करे सो तीसरा अव्यक्त बंध (यह ३ अव्यक्त बंध.)

ऊपरोक्त इन तीनों कर्मों सिवाय बाकी रहे सो-१ ज्ञानावरणीय, २ वेदनीय, ३ आयुष्य, ४ गोत्र, और ५ अन्तराय, इन पांचों कर्मों का एकही बंध स्थान है. क्योंकि—ज्ञानावरणीय और अन्तराय यह दोनों कर्म तो ध्रुव बंधी हैं इसलिये दशवे गुणस्थान तक इन दोनों की पांच पांच प्रकृत्ति का साथही बंध होता है जिस से इनका भूयस्कार और अल्पतर बंध नहीं होता है. फक्त एक अवस्थित बंधही सदा बना रहता है. और वेदनीय आयुष्य गोत्र इन तीनों कर्मों की प्रकृत्तियों बंध विरोध की है, इसलिये एक समय में एकही का बंध होता है. और बंध स्थान भी एकही होता है, जिससे इन का भी भूयस्कार और अल्पतर बंध नही होता है. और वेदनीय का बंधतो तेरवे गुणस्थान तक होता है, इसलिये इस विना बाकी के चारों कर्मों का व्यक्त बंध एकही होता है, क्योंकि—इग्यारवे गुणस्थान में अबंधक हो फिर बंध करते प्रथम समय व्यक्त बंध होता है, फिर अवस्थित बंध जाणना.

ऊपरोक्त बंध में मूल प्रकृत्ति का जघन्य एक का बंध है, और उत्कृष्ट ८ का बंध है. । और उत्तर प्रकृत्ति का जघन्य एक का उत्कृष्ट ७४ का बंध होता है. इस से—१ अनादि, २ सादि ३ अनन्त. और ४ सान्त इन चारों भांगों को विचारते हैं मूल प्रकृत्ति के बंध स्थान में औघ से १ सादि सान्त भांगा पाता है. क्योंकि—भवों भव में एकही वक्त आयु का बंध होता है, यह आठ का बंध. और बाकी के काल

दन करने वाली जो - ज्ञानावरणीय की ५, दर्शनावरणीय की ९, मोहनीयकी २८ औ अन्तराय की ५, ऐसे चारों घन घातिक कर्मों की ४७ प्रकृतियें शरीर पुद्गलकी अपेक्षा बिना अपना विपाक जीव कोंही देखाती है, तैसे ही ४८-४९ साता और असाता वेदनीय, तथा ५०-५१ नीच और ऊंच गोत्र, यह चारों प्रकृतियों सुखी दुःखी व ऊंच नीच जीव कोही बनाती हैं. और ५२ तीर्थंकर गोत्र के उदय से परम एश्वर्य पुजातीशय वचनातीशय और अपायागमतीशय यह चारों अतिशय जीवके ही होतेहैं जिससे जीवही तीर्थंकर परमात्मा कहलाते हैं. ऐसे ही-५३ त्रस. ५४ स्थावर. ५५ सूक्ष्म. ५६ बादर. ५७ पर्याप्ता. ५८ अपर्याप्ता, ५९. सौभाग्य. ६० दौर्भाग्य, ६१ सुस्वर. ६२ दुस्वर. ६३ आदेय, ६४ अनादेय, ६५ यशःकीर्ति. ६६ अयशःकीर्ति. यह सब प्रकृतियों जीवके ही प्राप्त होतीहै. जिन प्रकृतिके नाम मुख्य ही (त्रस स्थावरादि नामसे) जीवको बोलाया जाता है. ६७ श्वासोछ्वास. यद्यपि पुद्गल रूप है. परन्तु यह लब्धि जीवको ही होती है. ६८-७२ एकेन्द्रियपणादि पांचों जाति. ७३-७६ नरकादि चारों गति. ७७-७८ दोनों खगति. यह भी जीव परही प्रवर्तती है. इसलिये सब ७८ प्रकृति जीव विपाक की गिनी जाती है.

२ भव विपाककी-प्रकृति फक्त एक आयुष्य कर्म की ही चारों गिनी जातीहै क्योंकि-देवतादिक का भव प्राप्त हुवे बाद भवके प्रथम समय से लगाकर अन्तिम समय तक निरन्तर अपनी शक्ति बताती है. आत्मा का खोडे की तरह निरुंधन करती है. परभवमे जाने नहीदेती है. और जब उन प्रकृतियों का क्षय करते हैं तब पर भव का आयुका उदय होनेसे परभव में जीव जाता है. इसलिये भव की मुख्यता कर के १. नरकायु. २ तिर्यंचायु. ३मनुष्यायु. और ४सुरआयु. इन चारों प्रकृतिको भव विपाक ही जानना. और दुसरा कारण यह भी होके-चरम शरीरी जीव बाकी रहे तीनों गती के होनेसे को मनुष्य गति के एक आयुष्य में भेरुत्ता कर-उदयावली में लाकर वेदकर क्षयकरे. क्योंकि प्रदेश मे कर्म वेदे बिना छुटका नहीं होता है. और आयुष्य का भेदन किये बिना मोक्ष भी नहीं होती है. इस लिये आयुका भेदन किये बाद फिर इन के किसी भी प्रकार का परभव का आयुष्य का उदय नहीं होनेसे प्रदेशावली उदय रहा है. इसलिये आयुष्यकी चारों प्रकृति भव विपाक की जानना.

३ पुद्गल विपाककी प्रकृति-जो अपनी शक्ति शरीरादि पुद्गलो मे देखावे इन प्रकृतियों मे पुद्गल गुण पूर्ण प्रकृष्ट उदयात् शरीरादि जो कर्म पुद्गलो मे होवे

ति के जोवों के सदा पाता है. इसमें जो-स्थिर अस्थिर तथा शुभ अशुभ यह चारों प्रकृत्ति आपसमें विरोध की है. सो बन्ध आश्रिय जानना. परन्तु उदय आश्रिय नहीं अर्थात् इन चारोंका एकही वक्त बन्ध नही, पडता है. परन्तु उदय रहता है जैसे रक्त मूत्र आदिका अस्थिर बन्ध अस्थिर कर्मोदय से होता है, और हाड दांत आदिका स्थिर बन्ध स्थिर कर्मोदय कर होता है, तैसे मस्तकादि शुभ अंग की प्राप्ति शुभ कर्मोदय कर होती है. और पादादिक अशुभ अंगका उदय अशुभोदय से होता है. और चारोंही वस्तु एक शरीर में सदा देखने में आतीहै जिससे ध्रुवोदय की कही जातीहै

अध्रुवोदय की प्रकृत्तिः—दर्शना वरणीय कर्म की पांचों निद्रा का उदय किसी वक्त होवे किसी वक्त नहोवे, ऐसेही दोनों वेदनीय × मिथ्यात्व मोहनी विना २ प्रकृति ÷ मोहनी की, चारों आयुष्यकी, ४ गति, ५ जाति, ३ शरीर, ६ संघयण, ६ संस्थान, दोनों खगति, चारों अनुपूर्वी, जिन नाम, उद्योत, आताप, उपघात पराघात, त्रस दशका स्थावर दशका और उपघात नाम, यों नाम कर्म की ५५ और गोत्र की २, यों सब ९५ प्रकृत्ति उदय विरोध की होने के सबब से अध्रुव उदय की गिनी जातीहै.

११३-१२४. उदीरणा द्वारों का अर्थ.

जो कर्मों अभितक अबाधा काल परिपक्व नहोने से उदय अवस्था को-फल देने को समर्थ नहीं हुवे हैं, ऐसे कर्मों को अपना करण वीर्य की विशेषता कर-उन्हे आकर्ष कर-खेंचकर उदया वली में लाकर अप्राप्त काल में भोगवे-जैसे वृक्षके अपरिपक्व फल को अग्निके व घांस (पराल) के जोग से पाका कर भोगवते हैं. उसे ऊ-

× सम्यक्त्व मोहका उदय वेदक सम्यक्त्वी के होता है और मिश्र मोह दोनों के मध्यमे होता है. इसलिये यह दोनों प्रकृति अध्रुव गिनि जाती है

÷ सोलह कषाय. १७ भय, १८ दुगंछा, यह १८ मोहनीय कर्मकी प्रकृत्ती अध्रुवोदयमें गिनी है. क्योंकि—क्रोध के उदय में मानादिक का उदय नहीं होता है, यों सब प्रकृतियों उदय विरोधी होने के कारण से अध्रुवोदय में गिनी है. परन्तु बन्ध विरोधकी नहीं है. और भय तथा दुगंछा का उदय भी सान्तर है. अर्थात् कभी होवे और भी नहीं भी होवे, जिससे अध्रुवोदय की गिनी है.

जाति. ३ संघयन. ६ संस्थान. और २ गति (यह नाम कर्म की ७८) १ नीच गोत्र की अध्रुव सत्ता निगोद में जाते निकलने से होवे. और ५ अन्तराय की सत्ता सब जीवों के सर्वदा पाती है. यों ७ कर्मों की १३० प्रकृति ध्रुव सत्ता वाली जानना.

अध्रुव सत्तावाली प्रकृति कहते हैं. कि—जिसका उदय कभी होवे कभी न होवे ऐसी २८ प्रकृति हैं—१. सम्यक्त्व मोहनीय और मिश्र मोहनीय इन दोनों की सत्ता अनादि मिथ्यात्वी को होती है यों सम्यक्त्व का वमन कर जो मिथ्यात्व गुणस्थान में आया हो उसके होता है. अन्य के नहोने से अध्रुव गिनी जाती है. और चारों गति के आयुष्य की सत्तामें से किसी जीवके एक गति के आयुष्य की सत्ता होती है किसी के दो गतिके आयु की सत्ता होती है परन्तु सबों के एकसी सत्ता न होने से आयुष्य की प्रकृति अध्रुव गिनी है. मनुष्यगति और मनुष्यानुपूर्वी इन दोनों प्रकृति को तेउ और वायु में बहुत काल रहने वाला उवेलना करता है इसलिये उनकी सत्ता में नहीं पाने से अध्रुव गिनी जाती है. वैक्रिय शरीर. वैक्रिय अङ्गोपाङ्ग. वैक्रिय संघात. वैक्रिय बन्धन. देवगति. देवानुपूर्वी. नरक गति. नरकानुपूर्वी. इन ११ प्रकृति की सत्ता अनादि निगोदिये जीवों के बन्ध के अभाव से नहीं होती है. तथा उवेलते भी नहीं हैं. इसलिये अध्रुव हैं. जिन नाम की सत्ता भी जो सम्यक्त्व सत्यप बन्धन कर फिर मिथ्यात्व में जावे जिसके अन्तर मुहूर्त सत्ता होती है दूसरे के नहोतीहै इसलिये अध्रुव गिनीहै. आहारक शरीर आहारक अङ्गोपाङ्ग आहारक संघातन आहारक बन्धन. इन का अप्रमत्त गुणस्थानी विशुद्ध चारित्री मुनि बन्धन कर फिर संक्लेश परिणामों से मिथ्यात्व में जावे उनके सत्ता में होतीहै दूसरे के नहोने से अध्रुव गिनी है. और उच्च गोत्र की सत्ता भी अध्रुव है. क्योंकि—तेउ और वायु में रहे हुवे जीव उच्च गोत्र की उवेलना करते हैं. उस वक्त उनके उच्च गोत्र की सत्ता नहीं रहती है इसलिये अध्रुव. ऐसे मिथ्यात्व गुणस्थान में वर्तते भी जिन प्रकृतियों की सत्ता किसी के होवे किसी के नहोवे ऐसी यह २८ प्रकृति अध्रुव सत्ता की जानना.

१२७—१५५ कर्मों के भङ्ग द्वारों का अर्थ.

बन्ध उदय. और सत्ता इन तीनों की प्रकृतियों के स्थान बताते हैं:—मूल आठ प्रकृति बन्ध की अपेक्षा से—८ का. ७ का. ६ का. और १ का. यह ४ स्थान होते हैं. और उदय की अपेक्षा से—८ का. ७ का, और ४ का. यह तीनो स्थान हो

हां भांङ्गे की तीन चौवीसी होती है. अर्थात्—सातों मे भय मिलानेसे ८हुवे, इने तीनों वेदों से तीगुने करने से २४ हुवे. योंही दुगंच्छा के मिलाने से. और अनन्ता बंधी कषाय मिलाके ३ वेदसे चौवीसी करना. । ३ ऊपरोक्त ७ प्रकृतिके उदयमें भय और दुगंछा का उदय बढाने से—नवका उदय होता है. यहां भी पहिले की माफिक भांङ्गे की चौवीसी होती है । ८ पूराक सात प्रकृत्ति में भय और अनन्तान बंधि चौक में की एक कषाय का उदय बढाने से भी नवका उदय होता है, यहां भी भांङ्गे की चौवीसी जानना. एसेही सात प्रकृत्ति में—दुगंच्छा और अनन्तान बंधि की एक कषाय बढाने से भी नवका उदय गिना जाता है; यहां भी भाङ्गे की चौवीसी जानना. यों सब मिलकर नवके उदय में भाङ्गे की तीन चौवीसी होती है. । ४ मिथ्यात्व. भय. दुगंच्छा. हांस्य. रति. (तथा शोक अरति) तीनों वेदों में का एक वेद. और अनन्तानु बंधिकी चारो कषाय. यों दशका उदय स्थान जब होवे तब भी भाङ्ग की चौवीसी होती है. ॥ २१ प्रकृत्ति के बंध में तीन उदय स्थानः—१ हांस्य. २ रति. (तथा १ शोक २ अरति) ३ तीनों वेदों में का—एक वेद. चारों कषाया में मे क्रोधादि एकही कषाय के चारों भेद यों सात प्रकृत्ति के उदय में भाङ्गेकी १ चौवीसी होती है. । २ इन सात के उदय में भय का उदय मिलाने से—८ का उदय होवे वहां भी भाङ्गे की एक चौवीसी पावे. तथा दुगंछा मिलाकर ८ का उदय होवे तहां भी भाङ्गे की—१ चौवीसी. । और भय और दुगंच्छा दोनों मिलाने से नवके उदय में भी भाङ्गे की एक चौवीसी. यों २१ प्रकृत्ति का बन्ध सास्वादन गुणस्थान में तीन उदय होकर भांगे की चौवीसी चार होती है. × ॥ १७ प्रकृत्ति के बन्ध में चा

× यहां सास्वादन के दो भेद होते हैं:—१ उपशम श्रेणिगत और २ अश्रेणिगत इन में से अश्रेणिगत में तो यह तीनों उदय स्थान पाते हैं. और श्रेणिगत में आचार्योंके मत दो तरह के है.—जो अनन्तान बन्धिको उपशमा कर श्रेणि करता है. और पडवाईहो सास्वादन गुणस्थान स्पर्शे उन के मतसे पहिले कहे सो तीनों स्थान उदय के जानना. और २ जो आचार्य अनन्तान बन्धि चौकको विसंयोजना से श्रेणिका प्रारंभ मानते है. उन के मत से पडवाई के अनन्तान बन्धि की सत्ता के अभाव से अनन्तानु बन्धि के उदय रहित सास्वादन पनभी सम्भव नहीं है. और जो सम्यक्त्व से पडा सो मिथ्यात्व में नहीं पडे-

लकर चौथे गुणस्थान में आठ चौवीसी भाङ्गे की होती है. जिसमें से चारतो क्षायिक तथा उपशम सम्यक्त्वी की और चार क्षयोपशमिक सम्यक्त्वी की मिश्रकी तरह जानना. इन आठ चौवीसी के साथ मिश्र गुणस्थानीकी चारों चौवीसी मिलाने से-१७ के बन्ध स्थान में १२ चौवीसी भाङ्गे की होती है. यद्यपि तीसरे चौथे गुणस्थान का उदय स्थान तो दोही है परन्तु वहां प्रकृतियों अलग २ है. इसलिये दो वक्त कहा है. ॥ तेरे प्रकृति के बन्ध स्थान में-५ का, ६का, ७का, और ८का, यह चार उदय स्थान होते हैं सो कहतेहैं:-प्रत्याख्यानी क्रोध, संज्वल का क्रोध पुरुषवेद, एक युगल, यों ५ प्रकृति का उदय होवे, यहां क्रोध के स्थान मान-माया-लोभका पलटा करने से चार भाङ्गे पुरुष वेद के साथ होवे, चार भाङ्गे स्त्री वेद में होवे चार भाङ्गे नपुंसक वेद मे होवे. यों १२ भाङ्गे होवे. इन १२ को-हास्य और रतिसे, तथा; शोक और अरति यों, दोनों युगल मे दुगने करने से २४ भाङ्गे हुवे. यों भाङ्गे की १ चौवीसी पांच के उदय मे पाती है. । इसमें पांच प्रकृति भय दुगंछा और सम्यक्त्व मोहनीय इन तीन में की एकेक प्रकृति मिलाने से-छे के उदय स्थान के तीन भेद होवे. इनके एकेक स्थान में एकेक चौवीसी गिनते छे के उदय में तीन चौवीसी होवे । उपरोक्त पांच प्रकृति में-भय और दुगंछा, तथा-भय और सम्यक्त्व मोहनीय, तथा-दुगंछा और सम्यक्त्व मोहनीय; यों दो दो प्रकृति का उदय एक साथ मिलाने से सात प्रकृति के उदय स्थान तीन होवे. यहां भी भाङ्गे की चौवीसी तीन होती है । और उपरोक्त पांच के उदय में-भय, दुगंछा और सम्यक्त्व मोहनी इन तीनो का उदय साथही मिलाने से-आठ प्रकृति के उदय स्थान में भी भाङ्गे की चौवीसी एक होती है. । यों १३ के बन्धके चारो उदय स्थानो देशविरति गुणस्थान मे सब मिलकर भाङ्गे की चौवीसीयों ८ होती है. इनमें क्षायिक और उपशम सम्यक्त्वी की चार, और वेदक सम्यक्त्वी की चार जानना.॥ प्रमत्त अप्रमत्त और अपूर्व करण इन तीनों गुणस्थान में-नवप्रकृति के बन्ध के स्थान में-चारसे उदय से लगाकर उत्कृष्ट सात का उदय स्थान तक पाता है. यहां-१ संज्वल के चौक में की एक कषाय, तीनों वेदों में का एकवेद, दोनों युगल में का एक युगल्यों, चार का-उदय क्षायिक तथा उपशम सम्यक्त्वी के ध्रुव होता है. इसलिये भाङ्गे की चौवीसी एक होती है. इन चार में-१, भय, दुगंछा और सम्यक्त्व मोहनीय [illegible] तीनों प्रकृति मे से एकेक प्रकृति मिलाने से-तीन प्रकार से पांच का [illegible] है. यहां भङ्ग

के तीसरे भाग में-त्रिविध बन्ध होता है. तहां एक का उदय होवे. जिसके भाङ्गे ती न बनते है. । फिर चौथे भाग में-दोके बन्ध मे संज्वल की माय तथा लोभ इन दो नों में मे एक उदय में दो भाङ्गे होते हैं. । और एक संज्वल के लोभ के बन्धस्थान में-एक संज्वल लोभ का उदय होवे. उदयका एक भांगा नववे गुणस्थान के पांचवे भाग में होता है. ॥ फिर बन्ध बिना फक्त उदय का एक भाङ्गा होवे. सो कहते हैं- मोहनीय कर्म बन्धक अभाव सेभी-सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-एक संज्वलके लोभका उदय स्थान होवे. यहां एकही भाङ्गा जानना. यों चारके बन्ध स्थानमें भाङ्गा चार तीनके बन्ध स्थानमें भांगे तीन. दोके बंध स्थानमें भाङ्गे दो एकके बंध स्थानमें भांगा एक और बंध के शुन्य स्थान में भाङ्गा एक. सब मिल भाङ्गे ११. एकेक के उदय में होते हैं. । य द्यपि यहां संज्वल के क्रोधादिक के उदय में विशेष नहीं है; तथापि बन्ध स्थान के विशेषत्व कर विशेष जानना. ॥ फिर उदय के अभावसे भी उपशान्त मोह गुणस्थान में-कषाय उपशम किया परन्तु सत्ता है इसलिये प्रसङ्गानु पेत यह भी एक भाङ्गा ग्र हण करना. परन्तु यहां बन्ध और उदय के संवेध में सत्ता का भाङ्गा कहना सो नि ष्कारण है. और क्षीणमोह में तो सत्ता भी नही हैं.

सब भाङ्गो की संख्या कहते हैं—१ दशके उदय की-१. चौवीसी, २ नवके उदय की ६ चौवीसी. ३ आठ के उदय की ११. चौवीसी. ४ सात के उदय में द-शचौवीसी. ५ छे के उदय में ७ चौवीसी. ६पांचेक उदयमें-चार चौवीसी. और ७,चा रके उदय में एक चौवीसी-यों सब मिल भाङ्गे की ४० चौवीसी यों हुइ. और दो के उदय के १२ भाङ्गे एक के उदय के ११. भाङ्गे सब मिल चालिस चौवीसी के तो ४०+२४ =९६० और ११+१२=२३ यों ९८३ भाङ्गे होते है.÷ इन सब उद यो के भाङ्गे में का एक भाङ्गा जघन्य एक समय रहे और उत्कृष्ट अन्तर मुहूर्त पर्यन्त × रहता है.

+ और मतान्तर में दोके उदय में २४ भांगे कहे हैं इन के मत मे ४१. चौवीसी के ९८४ भाग होते हैं.

× बन्ध स्थान फिरने का स्वरूप उदयान्तर करने की अपेक्षा से, गुणस्थान के भेद से अन्तस्थान जाता है.

= वेदोदय और हास्य युगल में एक अन्तर मुहूर्त में पलटा होता है.

÷ यह वृन्द कहते हैं.—दशके उदय में भांगे की १. चौवीसी इसको १० गुना कर

१५ अशुभ. १६ दौर्भाग्य. १७ दुस्वर. १८ अयश कीर्ति. १९ अनादेय. और २८ नव प्रकृति का ध्रुव बन्ध की. इन २८ प्रकृति का बन्ध पचेन्द्रिय तिर्यंच तथा मनुष्य मिथ्यात्व गुणस्थान वालेके होता है. यहां सब परावर्तने की अशुभ प्रकृतियोंका ही बंध होनेसे विकल्प न होने एकही भांगा पाता है. ॥ देवगति प्रायोग्य बंध विच्छेद होनेसे श्री-अपूर्व करण के सातवे भाग मे लगाकर सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान के अंत पर्यन्त-एक यशः कीर्ति नामका बंध मनुष्य करता है. वहांभी एकही भांगा लेना. ॥ अब बंध स्थानके भांगे की संख्या कहते हैं:—अपर्याप्ता एकेन्द्रिय प्रायोग्य २३ प्रकृतिके बन्ध के४ भांगे. २५प्रकृति बन्धके२० भांगे: बेन्द्रिय प्रायोग्य१. तेन्द्रि-प्रायोग्य १.चौरिन्द्रिय प्रायोग्य १. पचेन्द्रिय तिर्यंच प्रायोग्य१.मनुष्य प्रायोग्य१.यो २५केबंधमें २५ भांगे एकेंद्रिय प्रायोग्य २६ के बंध के-१६ भांगे: देव प्रायोग्य २८के बंध के८ भांगे: नरक प्रायोग्य २८ के बंध का १ भांगा. यों २८ के बंध के ९ भांगे: बेंद्रिय प्रायोग्य ८. तेंद्रिय प्रायोग्य८चौरिन्द्रिय प्रायोग्य ८. पचेंद्रिय प्रायोग्य ४६०८. मनुष्य प्रायोग्य ४६०८ और देव प्रायोग्य ८. यों सब मिल २९ के बंध के ९२४८ भांगे. बेंद्रिय प्रायोग्य ८. तेंद्रिय प्रायोग्य ८. चौरिंद्रिय प्रायोग्य ८ पचेंद्रिय प्रायोग्य ४६२८. मनुष्य प्रायोग्य ८. और देव प्रायोग्य १. यों सब मिल ३० के बंध के ४६४१ भांगे होते हैं. और ३१ का बंध स्थान मे देव प्रायोग्य १. यो नाम कर्म के आठोंही बंध स्थानोंके सब मिलकर १३९४५ भांगे होते हैं.

नाम कर्म के १२ उदय स्थान:—२० का. २१ का २४. का. २५ का. २६ का. २७ का. २८ का. २९ का. ३० का. ३१ का. ९ का और ८ का इन १२ही उदय स्थानोंको अलग २ बताते हैं: इनमें से-एकेन्द्रिय के-२१का. २४ का. २५का. २६ का और २७ का. यों ५ उदय स्थान होते हैं सो कहते हैं:—१ तैजस. २ कार्मण. ३ अगुरुलघु. ४ स्थिर. ५ अस्थिर. ६ शुभ. ७ अशुभ. ८ वर्ण. ९ गंध. १० रस. ११ स्पर्श. और १२ निर्माण. (इन १२ प्रकृति का ध्रुवोदय होता है, क्योंकि यह १२ प्रकृति १३ वे गुणस्थान पर्यन्त उदय आश्रिय सब जीवों के होती है. इसलिये इनको सर्व स्थान लेनी.) १३ तिर्यंचद्विक. १४ स्थावर. १५ एकेन्द्रिय जाति. १६ बादर अथवा सूक्ष्म. १७ पर्याप्त. अथवा अपर्याप्ता. १८ दौर्भाग्य. १९ अनादेय. और २० यशः अथवा अयशः. इन २० प्रकृति का उदय एकेंद्रिय जीवोंके मरके

अन्तराल में वर्तते ८ पाता है. यहां भांगे ५ उपजते हैं:- १ सूक्ष्म पर्याप्ता के साथ २१ उदय, सूक्ष्म पर्याप्ता के साथ २१ उदय, सूक्ष्म अपर्याप्ताके साथ २१ उदय, ३ बादर अपर्याप्ताके साथ २१ का उदय. अपर्याप्ता. यह तीन भांगे तो फक्त अयशः के साथ होते हैं, क्योंकि-यहां यशःका उदय नहीं है. और ४ बादर पर्याप्ता के साथ यशः कीर्ति-२१ का उदय, तथा अयशः साथ २१ उदय. । फिर उस शरीरस्थ के उपरोक्त २१ प्रकृति के उदय में-१ औदारिक शरीर, २ हुंड संस्थान, ३ उपघात, ४ प्रत्येक अथवा साधारण, इन चारों प्रकृति को मिलाना, और १ तिर्यचानुपूर्वी कमी करना तब २४ प्रकृति का उदय रहता है. और प्रथमोक्त ५ भांग को प्रत्येक और साधारण के साथ दुगुणे करने से १० भांगे होते हैं, इस में एक भांगा वैक्रय का मिलाना ÷ क्योंकि-बादर प्रत्येक पर्याप्ता और यशः कीर्ति के साथ एकही भां डा होता है. × यों २४ प्रकृति के उदय में सब ११ भांगे हुवे । फिर उस शरीर पर्याप्ताके-२४ के उदय में पराघात मिलाने से २५ का उदय होता है. सो शरीर प- र्याप्ता पूरी किये बाद पाता है इसे बादर पर्याप्ता के साथ और प्रत्येक तथा साधार ण के साथ गिनने से दो भांगे होते हैं. इन यशः और अयशः से दुगुने करने ४ भा गे होते हैं इन बादर के स्थान सूक्ष्म के साथ प्रत्येक साधारण से विकल्प करने से ६ भांगे होते हैं. ÷ । और बादर वायु काया के वैक्रिय करतां वक्त शरीर पर्याप्ति

÷ पूर्व [illegible] अन्तराल वर्तते हैं.

• [illegible]

÷ [illegible]

× [illegible]

÷ [illegible]

पूरी हुवे बाद पराघात का उदय मिलाने मे भी २५ का उदय होता है वाहां भी प्र-थमोक्त रीति से–१ भाङ्गा पावे. यों सब २५ के उदय में ७ भाङ्गे होते हैं । श्वासो श्वास पर्याप्ति पूरी किये बाद २५ के उदय में श्वासो श्वास का उदय मिलाने से २६ का उदय स्थान होता है. यहां भी पहिले की तरह ६ भाङ्गा पाते हैं. अथवा शरीर पर्याप्ति पर्याप्ता के श्वासो श्वास के अनुदय से + बादर और उद्योत सहित २६ के उदय में-प्रत्येक के साथ एक भाङ्गा साधारण के साथ दूसरा भाङ्गा, यह दोनों यशः और अयशः से दुगुने करने ४ हुवे. । और उद्योत के साथ आताप का उदय मिलाने से भी २६ का उदय स्थान होता है. यहां प्रत्येक के यशः और अयशः से दोभां गे × । और बादर वायु काय को वैक्रिय करते श्वासो श्वासः पर्याप्ती कर पर्याप्ता हुवे-२५ प्रकृति में उश्वास का उदय मिलाने से २६ का उदय होता है. यहां भी भाङ्गा १ ही होता है. क्योंकि वायु काय के आताप उद्योत और यशः कीर्ती का उदय नहीं है. यों २६ के उदय में सब १३ भाङ्ग हुवे. । श्वासो श्वास पर्याप्ति कर पर्याप्ता श्वासो श्वास सहित २६ के उदय में आताप तथा उद्योत इन दोनों में का एक मिलाने से-२७ का उदय होता है. यहां पुरोक्त रित से २६ भाङ्गे पाते हैं. । यों एकेन्द्रिय के उदय स्थान में–२१ उदय ५, २४ के उदय ११, २५ के उदय ७, २६ के उदय १३, और २७ के उदय ६ यों ५ उदय के मिल ४२ भाङ्गे होते हैं. ॥ बेन्द्रिय में–२१ का, २६ का, २८ का, २९ का, का, ३० का, और ३१ का यह ६ उदय स्थान हैं. इनके भाङ्गे कहते हैं:—इनमें–२ तिर्यच द्विक, ३ बेन्द्रिय जाति, ४ त्रस, ५ बादर, ६ पर्याप्ता, ७ दौर्भाग्य, ८ अनादेय, ९ यशः कीर्ति अथवा अयशः कीर्ती, यह ९ और इनमें ध्रुवोदय की १२ प्रकृति मिलाने से २१ प्रकृतिका उदयवि

+ क्योंकि-आताप पृथ्वी काय के ही होता है. इसलिये ये प्रत्येक ही लिया है, और उद्योत पृथ्वी तथा वनस्पति दोनों में होता है. इसलिये यहां प्रत्येक और साधारण दोनों लिये. और आतापका तथा उद्योतका उदय बादर के ही होता है. परन्तु सूक्ष्म के नहीं इस लिये यहां सूक्ष्म का उदय नहीं लिया.

= जहांतक श्वासो श्वास पर्याप्ति पुरी न करे वहां तक-उश्वास के उदय बिना उद्योतका उदय नहीं होता है.

तिर्यच द्रिक, ३ पचेन्द्रिय जाति, ४ त्रस, ५ बादर, ६ पर्याप्ता, ७ सौभग्य तथा दौर्भाग्य, ८ आदेय तथा अनादेय, ९ यशः तथा अयशः १. यह ९ और १२ ध्रुवोदय की मिल २१ का उदय स्थान-तिर्यच पचेन्द्रिपके पहिले का शरीर छोडे बाद रस्तेमें विग्रह गति करता होवे तब पावे. यहां जो पर्याप्त नाम के उदय वर्तता होवे तो-सुभग दुभग के उदय में भांगे दो, आदेय अनादेय के विकल्प से भांगे चार. और यशः अयशः सेभांगे ८ होते हैं. और जो अपर्याप्ता नाम के उदय वर्तेतो-सुभग आदेय, और यशः के आभाव से अन्य भाङ्गा न उपजते एकही भाङ्गा होता है, यों ९ भाङ्गे हुवे. ÷ वोही पचेन्द्रिय तिर्यच शरीरस्थ अवतरे बाद-२१ के उदय में से तिर्यचानु पूर्वी का उदय निकाले और-२ औदारिक द्विक, ३ छे संघयण, में का १ संघयण, ४ छे संस्थान में का एक संस्थान ५ उपघात और ६ प्रत्येक. इन ६ का उदय मिलाने से-२६ का उदय स्थान होता है. इसे पर्याप्ता के साथ ६ संघयण से गिनने से ६ भाङ्गे होवे. इने ६ संस्थान से ६ गुने करने से ६ ×६-३६ भाङ्गे होवे. इने सौभाग्य दौर्भाग्य से दुगुने करने से-३६×२=७२ भाङ्गे होवे. इने आदेय अनादेय भेदो गुने करने से-७२×२=१४४ होवे. इने यशः अयशः से दुगुने करने से-१४४+२-२८८ भाङ्गे होते हैं. । और अपर्याप्ता के-हुंडक संस्थान, छेवटा संघयण, दौर्भाग्य, अनादेय और अयशः इनही का उदय होने से एकही भाङ्गा होता है = यों २८९ भाङ्गे हुवे. । वो पर्याप्ता हुवे बाद-१ पराघात, २ दोनों में की एक खगति, इन दोनों को मिलाने से २८ का उदय होवे. इनके पहिले कहे २८८ भाङ्गे को शुभाशुभ विहायो गति से दुगुने करने से-५७६ भाङ्गे होते हैं ÷ । और ऊपरोक्त २८ में

÷ यहां कोइ आचार्य कहते हैंकि-सुभग का और आदेय का एकही साथ उदय होता है, तैसे ही दुभग का और अनादेय का भी-उदय एकही वक्त होता है. इसलिये इन दोनों के साथ दो भांगे इने यशः और अयशः से दुगुने करनेसे ४ भांगे है पर्याप्तके साथ होता है. और १ अपर्याप्त का भांगा, यों ५ हुवे. दो सुभग दुभग आदेय, अनादेय के भांगे भी मतान्तर से ग्रहण होता है सो बुद्धि से विचारना.

८ अपर्याप्तके अशुभ प्रकृति का ही उदय होता है, परन्तु शुभका उदय न होने से एकही भांगा मिला है.

× यहां अपर्याप्त न होने से इनका एक भांगा मिला नहीं है.

मिलाने २७ का उदय तीर्थकर के समुद्घात होती वक्त दूसरे तीसरे और सातवे समय में होता है. यहां भांगा १ ही। ऊपरोक्त २२ में-१ परावात, २ उश्वास, ३ शुभ अथवा अशुभ खगति ४ सुस्वर अथवा दूस्वर, यह ४ प्रकृत्ति मिलाने से-३० का उदय सामान्य केवली के-औदारिक काया जोग वर्तते होता है. यहां २ संस्थान से २ भांगे. इने दोनों विहाय गति से दुगुने करते १२ भांगे और इने सुस्वर दुस्वर से दुगुने करते २४ भांगे होते हैं. परन्तु सामान्य मनुष्या मिश्र होने से नहीं गिने। ऊपरोक्त ३० प्रकृत्ति में तीर्थंकर नाम मिलाने से ३१ का उदय स्थान तीर्थंकर के सयोगी केवली के औदारिक काया योग वर्तते होता है. यहां समचतुरस्र संस्थान शुभ विहाय गति, और सुस्वर का उदय होने से एकही भांगा होता. । इन ३१ में से औदारिक काय योगका निरुंधन करे तब वचन जोगका भी निरुंधन होवे जिससे स्वरका भी निरुंधन होवे, इसलिये स्वरके उदय विना ३० का उदय स्थान रहै. यहां भी एक भांगा तिर्थकर के जानना. । फिर उश्वास रुंधे तब २९ का उदय रहै. यहां भी एक भांगा तीर्थकर के जानना. । और सामान्य केवली पूर्वोक्त ३० मे से वचन जोग का निरुंधन किये २९ का उदय रहै-यहां २ संस्थान और विहायो गति से-१२ भांगे होते हैं. परन्तु सामान्य मनुष्य के होने से गिने नही। इन २९ में से उश्वस का निरुंधन करने से २८ का उदय रहै यहां भी २ संस्थान और २ विहायो गति से १२ भांगे होते है. सामान्य मनुष्य के होने से नही गिने। और १ मनुष्य गति २ पचेन्द्रिय जाति ३ त्रस, ४, बादर ५ पर्याप्ता. ६ सुभग . ७ आदेय. ८ यशः कीर्ति और ९ तीर्थकर नाम. इन ९ प्रकृति का उदय तीर्थकर अयोगी केवली के चरम समय वर्तते होता है. यहां भी १ भांग । इन ९ में से तीर्थकर नाम निकालने से ८का का उदय सामान्य अयोगी केवली के चरम समय होता है यहां भी १-भांगा यों केवली के १० उदय स्थान के मिलके ६२ भांगे होते हैं. जिसमें-२० का, २१ का, २७ का, २९ का. ३० का. ३१ का. ९ का. और ८ का, इन ८ स्थानों में तो एकेकही भांगा पाता हैं. जिसमें दो स्थान सामान्य केवली के और ६ स्थान तीर्थकर है सोतो गिने है. और बाकी के ५४ भांग सामान्याश्रिय होने से उन भांगे के अन्तर भूत समाये जिससे अलग नहीं गिने यो मनुष्य समबन्धि सब मिलकर २६२९ भांगे होते है ॥ अब देवता के २१ का, २५ का, २७ का, २८ का, २९ का, और ३० का, यह ६ उदय स्थान पाते हैं इसमें-२ देवाद्विक. ३ पचेन्द्रिय जाति, ४ त्रस

संस्थान, ३ उपघात ५ प्रत्येक , इन ९ प्रकृति का उदय मिलाने से और पूर्वी का उदय कम करनेसे २५ का उदय स्थान नर्क में उत्पन्न हुवे बाद शरीरस्थ के पाता है. यहां भी भांग एकही होता है. फिर शरीर पर्याप्ति पर्याप्ता के परावात और अशुभ खगति इन दोनों का उदय बढने से २७ का उदय होता है. यहां भी भांगा एकही। फेर प्राणा पाना पर्याप्ति पर्याप्ता के श्वाशो श्वाश का उदय बढने से २८ का उदय होता यहां भी भांगे १ । फिर भाषा पर्याप्ति पर्याप्ता के दुस्वर का उदय बढनेसे—२९ का उदय होता है, जिसका भांगा एकही होता है. यों नर्क के ५ स्थानोंके ५ भांगे होते हैं. और चारों गति के सर्व उदय स्थानोंके मिल सब १७९१ भांगे होते हैं सो कहते हैं.

उदय स्थानों के सब भाङ्गो की संख्याः—२० प्रकृति के उदय स्थान में-१ भांगा केवली के होता है, २१ प्रकृति की उदय स्थान में-एकेन्द्रिय के ५ विकेन्द्रिय के ९, पचेन्द्रिय तिर्यंच के ९ मनुष्य के ९ , केवली का १, देवता के ८, और नर्क का १, यों सब मिल ४२ होते हैं, २४ प्रकृतिके उदय स्थान में—एकेन्द्रिय के ११, भांगे होते है, २५ प्रकृति के उदय स्थान में-एकेन्द्रिय के ७ वैक्रिय तिर्यंचके ८, वैक्रिय मनुष्य के ८, आहका १, देवता के ८ और नर्क का १, यों सब ३३ भांगे होते हैं. २६ प्रकृति के उदय में एकेन्द्रिय के १३, विकेन्द्रिय के ९, पचेन्द्रिय तिर्यंच के २८९, और सहज मनष्य के २८९, यों सब ६००० भांगे होते हैं, २७ प्रकृति के उदय में—एकेन्द्रिय के ६, वैक्रिय तिर्यंच के ८, वैक्रिय मनुष्य के ८, आहारक का १, केवली का १, देवता के ८, और नर्क का १, यों ३३ होते हैं. २८ के उदय में-विकेन्द्रिय के ६, पचेन्द्रिय तिर्यंच के ५७६, मनुष्य के ५७६, वैक्रिय तिर्यंच के १६ वैक्रिय मनुष्य के ९, आहारक के २, केवली का १ देवता के १६ और नर्क का १, यों सब १२०२ भांगे होते हैं. २९ प्रकृति के उदय में विकेन्द्रिय के १२ पचेन्द्रिय तिर्यंच के ११५२, मनुष्य के ५७६, वैक्रिय तिर्यंच १६ वैक्रय मनुष्य के ९ आहारक के २, केवलीका २ देवता के १६ और नर्क का १ यों सब १७८५ भांगे होते हैं; ३० प्रकृति के उदय में विकेन्द्रिय के १८ तिर्यंच पचेन्द्रिय के १७२८, मनुष्य के ११५२, वैक्रिय तिर्यंच के ८. वैक्रिय मनुष्य के १, आहारक का १, केवली का १, देवता के ८, यों सब २९१७ भांगे होते हैं. और ३१ का प्रकृति के उदय में—विकेन्द्रिय के १२, पचेन्द्रिय तिर्यंच के ११५२, और केवलीका

२७ का, २८ का, २९ का, ३० का, और ३१ का यह ९ उदय स्थान होतेहैं इसमें के हरेक उदय स्थानमें वर्तते एकेन्द्रिय प्रायोग्य-२३प्रकृतिका बन्ध स्थान करता है, वहां २१ उदय तो विग्रह गति में वर्तते-एकेंद्रिय विकेन्द्रिय, तिर्यंच पचेन्द्रिय और मनुष्यके होता है. वहां सत्तास्थान-९२ का,८८ का, ८६ का, ८० का, और ७८ का यह ५ स्थान सब जीवों के पाते हैं. परन्तु मनुष्य के ७८की सत्ता नहीं होती है, क्यों कि-७८ की सत्ता मनुष्य द्विक उवेलने सेही होती हैं, इसलिये मनुष्य के चार सत्ता स्थान नहीं होते हैं. । और २४ का उदय एकेन्द्रिय पर्याप्ता अपर्याप्ता दोनों के होता है. वहां भी ऊपर कहे सो ५ सत्ता स्थान होते हैं. परन्तु इतना विशेष-जो वायु काय वैक्रिय करे तो-२४ के उदय में वर्तते को ८० का, और ७८ का यह दोनों सत्ता स्थान पाते हैं. क्योंकि उनके वैक्रिय षटक और मनुष्य द्विक निश्चय से पाताहै, + इसलिये ८० का और ७८ का स्थानक छोड कर-९२ का, ८८ का और ८६ का यह ३ सत्ता स्थान पाते हैं. । और २५ के उदय में वर्तते एकेन्द्रिय वैक्रिय तिर्यंच और वैक्रिय मनुष्य के होता है, तहां तेउ और अवैक्रिय वायु के जो पांच सत्ता स्थानक हैं वोही ५ सत्ता स्थानक कहना. क्योंकि-७८ की सत्ता उसीकेही है, अन्य के नही × । और दुसरे पर्याप्ता के ७८ की सत्ता विना बाकी के ४ सत्ता स्थानक वैक्रिय तिर्यंच मनुष्य के बन्धते हैं. और २५ का उदय होता है. । और २६ का उदय पर्याप्ता एकेन्द्रिय तथा पर्याप्ता अपर्याप्ता वेन्द्रिय तिर्यंच पचेन्द्रिय और मनुष्य के होती है. वहां भी पहिले की तरह ही ५ सत्ता स्थानक, उसमें से ७८ का स्थानक तो तेउ तथा वैक्रिय वायु की अपेक्षा से लेना. और बाकी रहे ४ सत्ता स्थानक दुसरे जी

+ वैक्रिय तो साक्षात अनुभव रहा है इसलिये उसे उवेलता नहीं है, और उसके उवेल विन नरक द्विक तथा देव द्विक नहीं होता है, समकाल ही वैक्रिय षटक उवेलता है, और वैक्रिय षटक उवेले बाद मनुष्य द्विक उवेलता है. परन्तु उसके पहिले नहीं उवेलता है

×क्योंकि-दूसरे सब पर्याप्ता जीवों मनुष्यद्विक का बन्ध करते हैं, और एकेन्द्रिय के विकेन्द्रिय, तिर्यंच पचेन्द्रिय जो तेउ वायु से आकर अवतरते हैं वो जहांतक मनुष्य द्विक का बन्ध नहीं करे वहांतक अपर्याप्ता अवस्था में उनके ७८ की सत्ता होती है. इसलिये ५ सत्ता स्थान पाते हैं.

तव पावे. परन्तु मिथ्यात्वी के नहीं पावे. क्योंकि-मिथ्यात्व दृष्टि देवगति प्रायोग्य २८ का बन्ध नहीं करता है, मिथ्यात्वी तो सब पर्याप्तिमें पर्याप्ताही देव गति प्रायोग्य २८ बान्धता है × इस देव गति प्रायोग्य २८ के बन्धक २१ के उदय में वर्तते को— ९२ का और ८८ का यह दो सत्ता स्थान होते हैं. परन्तु यहां जिन नामकी सत्ता नहीं है. = और २५ का उदय आहारक साधु वैक्रय तिर्यंच और सम्यक दृष्टि मनुष्य इन तीनों के होता है. तथा मिथ्यात्व दृष्टि के भी होवे वहां सामान्यसे यह दो सत्ता स्थान होते हैं. परन्तु इतना विशेष जो आहारक के धारक हैं. उनके आहारक चतुष्क जरूर होता है, इस लिए उनके-एक-९२ काही सत्ता स्थानक होते है. बाकी के दुसरे जीवों के दो सत्ता स्थान होता है. यह २८के बन्ध के २५के उदय के दो सत्ता स्थान जानना.। और२६के उदय क्षायिक और क्षयोपशमसम्यक दृष्टि शरीरस्त पचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य के २८ का बन्ध देव गति प्रायोग्य होता है, वहां ९२ और ८८ का यह दो सत्ता स्थान होते हैं. । और २७ के उदय आहारक साधु तथा वैक्रिय तिर्यंच मनुष्य सम्यक दृष्टि तथा मिथ्या दृष्टि के वोही दोनों सत्ता के स्थानक जाणना. तैसे ही—२८ के २९ के उदय में भी अनुक्रम से शरीर पर्याप्ति पर्याप्तके-२८ का उदय होता है । और श्वासोश्वास पर्याप्ति कर पर्याप्तके-२९ का उदय होवे सो क्षायिक तथा वेदक सम्यक दृष्टि के, आहारक साधु, वैक्रिय तिर्यंच मनुष्य के देवगति प्रायोग्य २८ का बन्ध होवे तहां भी ९२ और ८८ के दोनों सत्ता स्थान पावे. । और ३० का उदय पचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य सम्यक दृष्टि के, मिथ्यात्व दृष्टि के, आहारक करते साधुके तथा वैक्रिय करते साधु के होता है, वहां सामान्यसे

× यह कहेगा कि-जो ऐसा कहोतो वैक्रिय करती वक्त तिर्यंच और मनुष्य—२५ के, २७ के, २८ के, और २९ के उदय में वर्तते मिथ्यात्वी देवगति प्रायोग्य २८ का बन्ध करता है सो कैसे संभवे! समाधान-उसही भव की आदि में पूरी पर्याप्ति करता है, फिर वैक्रिय शरीर करते औदारिक निवृति पर्याप्ता पणे उदय से निवृते तोभी उसे पर्याप्ता ही कहना. इसलिये पर्याप्ता अवस्था में तो मिथ्यात्वीके भी बन्ध विरोध नहीं है.

= जो कदापि जिननाम की सत्ता होवेतो उसका बन्ध भी होना चाहिये तो फिर २९का बन्ध होवे. इसलिये-यहां जिन नाम नहीं है.

१ उदय के ५२ भांगे होते हैं. और ३१ के बन्ध में १ उदय स्थान और १ सत्ता स्थान होता है. क्योंकि–देवगति प्रायोग्य जिन नाम तथा आहार द्विक सहित ३१ का बन्ध स्थान अप्रमत्त और अपूर्व करण गुणस्थान में होता है. वहां वैक्रिय और आहारक शरीर का कारण नहीं है. इसलिये इन बिना–अन्य–२५ का, २६ का इत्यादिअ रूप प्रकृति का उदय नहीं होता है. और औदारिक शरीर की तो सब पर्याप्ता कर पर्याप्त है. इसलिये इनके ३० काही उदय होता है. वहां एकही ९३का सत्ता स्थान पाता है. दूसरे सत्ता स्थान नहीं है. क्योंकि–३१ का बन्धतो आहारक चतुष्क जिन नाम सहित होता है. । और एक यशः कीर्तिके बन्ध में भी एक ३० प्रकृति काही उदय स्थान होता है. और यहां ९३ का, ९२ का, ८९ का, ८८ का, ८० का ७९ का ७६ का, और ७५ का यह ८ सत्ता स्थान होते हैं. इसमें से–९३ का, ९२ का ८९ का, और ८८ का, ये ४ तो उपशम श्रेणिकी अपेक्षा से होते हैं. और क्षपक श्रेणि में भी जहां तक–निवृत्ति बादर के प्रथम भाग में जाकर–१ स्थावर २ सूक्ष्म, ४ तिर्यच द्विक, ६ नरक द्विक, १० जाति चतुष्क, ११ साधारण १२ आतप, और १३ उद्योत, इन १३ प्रकृतियों का क्षयकरे वहां तक अनेक जीवों की अपेक्षा से–८० का, ७९ का, ७६ का, और ७५ का, यह ४ स्थान क्षपक श्रेणि में होते हैं. । इसके उपर बन्धन के अभाव से–२० का, २१ का, २६ का, का, २७ का, २८ का, २९ का, ३० का, ३१ का, ९ का, और ८ का, यह १० उदय के स्थान और ९३ का, ९२ का, ८९ का, ८८ का, ८० का, ७९ का, ७६ का, ७५ का, ९ का, और ८ का, यह १० स्थान होते हैं. । इसमें केवली के–आठ समय का, समुद्घात करते बीच के–तीसरे चौथे और पांचवे समय पर्यन्त कार्मण योग इसमें १ पंचेन्द्रिय जाति, ४ त्रस त्रिक, ५ सुभग, ६ आदेय, ७ यशः कीर्ति, ८ मनुष्य गति, और १२ प्रकृति ध्रुवोदय की यों २० प्रकृति का उदय होता है. वहां–सत्ता स्थान ७९ का, तथा आहारक चतुष्क बिना ७५ होता है. । और तीर्थंकर के समुद्घात करते उपरका लिखके तीनों समय में तीर्थंकर नाम सहित २१ का उदय स्थान होता है. और यो जिन नाम युक्त होने से–८० का, और ७६ का यह दो सत्ता स्थान पाते हैं । और केवली समुद्घात करते औदारिक मिश्र योग इसमें–१ औदारिक द्विक, ३ वज्र ऋषभ नाराच संघयण, ४ छ संस्थान में का १ संस्थान, ५ उपघात, और ६ प्रत्येक यह ६ प्रकृति पूर्वोक्त २० में मिलाने से २६ का उदय स्थान होता है. सो–दूसरे छ

य सत्ता भाङ्गे है. तहां ७८ की सत्ता, परन्तु दूसरे भाङ्गे नही होते हैं. और दुसरे-२७ का, २८ का, २९ का, ३० का, और ३१ का. इन ५ उदय में-७८ विना बाकी के चार २ सत्ता स्थान होते है. यों सब २३ के बन्ध में ४० सत्ता स्थान होते है परन्तु इतना विशेष-जो पर्याप्ता एकेन्द्रिय प्रायोग्य २९ के बन्ध में अपने उदय में देवता के भी भाङ्गे पाते हैं. इसलिये ७७६८ भाङ्गे इन दोनों बन्ध स्थान में पाते हैं.फक्त नर्क के ५ उदय के भाङ्गे नही पाते हैं. और देवता जो एकेन्द्रिय प्रायोग्य २५ प्रकृति का, बन्ध करे, क्योंकि-सूक्ष्म साधारण और अपर्याप्ता में देवता उपजते नही हैं. । और २८ के बन्ध में भी मिथ्यात्वी के ३० का और ३१ का यह दो उदय स्थान होते हैं. उनमें ३० का तो पचेन्द्रिय तिर्यच तथा मनुष्य के होते हैं. और ३१ का बन्ध पचेन्द्रिय तिर्यच के होवे. ३० के उदय पचेन्द्रिय तिर्यच अथवा मनुष्य देवगति प्रायोग्य तथा नरक गति प्रायोग्य २८ का बन्ध होता है. बाकी विकेलेन्द्रिय के ३० भाङ्गे उदय के नही होते है. इन दोनों उदय के मिलकर ४०४८ भाङ्गे २८ के बन्ध में होते हैं. उनमें-३० के उदय में-९२ का. ८९ का. ८८ का. और ८६ का यह ४ सत्ता होती है. और ३१ के उदय ८९ की सत्ता नही होती है. तीर्थंकर नाम सहित ८९ की सत्ता होती है. सो तिर्यच में नहीं पाती है. इसलिये ३ ही सत्ता होती है. और ३० उदय में भी जो वेदक सम्यक्त्व का वमन कर जिन नाम सहित मिथ्यात्व में गया उसके नर्क प्रायोग्य २८ का बन्ध करते भी ८९ की सत्ता होतीहै यों २८ के बन्ध में ७ सत्ता स्थान होते हैं. । देवगति प्रायोग्य विना दूसरी मनुष्य तिर्यच गति प्रायोग्य २९ के बन्ध में २० का. ९ का, और ८ का. इन ३ उदयविना सब उदय स्थान पाते हैं. और ९२ का. ८९ का. ८८ का. ८० का. और ७८ का. यह ६ सत्ता स्थान होते है. यहां २१ के उदय ६ सत्ता स्थान होते है. सो कहते है. जिन नाम का बन्ध कर फिर सम्यक्त्व का वमन कर जो नर्क में जावे उसके बीचमें २१ का उदय होता है. तहां ८९ की सत्ता होती है. और ९२ का तथा ८८ का. यह दोनों सत्ता स्थान चारों गति के जीवों के विग्रह गति में २१ के उदय में होते हैं. और ८६ तथा ८० यह दोनों सत्ता देवता नर्क विना दूसरे जीवों के होती हैं. और ७८ की सत्ता देव नर्क और मनुष्य विना दूसरे जीवों के होती है. यों २१ के उदय में ५ सत्ता स्थान पाते हैं. । और २४ के उदय में एक ८९ विना बाकीके ५ सत्ता स्थान एकेन्द्रिय के होते हैं. दूसरे जीवों के यह उदय नही हैं. और २५ के

तो मिथ्यात्व प्रत्यपि है इसलिये सस्वादन में नहीं है. तिर्यंच पचेंद्रिय प्रायोग्य और मनुष्य प्रायोग्य २९ प्रकृति बंध के भाङ्गे ६४०० का बंध–एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय, तिर्यंच पचेंद्रिय मनुष्य देवता नारकीकों इनो के सास्वदन गुणस्थान मे होता है. यहां–हुंडक संस्थान और छेवट्टा संघयण का बंध नहीं होनेसे पांच संघयण और पांच संस्थान तथा सात युगलों के विकल्पों कर ३२०० भाङ्गे प्रत्येक मनुष्य तिर्यंचच गति प्रायोग्य २९ के बंध में होते हैं. दोनोंके ६४०० भाङ्गे होते हैं. और पहिला कहा जो एकेंद्रियाग्द्रिक के सास्वादन में उद्योत सहित ३० का बंध तिर्यंच पचेंद्रिय प्रायोग्यही करते हैं वहां भी ३२०० भाङ्गे होते है. इन का विस्तार सहित वरणन पहिले ही करदिया है, सो जानना. यों सब बंध के भाङ्गे ९६०८ होते हैं. ॥ सास्वादन गुणस्थान में २१ का, २४ का, २५ का, २६ का, २९ का, ३० का, और ३१ का, यह ७ उदय स्थान होते हैं. तहां नर्क विना तीनों गति के जीवोंकी अपेक्षासे-२१का उदय दो गति की के बीच में रस्ते चलते जीवोंके होता है. वहां उदय के भाङ्गे ३२ होते हैं, यद्यपि-२१ के उदय में सब ४२ भाङ्गे कहे थे, परंतु उस में १ अपर्याप्ता के, एक सूक्ष्म पर्याप्ता का, एक नरक का, और १ केवली का यों १० भाङ्गे इस गुणस्थान में नहीं पाते हैं. । और २४ का उदय तो एकेंद्रिय के उत्पन्न होते ही होता है. यहां भी बादर पर्याप्ता अपर्याप्ता के यशः अपयशः के विकल्प से दो भाङ्गे सास्वादन गुणस्थान में पाते हैं. बाकी के सूक्ष्म साधारण के भाङ्गे नहीं पाते हैं. और वैक्रिय वाला भाङ्गा तो वायु काय केही होता है. सो भी सास्वादन में नहीं पाता है. । और २५ का उदय तो देवगति में उत्पन्न होतही होता है. तथा किसी के नहीं भी होता है. वहां देवता के ८ भाङ्गेः—सुभग दुभग, आदेय अनादेय, यशः अयशः से उपजते हैं. । और २६ का उदय विकेन्द्रिय तिर्यंच पचेन्द्रिय मनुष्य में उत्पन्न होतेही पाता है. वहां अपर्याप्ता का एकेक भाङ्गा छोडकर विकेन्द्रिय पर्याप्ता के ६ पचेन्द्रिय तिर्यंच के २८७, मनुष्यके भी २८८, यों ५८२ भाङ्गे २६ के उदय में पातेहै । और २७–२८ का, उदय तो सास्वादन में होता ही नहीं है. क्योंकि–यह दोनों स्थान उत्पन्न हुवे. से–अन्तर मुहूर्त वाद पाते हैं. और सास्वदन तो ६ आवलिका माठेरी मावही होता है. इसलिये यह भी पावे. और २९ का उदय देवता नारकी के पर्याप्ता अवस्था में प्रथम प्राप्त सम्यक्त्व से पडते हुवे होता है, वहां देवता के ८, और नर्क का १., यों ९ भांगे पाते हैं. । और ३० का उदय तिर्यंच पचेन्द्रिय मनुष्य के

यों सब सर्व मिश्र गुणस्थान में उदय के ४०४१ भाङ्गे पाते हैं। यहां सत्ता स्थान ९२ का और ८८ का यह दोही होते हैं॥ अब सम्वेध कहते हैं—२८ के बन्ध में मिश्र दृष्टि के ३० का और ३१ का यह दो उदय स्थान है, उस में अलग अलग ९२ का और ८८ का यह दो सत्ता स्थान होते हैं और २९ के बन्ध के एक २९ काही उदय स्थान होता है. वहां भी वोही दो सत्ता स्थान होता हैं.

४ अविरति सम्यक दृष्टि गुणस्थान में—२८ का, २९ का, और ३० का यह ३ बन्ध स्थान होते हैं. वहां तिर्यंच मनुष्य के चौथे गुणस्थान में देव प्रायोग्य का बन्ध करते २८ का बन्ध होता है. वहां भाङ्गे ८ उपजते हैं. और मनुष्य के देवगति प्रायोग्य जिन नाम सहित बन्ध करे तो. २९ का बंध होता है वहां भी ८ भांगे. और देवता तथा नर्क के चौथे गुणस्थान में मनुष्य गति प्रायोग्य २९ का बंध करते भाङ्गे ८ होते हैं. देवता नारकी के सम्यक्त्व प्रत्यय ३० जिन नाम सहित मनुष्य प्रायोग्य ३० का बंध करते भी भांगे ८ होते हैं. यों बंध के सब ३२ भांगे होते हैं. ÷॥ चौथे अविरति सम्यक्त्व दृष्टि गुणस्थान में—२१ का, २५ का, २६ का, २७ का, २८ का, २९ का, ३० का, और ३१ का, यह ८ उदय स्थान पाते हैं. इस में २१ के उदय में देवता के भांग ८, मनुष्य के ८, तिर्यंच पंचेंद्रिय के ८, × नर्क का १, यों २५ भांगे २१ के उदय के होते हैं. (जीव है क्षायिक सम्यक दृष्टि पूर्व आयु बन्ध वाला, चारों में उपजता है और पूरा पर्याप्ता होता है. इस में अपेक्षा से - २१ उदय ग्रहण करना. २५ का तथा २७ का उदय देवता के नर्क के और वैक्रिय-तिर्यंच मनुष्य के होता है. इस में नर्क के जीवों तो क्षायिक तथा वेदक सम्यक दृष्टि जानना. और देवतो तीनों सम्यक्त्वी होते हैं। और २६ का उदय पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य वेदक तथा क्षायिक सम्यक दृष्टि के होता है. = । और २८ तथा २९ का

÷ अविरति सम्यक दृष्टि [illegible]

× [illegible]

= [illegible]

होते हैं. वहां मनुष्य तिर्यंच देश विरति देवगति प्रायोग्य २८ का बन्ध करे उनके भाङ्गे, और येही जिन नाम सहित २९ का बन्ध मनुष्य देश विरति करे (परन्तु र्यंच के नही होवे) जिनके ८ भाङ्गे. सब १६ भाङ्गे, । देश विरति गुणस्थान में मान्य—२५ का, २७ का, २८ का, २९ का, ३० का, और ३१ का, यह ६ उदय स्थान होते हैं. वहां २८ के बन्ध में पाहिले के उदय तो वैक्रिय तिर्यंच मनुष्य के रे इनका एकेक भाङ्गा करने से चार भाङ्गे होवे. और २८ का. २९ का. यह दोनों उदय सामान्य तिर्यंच मनुष्य के होवे, तथा वैक्रिय के भी होवे. वहां उदय के भङ्ग ६ होते हैं. और ३० का उदय तिर्यंच मनुष्य के होवे, वहां ६ संघयण ६, संस्थान विकल्प से ३६ भाङ्गे होवे. इने सुस्वर दुस्वर से दुगुने करने से ७२ होवे. इने शुभा शुभ गति से दुगुने करने से १४४ होवे. इनमें अलग २ एकेकका. उदय होताहै. यहां दौर्भाग्य अनादेय और अयशः कीर्तिका उदय यहां गुण प्रत्यय करके नही होता है, और वैक्रिय तिर्यंच के उदय में भाङ्गा—१. यों सब मिल २८९ भाङ्गे होते हैं. । और ३१ का. उदय तिर्यंच के होता है. वहां भाङ्गे १४४ होते हैं. और सवमिल ४४३ भांगे २८ के बन्ध में पाते हैं. ॥ और २९ के बन्ध में मनुष्य के—२५ का २७ का. २८ का. २९ का. और ३० का, यह ५ उदय स्थान होते हैं. इसमें पहिले के चार उदय स्थान तो वैक्रिय के हैं.. उनका भांगा एकेक. और ३० के उदय में भांगे १४४. यों मिलकर १४८ भांगे होते हैं. और सब उदय स्थानके ५९१ भांगे होते. ॥ देश विरति गुणस्थान में ९३ का, ९२ का, ८९ का, और ८८ का, यह ४सत्ता स्थान होते हैं. इसमेंसे जो अप्रमत अपूर्व करण वाले-तीर्थंकर नाम तथा आहारक का बन्धन कर पडते हैं. उन परिणामों से देश विरति होवे उनके ९३ की सत्ता होती है. और बाकी की सब चौथे अविरति गुणस्थान की तरह कहना. ॥ अब सम्बेध कहते हैः—देश विरति मनुष्य के २८ के बन्ध में—२५ का, २७ का २८का २९ का. और ३० का. यह ५ उदय स्थान होते हैं. तहां अलग अलग ९२ का. और ८८ का. यह दो दो सत्ता स्थान होवे. तैसे तिर्यंच के भी—३१ सहित ६ उदय में दो दो सत्तास्थान होवे, और २९ का बन्ध देश विरति मनुष्य केही होता है. वहां २८ और ३० वाले उदय स्थान पहिले कहे सोही पांचों उदय स्थान कहना. और वहां ९३ का. तथा ८९ का. यह दोनों सत्ता स्थान होते हैं. देश विरति में सब मिल १२ सत्ता स्थान होते हैं.

दोनों उदय में अलग अलग ९८ की सत्ता होती है. और २९के बन्ध के दोनों उदय में अलग अलग ९२ की सता होती है. और ३१ के बन्ध में दोनों उदय में अलग अलग ९३ की सत्ता होती है. = यों सब ८ सत्ता पाती है.

८ अपूर्व करण गुणस्थान में–२८ का, २९ का, ३० का, ३१ का, और १ का. यह पांच बन्ध स्थान होते हैं. इसमें के चारों तो अप्रमत की तरह ही कहना. और १ यशः कीर्ति का बन्ध सो सातवे भाग में देवगति प्रायोग्य बन्ध कर विच्छेद करते हैं, वहां अलग २ एकेक भाङ्गा होता है. सब मिल बन्ध के ५ भाङ्गे होते हैं. इन प्रत्येक बन्ध स्थानों में ३१ काही उदय स्थान होता है. यहां ६ संघयण से ६ संस्थान के विकल्प कर ६ भांगे होते हैं. इने शुभा शुभ खगति से गिनने से–१२ भांगे होते हैं. इने सुस्वर दुस्वर से गिनने से २४ भांगे होते हैं. + सब पांचों उदय में ३६० भांगे होते है. इनमें पाहिले के चारों बन्ध स्थान में ३० के उदय में अनुक्रम से ८८ का, ८९ का, ९२ का, और ९३ का, यह एकेक सत्ता स्थान होता है. और १ के बन्ध में ३० के उदय में यह चारों सत्ता स्थान पाते है. सब ८ स्थान. ९-१० अनिवृत्ति बादर और सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान में–१ यशः कीर्ती का बन्ध और ३० का, उदय इसमें क्षपक के भाङ्गे २४ और औपशमिक के तीनों संघयणों के विकल्प से ७२ भांगे उदय के होते हैं. और ९३ का, ९२ का, ८९ का, ८८ का, यह चार सत्ता स्थान पाते हैं.

११ उपशान्त मोह गुणस्थान में–बन्ध के अभाव से ३० का १ ही उदय स्थान होता हैं. यहां भांगे ७२ होते हैं. और ९३ का ९२ की, ८९ का. और ८८ का, यह चार सत्ता स्थान पाते हैं.

१२ क्षीणमोह गुणस्थान में–एक ३० प्रकृति का उदय स्थान होता है, यहां भी तीर्थंकर नाम सहित के स्थानादिक सब प्रशस्त होते हैं. इसलिये ८० का, सत्ता

+ यहां तीर्थंकर नाम तथा आहारक निश्चय से बान्धते हैं इनके एकेक की ही सत्ता होती है.

+ कितनेक आचार्य पाहिलेके ८ संघयण में उपशम श्रेणी का अभाव मानते हैं इनके मतसे उदय के ७२ भांगे होते हैं.

सिद्धावस्था को प्राप्त नहीं करसके-संसारीही बना रहे सो असिद्धत्व.(३) अविरत-अ प्रत्याख्यानावरणीय कषायोदय कर जी व्रत प्रत्याख्यान नहीं कर सके-सो (अविरति. (४-९) छेलेश्या जिन अध्यवसायों कर आत्मा लेपाय सो-कृष्ण-नील-कापुत-तेजो-पद्म-और शुक्ल-यह छे प्रकार की लेश्या हैं. × (१०-१३). चार कषाय-मोह कर्मोदय कर जिस प्रणतिसे संसारका कस-रस आवे सो-क्रोध-मान-माया और लोभ यह चार कषाय. (१४-१७) चारगति-जो नाम कर्मोदय कर जीवों गमनागमन करे ऐसी-नर्क-तिर्यंच-मनुष्य और देव चारों गति. (१८-२०) जो मोह कर्मोदय से विषयाभिलाषा रूप विकार को वेदे सो-स्त्री पुरुष नपूंसक-यह तीन वेद हैं. और २१ मिथ्यात्व मोह भी मोह कर्म के उदय से होता है.

२ ओप शमिक भाव के दो भेदः—(१) ओपशम सम्यक्त्व सो अनंतान बंधि चौक और तीन दर्शन मोहनीय इन सातों प्रकृति यों-रसोदय और प्रदेशोदय को प्राप्त न होवे सो उपशम भाव. और उस से जो प्रगट हुइ तत्वों की रुचि सो उपशम सम्यक्त्व. और. (२) जो बाकी रही २१ चारित्र मोहनीय की प्रकृतियों उपशम होनेसे जो स्थिरता रूप चारित्र होवे सो ओपशमिक चारित्र

९ क्षयोपशमिक भाव के १८ भेदः—४ चार ज्ञान (केवल विना) ७ तीन अज्ञान. १० तीन दर्शन [केवल दर्शन विना) १५ पांच क्षयोपशम लब्धि छद्मस्तकी. १६ क्षयोपशम सम्यक्त्व. १७ क्षयोपशम चारित्र. और १८ संयमासंयम. (इन का खुलासा इस में मति ज्ञानावरणीय, श्रुति ज्ञानावरणीय, चक्षु दर्शनावरणीय, अचक्षु दर्शनावर

ही समझ ते-कु आचार और कुशील समझा जाता है. तैसे ही यहां अज्ञानका अर्थ कु ज्ञान जानना सो अनादि और स्वभाविक होनेसे-औदयिक भाव में ग्रहण किया है.

× (१) जो आचार्य अष्ट कर्मोदय से लेश्याको मान ते हैं. उनके मतसे 'लेश्या' औदयिक भाव में हैं.

(२) जो कषायोदय से लेश्या माने उनके मत से मोहका औदयिक भाव में लेश्या और जो.

(३) योगों की प्रवृत्ते से लेश्या माने उन के मत से नाम कर्मी औदयिक भाव. यों तीन मत हैं.

५ परिणा मिक भाव के ३ भेद:—(१) मुक्ति जाने जोग जीव का स्वभाव सो भव्य पना. (२) मुक्ति कदापि नहोवे ऐसा जीव का स्वभाव सो अभव्य पना. और (३) द्रव्य तथा भाव प्राणों का स्वभाव सेही धारण करने वाला सो जीव पना. यह तीनों स्वभाव अनादि अनन्त उत्पन्न और नाश रहित सो परिणामिक भाव जानना. यों—पांचों भावों के—नव मिल ५३ भेद होते हैं. =

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय, इन तीनों कर्मों में एक ओपशमिक भाव विना चारों भाव पाते हैं. वेदनीय, आयुष्य नाम और गोत्र इन कर्मों में—१ ओदयिक, २क्षायिक और ३परिणामिक यह तीन भाव पाते हैं. और मोहनीय कर्ममें फक्त एक ओपशमिक भाव पाता है.

पांचों भावों के विशेष भेद सूत्र से.

१ ओदयिक भाव—जैसे धतुरा का भक्षण करने से श्वेत रङ्ग की वस्तु पीले रङ्ग मय देखाती है. तैसेही जीवतो शुद्ध सिद्ध समान है, परन्तु अष्ट कर्म रूप धतुरे के नशे के उदय कर जीव कर्म स्वभाव में परिण में सो ओदयिक भव. और जैसे सुवर्ण नामक धातुतो एकही है. परन्तु सुवर्ण कार सब्जेके संयोग से मुकट कुंडल हारादि अनेक रूप में परिणमावे तैसे ओदयिक भाव के स्वभाव से आत्मा अनेक रूप में परिणमें जैसे-अहंस्त्री. अहंपुरुष. अहंकृष्ण, अहं गुरु. अहंस्थुल. अहंह्रस्व. इत्यादि. इस उदय भावके दो भेद:-१जिनसे आठो कर्मोंका उदय होवेतो उदय और२उदय निष्पन्न इसके दो भेद:—१. जीव उदय निष्पन्न और२ अजीव उदय निष्पन्न. इसमें जीव उद

=धर्मास्ति काय,अधर्मास्ति काय.आकास्तिकाय काल द्रव्य.और पुद्गलास्ति काय.यह पांचों द्रव्य अनादि परिणामी भाव में परिणमते है. अपने स्वभाव में ही रम रहे है. कदापि पर स्वभाव में रमन नहीं करते से-अनादि परिणामी भाव में गिने जाते है. इस में पुद्गल द्वणकादि स्कन्ध हे सो-सादिक भाव पने परिणमता है. ऐसेही अनंत प्रदेशी स्कन्ध जानना. सो ओदयिक भाव में भी गिने जाते हैं. क्योंकि—वर्ण पुद्गल के स्कन्ध जीव के सम्बन्ध से पुद्गल विपाक की कर्म प्रकृति के औदारिक भी कर्म के लिये वर्णादिक होते हैं. इसलिये अनन्त प्रदेशी स्कन्ध कर्म वर्णादि पुद्गल सो सब ओदयिक भाव में होते हैं. यह अजीव अजीव भाव के भेद कहे.

७ भोगान्तराय के क्षयसे अनन्त भोग लब्धि प्रगटी, ८ उप भोगान्तराय के क्षयसे अनन्त उपभोगा लब्धि प्रगटी; और ९ वीर्यान्तराय के क्षयसे अनन्त बलवीर्य लब्धि प्रगटी. ×

४ क्षयोपशमिक भाव—जैसे बद्दलोंकी गहरी घटासे अच्छादित हुवा सूर्य का तेज, वायु के प्रयोग से ज्यों ज्यों बद्दल पतले पडते जाते हैं. त्यों त्यों तेज—प्रकाश अधिक बढता जाता है ? तैसेही कर्म रुप बद्दलों से अच्छादित हुइ आत्मा ज्ञानादि गुणों रुप तेज के मन्दता में स्थित. शुभ परिणाम रुप वायु के प्रयोग से—उदयावली रन के क्षयसे. अनुदिष्ट रसके अनुदय रुप उपशम से और कितनेक स्पर्द्धक के उदय से उदयानुविधि क्षयोपशम होता है. सो फक्त चारों घातिये कर्मों काही होता है. अघातिये का नहीं. इसलिये जो घातिये कर्म उदयमें आयेथे उनको तो क्षयकिये. बाकी के कर्म सत्ता में रहे वोभी पतले पडगये. ऐसी मिश्रता होनेसे इसे मिश्र भावतथा क्षयोपशम भाव कहते हैं. इसके दो भेद:—१. ऊपरोक्त विधिसे चारों घन घातिक कर्मों क्षयोपशम करे सो-क्षयोपशम और क्षयोपशम निष्पन्न कर्मों का क्षयोपशम होने से ३२ गुण प्रगटे:—प्रथम ज्ञानावर्णीय कर्म के क्षयोपशम होने से८ गुणों की प्राप्ति होः—१. मतिज्ञान. २ श्रुतिज्ञान. ३ अवधि ज्ञान. ४ मनःपर्यव ज्ञान. ५ मतिअज्ञान, ६ श्रुतिअज्ञान, ७ विभङ्ग ज्ञान, और ८ आचाराङ्गादि सूत्रका जान पना. । दूसरा दर्शनावर्णीय कर्म का क्षयोपशम होने से ८ गुण प्रगटे—९ चक्षुदर्शन. १० अचक्षुदर्शन ११ अवधि दर्शन. १२ श्रोतेन्द्रिय का जानपना. १३ चक्षुइन्द्रियका जान पना. १४ घ्रणेन्द्रिय का जान पना. १५ रसेन्द्रिय का जान पना. और १६ स्पर्शेन्द्रिय का जान पना. । तीसरे मोहनीय कर्म के क्षयोपशम से ८ गुन प्रगट हुवेः—१७ सम्यग दृष्टि पना. १८ मिथ्यात्व दृष्टि पना. १९ समोमिथ्यात्व दृष्टि पना. २० सामायिक चारित्री पना. २१ छेदो स्थापनीय चारित्र पना. २२ परिहार विशुद्ध चारित्र पना. २३ सू-

× प्रकारा—औदयिक निपज के ३७ भेद:—४ ज्ञानावर्णीय की, ९ दर्शनावर्णीयकी, २ वेदनीय की. ८ (क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, [illegible] और [illegible] यह ८) मोहनीय की. ४ आयुष्य की. २ नामकी, २ गोत्रकी, और ५ अन्तरायकी, यों आठों कर्मों की ३७ प्रकृतियें का [illegible] होने से औदयिक निपज भाव.

५ परिणामिक भाव—जो जीव अजीव के परिणाम परिणमें सो परिणामिक भाव, इसके दो भेदः—१ सादि परिमाण सो पलटे उसे कहते हैं. जिसके अनेक भेदः—

बडी गनधर साधु साध्वी श्रावक श्राविका सम्यक दृष्टि के मुख से निग्रन्थ प्रवचनों का श्रवण कर तत्वज्ञ बने, सम्यक्त्व को प्राप्त करे, महोदयकी प्रबल्ता से पीछा पडे, वो उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्तन बाद अवश्य सम्यक्त्व को प्राप्त करे, सो उपदेश लब्धि. ४ प्रयोग्य लब्धि सो—उपदेश लब्धिसे भी अधिक विशुद्ध ता होनेसे—संसार घटावे—१७प्रकार संयम पाले १२ प्रकार तप करे, २२ परिसह सम भावसेहै. तथा—श्रावक के—१२ व्रत, ११ प्रतिमा आदरे पाले, जिस से अनन्त कर्म वर्गणाकी निर्जरा होवे, परन्तु महोदय कर-निन्दव, एकान्त वादि जमालिवत होवें. कुछ संसार भ्रमण वाकी रहेसो प्रयोग्यता लब्धि और ५. करण लब्धि सा प्रयोग्य लब्धि से भी परिणामों की अधिक विशुद्धता होने से जीवकी भवस्थिति काल स्थिति परिपक्व होवे तब मिथ्यात्व ग्रन्थी का भेद कर, उसवक्त तीन करण होतेहैं सो कहते हैं. (१) अधः करण सो—आयुष्य विना सातों कर्मोंकी स्थिति एक कोडाकोड सागर में कुछ कम होवे तब अधः करण होता है. उस वक्त सम्यक्त्व और मिथ्यात्वोंकी तुल्यना हो अन्तर मुहूर्त पर्यन्त रहे. तब मिथ्यात्व मोहका क्षप करने प्रवर्तता सम्यक्त्व दर्शने योग्य बने, जैसे कृषी क्षेत्र को समारकर बीज डालने लायक बनावे, त्यों आत्म बोध बीज ग्रहण करने योग्य बने सो अधः करण. यह करण भव्य अभव्य दोनों के होना. बहुत से जीवों यहां तक आकर पीछे पडजाते हैं. और कितनेक जीवों आगे बडते हैं. तब—(२) अपुर्व करण को प्राप्त होते हैं. जैसी परिणामोंकी उज्वल्ता अपूर्व करण में होतीहै वैसी पाहिले कदापि नहीं हुइ इसलिये इसे अपूर्व करण कहते हैं. यहां अन्तर मुहुर्त काल रहे बाद—(३) अनिवृत्ति करण होता है—जिस से पीछा निवृतना नहीं होता है. अर्थात् यहां आये बाद सम्यक्त्व जल्दही स्पर्शता है. भेद विज्ञान की प्राप्ति होती है. आत्माका और पुद्गलों का भिन्न २ स्वरूपका अनुभव होता है. जिससे पुद्गल प्रणति से इन्द्रियों के विषय की लोलुप्ता घट जाती है—उदासवृत्ति बन जाती है. आत्मानुभव होता है. तब भव भ्रमण घटाने का सब करता है. यहां सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ति होती है. यह तीनों करण जिस के होते हैं सोही चतुर्थ गुणस्थान स्पर्श सक्ता है. सम्यक्त्वी कहा जाता है. ॥ यह पांचों लब्धियोंभी क्षयोपशम भाव में समाजाती है.

१ भाङ्गा इग्यारवे गुणस्थान में मिलता है.

७-श्रेणिद्वार का बहुतही विस्तार से खुलासा प्रथम खण्डके ९वे लक्षण द्वार में किया है सो सब यहां जानना

वेदे द्वार सो उदय में आये हुवे कर्म पुद्गलों का शुभा शुभ परिणाम को आत्म प्रदेशों कर चैतन्यता-उपयोग युक्त अनुभवे सो वेदना जानना. इसका विशेष खुलासा अन्य स्थान मेरे देखने में न आया इसलिये यहां संक्षेप मेंही लिखाहै. परन्तु रचना विशेषत्व उदय द्वार के जैसी देखाती है.

ऐसेही निर्जरा का भी खुलासा विशेष नकर सका परन्तु इसकी रचाना विशेत्व उदीरणा द्वार जैसी जानना.

दश करण द्वार का खुसासा

वन्धुक्कट करणं । सं संकम मोकद दीरणा सत्तं ॥
उदयुव समा मणिवत्ती । णिकाचणा होदिपडि पयडी ॥

गोम्मट सार कर्म कान्ड गो॰ १४७

१. कर्मों का सम्बन्ध होना अर्थात्-मिथ्यात्वा परिणामों से जो पुद्गल द्रव्य का ज्ञानवरनीयादि रुप होकर परिणमन करने से ज्ञानादि को आवरण करना सो बन्ध करण है. २ कर्मों का स्थिति तथा अनुभाग का बढाना सो – उत्कर्षण करणे है. ३ बन्ध रुप प्रकृत्ति का दुसरी प्रकृत्ति रुप परिणमना सो संक्रमण करण है. ४ स्थिति तथा अनुभाग का कम होना सो " अपकर्षण करण " है. ५ जिसके उदय का अभि समय नहुवा. ऐसे जो कर्म द्रव्य उसको अपकर्ष के बलसे उदया वली बलमें प्राप्त करणा सो-"उदीरणा करण" है. ६ जो पुद्गल कर्म रुप रहे सो सत्ता करण है.७ जो कर्म अपनी स्थिति को प्राप्त होवे. अर्थात—फलदेने के समय को प्राप्त होवे. सो " उदय करण " है. ८जो कर्म उदयावली में प्राप्त नहीं किया जाय, अर्थात्—उदीरणा अवस्थाको प्राप्त नहीं होसके, सो " उपशान्त करण ,, है. ९ जो कर्म उदयावली में भी प्राप्त नहोसके, और संक्रमण अवस्थाको भी प्राप्त नहो सके सो " निधात्ति करण ,, है. और १० जिस कर्म की उदीरणा, संक्रमण, उत्कर्षण, और अपकर्षण, यह चारोंही अवस्थाओं नहो सके सो-निकाचित करण है. अवस्था वाला कहतेहै ॥

णस्थान तक और तिर्यचायु के देश संयति गुणस्थान तक—ऊदीरणा, सत्ता, उदयय है तीनों करण प्रसिद्ध हैं. क्योंकि—पहिले कहे हैं. । उपशम सम्यक्त्व के सन्मुख हुवे जीवके—मिथ्यात्व गुणस्थान के अन्त में एक समयाधिक आंवली काल पर्यन्त मिथ्या त्व प्रकृति का उदीरणा करण होता है. उतनेही काल तक उसका उदय है. और सू क्ष्म लोभका सूक्ष्म सम्पराय में ही ऊदीरणा करण है. इसके आगे उदय नही. ॥ जो कर्म उदया वलीमें प्राप्त नही किया जावे अर्थात्—जिनकी निर्जरा नहोनेक जो ऊदी रणा रूप भी नहोसके और संक्रमण रूप भी नहो सके उत्कर्षण और अपकर्ष भी न- हो सके. चारों किरिया नहो सक्ति हो ऐसे क्रमसे उपशान्त करण निर्धात्त करण औ र निका चित करण यह तीनों करण अपूर्व करण गुणस्थान तक ही होते हैं. इसके ऊपरयथा सम्भव उदयावली आदि प्राप्त होनेकी सामर्थ वलेही कर्म प्रमाणू पायेजातेहै.

गुण श्रेणीका खूलासा

जैसे कोइ दुर्बल रोगिष्ट अतिवृद्ध अवस्था कर जीर्ण शरीर को प्राप्त हुवा पुरु ष खोंठ कुराड से गिरके बबूल के काष्टा को महा परिश्रम कर थोडा भाग छेद सक्ता है. और कोइ जन्म से अरोग्य सबल तरुण पुरुष तीक्षण फरसी फरसी कर सूके हुवे आकडे के थवा एरन्ड के काष्ट को थोडेही परिश्रम से और थोडेही काल में बहुत क ट डालता है. चकना चूर कर डालता है. तैसेही जो मिथ्यात्वी जीवों है. वो कर्म रू प रोग की सबलता का वीर्यहीन—जीर्णहुवे अपने अत्यन्त चीकने कर्म रूप काष्ट को बाल तपश्चरणादि कष्टसह कर बहुत काल तक महा कष्ट सहन करते अल्प-थोडे क र्मों की निर्जरा कर सक्ते है. और जो सम्यग दृष्टि जीवों है. ज्ञानादि आत्मीक नि- ज गुणों कर बलिष्ट हुवे. शुभ परिणामों की शुद्धि रूपधार स्थिरिभूत कर. निःसार हुवे कर्मों को अपूर्व करणादि तीक्षण [illegible] थोडे काल में और थोडेही प्रयास कर घन कर्मों का चकना चूर कर डालते है. वो कैसी तरह से [illegible] जीवों हिंसादिक कर्मों की निर्जरा कैसी तरह से करते हैं. जिसका स्वरूप अनुक्रम से ११ गुणश्रेणि में दर्शाया है सो यहां कहते हैं:—

१ प्रथम सम्यक्त्व के निमित्त ग्रन्थि भेद करते समय दूसरा अपूर्व करण करते —मिथ्यात्व [illegible] गुणश्रेणि और अपूर्व करण [illegible] का [illegible] करण—[illegible]

ख्यात गुण वृद्धि दलिक असंख्यात गुण निर्ज्जरा से वृद्धि पाते चारित्र मोहनीय ख पाते आठवे और दशवे गुणस्थान में दलिक रचना करे.

९ इनसे अत्यन्त विशुद्ध संख्यात गुनहीन अन्तर मुहूर्त में वेदने योग्य असंख्यात गुण वृद्धि दलिक क्षीणमोह गुणस्थान भत्यापि की करे.

१० इनसे संख्यात गुणहीन अन्तर मुहूर्त में वेदने लायक असंख्यात गुण वृद्धि दलिक सयोगी केवली के असंख्यात गुणी निर्ज्जरा हेतु दलिक रचन करे सो दशवी श्रेणि. और

११ इनसे भी इतर अयोगी केवली गुणस्थान कर्म खपाने निमित संयोगी गुणश्रेणि के अन्तर मुहूर्त से संख्यात गुणहीन अन्तर मुहूर्त वेदने योग्य असंख्यात गुण वृद्धि दलिक कर्मदल रचना करे सो ११ वी गुण श्रेणी. यों इग्यारेही गुण श्रेणिकी रचना कर बहुत काल में वेदने योग्य कर्मों को थोडेही काल में निर्ज्जरा कर डालते हैं. अर्थात्-गुणा कारसे कर्म दलको वेदकर निर्ज्जरा अर्थ कर्म दलको व्यवस्थानिस्थापन करना. उपर की स्थिति से उतार २ कर उदयावली स्थिति के समय २ स्थिति में असंख्यात गुण वृद्धि पाना संक्रमावते जोदल श्रेणीको गुणश्रेणि कहना. जो थोडे काल में बहुत कर्मदल निर्ज्जरता है. । इनमें प्रथम गुण श्रेणि का काल ... और अनिवृत्ति करण के काल से किञ्चित विशेष अन्तर मुहूर्त समान ... वेषमान अन्तर मुहूर्त से उपर की स्थिति के दलिये उतार २ कर ... उदय प्राप्ति समय असंख्यात गुण २ वृद्धिपाता अन्तिम समय तक ... न-ऊपर की स्थिति का उतारा हुवा जो दल इनमें पहिले समय ... समे दूसरे समय असंख्यात गुणा संक्रमावे. इनसे तीसरे समय ... मारे. यों समय २ असंख्यात गुण वृद्धि कर्ता अन्तर मुहूर्त ... ए संक्रमाकर-भोगवकर खपावे परन्तु गुणश्रेणि के काल ... रह से सब गुण श्रेणी का स्वरूप जानना. परन्तु ... ख्यात गुण हीन २ पहिले की श्रेणिके अपेक्षा से ... न रचना होता है. ।इनमें देश विरति और ... करे परन्तु तीसरा अनिवृत्ति करण नहीं करे. ... भोग पडा और फिर जो देशविरति अधिकार ... स्वाभोग पडासे इन करणों के लिये नियम

* तृत्तिय खण्ड-संसारा रोहण *

संसारा रोहण के ४१ द्वारोंका अर्थ.

१-२ गतीद्वार जिसमें जीवों गता गत (जाना आना)करे सो गति चार है:—(१) "नर्क"—अन्धकार मयस्थान है. सो "नर्कगति" (२) तिर्यच तिरछे बहुत बड़े या तिरछे लोक में अधिकांश पावे सो तिर्यच. (३) मनुष्य मनकी होंश पुरी करसके सो मनुष्य गति. और (४) "देव" दिव्य प्रकाश वन्त सो देवगति. इन चारों गति में से किसी एकगति में दुसरे स्थान से आकर जीवों उत्पन्न होवे सो "आगति उत्पन्न हुवे वोनिगति में स्थिर बने रहे सो " पागति " और मरकर आगे दुसरे स्थान जावे सो " जागति " यह गति आश्रिय २ द्वार. ४-३ " जाति द्वार " जिससे जीवों का स्वरूप जाना जावे सो जाति—५ हैं—(१) जिसके फक्त एक स्पर्शेन्द्रिय

चारों गति का स्वरूप गोमटसार ग्रन्थ के जीव कान्ड में ऐसा बताया है.

गाथा—णरमन्ति जदो णिच्चं । दव्व खेतय काल भावेय ॥
अणोण हिय जम्हा । तम्हा ते णारया भणिया॥१४६॥

अर्थ-जो जीवों को एसा द्रव्य क्षेत्र काल और भाव का संयोग बना है कि जिससे उनका मन रमन नहीं करता है. अन्न्योन लड़ते हैं. और सदा जहां अन्धकार मय स्थान है सो नर्क गति कही जाती है.

गाथा—तिरियंती कुटिल भावं । सुविउल सण्णाणि णिहि‍मण्णाणा,
अवन्त पाव बहुला । तम्हा तिरिच्छया भणिया ॥१४७॥

स्थावार जाति के ५ दन्डक, तीनों विकेन्द्रिय जीवों के ३ दन्डक, तिर्यंच पचेन्द्रिय का १ दन्ड मनुष्य का १ दन्डक, वाण व्यन्तर देवका १ दन्डक, जोतिषी देवका१ दन्डक, और विमानिक देवका १ दन्डक.

१३ सामान्य (संक्षेप से) जीवके भेद १४ हैंः—१ सूक्ष्म एकेन्द्रिय, २ वादर एकेन्द्रिय, ३ बेन्द्रिय, ४ तेन्द्रिय, ५ चौरिन्द्रिय, ६ असन्नी पचेन्द्रिय, और ७ सन्नी पचेन्द्रिय, इन सातों के अपर्यांप्ता और पर्याप्ता यों १४ भेद.

१४ विशेष (विस्तार से) जीवों के ५६३ भेद होते ते हैं सो कहते हैं नर्क के १४ भेदः—७ नर्क के नाम [१] घम्मा, [२] वंशा, (३) शीला (४) अंजना (५) रिट्टा, [६] मघा, और [७] माघवइ इन सातों के गोत्र—(१) रत्नप्रभा, (२) शर्कर प्रभा, (३) वालु प्रभा, (४) पंख प्रभा, (५) धुम प्रभा (६) तम प्रभा, ७) तमतमा प्रभा, इन सातों का पर्याप्ता और अपर्याप्ता, यों १४ नर्क के भेद । तिर्यच के ४८ भेदः—पृथवीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय, इन ४ को सूक्ष्म वादर पर्याप्ता और अपर्याप्ता इन चारों से चौगुने करने से ४+४=१६ भेद हुवे. वनस्पति के ६ भेदः—सूक्ष्म, साधारन, और प्रत्यक, इन तीनों का पर्याप्ता और अपर्याप्ता, यों एकेन्द्रिय तिर्यचके २२ भेद हुवे. । बेन्द्रिय, तेन्द्रिय, चौरिन्द्रिय इन तीनों विकेन्द्रिय के पर्याप्ता अपर्याप्ता यों ६ भेद, तिर्यच पचेन्द्रिय के—जलचर, थलचर, खेचर, उरपर, और भुजपर, यह ५ सन्नी और ५ असन्नी यों, १० इन १०, के पर्याप्ता, और १० का, अपर्याप्ता यों २० भेद होते हैं. । सब तिर्यच के ४८ भेद हुवे. ॥ मनुष्य के ३०३ भेद कहते हैंः—१ भरत, १ ऐरावत, १ महा विदेह, यह तीनों कर्मा भूमी मनुष्य के क्षेत्र जंबु द्वीपमें हैं. २ भरत, २ ऐरावत, २ महाविदेह, यह ६ क्षेत्र कर्मा भूमीके धातकी खन्ड द्वीप में हैं. और ऐसेही ६ क्षेत्र कर्म भूमीके पुष्करार्ध द्वीपमें हैं. यों १५ क्षेत्र कर्मा भूमीके हैं. । १ हेमवय, १ एरणवय, १ हरीवास, १ रम्पकवास, १ देवकुरु, १ उत्तरकुरु, यह ६ क्षेत्र अकर्म भूमी (युगल) मनुष्य के जंबू द्वीपमें हैं. और येही दो दो क्षेत्र यों १२ क्षेत्र धातकी खन्ड द्वीप में हैं. और येही १२ क्षेत्र पुष्करार्ध द्वीप में हैं. यों ३० क्षेत्र अकर्म भूमी मनुष्य के हैं. और जंबु द्वीपमें भर्त क्षेत्र की मर्यादा का करने वाला चूल्हेम वन्त पर्वत, ऐरावत क्षेत्र की मर्यादा का करने वाला शिखरी पर्वत, इन दोनों पर्वतों के दोनों खूनों से दो दो दाढां निकली हैं. यों दोनों पर्वतों की ८ दाढों हैं. और एकेक दाढों पर सात द्वीप (डों-

वे सो योनी एक और भिन्न होवे सो योनी दूसरी. ऐसी सब जीवें के उत्पन्न होनेकी माता पक्षकी सब ८४००००० (चोराशी लक्ष) योनी है. सो कहते हैं:—पृथवीकाय कीयोनी ७००००० (सात लाख) अपकाय की योनी ७००००० (सात लाख) तेउकाय की ७००००० (सात लाख) वायुकायका ७००००० (सात लाख) प्रत्येक वनस्पति की १०००००० (दशलाख) साधारण वनस्पति की १४००००० (चउदह लाख) बेन्द्रिय की २००००० (दोलाख) तेन्द्रिय की २००००० (दोलाख) चौरिन्द्रिय की २००००० (दोलाख) तिर्यच पचेन्द्रिय की ४००००० (चार लाख) नर्क की ४०००० (चार लाख) देवता की ४००००० (चार लाख) ओर मनुष्यों के उत्पन्न होने की योनी १४००००० (चउदह लाख.)

१८ कुल कोडी द्वार—जैसे भ्रमर जातिके चौन्द्रिय पक्षी की योनी तो एकही गिनी जाती है. और एक भुंग पुष्प का, एक काष्ट का, एक गोबर का, यों कुल अलग २ गिने जाते हैं. सो सब जीवों के पिता पक्षके कुल एक क्रोड साडी सतावे लाख क्रोड (१९७५०००००००००००) कूल होते हैं. सो कहते हैं:—पृथवी काय के १२०००००००००००० (बारह लाख क्रोड) अपकाय के ७०००००००००००० (सात लाख क्रोड) तेउक काय के ३०००००००००००० (तीन लाख क्रोड) वायु काय के ७०००००००००००० (सात लाख कोड) वनस्पती के २८०००००००००००० (अठाइस लाख कोड) बेन्द्रिय के ७०००००००००००० (सातलाख क्रोड) तेन्द्रिय के ८०००००००००००० (आठ लाख क्रोड) चोरिन्द्रिय के ९०००००००००००० (नवलाख क्रोड) जल चर के १२५००००००००००० (साडी बारह लाख) स्थल चरके १०००००००००००० (दशलाख क्रोड) खेचर के १२०००००००००००० (बारह लाख क्रोड) उरपर के १०००००००००००० (दशलाख क्रोड) भुजपर के ९०००००००००००० (नवलाख क्रोड) नर्क के २५०००००००००००० (पचीस लाख क्रोड) देवता के २६०००००००००००० (छब्बीस लाख क्रोड) और मनुष्य के १२०००००००००००० (बारह लाख क्रोड) कुल उत्पन्न होने के पिता पक्षके होते हैं.

१९ सूक्ष्म बादर द्वारः—जो चरम (चमडकी) चक्षु (आंखो) काले के लिया में नही आवे ऐसे शरीर के धारक पांचोंही स्थावरों के जीवों जो सम्पूर्ण लो-

कर्म कामन ; की कूपत्री की तरह ठसो ठस भरे हैं. सो सुक्ष्म कहे जाते हैं. आंखो देखने में आवे ऐसे बड़े शरीर के धारक छेही काया के जीवों बादर कहे जाते हैं.

१८ त्रस स्थावर द्वारः—जो " अण्डय "—अण्डे से उत्पन्न होवे-पक्षी मुग " पोयया "—कोथली में से निकले हाथी प्रमुख. " जराउया " जड़से होवे मुख, " रसया "—रसया उत्पन्न होवे कीड़े प्रमुख, "संसेयया" पसीने से उत्पन्न जुं प्रमुख. "समुछिमा" समुर्छिम (मड़नही) उत्पन्न होवे मक्खी प्रमुख, "उभ्भीया", भू-मीन फोड़कर निकले तीड़ प्रमुख, "उववाइया" उत्पन्नही होवे नर्क देव यह सब त्रस जीवों इनके लक्षणः-अपने शरीरको-संकोच सके पसार सके, रुदन करे. भय भीत होवे, भा-ग पावे. भग जावे, इत्यादि लक्षण जिनेके देखने में आवे सो त्रस जीवों. और जो एकस्थान स्थिर रहे पृथवी, पाणी, अग्नि हवा + वनस्पति, यह पांचों स्थावर जीवों जाणना.

१९ सन्नी असन्नी द्वारः—जिन जीवों का शरीर मात पिता के संयोग से नर्क के बिलों में × और देवता की सय्या में उत्पन्न होवे सो सन्नी जीव इनके मन (ज्ञान) होता है. और जो समुर्छिम (मड़नही) उत्पन्न होवे पांचो स्थावर तीनों वि-कलेन्द्रिय और ऐसे पचेन्द्रिय तिर्यंच ÷ मनुष्य को असन्नी जीवों जानना. इन के मन नहीं होता है

+ श्री उत्तराध्ययन जी सूत्र के ३६ वे अध्याय में वर्णित गुणानुसार तेउ और वा-यु को भी त्रस कहे हैं.

× कोइ नर्क के बिलों में और कोइ नर्क की कुंभीया में नर्क के जीवों की उत्पत्ति कहते है.

÷ मनुष्यके शरीर मे उत्पन्न हुवे-उच्चार-बडीनीत, (विष्टा) पासवण-लघुनीत (मूत्र) खे-ल-[illegible], सिंघाण-सेडा (नाकका मेल) वंत-उल्टी, पित्त-पित्त, पूय-राद, सुक्क-[illegible] [illegible] के पुद्गल [illegible] और [illegible] पुद्गल मृत [illegible] [illegible] उन में, [illegible] [illegible] के संयोग, नगर के नाले, और [illegible] में [illegible] अशुची स्थानों में [illegible] [illegible] समुर्छिम (असन्नी) मनुष्य उत्पन्न होते हैं.

२० भापक अभापक द्वारः—जो पर्याप्ति विकेन्द्रिय तिर्यंच पचेन्द्रिय मनुष्य नर्क देव बोलते हैं. सो भापक कहे जाते हैं और सब अभापक जानना.

२१ आहरक अनाहारक द्वारः—जब जीवों एक शरीर छोडकर दुसरे शरीर में जाते हैं. तब रस्तमें केवल समुद्घात करती वक्त चौथे पांचवे समयमें और मोक्ष के जीवों तो अनाहारिक ही रहते हैं. बाकी के सब जीवों आहारिक ही होते हैं.

२२ ओजादि आहार द्वारः—जो उपजति वक्त में जीवों आपने नजीक में रहे हुवे शुभा शुभ आहार गृहण करते हैं. जैसे सही मनुष्य तिर्यंच माता का रुद्र और पिता का शुक्र भोगवे,सो ओज आहार.२जो शरीर धारी जीवों समय२प्रति वायु आदि स्पर्शादि होते पदार्थ को गृहण करे. सो रोम आहार. और३ जो असन पानादि मुख द्वारा आहार गृहण करे सो कवल आहार किया जाता है. ऐसे तीन प्रकार के आहार होते हैं.

२३ सचितादि आहार द्वारः-१ वृक्ष फल बीजादि सजीव वस्तु का आहार किया जाँव सो सचित्त आहार. २ निर्जीव किये हुवे अन्न पाणी आदि भोगनेमें आँव सो अचित्त आहार. और ३ कुछ सचित कुछ अचित ऐसे दोनों प्रकारके मिश्र पदार्थों भोगवने (खाने) में आवे सो मिश्र आहार यह भी ३ आहार.

२४ दिशी आहार द्वारः-ऊर्द्ध-ऊंची. अधो-नीची. और चारों तरफ की दिशाओं तिरछी. यों भी तीन दिशी गिनी जाती है और पूर्व. पश्चिम. उत्तर.दक्षिण ऊंची. और नीची यों ६ दिशी भी गिनी जाती है. इसमेंसे पांचों स्थावरों सूक्ष्म जो सर्व लोक में ठसोठस भरे हैं. उनमें के कितनेक लोक के अन्त में एक कोन में रहे हैं वो लोक के तरफ की तीनों दिशामें रहे पुद्गलों का तो आहार गृहण करते हैं परन्तु अलोक की तरफ से आहार गृहण नहीं करते हैं. क्योंकि-अलोक में पुद्गल होते नहीं इस अपेक्षा से जघन्य तीन दिशी आहार गृहण करे. और उत्कृष्ट लोकके मध्य रहे सर्व संसारी जीवों छही दिशी का आहार गृहण करते हैं.

२५-२६ पर्याप्ता पर्याप्ति द्वारः—१ उत्पत्ती आकर निजस्थान में जीवों उत्पन्न होते हैं वो शरीर में रहे शुभा शुभ पुद्गलों को आहार रूप से गृहण करते हैं सो आहार पर्याप्ति. २ वो गृहण किया हुवा आहार सेही शरीर का बन्ध-आकार होता है. सो शरीर पर्याप्ति. ३ एकेन्द्रियादि जिस जाति में उत्पन्न हुवा हो उसकी इन्द्रियों का जितने आकार बन्धे सो इन्द्रिय पर्याप्ति. ४ उन इन्द्रियों के द्वार (छिद्रों) द्वारा जो श्व-

है.।.(२) गोचरी जो देखे हुये पदार्थों को गृहण करेने से आंखो का नाम गोचरी है. अन्तः करण लक्ष समुत्पन्न करे सो कृष्ण नील रक्त, पित, शुक्ल वर्णको ग्रहण करेसो चक्षइन्द्रिय गोवहै.इसकी अभ्यन्तर अवेगा अंगुलके असंख्यातवे भाग,और बाह्य संस्थान चन्द्रमा व मसूर की दाल जैसा, यह इन्द्रि चोरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय दोनोके होती है. जिसमें चौरिन्द्रिय की चक्षुइन्द्रिय की विषय २९५४ धनुष्यकी. असत्री पचेन्द्रिय की ५९०८ धनुष्यकी और सत्रीपचेन्द्रिय की ४७२६३ योजन की. अर्थात इतनेदुर का रूप गृहण करें. [३] दुग्नह-जिसके दो मुख (दोस्वर) हैं. इसलिये नाकका नाम दुग्रह है. और जो घ्राण दुर्गच्छा समुत्पन्न होवेसो घ्राणेन्द्रिय गोव है. यह सुगन्ध दुगन्ध दोनोंको गृहण करे.इसकी अभ्यन्तर अवेगा अङ्गुलके असंख्यातवे भाग,और बाह्य संस्थान धमण जैसे यह इन्द्रिय तेन्द्रिय चोरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय के होती है. जिसमें-तेन्द्रिय की घ्रणेन्द्रिय की विषय १०० धनुष्य की चौरिन्द्रिय की २०० धनुष्य, की असत्री पचेन्द्रिय की ४०० धनुष्यकी और सत्रीपचेन्द्रियकी १२ योजन की, अर्थात-इतने दुर से वास गृणह कर सकते हैं. । (४) जो चरपर २ चले सो जबानका नाम चरपरी और कटु मधु तिक्ष्ण अमल कषित रस को गृहण करेसो रसेंद्रीय गोव. इसकी अभ्यन्तर अवेगा अङ्गुल के असंख्यातवे भाग, और बाह्य संस्थान छरपले (उस्तरे) जैसा. यह इन्द्रिय बेन्द्रिय तेन्द्रिय चोरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय के पाती है. इसमें बेन्द्रिय की रसइन्द्रिय की विषय ६४ धनुष्य की तेन्द्रिय की १२८ धनुष्य. चौरिन्द्रियकी२५६धनुष्य, असत्री पचेन्द्रियकी५१२धनुष्य, और सत्रीपचेन्द्रियकी १२ योजन की अर्थात इतनी दूर रहा हुवा पदार्थ का स्वाद लेसक्ते हैं. । (५) जिसके मन नहीं होवे ऐसे शरीर का नाम असमनी है. और शीत. उष्ण,रूक्ष,चीकन कोमल, कठिन, गुरु लघुस्पर्शो को गृहण करनेके सबबसे स्पर्शेन्द्रिय कही जाती है. इसका संस्थान विविध प्रकार का है. यह इन्द्रिय एकेन्द्रिय से लगा पचेन्द्रिय तक सब जीवों के होती है. इसमें एकेन्द्रिय की स्पर्शेन्द्रिय का विषय ४०० धनुष्य, बेन्द्रिय की ८०० धनुष्य. तेन्द्रिय की १६०० धनुष्य, चौरिन्द्रिय की ३२०० धनुष्य, असत्री, पचेन्द्रिय की ६४०० धनुष्य, और सत्रीपचेन्द्रिय की १२ योजन. अर्थात इतनी दूर का स्पर्श समझ सकती है.

२२ इन्द्रि विषय द्वारः—१ श्रोतेन्द्रिय को-१ जीव शब्द. २ अजीव शब्द और मिश्रशब्द, ये ३ विषय और इन तीनों को शुभ अशुभ से दुगुने करने ६ होते

चार प्रकार की:—(१) प्रकृति को क्रूर बनावे सो क्रोध कषाय. (२) जो प्रकृति को करडी बनावे सो 'मान' कषाय. (३) जो प्रकृति को वक्र (वाँकी) बनावे सो माया कषाय और (४) जो प्रकृति को विस्तारे फैलावे सो 'लोभ' कषाय. ७

३३ लेश्या द्वारः–जिन परिणामों कर आत्मा कर्मों कर लेपावे (भरावे) सो लेश्या ६ प्रकार की:–(१) कृष्ण वर्ण. दुर्गंध. कटुरस तीक्षण स्पर्श सो द्रव्य कृष्णलेश्या. और पांचों आश्रवों आप सेवन करे. दुसरे के पास सेवावे. तीनों जोगों और पांचों इन्द्रियों को यथेच्छ छुट्टी प्रवर्तने दे. तीव्र परिणामों से आरंभ करे, हिंसा कर्ता अवकाय नहीं. क्षुद्र परिणामी. दोनों लोक के दुःख से डरे नहीं. इत्यादि लक्षण वाले को भाव कृष्ण लेशी जानना. (२) हरावर्ण दुर्गन्ध तीखारस और खरखरा स्पर्श सो द्रव्य नील लेश्या. इर्षावन्त. दूसरों के गुणोंको सहन कर सके नहीं. आप तपश्चर्या करे नहीं. दुसरों को करने देवे नहीं. तैसे ही ज्ञानाभ्यास भी आप करे नहीं दूसरों को करने देवे नहीं. नीवड कपटी. लज्जा रहित. रस गृद्धि. महा आलसी. फक्त आपहीका मुख चहावे इन लक्षणों युक्त होवे सो भाव नील लेश्या वाला जानना, (३) ऊदावर्ण. दुर्गंध, रस कषायला और स्पर्श कठिन सो द्रव्ये कापुत लेश्या, और बाँका बोले. बाँका (स्वेच्छा) चले. अपने दुर्गुणों को ढके, दुसरे के प्रकट करे. कठोर वचनी. चोर. दूसरों की सम्पती देखकर झूरे इन लक्षणों वाले को 'भाव' कपोत लेशी जानना.(४) वर्णरक्त. दुर्गंध. रस खट मिठा, स्पर्श नरम सो द्रव्य तेजु लेश्या और न्याय वन्त, स्थिर स्वभावी. शरल, कुतुहल रहित, विनीत, ज्ञानी. दमित इन्द्रिय, दृढ धर्मी. प्रिय धर्मी, पाप करते हुवे उसके फल भुक्तने का डर रखे सो भाव तेजु लेशी जानना. (५) पीत वर्ण, सुगंध, मीठारस और कोमल स्पर्श सो सो द्रव्य पद्म लेश्या और. चारों कषायों पतली करे सदा उपशांत चित्त रहे. त्रियोगों स्ववश में रक्खे, थोडा बोले, इन्द्रियों का दमन धर्म मार्ग में करे, सो भावे पद्मलेशी जानना. और (६) शुक्ल वर्ण, सुगंध, मधुर. रस और सुकुमाल स्पर्श होय सो द्रव्ये शुक्ल लेश्या और, आर्त ध्यान रौद्रध्यान को छोड धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान को ध्यावे, राग द्वेष को पतले किये या सर्वथा निवृते. इन्द्रियों को स्ववश में कर, समिता समता गुप्ति गुप्ता रहे. सरागी तथा वीतरागी चारित्र वंत. इन लक्षणों वालों को भावे शुक्ल लेशी जानना.

३४ जोग द्वारः–जो दुसरों से संबंध करे–जुड सो जोग तीन प्रकर के हैः–१

संख्यातवे भाग उत्कृष्ट१००००० योजनकी इसका विषय असंख्यात द्विप समुद्रों तक है, और इस शरीरका प्रयोजन इच्छित रूप बनानेका है. ३ आहारक शरीरः— यह शरीर आहारिक (आहार करने वाले) जीवों के होता है इसलिये आहारक शरीर कहा जाता है. यह एक हाथ भरका पुतला प्रथम संस्थानवन्त अत्यन्त सूक्ष्म दिव्य पुद्गलोंका होता है. इसके स्वामी चउदह पूर्वधारी मुनीराज होते हैं. इसकी विषय अढाद्विप प्रमाणे और प्रयोजन संशय छेदन व समव शरण के दर्शनका. ४. तेजस शरीरः— तेज अग्निके जैसा दाहक-पाचक गुणका धारक ग्रहन किये हुवे आहारादि पदार्थों को पचाकर रस बनाता हैं इसलिये तेजस शरीर कहा जाता है, इसका प्रयोजन अहार पचानेका है. और ५ कार्माण शरीर सो जिन पुद्गलों का तेजसने रस बनाया है. उन पुद्गलोंको द्रव्ये तो धातु आदिका जैसा शरीर होवे उस पणे और भावे ज्ञानावरणी आदि कर्मोंकी प्रकृति पणे परिणमावे-परगमावे-हिस्सा कर बाट देवे सो कारमण शरीर. इसका प्रयोजन संसारमें रुलानेका. यह तेजस और कार्मण इन दोनों शरीरके स्वामी सर्व संसारी जीवों हैं. और यह दोनो सूक्ष्म-अन्तरिक शरीर होनेसे इसका बाहमे कुछ संघयण संस्थान नहीं होता है. परन्तु इन दोनों शरीरके धारक प्राणीयों छही संघयण और छही संस्थानों युक्त होते हैं. इन दोनों की अवघेणा जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवे भाग की उत्कृष्ट सर्व लोक प्रमाणे ÷ और विषय भी सम्पूर्ण लोक प्रमाणे जानना.

३८संघयणद्वार१वज्र ऋषभ नाराच संघयण-जो दोनों हडियोंकी सान्धि स्थिर करने पटीये जैसी तीसरी हडी होती है उसे परिवेष्टित पट्ट वज्र कहतेहैं. और उन तीनों हडीयोंका कर सन्धिको दृढ करे ऐसी चौथी हडी कील रूप होवे उसे ऋषभ कहते हैं. और जिस स्थान दोनों हाडियों एकेक हडी के साथ आँकडी से आँकडी मिलावे सो फिर किसी उपाय से टूटे नहीं ऐसा दोनों हडीयों का आपास में दृढ बन्धन करने वाला प-

÷ केवल समुद घात होती वक्त चौथे समय में केवली भगवन्त सम्पूर्ण लोक व्यापी बनते हैं. तब तेजस और कार्मण दोनों शरिर के धारक होते हैं. इसलिये दोनों शरीर की अवघेणा सम्पूर्ण लोक प्रमाण कही है.

हाथ पांव छोटे होवे सो वावन स्थान, और ६ 'हुंड संस्थान' सो जिस के सब अङ्गो पाङ्ग खराब आधे जले मुरदे जैसे खराब होवे सो हुंड संस्थान.

३८ मरण द्वारः—मरती वक्त में आत्म प्रदेश दो तरह से निकल ते हैं;—१ जो कीडीयों की नाल की तरह समय २ धीरे २ थोडे २ प्रदेशों निकल कर जिस गति में जाना हो वहां का ताना वाना बान्धे, पीछे से ८ रुचक प्रदेशों के साथ आत्मा गमन करे उसे समोया कहते हैं. और २ जो बंदूक के भडाकेकी माफिक एकदम स ब प्रदेशों साथ ही निकल जावे उसे असमोया मरण कहते हैं.

३९ विग्रह गति द्वारः—मरकर प्रथम शरीर त्याग जीवों दुसरि गति में दो त- रह से जाते हैं:१ जो जीव प्रथम शरीर को छोडे बाद सीधाइ एक समय मात्र में नि यमित गति में जाकर उत्पन्न हो जावे सो ऋजु गति. और २ जो शरीर छोडे बाद रस्ता भूलकर इधर उधर चढ जावे वो जीव जघन्य एक मोड. मध्यम दो मोड और उत्कृष्ट तीन मोड तक खाता है. जितनी मोड खाता है. उतने ही समय अनाहारिक रहता है. फिर अनुपूर्वी नामक कर्म उसे खेंचकर नियमित गति में ले जाते हैं, उसे विग्रह गति कहते हैं.

४० स्वर्ग मर्याद द्वारः—स्वर्ग (देव लोक) २६ हैं:—१ सुधर्म, २ इसान, ३ सनत कुमार, ४ महेन्द्र, ५ ब्रह्म, ६ लान्तक, ७ महाशुक्र, ८ सहस्रार, ९ आनत, १० प्राणत, ११ आरण, और १२ अच्युत (इन१२ को देवलोक या कल्प कहते हैं, क्योंकि इन में रहने वाले देवताओं के मालक-राजा इन्द्र हैं. उन ने कल्प मर्यादा बन्धी है, उस मर्याद प्रमाणें सर्व देवताओं चलते हैं. इसलिये इन १२ को कल्प भी कहते हैं.) १३ भद्र, १४ सुभद्र, १५ सुजाये, १६ सुमान से, १७ सुदंसणे, १८ प्रियदंसणे, १९ आमोह, २० सुपडिभद्दे, २१ यशोधरे, (इन ९ को ग्रीवेक कहते हैं क्योंकि यह स्थान पुरुषाकार लोक के ग्री—ग्रीवा—गरदन के स्थान है) २२ विजय, २३ विजयंत २४ जयन्त, २५ अपराजित, और २६ सर्वार्थ सिद्ध. (इनों को अनुत्तर विमान कह- ते हैं. क्योंकि यह सब वीमानों में अनुत्तर-प्रधान-श्रेष्ट हैं. और उपर के १४ स्वर्ग को कल्पातीत कहते हैं. क्योंकि—यहां देवता के सिवाय कोइ मालक—इन्द्र नहीं है. इसलि ये यह स्वेच्छा चारी हैं परन्तु यहां फक्त जैन निर्ग्रंथ साधु ही उत्पन्न होते हैं इसलिये यह अनर्थोत्पन्न कदापि नहीं करते हैं.)

चतुर्थ खंड-धर्मा रोहण
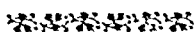
धर्मा रोहण के २३ द्वारोंका अर्थ.
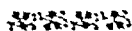
१. मूल उपयोग द्वारः— मूल उपयोग दो हैं:- १ " साकार वहुता " सोज्ञान. अर्थात्—अकारादि स्वर और क कारादि व्यंजन मे अक्षर श्रुत रूप आकार होवे और जो वस्तुका वाध स्वरूप आकार जाने. इन विशेष ज्ञानको साकार वहुता कहते हैं. और १. अनाकार वहुता सो दर्शन. अर्थात् ज्ञानसे जानी हुइ वस्तुका सामान्य रूप गुण का जो अन्तःकरण में भाप होवे सो दर्शन निराकार उपयोग है

२. विशेष उपयोग १२ हैं. जिनमें सकार वहुताके ८ भेदः— १ मतिज्ञान सो बुद्धि निर्मळ होय। २ श्रुतिज्ञान सो शास्त्र सम्बन्धि जानपना. ३ अवधिज्ञान मर्याद प्रमाणे दूरवर्ती पदार्थोंको देखे. ४ मन पर्यवज्ञान अढीद्वीपके अन्दरके जीवोंके मनकी बात जाने. और केवल ज्ञान सो सर्व द्रव्य क्षेत्र काल भावको जाने (यह ५ ज्ञान) और अवल कहे तीनों ज्ञानोंसो मिथ्यात्वसे कर विपरीत भाप होने लगे इसलिये इन तीनोंको १ मतिअज्ञान. २ श्रुतिअज्ञान. ३ विभङ्गज्ञान. कर बोले जाते हैं. यह पांच ज्ञान और तीन अज्ञान मिल सकार वहुता उपयोगके ८ भेद हुवे. ॥ और अनाकार वहुताके चार भेदः— १. आंखोंसे देखे हुवे पदार्थके गुन अन्तःकरण में भाप होवे सो 'चक्षु दर्शन' २. आंखोंबिन चारों इन्द्रियोंसे और मनद्वारा ग्रहण किये पदार्थका अन्तःकरण में भाप होवे सो 'अचक्षु दर्शन' ३ अवधी ज्ञानसे ग्रहण किये पदार्थोंका

लोक के संस्थान का. वीचार होवे सो धर्म ध्यान ÷। चौथा शुक्ल ध्यान के ४ पाये (१)पृथक्त्व वीतर्क-अलग २ पर्यायों को वीतर्क सहित विचारे, (२)एकत्व वीतर्क—एक ही पर्याय को वीतर्क सहित विचारे विचार—पलटे नहीं. (३) सूक्ष्म क्रिया अप्रति पाति फक्त इर्यावही क्रिया. और अपडवाइ होवे. और ४ 'व्युछिन्न किरित्त अनिवृत्ति ध्याता' सर्व क्रिया रहित मोक्ष मार्ग में अखण्ड प्रवर्तक.

१५ 'द्रव्य द्वार'-द्रव्य ६ प्रकार के:—१. धर्मास्ति, २ अधर्मास्ति, ३ आकास्ति, ४ काल, ५ जीवास्ति. और ६ पुद्गलास्ति.

गाथा—परिणाम जीव मुत्ता । सपएसा एग खित्त, किरियाए ॥
णिच्चं कारण कत्ता । सव्व गइ इयर अपवेसा ॥१॥

अर्थ—छेहो द्रव्यों में से 'परिणाम' जीव और पुद्गल अन्य द्रव्यों में परिणम ने से परिणामी हैं. और चारों द्रव्यों निज स्वभाव में ही रहनेसे अपरिणामी हैं. 'जीव' जीवतो चेतन्यादि लक्षण युक्त जीव है और पांचों निर्जीव है. 'मुत्ता'—पुद्गल देखने में आते हैं सो मूर्ति है. और पांचो अमूर्ती है. 'सपएसा'-काल है सो अप्रदेशी है' और पाचों सप्रदेशी है. जिस में आकास्ति और पुद्गल आस्ति तो अनन्त प्रदेशी है. बाकी तीनों असंख्यात प्रदेशी हैं. 'एगे'-छहों द्रव्यों में-धर्मास्ति अधर्मास्ति और आकाशास्ति यह तीनों एक एक द्रव्य हैं. और काल जीव पुद्गल अनन्त हैं. 'खित्त'-आकाश तो सब जीवों को अवगहा (स्थान) देता है, इसलिये क्षेत्र हैं. और पांचों द्रव्य आकाश रूप क्षेत्र में रह ने से क्षेत्री हैं. 'किरियाय' जीवके और पुद्गल के संयोग से

अनुप्रेक्षा—१. पुद्गलिक वस्तु अनित्य जाने. २ संसार का सम्बन्ध असार जाने, ३ आत्माको एकली जाने, और ४ संसार को दुःख का कारण जाने.

÷ शुक्ल ध्यानी के ४ लक्षण:—१. बाह्य अभ्यन्तर संयोग से सदा अलग रहे. २.राग द्वेष नाश करे या पतले करे. ३ तीनों योगों को स्थिर भूत करे. और ४ सर्वथा मोहका नाश करे. ३ शुक्ल ध्यानी के ४ आलम्बन:—१ शान्त स्वभावी होवे. २ निर्लोभी होवे, ३ सरल स्वभावी होवे, और ४ निर्भिमानी होवे. । शुक्ल ध्यानी की ४ अनुप्रेक्षा—१. पांचों आश्रव को अपाय का कारण जाने. २ अनन्त संसार की प्रवृति से निवृते. ३ अशुभ की दशाप्तिसे दूर रहै. और ४ पुद्गलों के स्वभाव में परिणमे नहीं.

जैसे वृद्ध पुरुष आश्रय निमित्त जेष्टिका [लकडी] गृहण करता हैं परन्तु उसे दृढ भी ग्रहण नहीं कर शक्ता हैं, और छोडताभी नहीं है. तैसेही इस साम्यकत्त्व वाले तीनों तत्वों की शुद्ध श्रद्धा तो रखतेंहैं परन्तु इस लोकके सुखार्थ उनका भजन सेवन करें पुद्गलिक सुख की वांछा करे. इनने मिथ्यात्वकी वर्गणा उदय में आइ उसका क्षय किया परन्तु सम्यकत्व मोहरूप कुछ अंश रहगया सो क्षयोपशम सम्यकत्वी. (३) सास्वादन सम्यकत्वी सो – उपरकही हुइ उपशम और क्षयोपशम सम्यकत्वमें वर्तते अनन्तान वन्धिका उपशम कियाथा उनका पुनः उदय होनेसे मिथ्यात्वकी तरफ जीव गमन करें, वो अन्तरालवर्ती रहे वहां तक सास्वादन सम्यकत्व रहती है. (४) 'वेदक सम्यकत्व - क्षयोपशम सम्यक्त्व में उपशमाइ हुइ प्रकृतियों सर्वथा क्षयकर आगे वडे, और क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सके उसके बीच में उन सातों प्रकृतियों को क्षपाने के लिये १ समय मात्र वेदे सो वेदक सम्यक्त्व. (५) 'क्षायक सम्यक्त्व' ऊपरोक्त सातों प्रकृति का सर्वथा नाश होनेसे सर्व दोषों रहित अत्यन्त विशुद्ध निर्दोष जो गुणकी प्राप्ति होवे सो क्षायिक सम्यक्त्व. यह सादि अनन्त होती है.;

१९ "संयता संयति द्वारः"–जो सर्व विरति साधु होवे सो संयति जिनके वहुत व्रत होवे और कुछ आगर होवे सो श्रावक संयातासंयति. और जिनके कुछ भी व्रत नहोवे सो असंयति.

२० लिङ्ग द्वारः–जिस भेप को देख लोको को परतीत होवे की यह अमुक (गृहस्थ या साधु) पुरुष हैं. उसे लिङ्ग-चिन्ह कहा जाता है. सो तीन प्रकार के होते हैं:—१ जो रजुहरण मुहपति आदि जैन मुनिके भेपके धारकतो स्वलिङ्ग, जोचिमटाघोटा भगवे वस्त्र आदि वावा जोगी भेपके धारक सो अन्य लिङ्ग, और ३पगडी अङ्गरखा आदि गृहस्थ का भेप सो गृहलिङ्ग.

२१ चारित्र द्वारः–चारों गतिसे उद्धार कर आत्मा को पञ्चम मोक्षगति में पहोंचावे तथा चारों कापाय आत्मा में उद्धार कर शान्त दान्त आदि गुण प्रगटावे सो चारित्र के ५ प्रकारः–१ सामायिक चारित्र–द्रव्य से सावद्य (पाप कारी) योगों की प्रवृत्ति और भावसे रागद्वेप मन्दहो परिणामों में सुख दुःख के विपवाद रहित जो समगुण की प्राप्ति होवे सो सामायिक चारित्र; इसके दो भेदः– (१)प्रथम और चरम तीर्थंकरों के मुनीवरों अवल सामायिक चारित्र धारण करतेहै. फिर उनको जघन्य ७ दिन बाद, मध्यम ४ महीने बाद, और उत्कृष्ट ६ महीने बाद छेदोपस्थापनीयचारित्र

चारन करे. (२) दर्शन प्रति सेवना सो-स्वपरका मन रखने हिनाधिक परुपणा करे. (३) चारित्र प्रति सेवना सो-प्रमाद के वश उत्तर गुणकी खन्डना करे.(४) लिङ्ग प्रति सेवना सो-लोकीक साथ ने वस्त्रादि की शोभा करे. और (५) यथा सुक्ष्म प्रति सेवना सो-छद्मस्तता से सुक्ष्म अतिचार लगावे. । ४ कषाय कुशील निग्रन्थ सो-यथा दृष्टान्त जैसे-इन कफाणे हुवे शाल धान्य को ऊखली में कूटकर उसके फोतरे-छिल्के अलग कर फक्त चांवल ही रखे. इन में धान्य ज्यादा और कचरा थोडा. [illegible] जिनों में गुण ज्यादा और अवगुण थोडे होवे व्यवहार को शुद्ध रख कर [illegible] सुधारे के लिये क्रोध भी करे. मनाभिमान धर्माभि मान भी रखे. शासन के [illegible] लिये. वादीयोंके विजय के लिये. मायाका भी सेवन करे. शिष्य [illegible] सोंप करण वृद्धि का लोभ भी करे. इत्यादि निमित से दोष लगाने को [illegible] भी दोष लगावेसो कषाय कुशील निग्रन्थ. इन के ५ भेद:-(१) ज्ञान [illegible] (२)दर्शन कषाय कुशील.(३)चारित्र कषाय कुशील.(४)लिङ्ग कषाय कुशील [illegible] यथा सुक्ष्म कषाय कुशील. इन पांचों का अर्थ प्रति सेवन निग्रन्थ [illegible] ना. विशेष इतनाही की यह किंचित संज्वल के लोभ के [illegible] लगाते है. तो भी सदा शुभ योगों की प्रवृत्ती से दोषों से [illegible] करते हैं. ५ निग्रन्थ नियंठा सो यथा दृष्टान्त जैसे वो [illegible] चांवलों सुपने झटक कंकर बीन शुद्ध करे तब उनमें [illegible] होवे. और अनाज विशेषाधिक होवे.तैसेही निग्रंथ निग्रन्थ [illegible] ग्रन्थ रहित अकषायी क्षायिक भावी वीतरागी होते [illegible] वे प्राप्त हुवे उसी समय प्रथम समय निग्रन्थ (२) [illegible] ह। समय निग्रन्थ (३) इसस्थान की अन्तिम [illegible] सस्थान के अन्तिम समय के पहिले समये सो [illegible] स्थान की सर्व वर्तनी सो यथा सुक्ष्म निग्रन्थ [illegible] जैसे उसप्रकार किये चांवलों में से [illegible] पानीसे धोकर रज मैल कलंक रहित शुद्ध [illegible] फिर भी कचरा नहीं. तैसेही सर्व [illegible] नी होवे सो सनातक निग्रन्थ इनके ५ भेद. [illegible]
(१) अतिचार रुप मैल रहित हुवे [illegible]

पिन धर्म मार्गमें स्थिर और उदयमें आये कर्मोंकी निर्ज्जरा करने-क्षय करने जो वि-ल्प रहित सम भाव से सहना करना उसे परिसह जय कहते हैं, सो परिसह २२ हैं:

सूत्र—क्षुतिपपासा शीतोष्ण दंशमसक नागन्यारति ॥
स्त्री चर्य्या निपद्या शय्या क्रोश वधांचा लाभ ॥

रोग तृण स्पर्श मल सत्कार पुरस्कार प्रज्ञा अज्ञान दर्शनानिः—

अर्थ१क्षुधा परिसह निर्दोष आहारका जोग नहीं मिलनेसे सदोष अहारकी वांछा नहीं करे, २तृषापरिसह अचित पाणी नहीं मिलनेसे सचित पाणीको छीनेकीभी वांछा नहीं करे.३ शीतपरिसहः—शीत (ठन्ड) लगनेसे अधिकवस्त्र रखनेकी व तपानेकी वांछा नहीं करे ४ उष्णपरिसह;— उष्णता (गरमी) लगनेसे शीतोपचार नहीं करे. ५ दंसमसपरिसहः— डांस मच्छर पटमल आदि जीवों का दंश समभाव सहे, उने अलग नही करे. ६ अचेल परिसह-वस्त्र रहित होजावे तोभी सदोष वस्त्र वांछे नहीं. ७ अरति परिसह;-संयम में संकट पडे तो आपति चिन्ता नहीं करे. ८ स्त्री आदि को देख विषय वांछा नही करे, ९ चरिया परिसहः-विहार (गमन) कर्ता घबराय नहीं १० निसिज्जा परिसहः-बैठने वि-षम भूमीका मिले तो क्लेश नहीं करे. ११ शय्या परिसह;-असन्योग मकान रहने को मिलने से खेद नही करे.१२अक्रोश परिसह;-कठिन वचन सुनद्वेष नहीं करे. १३ वन्ध परिसहः-मरताड सम भाव सहे.१४ याचना परिसहः-आहर वस्त्रादि याचता मांगता श-रमाय नहीं. १५अलाभ परिसहः-इच्छित वस्तु नही मिलेतो द्वेष नही करे १६ रोग प-रिसहः-रोग उत्पन्न हुवे समाधी भाव रखे सचित औषधी नहीं करे, १७तृण स्पर्श प-रिसहः-तृणाकी शैय्या के स्पर्श से कोचवाप नहीं, १८ जलमल परिसहः-पसीने और मल से घबराय नहीं' १९सत्कार पुरस्कार परिसहः-सत्कार सन्मान वांछे नहीं,२० प्रज्ञ परिसहः-पण्डित हो प्रश्नोत्तर करते घबराय नही. २१ अज्ञान परिसहः—विशेष ज्ञानकी प्राप्ति नहीं होवेतो खेद नही करे. और २२ दंशण परिसहः— सम्यक्त्व में शंका कं-क्षा दी दोष नहीं लगावे.

२५ प्रमाद द्वारः—पर परिणति का मद में आत्मा को परिणमावे सो प्रमाद पांच प्रकार के हैं-

गाथा—मद विषय कषाय । निद्दा विगहा पंच भणीया ।

२७ पडवाइ अपडवाइ द्वार:-जो गुणस्थानारोहण कर (चड) पीछे पड जावे सो पडवाइ. और पडे नहीं सो अपड वाइ जानना.

२८ छद्मस्त केवली द्वार:-जिनके ज्ञानके ज्ञानादि आत्मिक गुण कर्मो कर अच्छादित होवे सो छमस्त और (२) जिनो के चव घातिक कर्म रूप अच्छादन (ढक्कन) दूर होने से पूर्ण तोर से आत्मीक गुण प्रगट होवे सो केवली.

२९ समुद्घात द्वार:-जो आत्म प्रदेशों का मथन हो किसी प्रकार के गुणाव गुणका वार होवे सो समुद्घात ७ है:-१ वेदनी समुद्घात असाता वेदनीय का उदय होने से जीव हायवाहा करे सो.२ कषाय समुद्घात क्रोधादि उत्पन्न हुवे पतलेले मनुष्य को ५-७ मनुष्य संभाले तो भी संभले नहीं सो. ३ मरणातिक समुद्घात सो मरती वक्त आत्म प्रदेशों निकलकर जित स्थान उत्पन्न होना होवे वहां जवे और फिर आत्मा८ रूचक प्रदेश के साथ जावे तब क्रोडा क्रोड गुणी वेदना होवे सो, ४वैक्रय समुद्घात सो एक रूपके अनेक रूप बनाते प्रदेशों का मथन करेसो. ५ तेजस समुद्घात, त सो तेजुलेशा प्रगट कर उत्कृष्ट साडी सोल देश वालकर भस्म करेसो, ६ आहारक समुद्घात सो चवदे पूर्वके पढे हुवे मुनि राज आहारक लब्धि वन्त सन्देह निवारने या समवसरण की रचना देखने आत्म प्रदेशका पुतला बनाकर तीर्थंकर व केवल ज्ञानी के वहां भेज इच्छा पूर्ण करेसो. और केवल समुद्घातसो केवली भगवन्त के आयुष्य कर्म रहे थोडे और वेदनीय कर्म रहे ज्यादा. तब दोनों को बरोबर करनेके वास्ते आठ समयमें समुद्घात होती है:-प्रथम समय आत्म प्रदेश का सातवी नर्क कीनीचे से लगा ऊपर मोक्ष तक लम्बा दण्ड रूप होवे दूसरे समय वो दण्ड के पूर्व पश्चिम में कपाट रूप होवे. तीसरे समयमें उन पटीयोंका उत्तर दक्षिणमें मथन चूरा रूप होवे-चौथे समय में सर्वलोक में अन्तर पूरे (तब सर्व जगत् व्यापी बने) पांचवे समय में अन्तर सहार (भेला) कर पुनः मथन रूप बन जावे. छट्टे मथनसें मथन सहार कपाट रूप बनजावे सातवे समयमें कपाट सहार दण्ड रूप बनजावे और आठवे समयमें दन्ड सहार कर मूल रूप (अवल थे वै.) बनजावे. उसके बाद कितनेक तो अ इ उ ऋ लृ इन पांचों अक्षरे के उचार में जितनी देर लगे उतने काल बाद मोक्ष पधार जावे और कितनेक उत्कृष्ट ६ महीने बाद तो जरूरही मोक्ष पावे. ×

× दी गम्बरी के तत्वार्थ सूत्र की टीका में लिखा है।

८ क्रोड होते हैं. इनसे भवीद्रव्य असंख्यात गुणे क्योंकी असंख्यात मनुष्य तिर्यंच पुन्य कर रहेहैं. और इनसे भाव देव असंख्यात गुणे क्योंकी चारों जातिके देव असंख्याते हैं.

३१ जीव परिनामी द्वारः– जितवक्त जीव निज स्वभाव में परिणमें उसवक्त णाम शुद्ध होवे. और परस्वभावमें परिणमें उसवक्त अशुद्ध होवे. जिससे जो भाव योंके उत्पन्न होवे उसे जीव परिणाम हैं. (यहां कारण को मुख्यताये कर कार्य का चार किया है) इसके भगवति सूत्र में ३९ बोल कहै.

गाथा–गइ इन्दिय कषाय । लेसा जोए उव ओगे ॥
णाणा णाण दिट्ठी । चरित्त वेए परिणामि ॥

अर्थ–४ गति. ५ इन्द्रिय. ४ कषाय. ६ लेश्या, ३ जोग. २ उपयोग. ५ज्ञान, अज्ञान. ३ दृष्टि. ५ चारित्र और ३ वेद.

३२ 'करण द्वार'–जो जीवों के कर्म संयोगों में कारण भूत होवे सो करण के गवती सूत्र में ५१ बोल कहे हैं.

गाथा–दव्व सरीर इन्दि । मण वयण क साय लेसा ॥
समुघाइ सन्ना दिट्ठी । वेय असाव पंच (करणं) ॥

अर्थ–द्रव्य क्षेत्र काल भाव और भव यह ५ द्रव्य, ५ शरीर, ५ इन्द्रिय, ४ मन के योग. ४ वचन के योग, ४ कषाय, ६ लेश्या, ७ समुघात, ४ सज्ञा, ३ दृष्टि, ३ वेद और ५ आश्रव.

३३ निवृत्ति द्वार—जिन बाबतोंसे आत्मा निवृति भाव को प्राप्त होवे सो निवृत्ति जिनके भगवतीजी सूत्र में ८२ बोल फरमाये हैं:–

गाथा–कम्म सरीर इन्दि । भासा मण कसाय वणादि ॥
संठाण सन्ना लेसा । दिठी णाणा णाणे जोग उवोगे ॥

अर्थ–८ कर्म, ५ शरीर, ५ इन्द्रिय. ४ भाषा के योग, ४ मनके योग. ४ कषाय. ५ वर्ण. २ गन्ध. ५ रस, ८ स्पर्श. ६ संठाण, ४ सज्ञा. ६ लेशा. ३ दृष्टि, ५ ज्ञान. ३ अज्ञान, ३ जोग और २ उपयोग.

त संसार परि भ्रमण किया है.४४ 'एकत्वभावना'-आत्मा सदा एकली है. ४५ अन्यत्व भावना-शरीर से आत्मा अलग है. ४६ 'अशुचि भावना' शरीर अशुची का भंडार है. ४७ आश्रव भावना-आश्रव से कर्म आते हैं. ४८ संवर भावना-संवर कर्म को रोकते हैं. ४९ निर्जरा भावना-निर्जरा से कर्म क्षय होते हैं. ५० लोक भावना-लोक सुप्रइट पुरुषाकार है. ५१ बोध भावना-बोध बीज सम्यक्त्वकी प्राप्ति होनी दुर्लभ है. और ५२ धर्म भावना-धर्म ही तारण शरण है. (यह १२ भावना) और ५३-५७ पांच चरित्र (इन का वरणन पीछे होगया है.)

३६-३७ निर्जरा द्वार:—जो श्री वीतरागके आज्ञा बाहिर सूत्र से विधिसे रहित स्ववश या परवश पने धर्मार्थ या संसारार्थ कष्ट सहै. उसमे अकाम निर्जरा होती है. जिसका फल मोली (काष्ट काट कर बेंचने वाले) व्यापारी के जैसा कष्ट तो बहुत और लाभ थोडा. तैसा होता है. और २ जो वीतराग की आज्ञा में रहकर सूत्र विधिके अनुसार निर्वद्य करणी मोक्षार्थ करे तिन से सकाम निर्जरा होवे. तिन का फल जोहरी के व्यापार जैसा होता अर्थात कष्ट थोडा और नफा बहुत. सकाम निर्जरा दो तरह से होती है. (१) बाह्य (प्रगट) और (२) अभ्यन्तर. (गुप्त) इन में-(१ 'अनशन) आहार के त्याग. (२) ऊणोदरी-आहार उपाधी कम रक्खे. (३) भिक्षाचरी-गोचरी कर वस्तु ला भोगवे. (४) रस परित्याग-दूध दही घी तेल मीठा के त्याग करे. (५) कायाक्लेश-धर्मार्थ आपको कष्ट दे.(६) प्रति सल्लिनता इन्द्रियो कषाय योग का निरूंधन करे. (यह ६ बाह्य तप) और (७) प्रायश्चित-पाप निवारने तप करे. (८) विनय-सदा नम्र ही रहे. (९) वैयावच्च-भक्ति करे. (१०) सज्झाय-शास्त्र के मूल पाठ की स्वाध्याय करे. (११) ध्यान-सूत्रार्थ का चिन्तवन करे. और (१२) काउसग्ग-का पुत्सर्ग करे. (यह ६ अभ्यन्तर तप) यों १२ भेद तपसे निर्जरा होती है.

३८ करणी फल द्वार:—पुन्य रूप मिष्ट फल और पाप रूप कटु फल दो तो संसार वृद्धिके कारण है. सो सराग करणी कही जाती है सम्यक्त्व रहित. यह चाहे नहिं. और मोक्षार्थ जो करणी करते हैं सो अफल गिनी जाती है. सुखदायक जो सूत्र में फरमाया है.

गाथा—जेय बुद्धा महा भागा । वीराऽसम्मत्त दंसीणो ॥
असुद्धं तेसिं परिक्कन्तं । सफलं होइ सव्वसो ॥१॥

४१ तीर्थंकर गुणस्थान स्पर्शनाद्वार:— श्री तीर्थंकर भगवान गत भवसे चौथा गुणस्थान सेही आते हैं. इसलिये पहिले के तीनं तो यह छुटे. और पंचवा गुणस्थान कायर नरोंका हैं. (जो संयम लेने समर्थ न होसो) इसलिये उत्तम पुरुषों पाचवा गुणस्थान भी स्पर्शते नहीं हैं. और इग्यारवा गुणस्थान तो पडवाइ होता हैसो स्पर्शत हैं. श्री तीर्थंकर भगवान पडवाइ नहीं होते हैं. इसलिये १-२-३-५-११ इन पाचों गुणस्थान स्पर्शन की मना है.बाकीके९ गुणस्थान स्पर्शते हैं.

४२ मोक्षद्वार:— चारों बाबतो की अनुक्रम से आराधना करने से मोक्ष मिलती हैं:— १ प्रथम सम्यक ज्ञान करके जीवोंका यथार्थ स्वरूपका जान होवे. २ नन्तर जीवादि पदार्थो को जैसे जाने हैं. वैसेही सम्यक दर्शन कर उनको यथा श्रद्धे. (यों ज्ञान और दर्शन का जोडा है. अर्थात यह दोनोंही साथही रहते हैं) ३ जो जीवादि पदार्थो को सम्यग् ज्ञान कर जाने. सम्यग् दर्शन कर श्रद्धे उनमेंसे जीव अजीव पुण्य तीनोंको जाने पाव अश्रव बन्ध इन तीनोंको सर्वथा त्यागे. और संवर निर्जरा मोक्ष इन तीनों को पूर्ण पणे समाचारे सो सम्यग् चरिव. और जैसी तर सम्यग् चरिव द्वारा तीनों बाबतो समाचारी है वैसी तरह जावो जीव तावे. उमर तक पूर्ण तोरस आराधे पाले स्पर्शे सो सम्यग् तप. जैसे ज्ञान दर्शन का जोडा है तैसे ही चारित्र तपका भी जोडा है. इन चारों का यथा विधी अनुक्रम से आराधन पालन स्पर्शन जावो जीवतक करने से आत्मा पमानन्दी परम सुखी होता है.

परम पूज्य श्री कहान जी ऋपिजी महाराज के स-
म्प्रदाय के महन्त मुनिश्री खूबाऋपिजी म-
हाराजके शिष्यवर्य आर्य मुनिश्रीचे-
ना ऋपिजी महाराजके शिष्य
श्री केवल ऋपिजी महाराज
के आश्रित बाल ब्रम्हचारी
मुनिश्री अमोलख ऋपि
जीमहाराज रचित
मुक्ति सोपान गुणस्थान रोहण
अढीशत द्वारीका प्रथम
अर्थ काण्ड
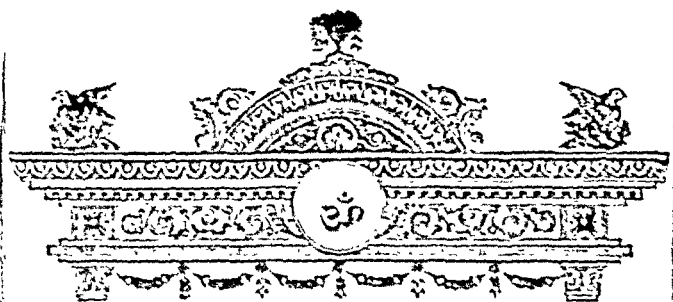
मुक्ति-सोपान
श्री गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारी

द्वितीय-मूल काण्ड.

प्रवेशीका

गाथा—वंदामि सिरि जिणवर । भणामि वितीय मूल खण्ड ॥
चउदश गुण ठाणस्स । रोहण अढसित द्वारा ॥ १ ॥

अर्थ—श्री जिनेश्वर भगवन्त को नमस्कार कर के " मुक्ति सोपान,"—"गुणस्थाना रोहण अढीशत द्वारि" ग्रन्थका दूसरा मूल खण्ड कहता हूं इस में अर्थ काण्ड में कहे हूवे २५२ द्वारों को अब मूल चउदेही गुणस्थानो पर अलग २ संक्षेप से उतार ते हैं प्रथम अर्थ काण्डके पठन से सब द्वारों का अर्थ-मतलब समझ में आगया जिससे इस काण्ड में १४ गुणस्थानों पर उतारे हूवे २५२ द्वारकी समझ सुलभता से हो सकेगी.

४ अविरति=व्रत रहित, और सम्यग दृष्टि=सम्यक्त्व युक्त, अर्थात्-सर्वज्ञ प्रणित निश्चय और व्यवहार नय को साध्य साधक भाव से माने परन्तु प्रत्याख्यानावर्णिय कर्मोदय से इन्द्रियोंके सुख का त्याग नहीं कर सके सो अविरति-सम्यग दृष्टि गुणस्थानी.

५ देश=थोडे+विरति=व्रत वन्त. अर्थात् सर्व विरति साधुओं की अपेक्षा कर थोडे व्रत का धारन करने वाला सो देश विरति गुणस्थानी.

६ प्रमत=प्रमाद युक्त+संयति=साधु. अर्थात् सर्व विरति साधुतो हुवे परन्तु प्रमादी-आलसी हो सदोषित रहते हैं सो प्रमत संयति गुणस्थानी.

७ अप्रमत-प्रमाद रहित+संयति=साधु, अर्थात् सर्व विरति रूप साधु की क्रिया को प्रमाद रहित पाले सो अप्रमत संयति गुण स्थानी.

८नियटि=निवृते+बादर-बडी कषाय से. अर्थात्-दर्शन मोहनीय रूप बडी कषाय से निवृति धारण करी सो नियटी बादर गुण स्थानी. और इसही गुणस्थान का दुसरा नाम-अपूर्व-पहिले नहीं हुइ ऐसी× करण-कषाय की मन्दता करिसो अपूर्व करण गुणस्थानी

९ अनियटि-निवृते नहीं, बादर-बडी चारित्र मोहनीय कषाय से×साफ निवृते नहीं, थोडी सी कषाय और भी बाकी रही है.

+ यह अपेक्षा वचन है अर्थात्-आठवे गुण स्थान में तो चारित्र मोहनीय की अपेक्षा से दर्शन मोह को बडा गिना, और इस नववे गुणस्थान में सात कर्मों की अपेक्षासे चारित्र मोह की सर्व या निवृति न होनेके सबबसे अनियटि बादर इसका नाम है:-तत्व केवलिगम्य.

सो नियटी वादर गुणस्थानी और इसही गुणस्थान का दुसरा नाम अनिवृति-निवृते नहीं÷करण-कषाय की मन्दता से अर्थात्-जो कषायों की मन्द (कमी) करने श्रेणी प्रारंभ करी है. उस से पीछे हटे नहीं आगे वढते ही जायें, सो अनिवृति करण गुणस्थानी.

१० सूक्ष्म-बहूत ही थोडी÷सम्पराय-कषाय, अर्थात् फक्त संज्वलन के लोभ रूप यत्किंचित मात्र-सोभी वहूत पतली कषायका उदय सो सूक्ष्म संपराय गुणस्थानी.

११ उपशान्त-उपशमाया (ढका)×मोह-मोहनीय कर्म, अर्थात् मोहनीय कर्म की सर्व २८ ही (कषायों) प्रकृतियों को सर्वथा प्रकार से उपशमन किया-ढक दिया सो उपशान्त मोह गुणस्थानी.

१२ क्षीण-क्षय किया×मोह=मोहनीय कर्म, अर्थात्-मोंहनीय कर्म की २८ ही प्रकृतियों का सर्वथा क्षय-नाश किया सो क्षीण मोह गुणस्थानी.

१३ सयोगी-योग सहित÷केवली=केवल ज्ञानी. अर्थात् मन, वचन कायाके शुभ अवलम्वन वन्त केवल ज्ञानी जिनेश्वर सो संयोगी केवली गुणस्थानी.

१४अयोगी-योग रहित+केवली केवल ज्ञानी. अर्थात्-मनादि योगों जो कर्म पुद्गल रूप वर्गणा को ग्रहण करने कारण भूत आत्म प्रदेशों का परिस्पन्द (चलन) उस से रहित, और केवल ज्ञान के धारक सो अयोगी केवली गुणस्थानी.

३ तीसरा प्रश्नोत्तर द्वार ×

+ इस द्वारक खुलासेके लिये देखिये अर्थ काण्ड का पृष्ठ १२ वा.

सेल भेल (गडवड) है उसे गुण का स्थान कैसे कहा जावे? उत्तर क्यों नहीं कहा जावे, जो सत्य को असत्य और असत्य को सत्य जानता था वो सत्य को तो सत्य जान ने लग गया. तो कभी असत्य को असत्य भी जानने लग जायगा.

४ प्रश्न—जो सम्यक् दृष्टि हो व्रतों के फल को जान कुछ व्रत धारे नहीं आविरति सम्यग दृष्टि ही रहे तो उस से क्या फायदा ? उत्तर—जो जानेगा कि इस मकान में उपद्रवी व्यन्तर देव (भूत) रह ता है. और उस में कभी जाने का प्रसङ्ग भी आगया तो वां डरेगा. ऐसेही सम्यग दृष्टि भी पाप करते डरेंगे जिससे जिन के चिकन कर्म वन्ध नहीं होगा. यथार्थ जानना ही मुशकिल है. कहा हैकि "सद्धा परम दुल्हा." जाना येही वडा गुन है.

५ प्रश्न—जो संसार सम्वन्धि आरंभ के अनेक कृतव्य कर यदि यत्किंचित व्रत धारण करभी लिया तो उस से क्या फायदा? उत्तर—देश विराति शब्द तो साधुओं के सर्व विरती पने की अपे-क्षा से है, परन्तु किंचित व्रत नहीं जानना. क्योंकि-इनोंने सर्व लो-क के महारंभ महा परिग्रह की क्रिया का निरुंध कर, फक्त यत्किं-चित अटकते कार्य को चला ने जितनी ही छुट्टी रक्खी है, और सो भी सर्वथा त्याग ने अभिलाषी हैं, इसलिये. तथा परिणामों से सर्वथा अव्रत की क्रिया उत्तर गइ है, येही जवरफायदा है. इसलिये यह गुणस्थान है.

६ प्रश्न—जो संयति (साधू) होकर ही प्रमाद का सेवन करे तो फिर क्या फायदा! उत्तर-वडा फायदा तो यह हुवा कि-अ-विरत की क्रिया साफ रुक गइ, और यद्यपि अप्रमादी ही सदा र-हने का खप करते हैं. तद्यापि कर्म की प्रवलता से जो कुछ प्रमाद

मय परिणती परिणमतीहै. उसे रोककर भी ज्ञान ध्यान तप आ
वृद्धि का लाभोपार्जन करते हैं, सो फायदा ही है.

७प्रश्न-जब पांचोंही प्रमादोंका क्षयकिया तबसब दुर्गुणोंका
क्षय हुवा, फिर यहां ही केवल ज्ञान की प्राप्ति क्यों नहीं होती है.
उत्तर-उनने बाह्य वृत्ति में पांचों प्रमाद का अभाव करने से अप्रमदी
बने हैं. परन्तु अन्तर करण में तो एक मद प्रमाद का तो सर्वथा
अभाव हुवा है, और यत्किंचित बने हैं सो भी आगे नाश करने
परिग्रन हुवे हैं वो सब नाश होंगे जब ही केवलज्ञान पावेंगे इस से
अप्रमादी कहना.

८प्रश्न-निवृति बादरका क्या अर्थ होताहै? उत्तर-बादर(बडी)
कषायों से निवृति पागये. चपाल्ता का अभाव हुवा.

९ प्रश्न-आठवे का नाम निवृति बादर और नववे का नाम
अनिवृति बादर यह भी कैसा आश्चर्य! गुण वृद्धि के बदल उल्ट
गुणहानी के दोष रोपण होना है.इसका क्या सबब? उत्तर-आठवे गु-
णस्थान में श्रेणी प्रारंभ होती है, इसलिये यहां उतेजन देने का स-
बब हैकि अब कषायों से निवृते हो इसलिये शीघ्र आगे बढो. और
इस स्थान में सावधान-किया है कि होशार रहो! जो थोडा भी विषय
कषाय का अंश रहा है वह छल नहीं लेवे ; और आठवे गुणस्थान
में तो १७ कषाय का नाश किया था यहां २१का नाश किया है. इ-
सलिये गुणाधिक ही जानना.

१० प्रश्न-सूक्ष्म सम्पराय का क्या अर्थ? उत्तर सब किया २५
हैं, जिस में २४ सम्परायिक किया है सो कर्मों का बन्ध करने वाली
है. इस गुणस्थानी २३ किया का तो सर्वथा अभाव कर दिया और
पेजवर्नी किया है उस के दो भेद (माया और लोभ) जिस में स

मायाका भी नाश कर दिया और लोभ के चार भेद में से फक्त एक अन्तिम संज्वलका ही लोभ रहा सो भी अत्यन्त सुक्ष्म, इसलिये सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान कहा हे.

११ प्रश्न-उपशान्त मोह गुणस्थान में मोहकी सर्व २८ ही प्रकृति का उपशम किया. और उन प्रकृतियों का प्रगट होने का भी कारण नहीं हे. फिर पडवाइ क्यों होते हैं? उत्तर इस स्थान में प्रकृतियों का क्षय नहीं हूवा है, इसलिये वो अन्दर रही हूइ प्रकृतियों वाष्पकी माफक उछाला देने से और इस स्थान से आगे बढ़ने के रस्ते के अभाव से पडवाइ होते हें.

१२ प्रश्न-क्षीण मोह गुणस्थान में सर्वथा मोहका क्षय हुवा फिर यहां ही केवल ज्ञान की प्राप्ति क्यों नहीं होती है? उत्तर-कारणसे कार्य निपजता है. इस स्थान घातीये कर्म का नाश होता है तब आगे केवल ज्ञान की प्राप्ति होती हे. परन्तु निश्चय नयके मतसे तो यहां ही केवल ज्ञानी गिने जाते हें.

१३ सजोगी केवली कहे सो केवल ज्ञानीके योग क्या काम आते हें! उत्तर-अनुत्तर विमान के देवों को प्रश्नका उत्तर देने द्रव्य मन, देशना देने में द्रव्य वचन और जिन पुद्गलों को स्पर्शने वाकी रहे हें उने स्पर्श ने काया के योगकी प्रवृत्ति होती है. इसलिये सयोगी हें. परन्तु निश्चय से तो अयोगी समझना-क्योंकि-वो इच्छासे-ऊपत कर योग की प्रवर्ती नहीं करते हें.

÷ पांचों अनुत्तर विमान वासी देवों अपने स्थान में ही रहे हुवे सविनय प्रश्न पुछतेहैं. उनको केवल ज्ञानी प्रश्नका उत्तर मनके द्रव्य पणे प्रगमा कर देतेहैं. क्योंकि ज्ञान अरूपी है उने अवधी ज्ञानी ग्रहण नहीं सकते है. और मन रूपी वो फरसी है. उसे ग्रहण कर लेते हैं.

१४ अयोगी गुणस्थान स्पर्शने वाद ही योगों का नि
होता है फिर इस स्थान को अयोगी कैसे कहना? उत्तर-भग
का फरमान हैकि-"करे माणे करे" अर्थात् जो काम करना
किया उसे किया ही कहना, वो योगों का निरुंधन तुर्त ही
डालते हैं. और यहां ही योग रहित हो फिर मोक्ष पधारते हैं.

प्रश्न-योग रहित हुवे वाद मोक्ष जाने की क्रिया कैसे क
ते है? उत्तर-पूर्व के प्रयोग से कुम्भार के चक्रवत्, कर्म सङ्ग रहि
त होने से निर्लेप तुम्बीवत्, प्रति बन्ध छेद होनेसे एरण्ड बीजवत्,
और जीवका उर्द्ध गमन के स्वभाव से अग्नि शिखावत् मोक्ष में
पधार ते हैं.

प्रश्न-जब जीव का उर्द्ध गमन स्वभाव है तो फिर मोक्ष
स्थान के आगे क्यों नहीं जाता है? उत्तर गति में सहायता क
ने वाली धर्मास्ति काया का आगे अभाव होने से अलोकमें आ
त्मा गमन नहीं कर सकती है.

४ प्रवेश द्वार *

१ प्रायः सर्व संसारी जीवों का प्रथमस्थ यही स्थानहै, औ
सम्यक्त्व व चारित्रसे पडे जीवोंभी मिथ्या स्थानमें प्रवेश करतेहैं

२ आगे कहेंगे उस चतुर्स्थान में प्रवृत ता हुवा जीव क्षयो
म तथा उपशम सम्यक्त्व में पुनः लगने से अर्थात अनन्तान
कषायों का उदय होनसे भ्रष्ट हो नीचे पडकर मिथ्यात्वको
आने लगा उसके मिथ्यात्व का तो उदय नहीं हुवा, परन्तु

* इस द्वारके खुलासे के लिये देखिये अर्थ काण्ड का पृष्ठ १० वा.

मिथ्यात्व की सह चारिणी (साथ रहने वाली) अनन्तान बन्धि कषाय का उदय हुवा है, सो सास्वादन में प्रवेश करते है.

३ मिथ्यात्व की पर्याय हायमान होती जाती है-घटती जाती है, और सम्यक्त्व की वृद्धमान होती है-बढती जाती है, सो जीव मिश्र गुणस्थान का प्रवेशी जानना.

४ चौथे गुणस्थान में दो तरह से जीवों प्रवेश करते हैं:— (१) निसर्ग से अर्थात्—स्वभाव से और (२) अधीगम से अर्थात्-गुरु के सद्बोध से. (१) जो भव्य जीवों सन्नी पचेन्द्रिय पर्याप्तावस्था की पर्याय को प्राप्त हुवा सो पहिले अनन्तान बन्धि चौकडी का प्रथम यथा प्रवृति करण से, फिर दूसरे अपूर्व करण में स्थिति घात-रस घात-गुणश्रेणी-गुण संक्रम और अन्य स्थिति बन्ध से तीसरा अनिवृत्ति करणसे, और चौथा उपशान्त अद्धा से, दर्शन त्रिक-मिथ्यात्वमोहनीय-मिश्रमोहनीय और सम्यक्त्वमोहनीय युक्त उपशम कर-उपशम सम्यक्त्व,क्षयोपशमकर-क्षयोपशम सम्यक्त्व और क्षयकर क्षायिक सम्यक्त्व,इन तीनोंमेंसे किसी एक सम्यक्त्वकी प्राप्ति करताहै, सो अधीगम से प्रवेशी जानना. (२) और निश्चय से तो अधीगम होवे ही. व्यवहार में-आर्य क्षेत्र-उत्तमकुल-दीर्घायु-पूर्णेन्द्रिय-निरोग्यता-सुलोप जीवी-इत्यादि सुसामग्री युक्त को सद्गुरु-निग्रन्थ का संयोग मिलने से सर्वज्ञ प्रणित धर्म श्रवण कर तत्वार्थ का श्रद्धान होवे सो निसर्गः से प्रवेशी जानना.

५ पांचवे गुणस्थान में तीन तरह से प्रवेश करते हैं:—चौथे गुणस्थान में अनन्तान बन्धि चौकडी और दर्शन त्रिक इन ७ से सम्यक्त्व मोहनीय की प्रकृतियों का क्षयोपशम करने से प्रवेश हुवा, और इस गुण स्थान में सात तो वोही और अप्रत्याख्याना-

सी अशुभ प्रकृतियों को प्रावृत (पलटा) कर अपूर्व गुण संक्रम और अपूर्व करणद्धा का संख्यातवा भाग जाने बाद निद्र और प्रचला यह दोनों दर्शनावरणीय की प्रकृतिका व्यच्छेद होते बहूत स्थिति खन्ड का सहस्रोंका अतिक्रम करते बाकी एकही भाग रहे तब स्थिति खन्ड प्रथक्त्व जावे तब उपशमश्रेणि प्रवेशी जानना. यह इग्यारवे गुणस्थान तक जाकर हायमान परिमाण परिणमेन से के तो पडता है. या मरता है. परन्तु आगे नहीं चडता है) और (२) क्षपक श्रेणि प्रवेशिक सो-८ वर्ष से अधिक वयवाला, वज्र वृषभ नाराच संघयणी, क्षायिक सम्यक्त्वी, विशुद्ध संयमी, चोदह पूर्व का पाठी शुक्ल ध्यानी होता है, सोही क्षपक श्रेणि में प्रवेश कर सकता है. यह चारित्र मोहनीय की २१ प्रकृतियों-का क्षय करने का उद्यम यहां से सुरु करता है. (आगे के गुणस्थनों में क्षय करता है.) यथा प्रवृति आदि तीनों करणों को फिर से सुरु करताहै, और ऊपर कही १७ ही प्रकृतियों की ऐसी तरह क्षय करताहै कि जिसकी स्थिति अनिवृति करण अद्धा के प्रथम समय में ही पल्योपम के असंख्यातवे भाग मात्र रह जाय, सो क्षपक श्रेणि प्रवेशी. (यह वृद्धमान परिणामी अपडवाइ (पडता नहीं) इग्यारवा गुणस्थान को छोड सीधाही उपर जाता है और निश्चय से मोक्ष पाता है.)

९ नववे गुणस्थान में भी दोनों तरह ही प्रवेश करता हैः- (१) उपशम श्रेणिगत और (२) क्षप श्रेणिगत. आठवे गुणस्थान में कही सो १७ प्रकृतियों और संज्वलका लोभ तथा तीनों वेदयों २१ प्रकृतियों के अनिवृति करण कर, जिन प्रकृतियों का उदय काल होवे वहा ही से श्रेणि आरंभ कर प्रकृतियों का उदय

णीय, दर्शनावरणीय, और अन्तराय इन तीनों कर्मोका स्थिति घात-गुण श्रेणि और गुण संक्रमण कर पहिले की तरह उस क्षीण कपायद्धा के संख्याते भाग जावे वहां लग प्रवृति करेसो क्षीण कषाय गुणस्थान का प्रवेश जानना.

१३ तेरवे गुणस्थान मे-बारवे गुणस्थान के प्रथम समय तो सर्वथा मोहका नाश किया, और अन्तिम समय बाकी रहे तीनों घन घातिक कर्मो का नाश किया, यों चारों घातिक कर्मों का नाश होतेही सयोगी केवली गुणस्थान में प्रवेश करते ही सर्वज्ञ सर्व दर्शी होते हैं.

१४ चउदवे गुणस्थान में-तेरवे गुणस्थान में प्रवृता हूवा सूक्ष्म क्रियना में शुक्ल ध्यान के तीसरे पाये की समाप्ति होते व्युपरीत क्रिया अप्रति पाति नामे चौथा पायकी प्राप्ति होवे अयोगी केवली गुणस्थान में प्रवेश होता है.

और चउदवे गुणस्थान के अन्त में बाकी रहे चारों अघातिय कर्म-वेदनीय-आयु-नाम-और गौत्र का नाश कर शुद्ध-हलकी आत्मा बन-१ धनुष्य मुक्त बाण वत्-पूर्व संयोगसे, २ निर्लेप तुम्बीवत असंगी होने से, ३ एरन्ड बीजवत्-बन्धन मुक्त होने से-और ४ अग्नि शिखावत्-स्व स्वभाव से उर्द्ध गमन कर लोकके अन्तिम भाग में जो मुक्ति स्थान है उसमें प्रवेश कर परम परमात्म बन अनन्त काल तक स्थिर रहते हैं.

पांचवा लक्षण द्वार *

---

* इस द्वारके खुलासे के लिये देखिये मर्द दाण्ड का पृष्ट ४८ वा.

णित तत्वोंको भी माने और, अज्ञानीयों कथित वातों को भी माने, दोनोंही के वचनों तत्व रूप माने-आस्तिक्य बने. मिश्र मोह के उदय कर सत्या सत्य का निर्णय करने की दरकार ही नहीं रक्खे सो मिश्र गुणस्थानी.

४ चौथा अव्रति सम्यग् दृष्टि गुणस्थानके लक्षण–"तत्वार्थ श्रद्धानं सम्यग दर्शनम"=अर्थात- १ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आश्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ वन्ध, और ९ मोक्ष. इन नवों ही तत्वों को द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयोंकर, तथा निश्चय और व्यवहार के स्वरूप कर सर्वज्ञ प्रणितानुसार द्रव्य क्षेत्र काल भाव से भिन्न २ यथा बुद्धि जानकर श्रद्धान करने वाले,

और व्यवहार सम्यक्त्व के ७७ लक्षण युक्त होते हैः–१ परमार्थ के ज्ञान की संगति करे, २ परमार्थ का ज्ञान होवे, ३ सम्यक्त्व-धर्म का वमन किये की संगति नहीं करे, और ४ पाखंडियों का परिचय नहीं करे. (यह ४ श्रद्धान) ५ विषयानुरागी की तरह जिन वचन का अनुरागी होवे, ६ क्षुधातुर इष्ठ भोजन का आदर करे त्यों जिन वचन का आदर करे, और ७ विद्यार्थि की तरह जिन वचन ग्रहण करे (यह ३ लिंग) ८-१७-अरिहंत-सिद्ध-आचार्य उपाध्याय स्थविर[1]-कुल[2]-गण[3]-संघ[4]-स्वधर्मी-और क्रियावन्त-इन दशों का विनय करे (यह १० विनय) १८-२० अर्हंत धर्मानुयायियों को-मनसे अछे जाने-वचन से कीर्ती करे और कायां से

१. वृद्ध वयवाले, बहू सूत्री-पूराणे दीक्षित इन तीनोंको स्थविर कहते हैं. २ एक गुरु के बहूत शिष्यों के समुदाय को कुल कहते हैं. ३ सम्प्रदाय को गण कहते हैं. ४ साधु-साध्वी–श्रावक-श्राविका इन चारों को संघभी कहते हैं और तीर्थ भी कहते हैं:—

होते है.

और शुद्ध व्यवहारी, चतुर्विध संघकी परम हर्ष भक्ति भावसे वत्सलता के कर्ता, मन तन धन कर धर्मोन्नति करता, गुण ग्राही-सर्व जीवों के एकान्त सुख शान्ति के इच्छक सो सम्यग दृष्टि गुण स्थानी.

५ पांचवे देश-विरति गुणस्थानी के लक्षण—चौथे गुणस्थान में कहे मुजब सम्यक्त्वी के गुणयुक्त आगे अनुक्रम से योग्यता प्रमाणे इग्यारे प्रतिमा धारण करते हैं:—१ दर्शन (समकित) प्रतिमा २ विरत प्रतिम, ३ सामायिक प्रतिमा, ४ पौषध प्रतिमा, ५ नियम प्रतिमा, ६ ब्रम्हचर्य प्रतिमा, ७ सचित त्याग प्रतिमा, ८ अनारंभ प्रतिमा, ९ पेसारंभ प्रतिमा, १० उदिष्ट कृत प्रतिमा. और ११ समण भूय प्रतिमा. इनको अवलके गुणमें कायम रहते हुवे आगे यथा शक्ति गुणों वृद्धि करते रहे.

यह २१ लक्षण धारी होते हैं:—१ अक्षुद्र, २ रूपवन्त, ३ शान्त स्वभवी. ४ अक्रूर. ५ भीरु. ६ लोक प्रिय. ७ अशठ, ८ विचक्षण, ९ लज्जालु. १० दयाल, ११ मध्यस्त, १२ सुदीर्घदर्शी, १३ गुणानुरागी, १४ सूपक्षी, १५ गम्भीर, १६ विज्ञानी, १७ वृद्धभक्त, १८ विनीत (नम्र), १९ कृतज्ञ, २० परहितकारी, और २१ लब्ध-लक्षी-ज्ञाता.

और भी २१ लक्षण—१ अल्पच्छा, २ अल्पारंभी, ३ अल्प परिग्रह ही. ४ सुशील. ५ सुव्रित्ती. ६ धर्मिष्ट, ७ धर्म वित्री, ८ कल्प उग्र विहारी. ९ महा संवेग विहारी. १० उदासी. ११ वैराग्य-वन्त, १२ एकान्त आर्य. १३ सम्यग मार्गी. १४ सुसाधु. १५ सुपात्र १६ उत्तम. १७ क्रियावादी १८ आस्तिक्य, १९ आराधिक. २०

प्रभावक. २१ अर्हत के शिष्य.

यों सब ५३ लक्षणके धारक होवे सो देशविरति गुण

६ छटे प्रमत संयति गुणस्थानी के लक्षण—१ अहिंसा, २ सत्य, ३ दत्त (अचोरी.) ४ ब्रम्हचर्य और ५ निष्परिग्रही. (यह ५ व्रत) ६—१० श्रोतेन्द्रि-चक्षुरेन्द्रि-घ्रणेन्द्रि- रसेन्द्रि और स्पर्शेन्द्रिय इन पांचो का निग्रह करे. ११-१४ क्रोध-मान-माय लोभ-इन चार कषाय को जीते. १५-१९ ज्ञानाचार-दर्शनाचार--चारित्राचार-तपाचार और वीर्याचार इन ५ आचार को आराधे. २०-२४ इर्यासमिति, भाषा समिति-एषणा समिति आदान-निक्षेपना समिति-और परिठावणीया समिति. इन पांच समित युक्त सदा प्रवर्ते २५-२७ मन वचन-और काया इनको स्ववश्य करे २८-३६ मकान-कथा-न-प्रेक्षन-मुणन-स्मरण-सरस अहार अधिक अहार और सिणगार ह नव ही कामे. विषय उत्पन्न होते वैसे त्यागे. यो ३६ लक्षण धारक होते है.

१७ प्रकार संयम पाले:—पृथवी पाणी अग्नि-वायु वनस्पति बेन्द्रि तेन्द्रिय-चौरिंद्रिय-पचेन्द्रिय और अजीव काय इन दशोंकी यत्ना करे, प्रेक्षना-प्रमार्जना—उत्प्रेक्षा—और परिठावणीय यह काम यत्न निमित करे. मन वचन और काय का धर्म मार्गमे स्थापन करे.

१२ प्रकार के तप—१ अनसन २ उणोदरी ३ भिक्षाचरी रसपरि त्याग ५ काया क्लेश और ६ प्रति सल्लेनता (यह ... तप) ७ प्रायश्चित. ८ विनय ९ वैयावच्च १० सज्झाय ... और १२ कायुत्सर्ग. यह १२ प्रकारका तप सदा करे

यह ६१ गुण के नाम कहे ऐसे अनेक उत्तम लक्षण ... प्रमत संयति होते हैं. परन्तु इस गुणस्थान का नाम ...

ने से यहा मद, विषय, कषाय, निन्दा और वीकथा इन पांचों प्रमादोंके निवासस्थान होने के सबब से तथा योगोंकी, दृष्टि की, भाषा की और भावोंकि इन चारोंकी चपलता होनेसबबसे वहुदा कृष्णादि तीनों अशुभ लेश्या परिणती में परिणम ने से मूल गुणों उत्तर गुणों में सुक्ष्म वादर अनेक प्रकार के दोषों लगते हैं उन से वच ने सदा प्रयत्न वन्त रहते हैं, और लगे दोषों से शुद्ध होने सदा प्रति क्रमण प्रायश्चितादि करते रहते हैं सो प्रमत संयाति गुण स्थानी जानना.

७ सातवे अप्रमत संयति गुणस्थान के लक्षण—यहा पाचों प्रमाद का अभाव होने से यह जीवों-मन्दाभिमानी, मन्द विषयी, मन्द कषायी, सदा उद्यमी, अल्प भाषी, गुणानुवादी, गम्भीर्य, ए एकान्त धर्म ध्यानी, ज्ञानी शान्त दान्त आदि उत्तम गुण संयुक्त होवे सो अप्रमत संयति गुणस्थानी.

८ आठवे नियटि वादर गुणस्थान के लक्षण—यह वादर दुसरे के जान ने में आवे ऐसी क्रोधादि कषायों की प्रणति में नहीं परिणमते हैं, अचपल, स्थिर स्वभावी शुक्ल ध्यानी वन पण्डित वीर्य को अवरण-अच्छा दन करने वाली प्रकृतियों को क्षय करने तीव्र वेगमय परिणामोंकी धारा समय २ प्रति वृद्धि करते हैं, सो अपूर्व करण गुणस्थानी.

९ नववे निव्रति वादर गुणस्थान के लक्षण—इन के सूक्ष्म भी क्रोध मान माय और तीनों वेदों के विकार का अभाव हुवा जिस से-अक्रोधी, अमानी, अमायि, निर्विषयी, अनुभव किये हुवे देखाते सुनाते भोगों की संपूर्ण वांछा रूप संपूर्ण संकल्प विकल्प रहित अपने परयात्म स्वरूप के ध्यान में निश्चल एकाग्र परिणम

है और जहां जहां उदय उदीरणा प्रकृतियों का व्यव छिन्न पना हूवा हो उनको पीछी आरंभते अर्थात्-जैसी तरह से उपशमाइ थी वैसी ही तरह से पीछी उदय भाव में लाते वो पडते हुवे आठवे गुणस्थान में तो नियमासे आते हैं. उसमें से कितनेक जीवों तो आठवे गुणस्थान में आकर उपशम श्रेणि त्याग कर पीछी क्षपक श्रेणि का प्रारंभ कर नववे दशवे गुणस्थान को स्पर्श वारवे चले जाते हैं. वो निश्चय से उस ही भव में मोक्ष पाते हैं. और कोइ क्षायिक सम्यक्त्वी होकर पीछा श्रेणिका आरंभ नहीं करे और आठवे में नहीं संभले वो चौथे में आकर ठेहरते हैं. इस से नीचे नहीं उतरते हैं. और उपशम सम्यक्त्वी आठवे में नहीं संभले तो सातवे छठे पांचवे चौथे आकर ठेरे, और जो कभी चौथे में भी नहीं संभले तो दुसरे होकर पहिले आवे; मिथ्यात्वी वन जावे ÷ परन्तु नियमा नहीं. कितनेक नहीं भी आते हैं. ऐसी तरहसे जो गमन गमन करे उनको उपशान्त मोह गुणस्थानी जानना.

१२ वारवे क्षीण मोह गुणस्थानी के लक्षण—इन के सर्व कषाय का क्षय होने से सर्व कर्मों की प्रकृतियों का संख्यातवा भाग में से बाकी एक ही भाग रहे उस वक्त-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, ५ अन्तराय, और दो निन्द्रा, इन १६ प्रकृतियों की सत्ता की स्थिति सर्व अपवर्तना से अपवर्त कर (घटाकर) क्षीण कषाय की अद्धा जैसी करे, परन्तु निद्रा द्विक को स्थिति स्वरूप की अपेक्षासे एक समय हीन करे, और सर्व कर्मों रूप से वरावर होवे ज

÷ यह उपशम श्रेणि और क्षपक श्रेणि चारित्र मोहकी प्रकृतियों को उपशमाने खपाने से होती है, परन्तु सम्यक्त्व मोहनी की नहीं.

नहीं है फक्त सत्ता में रही है उस के दालिक स्तिबुक + संक्रम कर उदयवति प्रकृतियों है उन्हे वेदे, वेदे कर क्षपावे, यों अयोगिक द्वि चरम समय लग करने से चारों ही अघातिक कर्म का यहां नाश होता है. वो अयोगी, अशरीरी, अलेशी, परम शुक्ल ध्यानी पण्डित वीर्य, क्षायिक सम्यक्त्व, यथाख्यात चारित्र, केवल ज्ञान, केवल दर्शन इन गुनों सहित होते हैं. सो अयोगी केवली गुणस्थानी जानना.

अन्तिम मुक्ति स्थान के परम परमात्मा के लक्षण केवल ज्ञान केवल दर्शन. निराबाध. क्षायिक-सम्यक्त्व. अजरामर, अमर, अगुरुलघु. अनन्त शक्तिवन्त. येही सिद्धत्व के लक्षण है.

६ छट्ठा दृष्टान्त द्वार. *

१ मिथ्यात्व गुणस्थानी—जैसे जन्मान्ध मनुष्य जन्म मात्र से किसी भी वस्तु के दर्शन न होने से उसका स्वरूप यथा तथ्य जान शक्ता नहीं है, तैसे जीवादि नवों पदार्थो को जानते नहीं है. और जो कोई जाने तो भी -(२) जैसे धतुरा पान करने से या पीलिये के रोग से अच्छा दित हुवा मनुष्य वस्तु को विपरीत-अन्य तरह से देखता है. तैसे मिथ्यात्वी जीवों भी नव ही पदार्थो को विपरीत. अन्य तरह से श्रद्धते है. ३६३ पाखण्डियों की माफिक जानना.×

---

* इन द्वारके खुलासे के लिये देखिये धर्म काण्ड का पृष्ठ ९. वा.

×जात्यन्ध—[illegible]
[illegible]

वा गमन से, क्षुधा-तृषा-शीत-ताप-ताडन-भेदन-आदि अनेक कष्टों के सहन करने से, यथा प्रवृति करण कर कोमल बना, अपूर्व करण कर उज्वल बना और अनिवृति करण कर-निर्मल बना. सम्यक्त्वी हूवा. (२) जैसे महा मेघकी घाटा से अच्छादित हुवा सूर्य वायु के प्रयोग से वो बदल पतले पडने से कुछ तेज का प्रकाश करता है. तैसे अनादि कर्म पटलों से कर्म पडलों कर अच्छादित हुवा आत्मा का तीनों करण रूप वायु से कर्म पतले पडने से ज्ञानादि ज्योति का कुछ प्रकाश हुवा. जिससे सर्वज्ञ प्रणित तत्वों का श्रद्धान हूवा. उन तत्वोंकी प्रभावना करे देव दानव मानव के किये मरणातिक संकट से भी सम्यक्त्व से परिणाम चलित नहीं करे, दृढ धर्मी प्रिय धर्मी होवे कृष्ण वासुदेव श्रेणिक राजा आदिवत्.

५ देश विरति गुणस्थनी—जैसे अफीम को जेहर जानता हुवा भी व्यश्न का प्रेरा हुवा कार्य साधन करने प्रमाण युक्त सेवन करता है, तैसे श्रावक भी आरंभ परिग्रह को खोटा जानते हुवे भी कर्म रूप व्यश्न के प्रेरे हुवे, आत्म कार्य साध ने मर्यादके अन्दर सदा प्रवृति करते हैं. (२) जैस धाय माता-दुसरे के बचे को स्तनपान कराती-किडा कराती भी उस बच्चे से विरक्त भाव रहती है. तैसे श्रावक भी शरीर सज्जन का पोषण करते विरक्त भावी रहते हैं. दशों श्रावकोवत्.

६ प्रमत संयति गुणस्थानी—(१) जैसे धनावा शेठ अपने प्राण प्यारे देव दत्त पुत्र का घातिक विजय चोर के साथ (एकही खोडे मे) कर्म योग फस अपना कार्य साध ने उदासीन भाव से उसे अहार का विभाग दिया. तैसे साधु भी आत्म गुण के घातिक शरीर रूप चौर के वश्य में पड, मोक्षार्थ साध ने निर्वद्य उपचा

९ अनियट्टी वादर गुणस्थानी—जैसे क्षार के संजोगसे दूध फट जाने से वो घृत से निरांश होता है, फक्त स्वभाविक चिकणास की झलक रहती है, तैसे नववे गुणस्थान वृति महात्मा के अन्तः करण से निवृति करण रूप क्षार कर के, विषय कषाय रूप घृत से निराश हुवा फक्त स्वभाविक संज्वल के रूप चीकास रही, हरकेशी ऋषिवत्.

१० सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानी—जैसे कासूंबे के रंग से रंगति वस्त्र को क्षारादि से धो साफ किये बाद-श्वेत हुवे बाद भी उस में रंग की कुछ मोतीया झलक रहती है. तैसेही दशवे गुणस्थान वर्ती ने आत्म रूप वस्त्र का कषाय रूप रंग को दुर करने चारित्र रूप पाणी. तप रूप अग्नि, और सूक्ष्म करण रूप क्षार (साबन) से धो उज्वल करी है तो भी सूक्ष्म संज्वल लोभ कषाय रूप झलक रहजाती है.

११ उप शान्त मोह गुणस्थानी—(१) जैसे अग्नि के प्रज्वलित अंगारे को राख कर ढक देने से उस का तेज छिप जाता है, परन्तु उसका कुछ नाश नहीं होता है. वायु का प्रयोग होते ही उपर ढकी हुइ राख दूर होते ही उस अग्नि का तेज प्रगट होता है, तैसे ही इग्यारवे गुणस्थान वृति ने मोह कर्म रुप अंगार को उपशम भाव रूप राख कर ढकी थी, सो संज्वल के रूप वायु का झपटा लग ने से पुनः जरूर ही प्रगट होती है (जिस से वो पडवाइ होता है. (२) जैसे चौतरफ मुद्रित कर एक ही दरवज्जे वली कोटडी में प्रवेश किया हुवा मनुष्य जिस रस्ते से प्रवेश किया था, उसी रस्ते से पीछा बाहिर आना पडता है-दूसरी तरफ जा नहीं शक्ता है. तैसेही इग्यारवे गुणस्थानवर्ति जिन

योग-उद्यम करता था उस प्रयोग के धक्के से मुक्ति तक जाता है. (२) असंग से सो-जैसे माट्टि और सण के लेपसे भारी हुवा तुम्बा पाणी में डूबा हुवा था, वो लेप गलकर छूटतेही तुर्त पाणी के उपर आजाता है, तैसे ही आत्मा कर्म वर्गणा के लेप कर संसार में डुब रहाथा, वो लेप गल के छूटने से संसार के अन्तिम विभाग में मोक्ष को प्राप्त होता है. (३) बन्ध छेद से सो–जैसे एरन्ड के फळ में बीज बन्धा हुवा था सो फल सूक कर फटते ही बीज ऊंचा उछल पडता है, तैसे ही आत्म कर्म बन्ध से छूटते ही उर्द्ध लोक को गमन करता है.(४)जैसे पवन रहित अग्नि की ज्वाला का स्वभाव से ही उर्द्ध गमन होता है, तैसे ही कर्म रहित आत्मा भी स्वभाव से ऊंची दिशा जाती है (५) जैसे पांचों रसों मे से घृत का किसीभी रस में कथन नहीं कर सके (स्वाद नहीं बता सके) त्यों सिद्ध के सुकों का भी वरणन न होसके.

---

७ सातवा-गुण द्वार. *

१ मिथ्यात्व गुणस्थान वाला—मिथ्यात्व बुद्धि-दुर्बुद्धि कर असत्य पदार्थों में सत्य भाव धारण कर. दुःख को सुख रूप मान पुद्गल परिणति में आपा स्थापन कर, अनेक प्रकार की आधि व्याधी उपाधीसे पिडित होता है; आगे चारों गति रूप चोहटे (चौरस्त) में जीव रूप गेन्द को, कर्म रूप दंडाका प्रहार कर मिथ्यात्व रूप खेलाड़ सदा परिभ्रमण करता ही रहेगा. जहां तक इस स्थान में संस्थित रहेगा वहां तक संसारका अन्त कदापि नहीं पा

---

* इस द्वारके खुलासे के लिये देखिये अर्थ कण्डका पृष्ट १०४ वा.

पन्द्रे भवों के अन्दर ही मोक्ष प्राप्त करलेता है.

५ देशव्रति गुणस्थान में आने वाले-संतोष रूप आनन्दके भुक्ता, सर्व जीवों के विश्वासनिय, माननिय, यशःश्वी बने, और जो व्रतों का भंग नहीं करे तो-जघन्य पहिले देव लोक में उपजे, उत्कृष्ट बारेवे देवलोक में उपजे, और जघन्य ३, उत्कृष्ट १५ भवमें मोक्ष प्राप्त करे.

६ प्रमत संयाति गुणस्थान वाले—सर्व चिन्ता से निर्मुक्त, शील संतोष दया क्षमा आदि विभुति से भूषित, तपोधन, नरेन्द्र सुरेन्द्र के वंदनीय पूज्यनीय, ज्ञानान्द के ध्यानानन्द में निर्मग्न रह आयुष्य समाप्ति बाद जघन्य प्रथम स्वर्ग उत्कृष्ट अन्तिम स्वर्ग सर्वार्थ सिद्ध विमान तक जाकर उपजते हैं, और जघन्य ३ उत्कृष्ट १५ भव में मोक्ष पाते हैं.

७-१० अप्रमत संयति से सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान में प्रवृत ते, अप्रमादी निर्विषयी, निःकषायी आत्म ध्यानके परमानन्द में मग्न हुवे, आयु के अन्त कल्पतीत देवों में जाकर उत्पन्न होवे. और उत्कृष्ट तीसरे भव मे मोक्षकी प्राप्ति करे.

११ उपशान्त मोह गुणस्थान वाले-वीतरागी-यथाख्यात चारित्री. परम उपशान्त रस मे निर्मग्न, आत्म ज्ञान के महाजनन्द सुखों में रमण कर्ता, आयुष्य पूर्ण कर अनुत्तर विमान में उपजते हैं. और जघन्य उसी भव में उत्कृष्ट तीसरे भव में मोक्ष पातेहैं.

१२क्षीणमोह गुणस्थान वाले-क्षपकश्रेणि,क्षायिकभाव क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिक-यथाख्यात चारित्र, करण सत्य, जोग सत्य, भाव सत्य, अमायी अकषायी, वीतरागी, भावनिर्ग्रन्थ संपूर्ण सम्वुड सम्पूर्ण भवीतात्मा महा तपश्वी महा सुशील अमोही अविकारी, महा-

(ज्यादा से ज्यादा) एक हजार जोजन प्रमाणें होती हे

देशव्रति गुणस्थान वालों की जघन्य ९ अंगुल की, उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की अवघेणा होती हे.

प्रमत अप्रमत गुणस्थान वालों की जघन्य १ हाथ की उत्कृष्ट पांचसो धनुष्य की अवघेणा होती हे.

अपूर्व करण गुणस्थान से लगाकर अयोगी केवली गुणस्थान वालों की जघन्य २ हाथ की उत्कृष्ट ५०० धनुष्यकी अवघेणा.

और अन्तिम स्थान मुक्ति में जो परमात्माके शुद्धात्म प्रदेशों हे उन की जघन्य एक हाथ आठ अंगुल, मध्यम चार हाथ सोले अंगुल और ऊत्कृष्ट ३३३ धनुष्य ३२ अंगुल की अवघेणा होती हे.

नववा-उत्पाति द्रव्य परिमाण द्वार=

एकही समय में जीवो उत्पन्न होवे तो मिथ्यात्व गुणस्थान में जघन्य-१-२-३, उत्कृष्ट संख्याते असंख्याते और अनन्ते जीव.

सास्वादन, मिश्र, अविरति, और देश विरति-इन पांचों गुणस्थान में जघन्य -१-२-३, उत्कृष्ट-संख्याते असंख्याते जीवों पावे.

छट्ठे प्रमत गुणस्थानमें जघन्य १-२-३-उत्कृष्ट÷प्रत्येक हजार

सातवे अप्रमत गुणस्थानमें जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक सो.

अपूर्व करण,अनिवृत्ती बादर, और सूक्ष्म सम्पराय, इन तीनों गुणस्थान में अलग जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट दोनों श्रेणि के मिल १६२ जीवों पावे.

☞ = इस द्वारके खुलासे के लिये देखिये अर्थ कांडका पृष्ट १०९ वा.

÷ दोसे लगाकर ९ तक की संख्या को 'प्रत्येक' नाम से बोलाते हैं.

३, उत्कृष्ट १०८ जीवों पावे.

अयोगी केवली गुणस्थान मे पूर्व प्रवर्तन आश्रिय जघन्य, १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक सो जीव पावे. वर्तमान प्रवृतन आश्रिय जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट १०८ जीवों पावे.

अन्तिम सिद्धस्थान में-सदा अनन्तांत जीवोंका निवासहै.=

इग्यारवा-क्षपति द्रव्य परिमाण द्वार.

एक समय में जीवोंचवे-खपे-मरें तो-१ मिथ्यात्व गुणस्थानमे जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट-संख्याते असंख्याते अनन्ते.

२-५ सास्वादन से देशविरति गुणस्थान वाले जीवों एक समय में चवेतो जघन्य १-२-३ उत्कृष्ट संख्यात असंख्याते.

६-७ प्रमत अप्रम गुणस्थान मे-जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक सो.

☞ × इस द्वारके खुलासा के लिये देखिये अर्थ कांडका पृष्ट १०२ वा.

* दिगम्बर आमना के सुदृष्टि-तरंगणी ग्रन्थ में गुणस्थानों में जीव द्रव्य का परिमाण इसतरे बताया है:—पहिले गुणस्थान में-अनन्तान्त जीवों पावे दुसरे मे-तेरे (१३) क्रोड जीवों पावे. तीसरे में-५२ क्रोड, चौथेमे-७०० सो क्रोड, पांचवे में-१०४ क्रोड. छठे मे-५९३९८२०६. सातवे में-२९६९९१०३. ॥ उपशम श्रेणी आश्रिय आठवे में-२९९. नववे में २९९. दशवे में. और इग्यारवे मे भी २९९. सर्व-११९६ और क्षपक श्रेणी आश्रिय-आठवे में-५९८. नववे में ५९८, दशवेमे ५९८ बारवे मे भी ५९८. और चउदवे में भी ५९८ सर्व-२९९०. और तेरवे गुणस्थान में-केवल ज्ञानी ८९८५०२ पावे. यों पहिला छोडनेसे ही गुणस्थान के मिल ८९९९९९९७ इतने जीव एकही वक्त में पाते हैं. यह बात बहुत ही विचार ने जैसी है किस अपेक्षासे लिखा है सो ग्रन्थ कर्ता जाने.

देव लोक तक, और नीचे पडंगवनसे छठी नरक तकका क्षेत्र स्पर्शे.

५ देश विरति गुणस्थानी-अधो गामिती विजय से १२ देवलोक तक स्पर्शे.

६-११ प्रमत गुणस्थानी से लगा, उपशान्त मोह गुणस्थान वाले जीवें अधोगामिनी विजय से लगाकर पांच अनुत्तर विमान तक स्पर्शे.

१२ क्षीण मोह गुणस्थान वाले लोक का असंख्यातवा भाग स्पर्शे.

१३ सयोगी केवली गुणस्थानी-सर्व लोक स्पर्शे. =

१४ और अयोगी केवली गुणस्थानी-तथा सिद्ध भगवान लोक का असंख्यात वा भाग स्पर्शे.

चउदवा-काल परिमाण (स्थिति) द्वार.×

१ मिथ्यात्व गुणस्थानकी स्थिति तीन प्रकार कीः-(१) अणाइया अपज्जवासिया" अर्थात्-आदि और अन्तरहित मिथ्यात्व अभव्य जीवों का होता है, अभव्य कदापि सम्यक्त्व नहीं स्पर्शतेहैं. (२) " अणाइया सपज्जवसीया"-अर्थात् आदि तो नहीं परन्तु अन्त आता है, ऐसा मिथ्यात्व भव्य जीवोंका होता है, किसीभी वक्त मिथ्यात्व गुणस्थान का त्याग कर आगे बडते हैं. (३) सइया सपज्जवसीया" अर्थात्-आदि और अन्त दोनों सहित. ऐसे

× इस द्वारके खुलासा के लिये देखिये अर्थ कांडका पृष्ट ११९ वा.

= सर्व लोक केवल समुद् घात करती वक्त स्पर्शते हैं

७-११-२ प्रमत गुणस्थानसे लगा उपशान्त मोह गुणस्थानें तक पांचोंकी अलग २ स्थिति—जघन्य १ समय, उत्कृष्ट अन्तर मुहूर्त की.

१४ अयोगी केवली गुणस्थान की स्थिति पंच लघु अक्षर (अ. इ. उ. ऋ. ऌ.) इन के उच्चार में वक्त लगे उतनी.

और अन्तिम स्थानी सिद्ध भगवन्त की स्थिति दो प्रकार की—(१) "अणादिया अपंजवसिया," सो अन्त सिद्धोंका आदि और अन्त दोनों ही नहीं हैं. क्योंकि अन्त काल वीत गया और वीत जायगा और (२) "सआय अपज्जवसीया" सो कितनेक सिद्धों की आदि तो है जैसे महावीर प्रभू कार्तिक अमवस्य को मोक्ष पधारे परन्तु अन्त नहीं. अमर हैं.

पन्दरवा-काल प्राप्त द्वार

३—१२—१३ तीसरा-मिश्र, वारवा-क्षीण मोह, और तेरवा-संयोगी केवली इन तीनोगुण स्थानों में कोइभी जीव कदापि काल प्राप्त नहीं करता—मरता नहीं है.

१४ अयोगी केवली गुणस्थान में अवस्य काल करता है.

१—११ वाकी दश गुणस्थानों में काल करने की 'भजना'—अर्थात् कोइ मरे और कोइ नहीं भी मरे. उपर नीचे चला जाय. और सिद्धतो अमर ही हैं.

कर सकते हैं. सो कर्म भूमीही प्राप्त कर सकते हैं. इनकी उत्कृष्ट अन्तर क्रोड पूर्व की ही होती है.

३ मिश्र गुणस्थान की गति मार्गणा तीनः—तीसरे गुण-स्थान से-१ चौथे गुणस्थान जाय, २ पांचवे गुणस्थान जाय, औ ३ सातवे जाये.

४ अविरति गुणस्थानी की गति मार्गणा दोः—चौथे गुण स्थान से (१) पांचवे जाय और (२) सातवे जावे.

५ देशविरति गुणस्थानकी गति मार्गणा एक-सातवे जावे.

६ प्रमत गुणस्थनीकी भी गति मार्गणा एक-सातवे जावे.

७ अप्रमत गुणस्थानी की गति मार्गणा एक आठवे जावे.

८ अपूर्व करण गुणस्थानीकी गति मार्गणा एक-नववेजावे

९नियटि वादर गुणस्थानीकी गति मार्गणा एक-दशवेजावे.

१० सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान की गति मार्गणा दो इग्यारवे जावे.

११ उतपशान्त मोह गुणस्थानी की गति मार्गणा नहीं, क्योंकि-पडवाइ होता है,

१२क्षीण मोह गुणस्थानीकी गति मार्गणा एक-तेरवे जावे.

१३ संयोगी केवली गुणस्थानी की गति मार्गणा एक—चौदवे जावे.

१४ अयोगी केवली गुणस्थानीकी गति मार्गणा-मोक्ष जावे मोक्ष स्थान से गति मार्गणा नहीं सदा स्थिर रहते हैं.

उन्नीसवा उपमार्गणा द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में उपमार्ग नहीं,-क्योंकि-पाहिला ही

उत्कृष्ट वैराग्य दिशा प्राप्त होतेही सातवे गुणस्थान में चले जाते हैं, और फिर "देवे भेट की जातरा पूरी हुइ" इस दृष्टान्तानुसार वो पडकर छटेमें आते है.

वे और जो पडे तो-पहिले-दुसरे-और-तीसरे-आवे.

५ देशविरति गुणस्थान छोड चडेतो-सातवें जावें. और पडेतो पाहिले दूसरे तीसरे और चौथे आवे.

६ प्रमत गुणस्थान छोड-चडेतो सातवे जावे, और पडेतो पहिले दुसरे तीसरे चौथे और पाचवें आवे.

७ अप्रमत गुणस्थन छोड-चडेतो आठवे जावे, और पडेतो छठे आवे, और काल करेतो चौथे आवे.

८ अपूर्व करण गुणस्थान छोड चडेतो नववे जावे, और पडेतो सातवे आवे. और काल करे तो चौथे आवे.

९ अनियट्टि बादर गुणस्थान छोड-चडेतो दशवे जावे, और पडेतो नववें आवे, और काल पूर्ण करेतो चौथे आवे.

१० सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान छोड-चडेतो उपशम श्रेणिवाला इग्यारवे जावे. क्षपक श्रेणि वाला बारवे जावे, तथा पडेतो नववे आवे और कालपूर्ण करेतो-मरेतो-चौथे आवे.

११ उपशान्त मोह गुणस्थान छोड-चडे नहीं. पडेतो दशवे और आवे मरेतो चौथे आवे.

१२ क्षीण मोह गुणस्थान छोड-तेरवे जावे. पडे नहीं

१३ सयोगी केवली गुणस्थान छोड-चउदवे जावे. पडे नहीं.

१४ अयोगी केवली गुणस्थान छोड-मोक्ष जावे पडे नहीं. और मोक्ष हुये पीछे नहीं. कहीं जावेही नहीं सदा वहीं बने रहे.

इक्कीसवा-परस्पर उपसार्गणा द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में-दुसरे तीसरे चौथे पांचवे और छट्ठे

बावीसवा-अरोह अवरोह द्वार.

१ मिथ्यात्व गुणस्थान वाले की एक आरोह-चडती गति.

२ सास्वादन गुणस्थानी की एक अवरोह-पडति गति.

३-१० मिश्र गुणस्थान से लगाकर सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान वाले-अरोह अवरोह-चडति पडति दोनों प्रकार की गति करें.

११ उपशान्त मोह गुणस्थानी की एक-अवरोह गति.

१२-१४ क्षीण मोहसे संयगी केवली तक एक-अवरोह गति. और सिद्धस्थान में दोनों ही गति नहीं-स्थिर हैं.

तेवीसवा चडाचड गति दृष्टान्त द्वार

१ दादुर (मेडक.) २ परनाल, ३ ईलड, और ४ उलाल, इन चारों प्रकारकी गति में से.

१ मिथ्यात्व गुगस्थानी की एक दादुर गति-फदक मारचडे, २सास्वादन गुगन्थानीकी एक परनालगति-परनाल ज्यों पडे, ३ मिश्र गुगस्थनी की गति दो तरह–१इलड और उलाल. ४अविरति गुगस्थानी चारों प्रकारकी गति करतेहैं.

५देश विरति गुगस्थानी तीन प्रकारकी गति करे-१ दादुर२ परनाल, और ३ उलाल.

६–९ प्रमत गुगस्थान से नियट्टि बादर गुणस्थानवाले तीन प्रकारकी गति करे-१ ईलडगति, २ परनालगति, और ३ उलालगति.

१० सूक्ष्म संपराय गुणस्थानी चारोंही प्रकारकी गति करे

११ उपशान्त मोह गुणस्थानी दो प्रकारगति करे-१ परनाल और २ उलाल.

पच्चीसवावा-विरह काल द्वार.

इस लोकमेंसे-१ मिथ्यात्व, ४ अविरति, ५ देश विरति,६प्र-मत संयति और १३सयोगी केवली इन पांचों गुणस्थानों का विरह कदापि नहीं पडता हैं, यह गुणस्थान लोक में सदाही पाते हैं.

सास्वादन और मिश्र का विरह पडेतो जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अन्तर मुहुर्त का.

अपूर्व करण, नियटि वादर, सूक्ष्म सम्पराय, उपशान्त मोह क्षीण मोह और अयोगी केवली इन गुणस्थान का विरह पडेतो ज घन्य अन्तर मुहूर्त का उत्कृष्ट छे महीनेका, फिर तो कोइ जीव ज रुरही गुणस्थान स्पर्शे होताहै.

२६वा एक भव आश्रिय स्पर्शना द्वार.

एकही भव में-१ मिथ्यात्व गुणस्थान जघन्य १ वक्त, उत्कृ-ष्ट ९०० वक्त स्पर्शे. २सास्वादन गुणस्थान जघन्य एक वक्त, उत्कृ ष्ट दो वक्त स्पर्शे.

३–४ मिश्र और अविरति गुणस्थान जघन्य १ वक्त, उत्कृ ष्ट प्रत्येक हजार वक्त स्पर्शे.

५-७ देशविरति, प्रमत संयती और अप्रमत संयती गुणस्थान १ जघन्य वक्त उत्कृष्ट ९०० वक्त स्पर्शे.

८-१० अपूर्व करण नियटि वाद और सूक्ष्म सम्पराय गुण-स्थान जघन्य एक वक्त, उत्कृष्ट चार वक्त स्पर्शे.

११ उपशान्त मोह गुणस्थान जघन्य १वक्त वक्त स्पर्शे.
१२-१४क्षीणमोह-सयोगी केवली-और अयोगी तीनों गुण

स्थान एक ही वक्त स्पर्शे.

और सिद्ध स्थान भी एक वक्त स्पर्श बाद छूटता ही नहीं है.

सतावीसवा—बहुतभव आश्रिय स्पर्शना.

बहुत भवों में-१ मिथ्यात्व गुणस्थान को जघन्य दो वक्त स्पर्शे. उत्कृष्ट-असंख्यात वक्त स्पर्शे.

२सास्वादन गुणस्थान जघन्य,दो वक्त, उत्कृष्ट-५वक्तस्पर्शे.

३-४ मिश्र और अविरति गुणस्थान जघन्य-दो वक्त उत्कृष्ट असंख्यात वक्त स्पर्शे.

५ देश विरति गुणस्थान जघन्य-दो वक्त, उत्कृष्ट १,०००वक्त स्पर्शे.

६-७ प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थान,-जघन्य दो वक्त, उत्कृष्ट १,०० वक्त स्पर्शे.

८-१० अपूर्व करण नियटि बादर और सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान जघन्य दो वक्त स्पर्शे. उत्कृष्ट ९ वक्त स्पर्शे

११ उपशान्त मोह गुणस्थान दो वक्त, उत्कृष्ट५ वक्त स्पर्शे

१२-१४ क्षीणमोह सयोगी और अयोगी गुणस्थान एकही वक्त स्पर्शे

और सिद्ध स्थान भी एकही वक्त स्पर्शे.

अठावीसवा-परस्पर स्पर्शना द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थानी-पहिला गुणस्थान को नियमाही स्पर्शे, दूसरे गुणस्थानसे आगाकर इग्यारवे गुणस्थान तक स्पर्श की भजना.+

+ [illegible] स्पर्शे और नहीं स्पर्शे उसे भजना कहते है. और सदा ही स्पर्शे उस नियम कहते है

२ सास्वादन गुणस्थानी-पहिला दुसरा और चौथा यह ती-नो तो गुणस्थानतो नियमा से स्पर्शे. और तीसरे पांचवासे जावत इग्यारवे तक स्पर्शने की भजना.

३ मिश्र गुणस्थानी—पहिला तीसरा और चौथा तो नियमां से स्पर्शे. बाकी दुसरा पांचवा छठा जावत इग्यारवे तक स्पर्श ने की भजना.

४ अविरति गुणस्थानी—पहिला और चौथा तो नियमा से स्पर्शे. बाकी दुसरा तीसरा पांचवा जावत इग्यारवे तक स्पर्श ने की भजना.

५ देश विरति गुणस्थानी-पहिला चौथा और पांचवा तो नियमासे स्पर्शे. और दूसरा तीसरा छठा जावत इग्यारवातक स्पर्श ने की भजना.

६ प्रमत गुणस्थानी-पहिला चौथा छठा और सातवा यह तो नियमा स्पर्शे, और दुसरा तीसरा पांचवा आठवा जावत इग्या रवा स्पर्श ने की भजना.

७ अप्रमत गुणस्थानी-पहिला चौथा और सातवा यह ३तो नियमा स्पर्शे. और दूसरा तीसरा पांचवा छठा आठवा जावत इ-ग्यारवा स्पर्श ने की भजना.

८अपूर्व करण गुणस्थानी-पहिला चौथा छठा सातवा और आठवा यह५तो नियमासे स्पर्शे. और दुसरा तीसरा पांचवा नववा द-शवा और इग्यारवा इन ६ गुणस्थान स्पर्शने की भजना.

९ नियट्टि बादर गुणस्थानी-पहिला चौथा छठा सातवा आठवा और नववा यह ६तो नियमा से स्पर्शे. और दुसरा [illegible] पांचवा, दशवा इग्यारवा इन ५ के स्पर्श ने की भ[illegible]

१० सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानी-पहिला चौथा छठा सा आठवा नववा और दशवा यह तो नियमासे स्पर्शे. और दुस सरा पांचवा इग्यारवा की भजना.

११ उपशान्त मोह गुणस्थानी-पहिला चौथा छठा सा ग्यारवा यह ८ तो नियमासे स्पर्शे. और दुसरे तीसरे पांचवेकी

१२ क्षीण मोह गुणस्थानी-पहिला चौथा छठा सातवा वा नववा दशवा बारवा तेरवा और चउदवा यह १० तो नि स्पर्शे. और दुसरा तीसरा पांचवा इग्यारवा इन चारों की की भजना.

१३-१४ सयोगी केवली और अयोगी केवली गुण पहिला चौथा छठा सातवा आठवा नववा दशवा बारवा ते र चउदवा यह १० तो नियमा से स्पर्शे और दुसरे तीसरे इग्यारवा गुणस्थान स्पर्शने की भजना.

और सिद्ध परमात्मा के जीवों ने-पहिला चौथा सा ठवा नववा दशवा बारवा तेरवा और चउदवा इन ९ गुण तो निश्चयसे स्पर्श किया बाकी के ५ गुणस्थान स्पर्शने

उन्नतीसवा पढम अपढम द्वा

मिथ्यात्व गुणस्थान से उपशान्त मोह गुणस्था अपढम दोनों-अर्थात इन की पहिले स्पर्श ने स्पर्श ने र पहिली बार भी स्पर्शे. ऊपर के तीनो वक्त स्पर्शे.

३०वा शाश्वताउ

मिथ्यात्व, अविरति, देशविरति, प्रमत, और सयोगी केवली
ांचों गुणस्थान शाश्वते-सदा पावे. बाकी के नव गुणस्थान
श्वते-किसी वक्त पावे किसी वक्त नहीं भी पावे.

३१वा-परभव गमन द्वार

मिथ्यात्व सास्वादन और अविरति यह तीनों गुणस्थानोंतो
व में जाते हूवे जीवों के साथ जातेहैं. बाकीके ११ गुणस्थान
होवे वहां ही रहजाते है.

बतीसवा भवसंख्या द्वार.

मिथ्यात्व मिथ्यात्व अनन्तान्त भव तक व साथ बना रहे,
दन से लगाकर देश विरति गुणस्थान जघन्य १-२-३ भवत
गोलग प्राप्त होवे, उत्कृष्ट सात तथा आठ भव तक लगोलग
होवे. और प्रमत गुणस्थान से सजोगी केवली गुणस्थान तक
एकही भव में ही साथ रहे.

तेतीसवा-अल्प बहुत द्वार.

सबसे थोडे इग्यारवा उपशान्त मोह गुणस्थानमें प्रवर्तते जी
सके उपशम श्रेणिके आरंभमें एक समय ५४ जीवों पातेहैं.
अपूर्व करणसे क्षीण मोह गुणस्थान वाले जीवों संख्यत गुणे
यह५नो नियम, क्षपक श्रेणिवाले एक समय में १०८ मिलते हैं,
और इग्यारवा इन ६ा नहीं तो इससे विपरीत जीवों पाते हैं.

९. नियट्टि बादर गुणस्थान, दशवा सूक्ष्म संपराय-नववा-नियट्टि बादर,
और नववा यह ६ठा, निर्ग इन तीनों गुणस्थान वाले आपसमें तो
दशवा इग्यारवा इन ५

सम-तुल्य (बरोबर) और बारवे गुणस्थान से संख्यात गुणे अधिक होते हैं, क्योंकि-इन तीनों गुणस्थानों में उपशम और क्षपक दोनों प्रकारकी श्रेणि वाले जीवों एक ही वक्त में पाते हैं. इस लिये उपशम श्रेणिवाले ५४ और क्षपक श्रेणि वाले १०८, यों दोनोंही मिलकर प्रत्येक गुणस्थानमें अलग२ उत्कृष्ट पदे १६२जीवों पातेहैं.

इसमे-तेरवे सयोगी केवली गुणस्थान वाले संख्यात गुणे अधिक, क्योंकि-एक समय में प्रथक क्रोड पाते हैं.

इस से सातवे अप्रमत संयति गुणस्थान वाले संख्यत गुणे अधिक, क्योंकि-एक समय में प्रथक सो क्रोड पाते हैं.

इस से छठे प्रमत संयति गुणस्थानी संख्यात गुण अधिक क्योंकि एक समय में प्रत्येक हजार क्रोड पाते हैं. और अप्रमाद के कालमे प्रमादका काल संख्यात गुणा अधिक है.

इस मे-पंचवे देश विरति गुणस्थान वाले असंख्यात गुण अधिक, क्योंकि सन्नी तिर्यच पचेन्द्रिय भी यहां पाते हैं.

इसमे दूसरे सास्वादन गुणस्थान वाले असंख्यात गुणे अधिक क्योंकि-इस गुणस्थान वाले जीवों चारों गति मे पाते हैं

इसमे-तीसरे मिश्र गुणस्थान वाले असंख्यात गुण अधिक क्यों कि—दूसरे गुणस्थान मे इस की स्थिति असंख्यात गुणी अधिक है.

इसमे-चौथे अविरति सम्यग दृष्टि गुणस्थान वाले असंख्यात गुणे अधिक, क्योंकि इस की स्थिति बहुत ज्यादा है.

इसमे-चउदवे अजोगी केवली गुणस्थानी अनन्त गुणे अधिक, क्योंकि-अयोगी की अपेक्षामे सिद्ध भगवंत भी इसमे लिये

इसमे पहिले मिथ्यात्व गुणस्थान वाले जीवों अनन्त गुणे

अधिक हैं. क्योंकि-निगोद के जीवों मे भी यह गुणस्थान पाताहै.

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराजकी सम्प्र
दायके बाल ब्रम्हचारी मुनि श्री अमोलख
ऋषिजी महाराज विरचित गुणस्थान
रोहणअढीसतद्वारी ग्रंथके प्रथम
मूल काण्ड का प्रथम
मूलद्वारा रोहण
खण्ड.

द्वितीय खण्ड-कर्म द्वारा रोहण.

प्रथम प्रकर्ण-कर्मोत्पत्ति द्वार.

कर्मोत्पत्ति के ७ द्वार के नाम

१ किरिया द्वार, २ मूल हेतु द्वार, ३ मिथ्यात्व हेतु द्वार, ४ अविरत हेतु द्वार, ५ कषाय हेतु द्वार, ६ योग हेतु द्वार, और ७ समुच्चय हेतु द्वार.

३८. पहिला-किरिया द्वार.

२५ क्रिया के नाम-१ कायिकी, २ अधिकरणी, ३ पाउ सिया, ४ परितापनिया, ५ पाणाइ वाय, ६ आरंभीया, ७ परिग्ग हिया, ८ मायावतिया, ९ अपच्चखाण वतिया, १० मिथ्या दंसण

[illegible] के लिये [illegible] पृष्ठ १०० [illegible]

वतिया, ११ दिठीया, १२ पुठिया, १३ पाडुचिया, १४ सामंतोवाणि या, १५ नेसथिया, १६ सहथिया, १७ अणवणिया, १८विदारणिया, १९अणव२०अनाभोगा,कंखवतिया,२१अनापउगी,२२सामुदाणी,२३ पेजवतिया, २४ दोषवतिया, २५ इर्यावहीया किरिया. इन २५ क्रिया में से:

मिथ्यात्व और मिश्र गुणस्थानी के २४ क्रिया लगे, २५ में से-इर्यावही टली.

सास्वादनी और अविरति गुणस्थानी के २३ क्रिया लगे, २४ मेंसे मिथ्य दंशणवतिया टली.

देश विरति गुणस्थानी के २२ क्रिया लगे,२३ मेंसे-अपच्च खाणिया टली.

प्रमत संयति के गुणस्थानी २१ क्रिया लगे,-२२ मेंसे परिग्गहीया टली.

अप्रमत संयति से लगाकर सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानी तक के २० क्रिया लगे-उपर २२ कही उनसे-आरंभिया क्रिया टली. ÷

उपशान्त मोह से लगा कर सयोगी केवली गुणस्थान के १ इर्यावही लगे.

अयोग केवली गुणस्थानी और सिद्ध भगवन्त के क्रिया बिलकुलही नहीं लगे.

२५ दूसरा-मूल हेतु (कारण) द्वार *

कर्म बन्धके मूल हेतु कारण ५ हैं:-१ मिथ्यात्व. २ अविरति. ३ प्रमाद. ४ कषाय. और ५ योग. इनमें से.

☞ * इस द्वारके खुलासे के लिये देखिये अर्थ द्वारका पृष्ठ १६७ वा.

मिथ्यात्व गुणस्थान में पांचोंही कारण पावे.

सास्वादन मिश्र अविरत और देश विरति गुणस्थानी के ४ कारण, ५ मेसे मिथ्यात्व टला.

प्रमत और अप्रमत गुणस्थानी में तीन कारण, ४ मे से अविरति टली.

अपूर्व करण, नियट्टी बादर और सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानी में दो कारण प्रमाद टला.

उपशान्त मोह, क्षीण मोह, और सयोगी केवली गुणस्थानी में एक कारण योग.

अयोगी केवली गुणस्थानी में और सिद्ध में कर्म बन्ध का कारण नहीं पावे.

३६, तीसरा मिथ्यात्व हेतूद्वार. *

५ मिथ्यात्व के नाम-१ अविग्रह, २ अनाविग्रह ३ अभिनिवेशिक ४ संशयिक और ५ अनाभोग इन में सेः—

मिथ्यात्व गुणस्थान में पांचों ही मिथ्यात्व पावे, बाकी सास्वादन से लगाकर चउदवे अयोगी केवली गुणस्थान तक मिथ्यात्व नहीं पाताहै.

३७, चौथा-अविरति हेतू द्वार *

१२ अविरति के नाम-५ पांच इन्द्रियकी, १ मनकी ओर ६ कायाकी मिथ्यात्वसे अविरति गुणस्थानतक १२ प्रकारकी अविरति लगे.

* इस द्वारके खुलासे के लिये देखिये अर्थ कल्पका पृष्ट १५९ पृष्ट.

देशविरति गुणस्थान में-त्रसकायकी अविरति विना ११ लगे. प्रमतसे अजोगी केवली गुणस्थानाके अविरति नहीं लगती है.

२८ पांचवा-कषाय हेतू द्वार ÷

२५ कषाय के नाम-४ अनन्तान वन्धि चौकडी, ४ अप्रत्याख्यानावरणीय चौकडी, ४ प्रत्याख्यानवरणीय चौकडी ४ और संज्वलन की चौकडी, यों १६, और १ हांस्य २ रति, ३ अरति, भय, ५ शोक, ६ जुगुप्सा, ७ स्त्रीवेद, ८ पुरुष वेद, और ९ नपुंसक वेद. यों सब २५ हुइ.

मिथ्यात्व और सास्वादन गुणस्थान में-कषाय पावे २५ ही.

मिश्र और अविरति गुणस्थान में-कषाय पावे २१, अनन्तान वान्धिक चौक टला.

देश विरति गुणस्थानी में-१७ कषाय, २१ मेंसे-अप्रत्याख्यानावरणीका चौकडी टली.

प्रमत अप्रम और अपूर्व करण गुणस्थानी में १३ कषाय, १७ मेंसे प्रत्याख्यानावरणी चौक टला.

अनियटि वादर गुणस्थानी में ७ कषाय. १३ मेंसे-हॉस्यादि ६ प्रकृति टली.

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान मे एक कषाय संज्वलका लोभ.

उपशान्त मोहसे अजोगी केवली गूणस्थान तक और सिद्धों में कषाय नहीं

२९. छठा-योग हेतु द्वार. ÷

☞ इस द्वारोंके खुलासा के लिये देखिये अर्थ कांडका पृष्ट १५९ वा.

१५–४मनके(१)सत्यमन,(२)असत्यमन,(३)मिश्रमन और(४)व्यवहारमन,४वचनके(१)सत्यवचन(२)असत्यवचन(३)मिश्रवचन और४ व्यवहारवचन(७)कायाके-(१)ओदारिक (२) ओदारिक मिश्र,(३) वैक्रिय(४)वैक्रिय मिश्र(५)आहारक(६)आहारक मिश्रओर(७)कार्मण, यों १५ योगोंमेंसे.

मिथ्यात्व सास्वादन और अविरति गुणस्थान में-१३ जोग पावे, १५मे से आहारिक के दोनों घटे क्योंकि इन में मुनिराज नहीं पाते हैं.

मिश्र गुणस्थान में-४ मनके, ४ वचन के, १ उदरिक, १ वैक्रिय, यह १० योग पावे.

देशविरति गुणस्थानमें-२ आहारकके दो, और १ कार्मणका इन ३ विन १२ योग पावे.

प्रमत संयती गुणस्थान में कार्मण विना १४ जोग पावे.

अप्रमत संयति गुणस्थानमें-=औदारिक मिश्र,वैक्रिय मिश्र आहारक कारमण इन ४ विना ११ योग पावे.

अपूर्व करण से क्षीण मोह गुणस्थान तक-४ मनके, ४ वचनके, औदारिक, यह ९ योग पावे

सयोगी केवली में-१ सत्यमन, २ व्यवहारमन, ३ सत्य भाषा, ४ व्यवहार भाष, ५ औदारिक ६ औदारिक मिश्र, और ७ कार्मण, यह ७ योग पावे.

अयोगी केवली और सिद्धों में एकही योग नहीं पावे.

= आहारक और वैक्रिय मिश्र जोगलब्धि फोडनी वक्त पाता है और लब्धि फोडना यह प्रमाद अवस्था है, इसलिये तीनो मिश्र योगी अप्रमत गुणस्थानमें नहीं पाते हैं आहारक शरीर निपजे बाद अप्रमत हो जाते हैं.

सातवा समुच्चय हेतू द्वार.

५ मिथ्यात्व १२ अविरति,+ २५ कषाय, १५ जोग, मिलक ५७ हेतु सब होते हैं,

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में-५ मिथ्यात्व, १२ अविरति, २५ कषाय और १३ जोग यों ओघ (सब जीवों और सर्वकाल आश्रिय) ५५ हेतू पाते हैं. इसमें से एक जीव की अपेक्षा से-एक समय में जघन्य १० हेतू पाते हैं:—१ पांचों मिथ्यात्व में का एक मिथ्यात्व, १ छे काया के वध में का एक काया का वध, ३ पांचों इन्द्रियों की विषय में की एक की विषय, ४ तीनों वेदोंमें का१ वेद, हांस्य और रति शोक और अरति इन दोनों युगलों में का एक युगल, = अप्रत्याख्यानी चौकडी में की एक कषाय, ८ प्रत्याख्यानी चौकमें की एक कषाय, ९ संज्वलन चौकडीमें की एक कषाय, १० और ४ मनके, ४ वचन के ÷ १ औदारिक, १ और वै-

---

+ मूल हेतु ५ कहे और यहां चारों लिये-प्रमाद नहीं लिया, इसका सबब पांच प्रमाद में से मदका समावेश तो मान में होता है, विषयका समावेश अविरत में, कषाय में, निन्द्रा विकथा का जोग में समावेश होता है.

= यहां फक्त तीनों कषाय ही लेने का सबब यह है कि-क्रोधादिक का उदय विरोधी है अर्थात्-क्रोध के उदय में मानादि का उदय नहीं होता है इसलिये एकही ली. यह और अनन्तान बन्धी चोकडी छोडनेका सबब यह है कि-इसगन [illegible] अनंतान बन्धि की बीन योजना करते उनकी सत्ता रहती है. यहांसे यह जो यहां आवे बाद मिथ्यात्वी हुवे बाद फिर अनन्तान बन्धि का उदय नहीं होता है. इसलिये यहां जघन्य पद में फक्त तीनों कषाय का ही ग्रहन किया है.

÷ मिथ्यात्व गुणस्थान में अनंतान बन्धि के उदय बिना मरण नहीं होता है. इसलिये अपर्याप्त के अभाव से औदारिक मिश्र, वैक्रिय मिश्र, और कार्मण, यह तीनों जोगो ग्रहन नहीं किये.

क्रिय, इन १० जोगों में का एक जोग, यों १० हेतू पाते हैं.
र उत्कृष्ट १८ पाते हैंः-१० तो उपर कहे सोही. और ११
न्तान बन्धि चौकडी में की एक कषाय. १२ भय, १३ मत्सर,
पांचों काया का बध उत्कृष्ट यह १८ हेतू एक जीव के एक
य में पाते हैं.

२ सास्वादन गुणस्थान में-१२ अव्रत, २५ कषाय और
योग. यों ओघसे (सर्व जीवों और सर्व काल आश्रिय) ५०
पाते हैं. और एक जीव के एक समय में जघन्य १० हेतू
ऊपर जो १० हेतू कहे हैं. उस मेंसे १ मिथ्यात्व तो घटाना,
अनन्तान बन्धि चौकडी की १ कषाय बढाना और उत्कृष्ट १७
पाते हैंः-सो १० तो येही और ५ कायाका वन्ध, तथा भय
मत्सर यों उत्कृष्ट १७ हेतू एक जीव के एक समय में पाते हैं.

३ मिश्र गुणस्थान में-१२ अव्रत, २१ कषाय, और १०
ग, यों ओघसे ४३ हेतू पाते हैं. और एक जीव के एक समय
जघन्य ९ हेतू पावेः-उपर १० कहे, उस में से १ अनन्तान बा
की कषाय कमी करना. और उत्कृष्ट १६ हेतू पाते है उपर कहे
सोही ७ अधिक यहां जानना.

४ अविरति सम्यग् दृष्टि गुणस्थान में-१२ अव्रत, २१ क
य और १३ योगयों ओघसे ४६ हेतु पातेहैं और एक जीवके
समय मे जघन्य ९ और उत्कृष्ट १७ हेतु तीसरे गुणस्थान में
सोही यहां पाते हैं.

५ देशविरति गुणस्थानमें- ११ अव्रत, १७ कषाय और
योग यों ओघसे ४० हेतु पावे-और एक जीव के एक समय
जघन्य ९, उत्कृष्ट १७ उपरोक्त हेतू पाते हैं.

६ प्रमत संयाति गुणस्थान में—१३ कषाय और १४ जोग यों औघसे २७ हेतु पावे. और एक जीव के एक समय में जघन्य ५:—तीन वेदों में का १ वेद, संज्वल की चौकडी में की १ कषाय, दोनों युगल में का १ युगल, और १३ जोग में का१ जोग, यों, ५ और उत्कृष्ट ७ पावे-आहारक के दोनों योगों बडे.

७ अप्रमत गुणस्थानमें-१३ कषाय, और ११ योगों, यों२४ हेतू ओघ से पाते हैं, इस में से एक जीव के एक समय में - ५ पाते हैं. छटे गुणस्थानकी माफिकही, विशेप इतनाही की यहां ७ योग में का योग लेना. और उत्कृष्ट ६ पाते हैं. १ आहारक योग अधिक हूवा.

८ अपूर्व करण गुणस्थान में १३ कषाय और ९ = जोग यों २२ हेतु औघसे पाते हैं. और जघन्य ५ पाते हैं:- अप्रमत में कहेसो ही.

९ नीयटि बादर गुणस्थान में-७ कषाय और ९ जोग यों १६हेतुं औघसे पातेहैं, और जघन्य एक जीव की अपेक्षासे दो पाते हैं:-१कषाय और १ योग.

१० सूक्ष्म सम्पराय गुण स्थान में-१ कषाय और ९ जोग यों १० हेतु औघ से पावे. और जघन्य दो-पावे १ जोग, १कषाय.

११-१२ उपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थान में-फक्त९ जोग के ९ हेतूही औघ पाते है. और जघन्य फक्त १ जोग, ही पाता है.

१३ सयोगी केवली गुणस्थान में फक्त ७ जोग के ७ हेतु

= फक्त औदारिक जोग वालाही श्रेणि प्रारंभ करता है. इसलिये यहां दोनों जोग घट गये.

ही पाते हैं और जघन्य एक जीव की अपेक्षा से एक ...
पाता हैं.

१४ अयोगी केवली गुणस्थान में जोग के अभावसे ...
क ही नहीं पाता है.

❀ इति कर्मोत्पति नामक प्रथम प्रकरणम्. ❀

द्वितीय प्रकरण कर्म बन्ध द्वार.

कर्म बन्ध के २७ द्वार के नाम.

१ चार बन्ध द्वार, २ समुचय मूल कर्म बन्ध द्वार, ३ ...
नावरणीय कर्म बन्ध द्वार, ४ दर्शनावरणीय कर्म बन्ध द्वार, ५ ...
दनीय कर्म बन्ध द्वार, ६ मोहनीय कर्म बन्ध द्वार, ७ ...
र्म बन्ध द्वार, ८ नाम कर्म बन्ध द्वार, ९ गौत्र कर्म बन्ध द्वार ...
अन्तराय कर्म बन्ध द्वार, ११ ध्रुव कर्म बन्ध द्वार, १२ ध्रु ...
प्रकृति बन्ध द्वार, १३ अध्रुव कर्म बन्ध द्वार, १४ अध्रुव कर्म ...
ति बन्ध द्वार, १५ सर्व घातिक कर्म बन्ध द्वार, १६ सर्व घाति ...
कर्म प्रकृति बन्ध द्वार, १७ देश घातिक कर्म बन्ध द्वार, १८ दे ...
घातिक कर्म प्रकृति बन्ध द्वार, १९ अघातिक कर्म बन्ध द्वार ...
अघातिक ... प्रकृति बन्ध द्वार, २१ शुभ (पुण्य) कर्म बन्ध ...
२२ शुभ (... कर्म प्रकृति बन्ध द्वार, २३ अशुभ (पाप) ...
बन्ध द्वार, ... अशुभ (पाप) कर्म प्रकृति बन्ध द्वार, २५ समु ...
कर्म प्रकृति ... द्वार, २६ कर्म बन्ध व्यच्छेद द्वार, २७ कर्म ...
ति बन्ध ... द्वार.

४१, प्रथम चार बन्ध द्वार.*

१ प्रकृति बन्ध, २ स्थिति बन्ध, ३ अनुभाग बन्ध, और ४ प्रदेश बन्ध. ६ इन में १-१० पहिले मिथ्यात्व गुणस्थान से लगाकर, दशवे सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान तक चारों बन्ध पाते हैं.

११-१३ उपशान्त मोह, क्षीण मोह और सयोगी केवली, गुणस्थानमें दो प्रकार के बन्ध, प्रकृतिबन्ध और प्रदेश बन्ध.

१४ अयोगी केवली गुणस्थानमें बन्ध नहीं.

४२, दुसरा-समुचय कर्म बन्ध द्वार.

मिथ्यात्व गुणस्थान से लगाकर अप्रमत्त गुणस्थान तक थी-धका तीसरा मिश्र गुणस्थान छोड कर बाकी के ६ गुणस्थान में आयुष्य कर्म का बन्ध करे तब आठोंही कर्मोंका बन्ध होताहै और आयुष्य नहीं बन्धे उस वक्त सात कर्मों का बन्ध करे.

मिश्र अपूर्व करण. और अनियट्टि बादर इन तीन गुणस्थानों में आयु कर्म का बन्ध नहीं होता है. इसलिये सातही कर्मो बंधतेहैं.

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान में शुद्ध परिणाम होने से आयुष्य और मोहनीय कर्मका बन्ध नहीं होताहै. इसलिये छेही कर्मोका बंध करते हैं.

उपशांत मोह, क्षीण मोह और सयोगी केवली. इन तीनों गुणस्थान में फक्त एक वेदनीय कर्म बन्धतेहैं.

अयोगी केवली गुणस्थान में एकभी बन्ध नहीं करतेहैं.

* [illegible] पृष्ठ १९९ वा.

४३ तीसरा-ज्ञानावरणीय कर्म प्रकृति वन्ध द्वार.

१ मतिज्ञानावरणी २, श्रुतज्ञानावरणी, ३ अव... ४ मनपर्यव ज्ञानवरणी और ५ केवल ज्ञानावरणी. मिथ्यात्व ... नसे लगाकर सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान तक ज्ञानावरणीय की ... प्रकृति का बंध होता है. उपर एक ही नहीं बन्धाती है.

४४, चौथा-दर्शनावरणीय कर्म प्रकृति वन्ध द्वार

१ चक्षु दर्शनावरणीय, २ अचक्षु दर्शनावरणीय, ३ अवधि द- र्शनावरणीय, ४ केवलदर्शनावरणीय, ५ निद्रा, ६ निद्रानिद्रा, ७ प्रच- ला, ८ प्रचला प्रचला, और ९ थिणद्धी निद्रा. इन दर्शनावरणीय के ९ प्रकृतिमें से,

१-२ मिथ्यात्व सास्वादन गुणस्थानमें दर्शनावरणीयकी ९ प्रकृतिका बन्ध होता है.

३-८ मिश्र गुणस्थान में लगाकर आठवे अपूर्व करण गुण- स्थान तक थिणद्धी त्रिक×१निद्रानिद्रा,२प्रचला प्रचला, और ३थीणद्धी निंद इन३का बन्ध नहीं होता है. इसलिये छेही प्रकृति बन्ध होता है

९-१० नियटि बादर और सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान में-१ निद्राका और २ प्रचला का बन्ध नहीं होने से चार ही का बन्ध हो-

× इन तीनों निद्रा का बन्ध अनन्तान बन्धि कषायके उदय में होता है. और १ यहां इनका उदय नहीं है जिससे इनी है.

चौकडी और स्त्रीवेद विना १९ का वन्ध होता है.

५ देश विरति गुणस्थान में—अप्रत्याख्यानावरण चौकडी विना १५ का वन्ध होता है.

६ प्रमत गुणस्थान में-प्रत्याख्यानावरणीय चौकडी ... ११ प्रकृति का वन्ध होता है.

७-८ अप्रमत और अपूर्व करण गुणस्थान में शोक अरति विना ९ प्रकृतिका वन्ध होता है.

९ नियटि वादर गुणस्थान में हास्य, रति भय और ...न ४ विना ५ का वन्ध होता हैं.

आगे मोहनीय कर्म का वन्ध नहीं होता है.

सातवा आयुष्य कर्म प्रकृति वंध द्वार

आयुष्य कर्म की ४ प्रकृति-१ नरकायु, १ तिर्यचायु, ३ मनुष्यायु,और ४ देवायु इन ४ मेंसे.

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में—चारों गतिके आयुष्यका वंध होताहै

२ सास्वादन गुणस्थान में—नरक विना तीनों गतिका आयुर्वन्ध होता है.

मिश्र गुणस्थान में आयुर्वन्ध नहीं होता है.÷

४ अविरति गुणस्थान में-१ मनुष्यायु और २ देवायु दोनों का वन्ध होता है.

५-७ देशविरति, प्रमत, और अप्रमत गुणस्थान में-१ देवा-

÷ मिश्र गुणस्थानी मध्यस्थ परिणामी है. तथा आयुर्वन्ध काल जितनी इस की स्थिति नहीं है इसलिये यहां आयु वन्ध नहीं है.

[काही बन्ध होता है.=

ऊपर आयु बन्ध बिलकुल नहीं है.

२८, आठवा नाम कर्म प्रकृति बंध द्वार.

नाम कर्म की ६७ प्रकृति बन्धाती हैः—४ गति, ५ जाति, ५ शरीर, ÷ ३ अंगोपांग, ६ संघयण, ६ संठाण, ४ × वर्ण चतुष्क, ४ अनुपूर्वी, २ विहायोगति, १ पराघात नाम, १ उश्वासनाम, १ आताप नाम, १ उद्योत नाम, १ अगुरुलघु नाम, १ तीर्थंकर नाम, १निर्माण नाम, १ उपघात नाम, १ त्रस नाम, १ बादर नाम, १ पर्याप्ता नाम, १ प्रत्येकनाम, १ स्थिर नाम, १ शुभनाम, १ सौभाग्य नाम, १ सुस्वरनाम, १ आदेय नाम, १ यशःकीर्ति नाम, १ स्थावरनाम, १ सूक्ष्म नाम, १ अपर्याप्ता नाम, १ साधारण नाम, १ अस्थिर नाम, १ अशुभ नाम, १ दौर्भाग्य नाम, १ दुस्वर नाम, १ अनादेय नाम, १ अयशःकीर्ति नाम. यह ६७ इनमेंसे.

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में- २ आहारक द्विक और तीर्थंकर

= आयु बन्ध सालम्बीके होता है. ऊपरके गुणस्थानी निरालम्ब ध्यानी है.

÷ नाम कर्म की सब ९३ प्रकृतियों हैं. जिनमेंसे बन्ध स्थान में ६७ही प्रकृतियों ग्रहण करी जिसका सबबः—शरीर नाम कर्म में अपना ५ बन्धन और संघात यह दोनों अविना भावी हैं. अर्थात्-शरीरके विना यह दोनों नहीं होसकते. इस लिये पांच बन्धन और पांच संघात यह १० प्रकृतियें बन्ध तथा उदय रूप में- शरीर के भेली ही गिनी गई हैं. जुदी नहीं गिनी. और ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ८स्पर्श यह २० प्रकृतियों का भी १ वर्ण, २ गंध, ३ रस, और ४ स्पर्श इन चारों में ही समावेश हुआ है क्योंकि यह अभेद्य हैं इसलिये बीसोंका चारों में ही समावेश होजाता है. यों १० शरीर की और १६ वर्णादिकी मिल, २६ प्रकृतियों ९३ में से कमी करनेसे बाकी ६७ प्रकृतियोंका बन्ध कहा रहता है.

सूक्ष्म संपरायसे सयोगी केवलीतक-एक वेदनीयकाही बन्ध होताहै
अयोगी केवली गुणस्थान में परावर्त मान का बन्ध नहीं.

६६ छब्बीसवा परावर्तमान कर्म प्रकृति

परावर्तमान कर्मोकी प्रकृति ९१ है:— १ निद्रा, २ वेदनी, १ वेद, १ हांस्य, १ रति, १ अरति, १ शोक, १६ चारों चोकडी के कषाय, ४ आयुष्य, ४ गति, ५ जाति, ३ शरीर, ३ अंगोपांग, १ संघयण, ६ संस्थान, ४ अनुपूर्वी, २ विहायोगति, १० त्रस दशक १० स्थावर दशका, ११ उद्योत, १ आताप, यों सब ९१.

मिथ्यात्व गुणस्थान में-आहारक द्विक विना ८९ का बन्ध

सास्वादन गुणस्थान में-३ नरक त्रिक, ४ जाति चतुष्क, १ स्थावर १ सूक्ष्म, १ अपर्याप्ता, १ साधारण, १हुंड संस्थान, १ छेवट्ट संघयण, १ आताप, और १नपुंसक वेद इन ११ विना ७४ प्रकृति बन्ध.

मिश्र गुणस्थानमें—३ थीणद्धीत्रिक, ४ अनन्तानं बन्धि चौक, १ स्त्रीवेद २ तिर्यचद्विक, ४ मध्य के चार संघयण, ४ मध्य के चार संस्थान,१अशुभ विहायोगति, १ दौर्भाग्य, १ दूस्वर, १ अनादेय, ४ चारों आयु, १ नीच गौत्र, इन २७ विना ४७का बन्ध

अविरति गुणस्थान में—१ मनुष्यायु, १ देवायु, दोनों बढने से ४९ प्रकृति का बन्ध.

देश विरति गुणस्थान में—४ अप्रत्याख्यानी चौक, १ प्रथम संघयण, ३ मनुष्यात्रिक, २ औदारिक द्विक, इन १० विना—३९ प्रकृतिका बन्ध पावे.

प्रमत गुणस्थान में-प्रत्याख्यानी वरणिय चौक विना ३५का बंध

अप्रमत गुणस्थान में–१ शोक, १ अराति, १ अस्थिर, १ अशुभ, १ अयश, और १ असाता वेदनीय इन ६ विना २९का बंध

अपुर्व करण में–१ निद्रा और १ प्रचला विना २७का वन्ध.

अनियटि वादर में-संज्वलका चौक, १ सातावेदनीय, १ यश कीर्ति और उंच गौत्र इन ८ का वन्ध.

सूक्ष्म सम्पराय में-संज्वल के चौक विना ३ का वन्ध.

उपशान्त मोहसे सयोगी केवलीतक-१ सातावेदनीयका वन्ध.

अयोगी केवली के परावर्तमान प्रकृति का वन्ध नहीं.

६७सतावीसवा-अपरावर्तमान कर्मवन्धद्वार

अपरावर्तमान ५ कर्म-१ज्ञानावरणीय, २दर्शनावरणी, ३ मोहनीय ४नाम और अंतराय.

मिथ्यात्व गुणस्थान से अपूर्व करण गुणस्थान तक-पांचों कर्मोका वन्ध.

अनियट वादर और सूक्ष्म सम्पराय में-मोहनीय और नाम विना ३ कर्म का वन्ध.

उपशान्त मोहसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-अपरावर्तमान कर्मोका वन्ध नहीं होता है.

अठावीसवा अपरावर्तमानकर्मप्रकृतिवंधद्वा

अपरावर्तमान प्रकृति २९ है:-५ ज्ञानावरणीय, ४ दर्शनावरणीय, १ मिथ्यात्व मोहनीय, १ भय, १ मत्सर, ४ वर्ण चतुष्क, १ तेजस, १ कार्मण, १ अगुरु लघु, १ निर्माण, १ उपघात, १ पराघात, १ श्वासोश्वास, १ तीर्थंकर नाम, और ५ अन्तराय.

स्थान में देवा प्रायोगकी २८ प्रकृति का बन्ध करते-५ ज्ञानावर्णीयकी, ६ दर्शनावरणीयकी, १ वेदनीयकी १७ मोहनीयकी. २८नामकी, १ गौत्रकी, और ५ अन्तराय की यों ६३ प्रकृतिका बन्ध करेसो पन्दरवा भूयस्कार बन्ध. १६ तिर्थकर नाम सहित ६४का बंध करे सो सोलवा भूयस्कार बन्ध. १७ अविरति गुणस्थान में आयु अबन्ध वक्त में देव प्रायोग्य नामकी २८ प्रकृतिका बन्ध करते-५ ज्ञानावरणीय की ६ दर्शनावरणीयकी, १ वेदनीयकी, १७ मोहनीय की, २८ नामकी १ गौत्र की, और ५ अंतरायकी यों ६३ का बन्ध करे सो सतरवा भूयस्कार बन्ध, १८ देवायु सहित ६४ का बन्ध करे सो अठारवा भूयस्कार बन्ध, १९ तीर्थकर नाम सहित ६५ का बन्ध करे सो उन्नीसवा भूयस्कार बन्ध. २० अविरति में देवता होवे उनके मनुष्य प्रायोग्य ३० प्रकृति का बन्ध करते ६६ का बन्ध होवे सो बीसवा भूयस्कार बन्ध. २१ मिथ्यात्व गुणस्थान में-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, १ वेदनीय, २२ मोहनीय, १ आयुष्य, २३ नामकी १ गौत्रकी, और ५ अन्तराय की यों ६७ प्रकृति का बन्ध करे सो इकीसवा भूयस्कार बन्ध. २२ इसमें नामकी २५ प्रकृति करने से और आयुष्य की १ कमी करने से ६८ का बन्ध होवे सो तेवीसवा भूयस्कार बन्ध, २४ येही नाम कर्म की २६ प्रकृति के साथ ७० का बन्ध होवेसो चौवीसवा भूयस्कार बन्ध, २५ येही आयुष्य सहित और नाम की २८ प्रकृति साथ ७१ का बन्ध करे सो पच्चीसवा भूयस्कार बंध. २६ येही २९ नामकी प्रकृति साथ बंध करेसो ७२ का छब्बीसवा भूयस्कार बंध, २७ येही आयुष्य सहित ७३ का बंध करे सो सत्तावीसवा भूयस्कार बंध और २८ येही नामकी ३० प्रकृति का बंध करते-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, १ वेदनीय, २२ मो

हनीय १आयुष्य, ३० नामकी, १ गौत्रकी, और ५अंतरायकी यों ७४ का बंध करे सो अठावीसवा भूयस्कार बंध.+

७१, इकतीसवा अल्पतर कर्म बंध द्वार

प्रथमके गुणस्थानों में आयु कर्म का वन्ध करते सात कर्मों का वन्ध करे सो प्रथम अल्पतर वन्ध.

सात कर्मोंका वन्ध कर दशवे गुणस्थानके प्रथम समय मोहनीय विना छे कर्मोंका वन्ध करे सो दुसरा अल्पतर वन्ध.

और छे कर्मोंका वन्ध किये वाद आगे उपशान्त मोह क्षीण मोहादि गुणस्थान में एक वेदनीय का वन्ध करे सो तीसरा अल्पतर वन्ध.

७२ वत्तीसवा-अल्पतर कर्म प्रकृति वन्धद्वार

जो उपर भूयस्कार वन्ध के २८ स्थान कहे हैं, उन्हीको उल्ट पढने से अर्थात्-पहेल २८ वा, फिर २७ वा, फिर २६वा, यों-आठाईस उल्टाकर पढनासो अल्पतर वन्ध के २८ स्थान जानना.

७३, तेंतीसवा अवस्थित कर्म बंध द्वार.

प्रथम गुणस्थानोंमें आठों कर्मोंका वन्ध किये वाद आगेके गुणस्थान में सात कर्मोंका वन्ध करे उस वक्त प्रथम समयमें तो अल्पतर वन्ध जानना, और फिर वो वन्ध जितने कालतक वैसेही स्वरूप में कायम बनारहे उसे अवस्थित वन्ध कहते हैं.

+ यह २८ भूयस्कार वन्ध स्थान कहे इनके भकारान्त से अनेक भेद होवे हैं सो खुलासे से कीजियेगी.

७४.चौतीसवा-अवस्थितकर्म प्रकृतिबंधद्वार

बन्ध के २९ ही स्थानोंमें जिन २ प्रकृतियों के बन्ध करने का स्वरूप भूयस्कार बन्ध में कहा है. वो प्रकृतियों बन्ध किये बाद उतनीही उसही स्वरूपमें कायम रहे. उसे अवस्थिति बन्ध समझना.

७५. पैंतीसवा अव्यक्त कर्म बंध द्वार

अव्यक्त बन्ध-सर्व कर्मों से अबन्ध-निर्मुक्त हो फिर बन्धक रे उसे कहते हैं. सो किसी भी गुणस्थान में नहीं पाता है, क्योंकि सर्व कर्मोंसे निर्मुक्त अयोगी केवली गुणस्थान के बाद होते हैं. और सीधा मोक्ष में चले जाते हैं. परन्तु पडवाइ नहींज होते हैं. इसलिये यह बन्ध नहीं पाता है. एसाही अव्यक्त कर्म प्रकृति के सम्बन्ध में भी जानना.

७६.छत्तीसवा-समुचय कर्मप्रकृतिबन्धद्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में ज्ञानावरणीय की ५ दर्शनावरणीयकी ९, वेदनीयकी २, मोहनीयकी २६, आयुष्यकी ४, नामकी ६४, गोत्र की २ और अन्तराय की ५, यों सब ११७ प्रकृति का बन्ध होता है.

२ सास्वादन गुणस्थान में ज्ञानावर्णीयकी ५, दर्शनावर्णीयकी ९, वेदनीयकी २, मोहनीयकी २४, आयुष्यकी ३, नामकी ५१, गोत्रकी २, और अंतरायकी ५, योंसब १०१प्रकृतिबन्धपातीहै.

३ मिश्र गुणस्थान में ज्ञानावर्णीयकी ५, दर्शनावर्णीयकी ६, वेदनीयकी २, मोहनीय की १९, नामकी ३६

७४, चौतीसवा-अवस्थितकर्म प्रकृतिबंधद्वार

बन्ध के २९ ही स्थानोंमें जिन २ प्रकृतियों के बन्ध करने का स्वरूप भूयस्कार बन्ध में कहा है. वो प्रकृतियों बन्ध किये बाद उतनीही उसही स्वरूपमें कायम रहे. उसे अवस्थिति बन्ध समझना.

७५, पैंतीसवा अव्यक्त कर्म बंध द्वार

अव्यक्त बन्ध-सर्व कर्मों से अबन्ध-निर्मुक्त हो फिर बन्धकरे उसे कहते हैं, सो किसी भी गुणस्थान में नहीं पाता है, क्यों कि सर्व कर्मोंसे निर्मुक्त अयोगी केवली गुणस्थान के बाद होते हैं. और सीधा मोक्ष में चले जाते हैं. परन्तु पडवाइ नहींज होते हैं. इसलिये यह बन्ध नहीं पाता है. एसाही अव्यक्त कर्म प्रकृति के सम्बन्ध में भी जानना.

७६, छत्तीसवा-समुचय कर्मप्रकृतिबन्धद्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में-ज्ञानावरणीय की ५ दर्शनावरणीयकी ९, वेदनीयकी २, मोहनीयकी २६, आयुष्यकी ४, नामकी ६४, गोत्र की २ और अन्तराय की ५, यों सब ११७ प्रकृति का बन्ध होता है.

२ सास्वादन गुणस्थान में-ज्ञानावरणीयकी ५, दर्शनावरणीयकी ९, वेदनीयकी २, मोहनीयकी २४, आयुष्यकी ३, नामकी ५१, गोत्रकी २, और अन्तरायकी ५, योंसब १०१प्रकृति बन्धातीहै.

३ मिश्र गुणस्थान में-ज्ञानावरणीयकी ५, दर्शनावरणीयकी ६, वेदनीयकी २, मोहनीय की १९, नामकी ३६

गोत्रकी १, और अंतराय की ५, यों सब ७४ प्रकृति बन्धाती है.

४ अविरति सम्यग दृष्टि गुणस्थानमें-ज्ञानावाणीयकी ५, दर्शनावरणीय की ६, वेदनीयकी २, मोहनीयकी १९, आयुष्यकी, २, नामकी ३७, गोत्र की १, और अंतरायकी ५, यों सब ७७ प्रकृति बंधाती है.

५ देशविरति गुनस्थान में-ज्ञानावरणीयकी ५, दर्शनावरणीयकी ६. वेदनीयकी २, मोहनीयकी १५, आयुष्य की १, नामकी ३२, गौत्रकी १, और अंतरायकी ५, यों सब ६७ प्रकृति बंधातीहै.

६ प्रमत संयति गुणस्थान में-ज्ञानावरणीय की ५, दर्शनावरणीय की ६, वेदनीय की २, मोहनीयकी ११, आयुष्य की १, नाम की ३२, गौत्र की १ और अंतरायकी ५, योंसब६३प्रकृति बंधातीहैं.

७ अप्रमत संयति गुणस्थानमें-ज्ञानावरणीय की ५, दर्शनावरणीय की ६ वेदनीयकी १, मोहनीय ९,, आयुष्य की १, नाम की ३१, गौत्रकी १, और अन्तरायकी ५ यों सब ५९ प्रकृति बंधाती है.

८ अपूर्व करण गुणस्थान के सात भागों में से-पाहिला भाग में ज्ञानावरणीय की ५ दर्शनावरणीय की ६, वेदनीयकी १,मोहनीयकी ९, नामकी ३१, गौत्रकी १, और अंतरायकी ५ यों सब ५८ प्रकृति बन्धाती हैं. और दूसरे भाग से लगाकर छट्टे भाग तक मोहनीयकी २ प्रकृति कम होनेसे ५६ प्रकृति बन्धाती है. और सातवे भाग में नामकी ३० विना २६ बन्धाती है.

९ अनियट्टी बादर गुणस्थान के पांच भागो में से-पाहिले भाग में ज्ञानावरणीय की ५, दर्शनावरणीय की ४, वेदनीयकी १, मोहनीयकी ५, नामकी १, गौत्रकी १, और अंतरायकी ५, यों स-

७४,चौतीसवा-अवस्थितकर्म

बन्ध के २९ ही स्थानोंमें जिन २ प्र
का स्वरूप भूयस्कार बन्ध में कहा है. वो
द उतनीही उसही स्वरूपमें कायम रहे. उसे

७५, पैंतीसवा अव्यक्त ब

अव्यक्त बन्ध-सर्व कर्मों से अबन्ध
रे उसे कहते हैं, सो किसी भी गुणस्थान
कि सर्व कर्मोंसे निर्मुक्त अयोगी केवली
हैं, और सीधा मोक्ष में चले जाते हैं. प
हैं. इसलिये यह बन्ध नहीं पाता है. एर
के सम्बन्ध में भी जानना.

७६,छत्तीसवा-समुचय क

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में-ज्ञानाव
यकी ९, वेदनीयकी२, मोहनीयकी २६,
६४, गौत्र की २, और अन्तराय की
बन्ध होता है.

२ सास्वादन गुणस्थान में-ज्ञाना
यकी ९, वेदनीयकी २, मोहनीयकी २
५१, गौत्रकी २, और अंतरायकी ५,

३ मिश्र गुणस्थान में-ज्ञ
णीयकी ६, वेदनीयकी २, मोहर्न

...थ्यात्व गुणस्थानमें-नाम कर्मकी ३ प्रकृति का वंध व्युच्छेद है.

२ सास्वादन गुणस्थानमें-मोहनीय की २, आयुष्यकी १, ... नामकी १६ यों सब १९ प्रकृतिका वंध व्युच्छेद होता है.

३ मिश्र गुणस्थान में-दर्शनावरणीयकी ३, मोहनीयकी ७ ...आयुष्यकी ४, नामकी ३१ और गोत्रकी १ यों सब ४० का बन्ध ...व्युच्छेद होता है.

४ अविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें-दर्शनावरणीयकी ३, मोहनीयकी ७, आयुष्य की २, नामकी ३० और गोत्रकी १ यों सब ४३ का वंध व्युच्छेद होता है.

५ देशविरति गुणस्थान में-दर्शनावरणीय की ३, मोहनीय-की ११, आयुष्य की २ नाम की ३१, और गोत्र की १, यों सब ४३ का वंध व्युच्छेद होता है.

६ प्रमत गुणस्थान में दर्शनावरणीयकी, ३ मोहनीयकी १५, आयुष्यकी २, नामकी ३५, और गोत्रकी १ यों सब ५७ का वन्ध व्युच्छेद होता है.

७ अप्रमत गुणस्थान में-दर्शनावरणीय ३, वेदनीय १.मोह-नीय-१७, आयुष्य की ३, नामकी ३६ और गोत्रकी १.यों सब ६१ ...ा वंध व्युच्छेद होता है,

८ अपूर्व करण गुणस्थान के सात भागोंमें से पहले भागमें दर्शनावरणीय की ३, वेदनीयकी १. मोहनीयकी १७. आयुष्यकी ४, नामकी ३६ और गोत्र की १, यों सब ६२ का वन्ध व्युच्छेद होता है. दूसरे भाग से छठे भागतक-दर्शनावरणीयकी ५ वेदनीय-की १ मोहनीय की १७, आयुष्की ४. नामकी ३६ और गोत्र की

१, यों सब ६० का बन्ध व्युच्छेद होता है. और सातवे भाग में नाम की ३० प्रकृति का बंध घटने से ९० का बन्ध व्युच्छेद होता है.

९ अनियट्टि बादर गुणस्थानके पांच भागों में से पहिले भाग मे—दर्शनावरणीय की ५ वेदणीयकी १, मोहनीयकी २१आयुष्य की ४,नामकी६६, और गौत्रकी१यों सब ९८ प्रकृतिका बंध व्युच्छे होता है, आगे चार भागों में मोहनीय की एकेक बधाने से-दूसरे भागमें ९९, तीसरे में १००, चौथे में १०१ और पांचवेमें १०२ प्रकृतिका बंध व्युच्छेद होता है.

१० सूक्ष्म सम्पराय में-दर्शनावरणीयकी ५, वेदनीयकी१ मोहनीयकी २७ आयुष्की ४, नामकी ६६ और गौत्रकी १, यों सब १०२ का बंध व्युच्छेद होता है.

११-१३ उपशान्त मोह, क्षीण मोह, और सयोगी केवली इन ३, गुणस्थानोंमे ज्ञानावरणीय की ५, दर्शनावरणीय की ९, वेदनीय की १, मोहनीयकी २६, आयुष्य की ४, नरमकी ६७ और गौत्रकी२योंसब ११९का बंध व्युच्छेद होताहै, और अयोगी केवली गुणस्थान में १२० प्रकृति काही बन्ध व्युच्छेद होता है.

इति कर्म बंध नामक द्वितीय प्रकरण
समाप्तम.

तृतीय प्रकरण-कर्मोदय द्वार.

कर्मोदयके-२४ द्वारोंके नाम.

१ समुचय कर्मोदयद्वार, २ ज्ञानावरणीयोयद्वार, ३ दर्शनावरणीयोदयद्वार, ४ वेदनीयोदयद्वार, ५ मोहनीयोदयद्वार, ६ आयु

, ७ नमोदयद्वार, ८ गौत्रोदयद्वार, ९ अन्तरायोदयद्वार, १०
मोंदयद्वार. ११ ध्रुवकर्मप्रकृतियोदयद्वार, १२ अध्रुवकर्मोदयद्वा
३ अध्रुवकर्म प्रकृतियोदयद्वार, १४ पुन्यकर्मोदयद्वार, १५ पु-
कर्म प्रकृतियोदयद्वार. १६ पाप कर्मोदयद्वार. १७ पापकर्म प्र-
तियोदयद्वार, १८ क्षेत्र विपाक कर्मोदयद्वार, १९ क्षेत्रविपाककर्म-
कृतियोदयद्वार, २० भव विपाककर्मोदयद्वार, २१ भवविपाक कर्म
कृतियोदयद्वार. २२ जीवविपाक कर्मोदयद्वार. २३ जीव विपाकक
र्म प्रकृतियोदयद्वार, २४ पुद्गल विपाक कर्मोदयद्वार. २५ पुद्गल वि-
पाक कर्म प्रकृतियोदयद्वार, २६ सर्वघातिक कर्मोदयद्वार, २७ सर्व
घातिक कर्म प्रकृतियोदयद्वार. २८ देशघातिक कर्मोदयद्वार २९ दे-
शघातिक कर्म प्रकृतियोदयद्वार. ३० अघातिक कर्मोदयद्वार, ३१
अघातिक कर्म प्रकृतियोदयद्वार, ३२ समुचय कर्म प्रकृतियोदयद्वा
र, ३३ कर्मोदय व्युच्छेदद्वार और ३४ कर्मप्रकृतियोदय व्युच्छेदद्वार.

७९, प्रथम-समुचय कर्मोदय द्वार.=

मिथ्यात्व गुणस्थान से लगाकर सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान तक आठोंही कर्मोंका उदय पाता है.

उपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थानमें मोहनीय विन ७कर्मोंका उदय पाताहै, और सयोगी केवली. अयोगी केवली इ दोनों गुणस्थानोंमें-१वेदनीय, २ आयुष्य, ३ नाम, और४गौत्र इ चार कर्मोंका उदय पाताहैं.

८०, दुसरा-ज्ञानावरणीयोदय द्वार.

= क्योंकि थीणद्धी त्रिकका उदय स्थूल प्रमादीके होता है सो यहां न

☞ उदय द्वारोंके खुलासे के लिये अर्थ कांडका २१४ वा पृष्ठ देखीये.

मिथ्यात्व गुणस्थान से क्षीणमोह गुणस्थान तक ज्ञानावरणीय की पांचों प्रकृति का उदय पाता हैं. उपर ज्ञानावरणीय का उदय नहीं.

८१, तीसरा दर्शनावरणीयोदय द्वार.

मिथ्यात्व गुणस्थानसे प्रमत गुणस्थान तक दर्शनावरणीकी ९ ही प्रकृति का उदय पावे.

अप्रमत से क्षीण मोह के पहिले भाग तक थीणद्धी त्रिक विना ६ प्रकृतिका उदय पावे.

क्षीण मोह के अन्तिम भाग में निद्रा द्विक विना ४ प्रकृति का उदय पावे.

उपरके गुणस्थानों में-दर्शनावरणीय का उदय नहीं पाता है.

८२, चौथा वेदनीयोदय द्वार.

अनेक जीवों की अपेक्षा कर प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थान सें अन्तिम अयोगी केवली गुणस्थान तक वेदनीय की दोनों प्रकृतिका उदय पाताहे.+

८३, पांचवा मोहनीय उदय द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थान में–मिश्र मोह और सम्यक्त्व मोह × विना २६ प्रकृतिका उदय.

सास्वादन गुणस्थान में–मिथ्यात्व मोह विना २५ प्रकृ का उदय पाता है.

+ क्योंकि एक जीव एक समय में दोनों वेदनीय मेंकी एकही वेदनी वेद सक्ता

× क्योंकि-मिश्रमोहनीका उदय मिश्रगुणस्थान में पाता है, और सम्यक्त मोहनीय का उदय अविरति में पाता हैं.

मिश्र और अविरति गुणस्थान में-४ अनन्तान वन्धि चौक १ मिथ्यात्व मोह और १ सम्यक्त्व मोह, इन ६ प्रकृति विना १९ का उदय.

देशविरति गुणस्थान में-अप्रत्याख्यानावरणीय चौक विना १५ का उदय.

प्रमत और अप्रमत गुणस्थान में-४ प्रत्याख्यानावरणीय चौक विना ११ का उदय.

अपूर्व करण गुणस्थान में—* सम्यक्त्व मोहविना १० प्रकृतिका उदय.

अनियट्टी वादर गुणस्थान में—हाँस्य षटक विना४ प्रकृति का उदय.

सूक्ष्म संपराय गुणस्थानमें—१ संज्वलके लोभका उदय.

ऊपरके गुणस्थानोंमें-मोहनीय कर्मका उदय नहीं पाता है.

८४, छठा आयुष्य कर्मोदय द्वार

मिथ्यात्वसे अविरति गुणस्थानतक-चारोंगतिके आयुष्य का उदय.
देशविरति गुणस्थानमें-मनुष्य और तिर्यच इन दोनों आयुष्य का उदय.
प्रमतसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-१ मनुष्यायु का उदय.

८५, सातवा-नामकर्मोदय द्वार.

नाम कर्मकी ९३ प्रकृतिमें से वन्ध की माफिक उदयकीभी ६७प्रकृति का उदय होता है.

* क्षयोपशम सम्यक्त्व पुद्गलिक होनेके सबब से सातवे गुणस्थान के आगे नहीं पाती है इसलिये सम्यक्त्व मोहनी नहीं है

मिथ्यात्वगुणस्थानमें-आहारकद्विक, और १तीर्थंकर नाम विना ६४ प्रकृतिका उदय पाता है.

सास्वादन गुणस्थानमें-३ सूक्ष्मत्रिक, १ आताप नाम, १ नरकानुपूर्वी विना ५९प्रकृति का उदय.

मिश्रगुणस्थानमें-४जाति चतुष्क, १ स्थावरनाम, ३ अनुपूर्वी विना ५१ का उदय.

अविरति सम्यग्दृष्टिमें-४चारों गतिकी अनुपूर्वी अधिक होनेसे५५ प्रकृति का उदय.

देशविरतिमें—१ मनुष्यानुपूर्वी, १ तिर्यचानुपूर्वी, २ वैक्रिय द्विक, २ देवद्विक, २ नरकद्विक, १ दौर्भाग्य, १ अनादेय, १अप-

---

क्योंकि १ आहारक द्विक उदय तो चउदह पूर्व धारी मुनिके होता है और तीर्थंकर नामोदय तेरवे गुणस्थान में जादे तक होता है.

२ सूक्ष्मादि नामका उदय तो निश्चय से मिथ्यात्वीके होता है, और नरकानुपूर्वीका उदय वक्र गति कर नरक में जाने वालेके पाता है और ओपशमिक सम्यक्त्वका वमन करके नरक में नहीं जाता है. फक्त मिथ्यात्वके उदय में ही जाता है. सास्वादन वाली मनुष्य और तिर्यच जिस वक्त वक्रगति कर नरक में जाता है उस वक्त मनुष्य होतेतो मनुष्यका और तिर्यच होतेतो तिर्यचायु का उदय वर्तता है. फिर सम्यक्त्वका वमन करे बाद नरकानुपूर्वी का उदय होता है. और फिर नरकायुका उदय होता. इसलिये मिथ्यात्वी होकर ही नरक में जाता है. फिर नरकमें पर्याप्ता हुवे बाद उपसम सम्यक्त्वकी प्राप्ति होती है. फिर उसे वमन करे तब सास्वादन गुणस्थान पाता है. और इसी वक्त नरकायु का उदय पाता है. क्षायिक सम्यक्त्वी तो श्रेणिक राजा की तरह सम्यक्त्व सहित नरक में जाता है. और सास्वादन औपशमिक क्षयोपशमिक सम्यक्त्वका वमन कर नरक में जाता है. इसलिये इसका भी अनुदय.

३ यहां आयु बन्ध नहीं होनेसे अनुपूर्वीका उदय नहीं पाता है.

४ यहां आयु बन्ध होनेसे चारों अनुपूर्वी का उदय पाता है.

५ सम्यक् बन्ध देवलोकमें ही जाते हैं. इसलिये यहां दोनों अनुपूर्वीका उदय नहीं

श॰, इन [11] विना ४४ का उदय.

प्रमत्तमें-[1] तिर्यंचगति और २ उद्योत नाम, यह २ तो घटाना. और [2]आहारक द्विक बढाने से ४४ का उदय होता है.

अप्रमत्तके-आहारक द्विक विना ४२ प्रकृति का उदय.

अपूर्व करण से उपशान्त मोहतक-अन्तिम ३ संघयण विना ३९प्रकृति का उदय.

क्षीण मोह और सयोगी केवली में-१ वृषभ नाराच और २ नाराच संघैयण विना ३७ रही. और १ तीर्थंकर नाम अधिक करने से ३८ का उदय पाता है.

और अयोगी केवली गुणस्थान में- ३त्रसत्रिक, ३ शुभगत्रिक, १ मनुष्यगति, १ पंचेन्द्रिय की जाति, और कितनेक जीवों के तीर्थंकर नाम इन ९प्रकृतिका उदय रहता है.

८६,आठवा-गौत्रकर्मोदय द्वार

मिथ्यात्व से देशविरति गुणस्थानतक दोनों गौत्रका उदय पाताहै.

---

६ भव धारणी वैक्रिय शरीर न होनेसे वैक्रिय उदय वर्जा है.

७ देवता और नरक में यह गुणस्थान नहीं पाने से दोनों द्विक वर्जा है.

८ यहां पूर्व धर मुनि होते हैं. जिनसे आहारक शरीर पाता है.

९ आहारक लब्धि फोडने वाले साधुओं उत्सुकता के वक्त मे अवश्य प्रमादी होते हैं. इसलिये यहां आहारक का उदय नहीं लिया है. परन्तु प्रमत्त साधुओं आहारक शरीर प्राप्त किये बाद अप्रमत्त गुणस्थान में जाते हैं. इसलिये किसी आचार्यने यहां इसका उदय गिना है.

१० इन तीनों संघयण वाले श्रेणि प्राप्त नहीं करते हैं.

११ इन दोनों संघयण वाला क्षपक श्रेणि नहीं करता है.

३ अनूपूर्व्वी, और स्थावर नाम यह १२ घटाना और १ मिश्र मोहनी बडाने से ७४ का उदय पावे.

अविरतिमें-७४ में से मिश्र मोह घटाना और सम्यक्त्व मोह, ४ अनुपुर्व्वी बढाने से ७८ का उदय पावे.

देशविरति गुणस्थानमें-१ मनुष्यानुपुर्व्वी, १ तिर्यचानुपूर्व्वी, २ वैक्रियद्धिक, ३ देवत्रिक, ३नरकत्रिक, १ दौर्भाग्य, १ अनादेय, १अयशः, ४ अनंतानुबन्धी चौक इन. १७ विना ६१ का उदय.

प्रमत संयति गुणस्थानमें-१तिर्यचगति१तिर्यचानुपूर्व्वी, १उद्योत नाम १ आताप नाम, १ नीच गौत्र, और ४अप्रत्याख्यानावरणीय चौक इन प्रकृति ९ विना ५२ का उदय.

अप्रमत में ३ थीणद्धी त्रिक, १आहारक शरीर इन४८विना४पावे.

अपूर्व करणमें-१ सम्यक्त्व मोह, और अन्तिम३संघयण इन ४विना ४१ का उदय पावे.

अनियट बादर में ६ हांस्य षट्क विना ३९ का उदय पाता है.

सूक्ष्म सम्परायमें ३ वेद, और संज्वलत्रिक इन ६ विना, ३३का उदय पावे.

उपशान्त मोहमें-संज्वलके-लोभा विना ३२ का उदय पावे.

क्षीणमोह गुणस्थान में-दो संघयण विना ३० का उदय पावे.

सयोगी केवलीमें-दो निद्रा विना २८, और जिन नाम मिलानेसे २९ उदय पावे.

अयोगी केवलीमें-उपर कहीसो ही-१२ प्रकृतिका उदय पाता है.

९२. चौदवा पुण्यकर्मोदय द्वार.

मिथ्यात्व से-अयोगी केवली गुणस्थानतक चारोंही पुण्य कर्म

का उदय पाता है.

९३, पन्दरवा-पुण्यकर्म प्रकृतियोदय द्वार

पुण्य कर्मोंकी ४२ सब प्रकृति में से.

मिथ्यात्व गुणस्थानमें-२ आहारकद्विक और तीर्थंकर नाम विना ३९ का उदय पावे.

सास्वादन गुणस्थानमें-आताप नाम विना-३८ प्रकृतिका उदय पावे

मिश्रगुणस्थानमें-१मनुष्यानुपूर्व्वी, १देवानुपूर्व्वी इन२ विना ३६का उदय पावे.

अविरति गुणस्थानमें-१ मनुष्यानुपूर्वी, १ देवानुपूर्व्वी वढने से ३८ का उदय पावे.

देशविरति गुणस्थान में-२ वैक्रियद्विक ३ देवत्रिक, १ मनुष्यानुपूर्व्वी इन ६ विना ३२ का उदय पावे

प्रमत संयतिमें-तिर्यंचानुपूर्व्वी, उद्योत नाम घटा, और आहारक द्विक वढा जिससे ३२ का उदय पावे.

अप्रमतसे क्षीण मोह गुणस्थानतक-आहारक द्विक विना ३०का उदय पावे.

सयोगी केवली गुणस्थान में-तीर्थंकर नाम अधिक होनेसे ३१ उदय पावे.

अयोगी केवली गुणस्थान में-१ सातवेदनी, १ तीर्थंकर नाम, १ त्रस, १ वादर, १ प्रत्येक, १ शुभग, १ आदेय, १ यशकीर्ति, १ पचेन्द्रियजाति, १ मनुष्यगति, १ मनुष्यानुपूर्व्वी, और १ ऊंच गोत्र इन १२ प्रकृति का उदय रहता है.

९४ सोलवा पाप कर्मोदय द्वार

मिथ्यात्वसे उपशान्त मोह गुणस्थानतक आठों कर्मोंका उदय पावे क्षीणमोह गुणस्थानमें-मोहनीय विना सातों कर्मों का उदय पावे. सयोगी. अयोगी केवली गुणस्थान में वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र इन ४ कर्मोंका उदय पावे.

९५, सतरवा पापकर्म प्रकृतियोदयद्वार

पाप कर्मों की ८२ प्रकृतियों में से,

मिथ्यात्व गुणस्थान में-८२ ही प्रकृति का उदय पाता है.

सास्वादन में-४ स्थावर चतुष्क, १ मिथ्यात्व मोहनीय इन ५ विना ७७ का उदय पावे.

मिश्र गुणस्थान में-४ अनन्तानु वन्धि चौक, ३ विकेन्द्रिय त्रिक, १ नरकानुपुर्व्वी, १ तिर्यंचानुपूर्व्वी और १ अपर्याप्ता नाम इन १० विना ६७ प्रकृतिका उदय पावे.

अविरति गुणस्थान में-१नरकानुपूर्व्वी, १ तिर्यंचानुपूर्व्वी,इन २ बढ़ने से ६९ का उदय पावे.

देशविरति गुणस्थान में-४ अप्रत्याख्यानावरणीय चौक, ३ नरक त्रिक, १ तिर्यंचानुपूर्व्वी, १ दौर्भाग्य, १ दुःस्वर, और १ अय शः कीर्ति इन ११ विना ५८ का उदय पावे,

प्रमत गुणस्थान में-४ प्रत्याख्यानी चौक, १ तिर्यंचगति, १ नीच गोत्र ६ इन विना ५२ का उदय.

अप्रमत गुणस्थानमें-३ थीणद्धी त्रिक विना ४९ प्रकृतिका उदय.

अपूर्व करण गुणस्थानमें-प्रथमके तीन संघयण विना४६का उदय पावे,

अनीयट बादर गुणस्थानमें-हांस्य पट्क विना ४० का उदय पावे.

सूक्ष्म सम्परायमें-२ वेद और संज्वलन त्रिक विना ३४ प्रकृति का उदय पावें.

उपशान्त मोहमें-संज्वलनके लोभ३३ विना का उदय पावे. क्षीण मोहमें-दो संघयण और दो-निद्रा विना २९ का उदय पावे.

सयोगी केवलीके-५ ज्ञानावरणीय, ४ दर्शनावरणीय, और ५ अन्तराय. इन १४ विना १५ उदय पावे.

अयोगी केवलीके-फक्त दोनों वेदनीयोंमेंसे एकका उदय रहता है.

९६. अठारवा क्षेत्रविपाक कर्मोदय द्वार.

क्षेत्र विपाकी फक्त१नाम कर्म हैसो, मिथ्यात्व सास्वादन, अविरति' तीनोंमें क्षेत्र विपाकी नाम कर्म का उदय है.

मिश्र, देशव्रतिसे जावत् अयोगी केवली गुणस्थान तक क्षेत्र विपाकी कर्मोदय नहीं है.

उन्नीसवा क्षेत्रविपाककर्मप्रकृतियोदय द्वार

क्षेत्र विपाक प्रकृति चार सो-चारोंगतिकी अनुपूर्व्वी जानना. मिथ्यात्व और अविरति गुणस्थानमें चारों अनुपूर्व्वीका उदय पावे. सास्वादन गुणस्थानमें-नरकानुपूर्व्वी विना तीन अनुपूर्व्वीका उदय.

मिश्र देशव्रतिसे अयोगी केवली गुणस्थानतक क्षेत्र विपाकी कर्मकी प्रकृति का उदय नहीं होताहै.

९८. वीसवा भवविपाक कर्मोदय द्वार

भव विपाकी एक आयुष्य कर्महै सो.

मिथ्यात्वसे अयोगी केवली गुणस्थानतक भव विपाकि कर्मकाउदयहै

१०२, चौवीसवा-पुद्गलविपाकीकर्मोदय द्वार

पुद्गल विपाकी फक्त १ नाम कर्म ही है.
मिथ्यात्वसे अयोगी केवलीतक पुद्गल विपाकी कर्मोदय होता है.

पच्चीसवा पुद्गलविपाककर्मप्रकृतियोदयद्वार

पुद्गल विपाकी प्रकृति ३६ होती हैः—५ शरीर ३ अंगोपांग ६ संघयण, ६ संस्थान, ४ वर्ण चतुष्क, १ निर्माण, १ अस्थिर, १ स्थिर, १ अशुभ १ शुभ, १ अगुरुलघु, १ उपघात, १ पराघात, १ प्रत्येक, १ साधारण यह ३६ इनमेंसे

मिथ्यात्व गुणस्थान में-आहारक द्विक विना ३४ का उदय पावे.
सास्वादन, मिश्र और अविरतिमें-१ आताप, और १ साधारण नाम इन विना विना ३२ का उदय पावे.

देशविरति में-वैक्रिय द्विक विना ३० का उदय पावे.
प्रमत्त संयतिमें-उद्योत नाम घटनेसे २९ रही और आहारक द्विक बढनेसे ३१ का उदय पावे.
अप्रमत्त संयति में-आहारक द्विक विना २९ का उदय पावे.
अपूर्व करणसे उपशान्त मोह गुणस्थानतक-अन्तिम ३ संघयण विना २६ का उदय पावे.
क्षीण मोह और सयोगी केवली के-दोनों संघयण विना २४ का उदय पावे.
अयोगी केवली के शरीर के अभाव से पुद्गल विपाकी प्रकृति का उदय नहीं पाता है.

१०४ छव्वीसवा सर्वघातिक कर्मोदयद्वार

मिथ्यात्व से सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानतक सर्व घातिक तीनों कर्मों का उदय पावे.

उपशांत मोह और क्षीणमोह गुणस्थानमें मोहनीय विना दो कर्मो का उदय.

सयोगी और और अयोगी केवली गुणस्थानमें-घातीक कर्मो का उदय नहीं पाताहै.

सतावीसवा सर्वघातिककर्मप्रकृतियोदयद्वार

बंधमें कहे मुझवही सर्व घातिक तीनों कर्मोकी २०प्रकृतिहै उसमेंसे मिथ्यात्व गुणस्थानमें-२० ही प्रकृति का उदय पावे.

सास्वादन गुणस्थानमें-मिथ्यात्व मोह विना१९ प्रकृतिका उदय पावे

मिश्र और अविरति गुणस्थान में-४ अनन्तान वन्धि चौक विना १५ का उदय पावे.

देशविरति गुणस्थानमें-अप्रत्याख्यानी चौक विना ११का उदयपावे

प्रमत संयति गुणस्थानमें-प्रत्याख्यानी चौक विना-७का उदय पावे.

अप्रमतसे उपशान्त मोह गुणस्थानतक-थीणद्धी त्रिक विना ४ का उदय पावे.

क्षीणमोह गुणस्थानमें-निद्रा और प्रचला विना ४ का उदय पावे.

सजोगी और अजोगी केवलीमें-सर्व घातिक प्रकृतिका उदय नहीं.

अठावीसवा देशघातिक कर्मोदय द्वार.

मिथ्यात्वसे सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानतक देश घातिक चारों कर्मोका उदय पावे.

ऊपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थान में-मोहानिय विना तीन कर्मोका उदय पावे.

सयोगी और अयोगी केवलीके देशघातिक कर्मोका उदय नहीं.

उन्नतीसवा देशघातिककर्मप्रकृतियोदयद्वा

वन्धमें कहे मुजवही देशघातिक चारों कर्मोकी प्रकृति २७है उसमेंसे मिथ्यात्व, और सास्वादनमें-सम्यक्त्व मोह और मिश्र मोह विना २५ का उदय पावे.

मिश्रगुणस्थानमें-मिश्रमोह अधिक होनेसे २६ का उदय पावे..

अविरतिमें-सम्यक्त्व मोह वढनेसे और मिश्रमोह घटनेसे २६ काही उदय रहा-

देशविरतिसे अपूर्व करण गुणस्थानतक-सम्यक्त्व मोह विना २५का उदय पावे.

अनियट्ट वादर गुणस्थानमें-हांस्य षट्क विना १९का उदय पावे.

सूक्ष्म संपराय गुणस्थानमें-३ वेद और संज्वलन त्रिक विना १३का उदय पावे.

उपशान्त मोह और क्षीण मोह में-संज्वलन के लोभ विना १२ का उदय पावे

सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थानमें घातिक कर्म प्रकृति का उदय नहीं पाता है.

१०८, तीसवा अघातिक कर्मोदय द्वार.

मिथ्यात्वसे अयोगी केवली गुणस्थानतक अघातिक चारों कर्मोका उदय पाता है.

इकतीसवा अघातिककर्म प्रकृतियोदयद्वार

दोनों तरह के घातिक कर्मों की ४७ प्रकृति छोड वाकी ७५ रही सो अघाति अघातिककर्म की प्रकृति जाननी इनमेंसे मिथ्यात्व गुणस्थान में २ आहारकद्विक और १जिननाम विना ७२ का उदय.

सास्वादनमें १सूक्ष्म, १अपर्याप्ता, १साधारण, १आताप, और १नरकानुपूर्व्वी इन५विना ६८ उदय.
मिश्र गुणस्थानमें ४ जातिचतुष्क, ३ अनुपूर्व्वी १ स्थावर नाम, इन ८विना ६०, का उदय.
अविरतिमें—चारों अनुपूर्व्वीका उदय बढने से ६४ उदय.
देशविरति—३ देवत्रिक, ३ नरकत्रिक, २ वैक्रियद्विक, १ मनुष्यानुपूर्व्वी १ तिर्यचानुपूर्व्वी, १ दौर्भाग्य, १ अनादेय, और १ अयशःकीर्ति इन १३ विना ५१ का उदय.
प्रमतमें—२ तिर्यचद्विक, १ उद्योत, १ निच गौत्र इन ४ विना ४७ का उदयरहा और आहारक द्विक बढाने से ४९ का उदय पाता है.
अप्रमतमें—आहाक द्विक विना ४७ का उदय.
अपूर्व करण से उपशान्त मोहतक अन्तिम तीनों संघयण विना ४४ का उदय.
क्षीणमोहमें—१ वृषभनाराच, और १नाराच संघयण विना ४२का उदय
सयोगी केवलीके जिननाम अधिक होनेसे ४३ का उदय.
अयोगी केवली के—पहिले कही सोही नामकर्म की १२ प्रकृतिका उदय पाता है.

बत्तीसवा-समुचय कर्मप्रकृतियोदय द्वार.

१ मिथ्यात्व में—५ ज्ञानावरणीय की, ९ दर्शनावरणीय की, २ वेदनीय की, २६ मोहनीयकी, ४ आयुष्य की, ६४ नामकी, २ गोत्रकी और ५ अन्तराय की यों सब ११७ का उदय पावें.
२ सास्वादन में—५ ज्ञानावरणीयकी, ९ दर्शनावरणीयकी २

वेदनीयकी २५ मोहणीयकी ४ आयुष्य की ५७ नामकी २ गोत्रकी और ५ अन्तरायकी यों १११ उदय पावे.

३ मिश्रमें—५ ज्ञानावरणीयकी, ९ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी. २२ मोहनीयकी ४ आयुष्यकी, ५१ नामकी, २ गोत्रकी ५ अन्तरायकी यों १०० का उदय पावे.

४ अविरतिमें—५ ज्ञानावरणीयकी, ९ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी २२ मोहनीयकी, ४ आयुष्यकी, ५५ नामकी, २ गोत्रकी और ५ अन्तरायकी यों सब १०४ का उदय पावे.

५ देशविरतिमें—५ ज्ञानावरणीयकी ९ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी, १८ मोहनीयकी, २ आयुष्यकी, ४६ नामकी, २ गोत्रकी और ५ अन्तरायकी यों ८७ का उदय पावे.

६ प्रमतमें—५ ज्ञानावरणीयकी, ९ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी, १४ मोहनीयकी, १ आयुष्यकी, ४३ नामकी, २ गोत्रकी और ५ अन्तरायकी यों सब ८१ का उदय पावे.

७ अप्रमतमें—५ ज्ञानावरणीयकी, ६ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी. १४ मोहनीयकी. १ आयुष्यकी, ४२ नामकी, १ गोत्रकी और ५ अन्तरायकी यों सब ७६ का उदय पावे.

८ अपूर्व करण में ५ ज्ञानावरणीयकी. ६ दर्शनावरणीयकी २ वेदनीयकी. १३ मोहनीयकी. १ आयुष्यकी, ३९ नामकी, १ गोत्रकी. और ५ अन्तरायकी. यों सब ७२ का उदय पावे.

९ अनियट्टिबादरमें, ५ ज्ञानावरणीयकी ६ दर्शनावरणीयकी २ वेदनीयकी, ७ मोहनीयकी, १ आयुष्यकी, ३९ नामकी १ गोत्रकी और ५ अन्तरायकी यों सब ६६का उदय पावे.

१० सूक्ष्मसम्परायमें—५ ज्ञानावरणीयकी ६ दर्शनावरणीयकी

२ वेदणीयकी १ मोहनीयकी १ आयुष्य ३९ नामकी, १ गौत्रकी, और ५ अन्तरायकी यों सब ६० का उदय पावे.

११ उपशान्त मोह गुणस्थानमें-५ ज्ञानावरणीकी, ६ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी, १ आयुष्यकी, ३९ नामकी, १ गौत्रकी और ५ अन्तरायकी यों सब ५९ का उदय पावे.

१२ क्षीणमोह गुणस्थानमें--५ ज्ञानावरणीयकी, ४ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी, १ आयुष्यकी, ३१ नामकी, १ गौत्रकी, और ५ अन्तरायकी यों ५७ का उदय पावे.

१३ सयोगिकेवलीके-२ वेदनीय, १ आयु, ३८ नाम, १ गौत्र. यों ४२ का उदय पावे.

१४ अयोगीकेवलीके--१ वेदनीयके. १आयुकी,९नामकी १ गौत्रकी, यों १२ का उदय पावे.

तेंतीसवा-समुचय कर्मोदय व्युच्छतिद्वार

मिथ्यात्व से सूक्ष्म-सम्परायतक व्युच्छति नहीं आठोंका उदय पाताहै

उपशान्त मोह और क्षीण मोह में-मोहनीय कर्म उदय की व्युच्छति. सजोगी और अयोगी केवली केवली ज्ञानावरणीय. दर्शनावर्णीय. मोहनीय और अन्तराय इन चारों कर्मोकि उदयकी व्युच्छति होती है.

चौतीसवा-कर्मप्रकृतियोदय व्युच्छतिद्वार

१ मिथ्यात्व में २ मोहनीयकी और ३ नामकी यों ५ का विच्छेदहै

२ सास्वादनमें ३ मोहनीयकी और ८ नामकी यों ११ उदयका विच्छेद

३ मिश्रमें १ मोहनीयकी और १६ नामकी यों १७ का उदय विच्छेदहै.

४ अविरतिमें १ मोहनीयकी और १ नामकी यों १ का उदय विच्छेद.

५ देशविरतिमें-१० मोहनीय, २ आयु, २३ नामकी, यों ३५ का उदय विच्छेद है.

६ प्रमतमें-१४ मोहनीयकी, ३ आयुकी, २४ नामकी, यों ४१ का उदय विच्छेद.

७ अप्रमतमें ३ दर्शनावरणीयकी, १४ मोहनीयकी, ३ आयुष्यकी, २५ नामकी, १ गौत्रकी यों सब ४६ का उदय व्युच्छेद है

८ अपूर्व करणमें ३ दर्शनावरणीयकी, १५ मोहनीयकी, ३ आयुष्यकी, २८ नामकी और १ गौत्रकी यों ५० का उदय व्युच्छेद होता है.

९ अनीयट वादरमें ३ दर्शनावरणीयकी, २१ मोहनीयकी. ३ आयुष्यकी, २८ नामकी, १ गौत्रकी, यों ५६ का उदय का व्युच्छेद.

१० सूक्ष्मसम्परायमें ३ दर्शनावरणीयकी, २७ मोहनीयकी, ३ आयुष्यकी, २८ नामकी और १ गौत्रकी यों ६२ का उदय व्युच्छेद.

११ उपशान्त मोहमें-३ दर्शनावरणीयकी, २८ मोहनीयकी, ३आयूष्य की, २८ नामकी, और १ गौत्र की, यों ६३का उदय व्युच्छेद होता है.

१२ क्षीणमोहमें-५दर्शनावरणीयकी, २८मोहनीयकी,३आयुष्यकी३० नामकी, और १ गौत्रकी यों ६५ का उदय व्युच्छेद होता है.

१३ सयोगी केवलीमें-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीयकी, २८ मोहनीय की, ३ आयूष्यकी २९ नामकी, १ गौत्रकी, और५अन्तराकी यों सब ८० का उदय व्युच्छेद है.

१४ अयोगी केवली गुणस्थानमें-५ ज्ञानावरणीय की, ९ दर्शनावरणीयकी,, १ वेदनीयकी, २८ मोहनीयकी, ३ आयुष्यके, ५८ नाम

की १ गौत्र की, और ५ अन्तरायकी, यों सब ११० प्रकृति के उद-य का व्युच्छेद होता है.

इति कर्मोदय नामक तृतीय प्रकरण समाप्तम्,

चतुर्थ प्रकरण-कर्मउदीरणा द्वार.*

कर्म ऊदीरणाके १२ द्वारों के नाम.

१ समुचय कर्म उदीरणा द्वार, २ ज्ञानावरणीय उदीरणा द्वार, ३ दर्शनावरणीयऊदीरणाद्वार, ४ वेदनीय उदीरणाद्वार, ५ मोहनीय उदीरणा द्वार, ६ आयुष्य ऊदीरणाद्वार, ७ नामऊदीरणाद्वार, ८ गौत्र ऊदीरणाद्वार, ९ अन्तराय ऊदीरणाद्वार, १० समुचय कर्म प्रकृति ऊदीरणा द्वार, ११ कर्मऊदीरणा व्युच्छेद द्वार, और १२ कर्म प्रकृति ऊदीरणा व्युच्छेद द्वार.

११२, पहिला-समुचय कर्म उदीरणाद्वार

मिथ्यात्व, सास्वाद, अविरति, देशविरति, और प्रमत इन ५ गुणस्थानोंमें, आयुष्य विना सात कर्मोंकी ऊदीरणा होतीहै, और कोइक १ आवली मात्र बाकी रहे तब आयुष्य कर्म की ऊदीरणा करेतो आठ कर्मोंकी ऊदीरणा होती है.

मिश्रगुणस्थान में-तो आयुष्य विना सातोंही कर्मोंकी ऊदीरणा है. क्योंकि यहां मरता नहीं है.

अप्रमत, अपूर्व करण और अनिवृ बादर इन तीनों गुणस्थानमें-१ वेदनीय + और आयुष्य विना छः कर्मोंकी ऊदीरणा होती है.

* उदीरणाके द्वारो का खुलासा देखीये अर्थ काण्ड का पृष्ट २१७ वा.

+ वेदनीय कर्मकी उदीरणा संक्लेश परिणाम से होता है और आगे के गुण-

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-पहिले तो ऊपोक्त छेही कर्मकी ऊदीरणा करे फिर एक आवली बाकी रहे तब मोहनीय विन पांच कर्मोकी उदीरणा करे.

उपशान्त मोह गुणस्थान में-उपरोक्त पांचोंही कर्मों की उदीरणा होती है.

क्षीण मोहके-पहिले भागमें तो उपरोक्त पांचों कर्मोंकी ऊदीरणा होती है. और फिर ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, और अन्तराय इन तीनों कर्मोंका उदय होजाने से इनकी ऊदीरणा न होते फक्त नाम और गौत्र इन दोनों कर्मोंकी ऊदीरणा होती है.

सयोगी केवली के नाम और गौत्र दोनों ही कर्मोंकी ऊदीरणा है अयोगी केवली गुणस्थानमें ऊदीरणा नहीं. ×

११४, दुसरा-ज्ञानावरणीय उदीरणाद्वार

मिथ्यात्व से क्षीण मोह गुणस्थान तक ज्ञानावरणीय की पांचों प्रकृति की उदीरणा.

सजोगी और अजोगी केवलीके ज्ञानावरणीयकी ऊदीरणा नही.

११५,तीसरा-दर्शनावरणीय उदीरणाद्वार

मिथ्यात्वसे प्रमत गुणस्थानतक दर्शनावरणीयकी ९ ही प्रकृति की ऊदीरणा.

स्थान में अध्यात्मिकता प्रकट होनेसे संक्लेश भावन ही रहते है. फक्त जो उदयावली में कर्म ला रक्खे हैं सो उदय में आते हैं.

× यहां करण वीर्यका अभाव है. सर्व ग्राम उदय आगया है जो १२ प्रकृति का द्रव्य विद्यमानता है. परन्तु अविधा सत्तागत नहीं है कि जिसको आकर्ष कर उस की ऊदीरणा करनी पडे.

अप्रमत से क्षीण मोह के प्रथम भागतक थीणद्री त्रिक विना ६ की ऊदीरणा.

क्षीण मोह गुणस्थान के अन्तिम भाग में निद्रा, प्रचला विना ४ की ऊदीरणा.

सयोगी और अयोगी केवलीके दर्शनावर्णीयकी ऊदीरणा नही होती

११६. चौथा-वेदनीय ऊदीरणा द्वार.

अनेक जीवों की अपेक्षा कर मिथ्यात्व गुणस्थानसे लगा कर प्रमत गुणस्थान तक दोनों वेदनीयकी की ऊदीरणा होवे. ऊपर के गुणस्थानोंमें वेदनीयकी उदीरणा नहीं है.

११७. पांचवा-मोहनीयकी ऊदीरणा द्वार.

मिथ्यात्व गुणस्थानमें सम्यक्त्व मोह और मिश्र मोह विना २६ की उदीरणा होवे.

सास्वादन गुणस्थान में मिथ्यात्व मोह विना २५ की उदीरणा होवे

मिश्र और अविरति गुणस्थानमें ४ अनन्तान बन्धि चौक १ सम्यक्त्व मोह और १ मिथ्यात्व विना २२ की उदीरणा पावे.

देशविरति गुणस्थानमें-अप्रत्याख्यानीके चौक विना १८की उदीरणा

प्रमत अप्रमत गुणस्थानमें-प्रत्याख्यानी के चौक विना १४ की उदीरणा होवे.

अपूर्व करण गुणस्थान में सम्यक्त्व मोहनीय विना १३ की उदीरणा होवे.

अनिवृत्ति बादर गुणस्थान में हास्य षट्क विना ७की उदीरणा होवे

सूक्ष्म सम्पराय में ३ वेद और ३ [illegible] त्रिक विना १ की उदीरणा होवे.

उपशान्त मोह से अयोगी केवली गुणस्थान तक मोहनीय की उदीरणा नहीं होती है.

११८, छठा-आयु उदीरणाद्वार

मिथ्यात्व से अविरति गुणस्थान तक चारों गति के आयुष्य की उदीरणा.

देश विरति में मनुष्य और तिर्यंच दोनों आयुष्य की उदीरणा होवे.

प्रमत गुणस्थान में एक मनुष्य के आयुष्य उदीरणा होवे.
अप्रमत से अजोगी केवली तक आयुष्यकी उदीरना नहीं. +

११९, सातवा-नाम उदीरणा द्वार

मिथ्यात्व में २ आहारक द्विक और १ तीर्थंकर नाम विना ६४ की उदीरणा.

सास्वादन में ३ सूक्ष्म त्रिक, १ आतापनाम, १ नरकानुपूर्वी विना ५९ की उदीरणा.

मिश्र में ४ जातिचतुष्क, ३ अनुपूर्वी, १ स्थावरनाम, १ ... न विना ५१ की उदीरणा.

अविरति में चारों गति की अनुपूर्वी की उदीरणा बढनें

+ मनुष्यायु की उदीरणा प्रमत्त योग करके होती है, जो बहुत काल मे वेदने योग्य है उसे थोडे काल में वेदकर अपवर्तन करण विशेष से वेदता है, उसेही सोपक्रम आयुष्य होता है. जिसे अकाल मरण कहते हैं. और अप्रमत्तादि गुणस्थान में अकाल मरण नहीं होता है. और साता वेदनीय असाता वेदनीयकी उदीरणा भी प्रमत्तसेही होती है, (उदयतो चउदेही गुणस्थानोंमें पाता है.) इसलिये छठे कहीसो २ वेदनीय और यहां कहीसो मनुष्य आयुष्य इन तीनोंकी उदीरणा का प्रमत्त गुणस्थानसेही व्यवच्छेद किया है.

५५ की उदीरणा.

देशविरति में १ मनुष्यानुपूर्व्वी, १ तिर्यंचानुपूर्व्वी, २ वैकि
क, २ देवद्विक, २ नरकद्विक, १ दौर्भाग्य, १ अनादेय १ अ
: इन ११ विना ४४ की उदीरणा.

प्रमत में १ तिर्यंच गति और १ उद्योतनाम यह दो तो घ
और आहारक द्विक बढाना तब ४४ कीही उदीरणा होवे.
अप्रमत में आहारक द्विक घटाने से ४२ की उदीरणा होवे.

अपूर्व करण से उपशान्त मोह तक थीणद्धी त्रिक विना
३९ की उदीरणा.

क्षीण मोह और सयोगी केवलीके निद्रा और प्रचलाविना
७ की उदीरणा.
योगी केवली गुणस्थान में नाम कर्म की उदीरणा नहीं होतीहै

१२०, आठवा-गौत्र उदीरण द्वार.

त्व से देशविरति गुणस्थानतक दोनों गौत्रकी उदीरणा पावे
ा ते सयोगी केवली गुणस्थान तक एक उँच गौत्रकी उदीरणा
गी केवली गुणस्थान में गौत्र कर्मकी उदीरणा नहीं होतीहै.

१२१, नावव-अन्तराय उदीरणा द्वार.

त्व से क्षीण मोह तक अन्तरायकी पांचों प्रकृतिकी उदीरणा
ी और अयोगी केवली के अन्तराय की [illegible] नहीं.

[illegible] दवशा [illegible] द्वार

मिथ्यात्व में ५ ज्ञानावरणीय, [illegible] वेदनी-
२६ मोहनीय, ४ आयुष्य, ६४ [illegible] र ५ अन्त-

राय यों सव ११७ प्रकृति की उदीरणा.

सास्वादन में ५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, २ वेदनीय, २५ मोहनीय, ४ आयुष्य, ५९ नाम, २ गोत्र, और ५ अन्तराय यों १११ की उदीरणा होवे.

मिश्रमें-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, २वेदनीय, २२ मोहनीय ४ आयुष्य, ५१ नाम, २ गोत्र, और ५ अन्तराय. यों १००की उदीरणा होवे.

अविरतिमें-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, २ वेदनीय, २२ मोहनीय, ४ आयुष्य, ५५नाम, २ गोत्र, और ५ अन्तरायकी यों १०४ की उदीरणा होवे.

देशविरति में-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, २ वेदनीय, १८ मोहनीय, २ आयुष्य, ४४ नाम, १ गोत्र, और ५ अन्तराय यों ७८ की उदीरणा होवे.

प्रमतमें ५ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय. ९ वेदनी १४ मोहनीय १ आयुष्य, ४४ नाम १गोत्र और ५ अन्तराय यों ८१ की उदीरणा होवे.

अप्रमतमें-५ ज्ञानावरणीय ६ दर्शनावरणीय, ४१ मोहनीय४२ नाम, १ गोत्र और५ अन्तराय यों सव७३प्रकृतिकी उदीरणा होवे.

अपूर्व करणमें-५ ज्ञानावरणीय ६ दर्शनावरणीय १३ मोहनीय, ३९ नाम १ गोत्र और ५ अन्तराय यों सव ६९ की उदीरणा होवे.

अनिवृति वादरमें-५ ज्ञानावरणीय ६ दर्शनावरणीय, ७ मोहनीय, ३९ नाम, १ गोत्र और ५ अन्तराय यों ६३ की उदीरणा होवे.

सूक्ष्म सम्परायमें-५ ज्ञानावरणीय ६ दर्शनावरणीय, १ मोहनीय ३९ नाम, १ गोत्र, और ५ अन्तराय यों सव ५७ की उदीरणा होवे.

उपशान्त मोहमें-५ ज्ञानावरणी, ६ दर्शनावरणीय, ३९ नाम, १गौत्र और ५ अन्तराय. यों सब ५६ प्रकृतिकी उदीरणा होती है.

क्षीण मोहमे ५ ज्ञानावरणीय, ४ दर्शनावरणीय, ३७ नाम, १ गौत्र, और ५ अन्तराय यों सब ५२ प्रकृति की ऊदीरणा होवे. सयोगी केवलीके ३८ नामकी और १ गौत्रकी यों ३९ की ऊदीरणा अयोगी केवली के कर्म प्रकृतियों की ऊदीरणा नहीं होती है.

१२३, इग्यावा-ऊदीरणा व्युछिद्द्वार

मिथ्यात्वसे प्रमत गुणस्थान तक कर्म उदीरणा की वुच्छिती नहीं. अप्रमतसे सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानतक १वेदनी, और १आयु की उदीरणाका विच्छेद होती है.

उपशान्त मोह और क्षीण मोह में १ वेदनीय, १ मोहनीय, और १ आयुष्या इन तीनों कर्मो की उदीरणा की व्युच्छती है. सयोगी केवली के ज्ञानावरणीय, दर्शणावरणीय, वेदनीय, मोहनीय आयुष्य, और अन्तराय इन ६ कर्मो की उदीरणा की व्युच्छति होती है.

अयोगी केवली के आठों कर्मोकी उदीरणा की व्युच्छिती होतीहै.

१२४वारवा कर्मप्रकृतिउदीरणाव्युछिद्वार

मिथ्यात्व गुणस्थाण में-२ मोहनीय की और ३ नामकी यों ५ प्रकृति का विच्छेद होती है.

सास्वादन गुणस्थान में-३ मोहनीय की और ८ नाम की यों ११ का विच्छेद.

मिश्रगुणस्थानमें १मोहनीयकी [illegible] नामकी, यों [illegible]काविच्छेद

अविरति सम्यक्दृष्टि गुणस्थान [illegible] मोहनीयकी [illegible] १२ [illegible]

सयोगी और अयोगी केवली की ज्ञानावरणीय की सत्ता नहीं.

१२७, तीसरा-दर्शनावरणीय द्वार

मिथ्यात्वसे उपशान्त मोह गुणस्थान तक उपशम श्रेणिवाले के ९ प्रकृति की ही सत्ता.

अविरति से अनियट बादर गुणस्थान के पहिले भाग तक क्षपक श्रेणि वाले के ९ की ही सत्ता.

अनियट बादर के दूसरे भागसे क्षीण मोह गुणस्थान के पहिले भाग तक थीणद्धी त्रिक विना ६ प्रकृति की सत्ता पातीहै.

क्षीण मोह के दूसरे भागमें दोनों निद्रा विना ४ की सत्ता. और क्षीण मोह के अन्ति भागसे ऊपर के गुणस्थान में दर्शनावरणीयकी सत्ता नहीं है.

१२८, चौथा-वेदनीय सत्ता द्वार.

मिथ्यात्वसे अयोगी केवलीके प्रथमभाग तक दोनों वेदनीयकी सत्ता अयोगी केवलीके अन्तिम भागमें दोनोंमसे एक वेदनीयकी सत्ता

१२९, पांचवा-मोहनीय सत्ता द्वार.

मिथ्यात्वसे उपशान्त मोह गुणस्थान तक उपशमसम्यक्त्व और उपशम चारित्रवाले के मोहकी २८ ही प्रकृति सत्ता *

अविरति गुणस्थान से उपशान्त मोह गुणस्थान तक क्षायिक सम्यक्त्व और उपशम श्रेणिवाले के अनन्तानुबन्धि चौक

* क्योंकि उपशम श्रेणिवाला पड़ताहुवा हांडर भीजा मिथ्यात्व गुणस्थानमें आवे

और दर्शनत्रिक इन ७ विना २१ की सत्ता. ×

और क्षपक श्रेणिवाले के ÷ नववे गुणस्थान के पहिले भागमें उपरोक्त २१ की ही सत्ता, दूसरे भागमें ४ अप्रत्याख्यानी चोक, और ४ प्रत्याख्यानी चोक, यों ८ प्रकृति टलनेसे १३ की सत्ता. तीसरे भागमें नपुंसक वेदाविना १२ की सत्ता, चौथे भाग में स्त्री वेदाविना ११ की सत्ता, पांचवे भागमें हॉस्य षट्क विना ६ की सत्ता. छठ्ठे भागमें पुरुष वेद विना ५ की सत्ता. सातवे भागमें सज्वलन क्रोध विना ४ की सत्ता. आठवे भागमें सज्वलन मान विना ३ की सत्ता. नववें भागमें सज्वल की माया विना २ की सत्ता और सूक्ष्म सम्परायमें १ संज्वल के लोभ की सत्ता. उपर मोह की सता नहीं.

१२९, छठा-आयुष्य सत्ता द्वार.

मिथ्यात्व से उपशान्त मोह गुणस्थान तक जो पहिले आयुबन्ध किया हो तो चारों गतिके आयुकी सता, + और आयुबन्ध न करे तो १ मनुष्यायु की सता.

अविरति से अयोगी केवली गुणस्थान तक क्षपक श्रेणिवालेके १ मनुष्यायु की सता.

× उपशम भाव में मोहनीयका उदय तो नहीं है परन्तु सत्ता रहती है.

÷ उपशम और क्षपके श्रेणी आठवे गुणस्थान से ही प्रारंभ होती है. इसलिये यहां ९वे गुणस्थान में ही ग्रहण किया है.

+ पाठान्तर अनन्तान बन्धी की विसंयोजना (क्षयकी प्रकृति मिथ्यात्व प्रत्यय कर फिर बन्ध करना.) होती है तब नरकायु और तिर्यचायुकाभी, विसंयोजना होती है. तब ही उपशम श्रेणीका प्रारंभ होता है. इसलिये उपशम [illegible] -८-१०और ११ इन चारों गु

१३१, सातवा-नाम सत्ता द्वार

मिथ्यात्व से उपशान्त मोह गुणस्थान तक उपशम श्रेणि-वालेके ९३ ❀ की ही सता.

अविरति गुणस्थान से अनियट वादर के पहिले भाग तक ९३ प्रकृति की सता.

अनियट्ट बादर के दूसरे भागसे सयोगी केवली गुणस्थान तक १ नरकगति, १ नरकानुपूर्व्वी, १ तिर्यचगति, १ तिर्यचानुपूर्व्वी, ४ जातिचतुष्क, १ स्थावर, १ सूक्ष्म, १ आताप, १ उद्योत, और १ साधारण इन १३ विना ८० की सता.

अयोगी केवली के अन्तिम भागमें १ मनुष्यगति, १ पंचेन्द्रियकी जाति, १ त्रस, १ बादर, १ पर्याप्त, १ यशःकीर्ति, १ आदेय, और १ सोभाग्य. इन ९ की प्रकृति सता रहती है.

१३२, आठवा-गौत्र सत्ता द्वार.

मिथ्यात्व से अयोगी केवली गुणस्थान के पहिले भागतक दोनों गौत्र की सता.

अयोगी केवली गुणस्थानके अन्तिम भागमें १ उंच गौत्र की सता.

१३३, नववा-अन्तराय सत्ता द्वार.

❀ तीर्थंकर नाम कर्म की सत्ता वाला जीव दुसरा तीसरा गुणस्थान नहीं स्पर्शता है. और मिथ्यात्व गुणस्थान में तीर्थंकर नाम, कर्म की सत्ता फक्त अन्तर मुहूर्त पर्यन्त ही पाने का संभव है. क्योंकि किसी क्षयोपशम सम्यक्त्वीने पहिले मिथ्यात्व अवस्था में नरकायुका बन्ध किया फिर सम्यक्त्व प्राप्तकर तीर्थंकर नामकी उपार्जना करी, वो मरण समयमें सम्यक्त्वका वमन करके मिथ्यात्वमें आवे. (परन्तु दुसरा तीसरा गुणस्थान स्पर्शे नहीं.) वहां अन्तर मुहूर्त रहकर फिर सम्यक्त्व प्राप्त करे इसलिये मिथ्यात्व गुणस्थान में तीर्थंकर नाम की सत्ता पातीहै.

मिथ्यात्वसे क्षीण मोह गुणस्थानतक अन्तराय की पांचों प्रकृति की सता.
सयोगी अयोगी केवली के अन्तराय की सता नहीं.

१३४, दशवा-ध्रुव कर्म सत्ता द्वार.

आयुष्य विना सतों कर्म ध्रुवसता वाले हैं.
मिथ्यात्व से क्षीण मोह गुणस्थान तक सातों कर्मों की सता.
सयोगी और केवली के वेदनी नाम और अन्तराय तीनोंकी सता.

१३५,इग्यारवा ध्रुव कर्म प्रकृति सत्ता द्वार

ध्रुवसता की १२६ प्रकृति—५ ज्ञानावरणीयकी, ९ दर्शनावरणीयकी २ वेदनीयकी, २६ मोहनीयकी, (मिश्र मोह और सम्यक्त्व मोह विना)१तिर्यंचगति, १ तिर्यंचानुपूर्वी, ५ जाति, १ ओदारिक शरीर, १ तेजस शरीर, १ कार्मण शरीर, १ ओदारिकका अंगोपांग, २ वंधन, २ संघातन, ६ संघयण, ६ संठाण, २० वर्णादि, २ विहायोगति १ पराघात, १ उद्योत, १ आताप, १ उश्वास, १ अगुरुलघु, १ आपघात, १० त्रसदशका, १० स्थावर दशका,१० १ निर्माण नाम, (यों नामकी ७८)१नीच गोत्र, ५अंतरायये१२६ मिथ्यात्व से उपशांत मोह गुणस्थानतक उपशम श्रेणीवाले के १२६ कीही सत्ता.
अविरतिसे अनियट्टी वादर के पहले भागतक क्षपक श्रेणिवाले के भी १२६ कीही सत्ता.
अनियट्टि वादरके दूसरे भागमें ३ थीणद्धीत्रिक, १ स्थावर १ सूक्ष्म १ आताप, १ उद्योत १ साधारण, १ तिर्यचगति, १ तिर्यंचानुपूर्वी, और जाति चतुष्क, इन १४ विना ११२ की सत्ता, तीसरे भा-

गर्मे-४ अप्रत्याख्यानी चौक, और ४ प्रत्याख्यानी चौक ...
१०४ की सत्ता, चौथे भाग में नपुंसक वेद विना १० की
पांचवे भाग में स्त्रीवेद विना १०२ की सत्ता, छठे भाग ...
षटक विना ९६ की सत्ता, सातवे भाग में-पुरुषवेद विना ९५
सत्ता, आठवे भाग में-संज्वलन क्रोधविना, ९४ की और नौ
भाग में-संज्वल मान विना. ९३ की सत्ता.
सूक्ष्म संपरायमें, संज्वलनके लोभ विना ९२ की सत्ता.
क्षीण मोह गुणस्थानके द्वि चरम-समय संज्वलके-लोभ विना ९१
की सत्ता, और अन्तिम समय में निद्रा और प्रचला विना ८९
की सत्ता.
सजोगी केवली और अयोगी केवलीके-५ ज्ञानावरणीय, ४ दर्शनावरणीय, ५ अंतराय इन १४ प्रकृति विना ७५ की सत्ता.
अयोगी केवलीके अन्तिम समय १ पचेन्द्रिय की जाति, १ वेदनी इन २ की सत्ता रहती.

१३६, बारवा-अध्रुव कर्मसत्ता द्वार

अध्रुव सत्ताके ४ कर्मः–१ मोहनीय, १आयुष्य,१नाम,और१गोत्र.
मिथ्यात्वसे उपशान्त मोह गुणस्थानतक उपशम श्रेणीवालेके चारों कर्मोंकी सत्ता.
अविरति से अयोगी केवलीतक क्षपक श्रेणिवाले के मोहनीय विना तीनों की सत्ता.

१३७, तेरवा-अध्रुव कर्मप्रकृतिसत्ता द्वार

ध्रुव सत्तामें कही उनसे बाकी रही अध्रुव सत्ताकी २२ प्रकृतिः–मिश्रमोहनीय, १ सम्यक्त्व मोहनीय, चारों गतिका आयु-

ा. २ तिर्यंचानुपूर्वी विन तनों अनुपूर्वी, १ आहारक शरीर, १ हारक अंगोपांग, १ आहारक बन्धन, १ आहारक संघातन, १ क्रिय शरीर, १ वैक्रिय अंगोपांग, १ वैक्रिय बन्धन, १ वैक्रिय सं तन, १ तीर्थंकर नाम, ३ गति, १ ऊंच गोत्र, यह २२.

थ्यात्वसे उपशांत मोह गुणस्थानतक २२ कीही सत्ता.

ाण मोहसे अयोगी केवलीतक १ मनुष्यायु १ जिननाम, १और चगोत्र, इन ३ की सत्ता.

३८, चउदा सर्वघातिक कर्मसत्ता द्वार

थ्यात्वसे उपशांत मोह गुणस्थानतक-सर्व घातिक तीनों कर्मोकी त्ता.

णमोह गुणस्थानमें मोहनीय विना-दो कर्मोकी सत्ता.

योगी अयोगी केवली के सर्व घातिक कर्मोकी सत्ता नहीं.

दरवा-सर्वघातिक कर्मप्रकृतिसत्ता द्वार.

मिथ्यात्व से उपशांत मोहगुणस्थानतक उपशम श्रेणीमें स घातिक २० ही प्रकृति की सत्ता.

क्षपक श्रेणीसे अनियट्ट बादर गुणस्थान के पहिले भागतक २० ही प्रकृति की सत्ता.

अनिट्ट बादर के दूसरे भागसे सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानतक थीणद्वी त्रिक और १ मिथ्यात्व मोह विना १६ की सत्ता.

क्षीणमोह गुणस्थान के अन्त में-दो निद्रा विना १४ की सत्ता.

सयोगी और अयोगी केवलीके सर्व [illegible] की सत्ता नहीं.

४०, सालवा-देश [illegible] त्ता, द्वार

मिथ्यात्वसे उपशान्त मोह गुणस्थानतक-देशघातिक चारों कर्मों की सत्ता.

क्षीणमोह गुणस्थानमें-मोहनिय विना तीनों कर्मोंकी सत्ता.

सयोगी और अयोगी केवलीके देशघातिक कर्मोंकी सत्ता नहीं.

१२१, सत्तरवा-देश घातिककर्म

मिथ्यात्वसे उपशान्त मोह गुणस्थानतक उपशम श्रेणि वाले के २७ की ही सत्ता.

क्षपक श्रेणिवालेके-अविरति से अपूर्व करण गुणस्थानतक २१ प्रकृति की ही सत्ता.

अनियट्ट बादरके पहिले दुसरे और तीसरे भागमें-१ सम्यक्त्व मोह और मिश्र मोह विना, २५ की सत्ता चौथे भाग में नपुंसक वेदविना २४ की सत्ता, पांचवे भाग में-स्त्रीवेद विना २३ की सत्ता छठे भागमें-हास्य षट्क विना २७ की सत्ता. सातवे भाग में-पुरुष वेद विना १६ की सत्ता, आठवे भाग में-संज्वलके क्रोध विना १५ की सत्ता, नववे भागमें-संज्वलके मान विना १४ की सत्ता.

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-संज्वलकी माया विना १३ की सत्ता.

क्षीणमोह गुणस्थानमें-संज्वलके लोभ विना १२ की सत्ता.

सयोगी और अयोगी केवलीके देशघातिक की सत्ता नहीं है.

१२२, अठारवा-अघातिककर्म सत्ता द्वार

मिथ्यात्वसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-अघातिक चारों कर्मों की सत्ता.

उन्नीसवा-अघातिक कर्मप्रकृतिसत्तापाती

मिथ्यात्व गुणस्थानमें-अघातिक १०१ प्रकृतिकी सत्ता पाती है.
सास्वादन और मिश्रगुणस्थानमें-१ तीर्थनाम विना १०० की सत्ता
अविरतिसे उपशांत मोह गुणस्थानतक-उपशम श्रेणिमें१०१की सत्ता

क्षपक श्रेणिमें-अविरतिसे अनियट वादर के प्रथम भाग में तीनों आयुष्य की सत्ता विना ९७ की सत्ता.

अनियट वादर के दुसरे भागसे अयोगी केवली गुणस्थान के प्रथम भागतक १ तिर्यचगति. १ तिर्यचानुपूर्वी, १ नरकगति, १ नरकानूपूर्वी, १ स्थावर, १ सूक्ष्म, १ आताप. १ उद्योत, ४ जाति चतुष्क. और १ साधारण इन १३ विना ८४ की सत्ता.
अयोगी केवलीके अन्तिम भागमें फक्त १३ की सत्ता रहती है.

१४४, बीसवा समुच्चय प्रकृति सत्ता द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थानमें-५ ज्ञानावरणीय, ९ दर्शनावरणीय, २ वेदनीय, २८ मोहनीय, ४ आयुष्य ९३ नाम. २ गौत्र और ५ अंतराय, यों १४८ की ही सत्ता.
सास्वादन और मिश्र गुणस्थानमें१तीर्थंकर नाम विना१४७की सत्ता.
अविरतिसे उपशान्त मोहतक. उपशम श्रेणीवाले के ऊपरोक्त१४८ की ही सत्ता.

अविरतिसे अप्रमसंयतितक-उपशमश्रेणिगत क्षायिक सम्यक्त्वी के ५ ज्ञानावरणीयकी, ९ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी, २१ मोहनीय ४ आयुष्यकी, ९३ नामकी. २ गौत्रकी. और ५ अन्तरायकी यों १४१ प्रकृतिकी सत्ता.

अपूर्व करण से उपशान्त मोहतक-उपशम श्रेणी और क्षायिक सम्यक्त्वी के-५ ज्ञानावरणीयकी. ९ दर्शनावरणीय की २ वेदनी-

यकी २१ मोहनीय, २ आयुष्यकी ९३ नामकी, २ गौत्रकी और अन्तरायकी यों १३९ प्रकृतिकी सत्ता.

अविरति से अप्रमत गुणस्थानतक क्षपक श्रेणिगत क्षयोपशम सम्यक्त्वीके ५ ज्ञानावरणीय की, ९ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीय, की, २८ मोहनीय की १ + आयुष्यकी,९३ नामकी, गौत्रकी और ५ अन्तरायकी यों १४५ की सत्ता.

अविरति से अनियट वादर के पाहिले भागतक-क्षपक श्रेणिगत क्षायिक सम्यक्त्वीके-५ ज्ञानावरणीय की, ९ दर्शनावरणीयकी, २वेदनीय की, २१ मोहणी की, १ आयुष्यकी, ९३ नामकी, २ गौत्र ५ अंतरायकी, १३८की सत्ता.

अनियट वादर के-दुसरे भागमें ५ ज्ञानारणीय की ६ दर्शनावरणीयकी, २ वेदनीयकी ,२१ मोहनीयकी, १ आयुष्यकी ८० नामकी, २ गौत्र की और ५ अन्तरायकी यों १२२ की सत्ता, तीसरे गमें मोहनीयकी १३ प्रकृति होनेसे ११४की सत्ता, चौथे भागमें-मोहनीयकी १२ प्रकृति होनेसे ११३ की सत्ता पांचवे भाग में-मोहनीयकी ११ प्रकृति होनेसे ११२ की सत्ता. छठे भाग में-मोहनीयकी प्रकृति होनेसे १०६ की सत्ता, सातवे भागमे मोहनीय की ५ प्रकृति होनेसे १०५ की सत्ता.. आठवे भाग में मोहनीयकी २ प्रकृति होनेसे १०४ की सत्ता, और नववे भाग में मोहनीय की १प्रकृति होनेसे १०३ की सत्ता.

सुक्ष्म सम्पराय में-५ ज्ञानावरणिय की, ९ दर्शनावरणीयकी २ वेदनीयकी १ मोहनीयकी १ आयुष्यकी, ८० नामकी २ गौत्र

+ क्षपक श्रेणि करने वाला निश्चयमे चरम शरीरी होता है. उसने तिनो गतिका आयुष्यका क्षय किया फक्त १ मनुष्यायु सत्ता में है.

की और ५ अन्तरायकी १०२ की सत्ता.

क्षीण मोहमे के प्रथम भाग में-५ ज्ञानावरणीय की ६ दर्शनावरणीय की, १ वेदनीय की, १ आयुष्यकी, ८० नामकी, २ गौत्रकी और ५ अन्तरायकी यों १०१ की सत्ता. और दूसरे भागमें-दर्शनावरणियकी ४ ही प्रकृति पाने से ९९ की सत्ता

सयोगी केवलीमें-२ वेदनीय, १ आयुष्य, ८० नाम, २ गौत्र की यों ८५ की सत्ता.

अयोगी केवली के-आद्य भागमें तो उपरोक्त ८५ की ही सत्ता. मध्य भाग में २ वेदनीयकी, आयुष्यकी, और ९ नामकी यों १३ की सत्ता. और अन्तिय भाग में-१ वेदनीयकी १ आयुष्यकी ९ नामकी, १ गौत्र की यों १२ की सत्ता.

१२५,इक्कासवा कर्म व्युच्छति द्वार

मिथ्यात्वसे, उपशान्त मोह गुणस्थानतक-कर्मोंकी व्युच्छति नहीं.

क्षीण मोह गुणस्थान में मोहनीय कर्मकी व्युच्छति होती है. सयोगी आयोगी केवली गुणस्थानमें-४ घातिक कर्मकी व्युच्छति

१२६, बावीसवा-कर्म प्रकृति व्युचति द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थानमें कर्म प्रकृतिकी व्युच्छति नहीं.

सास्वादन और मिश्रमें-फक्त १ तीर्थंकर नाम कर्मकी व्युच्छति. अविरति से अप्रमत गुणस्थानतक उपशम श्रेणिगत, उपशम और क्षयोपशम सम्यक्त्वी के कर्म प्रकृति की व्युच्छिति नहीं क्योंकि (पडता है.)

अविरति से अप्रमत गुणस्थानतक उपशम श्रेणिगत क्षायि

यह भांगा पाता है. यों २ भांगे पावे.

मिश्र, अपुर्व करण और अनीयट बादर इन तीनों गुणस्थानों में आयुबन्ध न होनेके सबबसे ७ कर्मोका बन्ध ८ का उदय और ८ की सत्ता. यह १ भांगा पावे.

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें आयुग्य और मोहनीय का बन्ध न होने के सबब से ६ कर्मोका बन्ध, ८का उदय, और८ की सत्ता यह १ भाङ्गा पावें.

उपशान्त मो गुणस्थान में-एक साता वेदनीयका बन्ध मोहनीय विना ७ कर्मोका उदय, और ८ हीकी सत्ता यह १भाङ्गा पावे. क्षीण मोह गुणस्थानमें एक साता, वेदनीयका बन्ध, मोहनीय विना ७ का उदय, और इन ७ की साता यह १ भाङ्गा पावे.

सयोगी केवली गुणस्थान में-एक सत्ता वेदनीयका बन्ध. वेदनीय आयुष्य, नाम और गौत्र, इन चारोंका उदय और इन चारों की ही सत्ता. यह १ भाङ्गा पावे.

अयोगी केवली गुणस्थान में बन्ध नहीं. ऊपरोक्त चारों कर्मोका उदय, और चारों की सत्ता यह १ भाङ्गा पावे.

११८, दुसरा-ज्ञानावरणीयकर्मभङ्ग द्वार.

मिथ्यात्वसे लगाकर सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानतक-ज्ञानावरणीय की पांचों प्रकृति का बन्ध, पांचोंका उदय, और पांचों की सत्ता यह १ भांगा पावे.

उपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थान में-बन्ध नहीं, पांचों प्रकृतिका उदय और पांचोंकी सत्ता यह १ भागा पावे.

☞ ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मोंके भांगे के खुलासेके लिये देखिये अर्थ काण्ड का पृष्ट २२१.

सयोगी और अयोगी केवली के ज्ञानावरणीय का बन्ध, उदय, सत्ता, तीनोंही नहीं.

१४९ तीसरा-दर्शनावरणीय कर्मभंगद्वार

मिथ्यात्व और सास्वादन गुणस्थानमें (१) एकाकबन्ध, ४ का उदय, और ९ की सता. (२) ९ का बन्ध, ५ का उदय और ९ की सत्ता यह दो भाङ्गे पाते हैं.

मिश्र गुणस्थान से अनीयट वादर के प्रथम भाग तक (१) थीणद्धीत्रिक विना, ६ का बन्ध, ४ का उदय, और ९ की सत्ता. और (२) ६ का बन्ध, ५ का उदय और ९ की सत्ता यह दो भाङ्गे पाते हैं.

अनियट वादर के आठों भागमें और सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें उपशम श्रेणीमें निद्रा प्रचला का बन्ध विना (१) ४ का बन्ध, ४ उदय और ९ की सता. (२) ४ का बन्ध, ५ का उदय, और ९ की सता यह दो भाङ्गे पाते हैं.

अनियठ वादर और सूक्ष्म सम्पराय के क्षपक श्रेणि में ४ का बन्ध, ४ का उदय, और ६ की सत्ता यह १ भङ्गा पावे.

उपशान्त मोह गुणस्थान मे बन्ध के अभाव से (१) चार का उदय, और ९ की सता, तथा ५ का उदय, और ९ की सत यह दो भाङ्गे पावे.

क्षीण मोह गुणस्थान के द्वी चरम समय में ४ का उदय और ६ की सता और अन्तिम समयमें दोनों निद्राकी सता टलनेसे ४ का उदय, और ४ कीही सता यह २ भाङ्गे.

सयोगी और अयोगी केवली के दर्शनावरणीय का बन्ध,

उदय, सता तीनों ही नहीं.

१५०, चौथा-वेदनीयकर्म भंग द्वार.

मिथ्यात्व से लगा प्रमत संयति गुणस्थान तक (१) असा ता का बन्ध, असाता का उदय, और दोनों की सता, (२) साता का बन्ध, साताका उदय, और दोनों की सता. (३) का बन्ध, असाता का उदय और दोनोंकी सता. और (४) साता का बन्ध. साता का उदय, दोनों की सत्ता. यह ४ भाङ्गे.

अप्रमत्त से सयोगी केवली तक (१) साताका बन्ध, असा ताका उदय, और दोनों की सता. (२) साताका बन्ध, साताका उदय और दोनों की सता यह दो भाङ्ग पावे.

अयोगी केवली के द्वि चरम समयमें बन्ध के अभाव में (१)साताका उदय, दोनों की(२) और असाताका उदय दोनों की सता. यह दो भाङ्गे पावे. और अन्तिम समयमें (१)साताका उदय साता की सता. और(२)असाताका उदय, असाताकी सता यह दो भांगे पावे. यों ४ भांगे पाते हैं.

१५१, पांचवा-मोहनीय कर्म भंग द्वार.

मिथ्यात्व गुणस्थान में २२ का बन्धस्थान है, जिसके भांगे ६ होते हैं और ७ का, ८ का, ९ का और १० का. यह उदयस्थान है, जिसके भांगे की चोवीसी ८ होती है.

सास्वादन गुणस्थान में २१ का बन्धस्थान है, जिसके भांगे ४ होते हैं. और ७ का, ८ का, ९ का यह तीनों उदयस्थान है जिसके भांगे की चोवीसी ४ होती है.

☞ वेदनीय कर्म के भाङ्गे के खुलासे के लिये देखीये सर्व कोष्टक पृष्ठ २२३ वा.
☞ मोहनीय कर्म के भाङ्गे के खुलासे के लिये देखीये सर्व कोष्टक पृष्ठ २२७ वा

मिश्र गुणस्थानमें १७ का वन्धस्थान है, जिसके भांगे दो होते हैं. और ७ का, ८ का, और ९ का यह तीन उदयस्थान हैं, जिसके भाङ्ग की चौवीसी ५ होती है.

अविरति गुणस्थानमें १७ का वन्धस्थान है. जिसके भाङ्ग २ होते हैं, और ६ का, ७ का, ८ का ९ का यह चार उदयस्थान है, जिसके भाङ्ग की चौवीसी ४ होती हैं.

देशविरीत गुणस्थानमें १३ का वन्धस्थान है, जिसके भाङ्ग दो होते हैं, और ५ का, ६ का, ७ का, और ८ का, यह ४ उदय स्थान है, जिसके भाङ्ग की चौवीसी ८ होती है.

प्रमत गुणस्थानमें ९ का वन्धस्थान है, जिसके भाङ्ग दो होते है. और ४ का, ५ का, ६ का, और ७ का, यह ४ उदय स्थान हैं. जिसके भाङ्ग कि चौवीसी ८ होती है.

अप्रमत गुणस्थानमें-९ का वन्ध स्थान, जिसका भांगा १×होता है. और ४ का, ५ का, ६ का, और ७ का यह ४ उदय स्थान, है जिसके भांगे की चौवीसी ८ होती हैं.

अपूर्व करण गुणस्थानमें-९ का वन्ध स्थान, जिसका भाङ्गा १+ और ४ का, ५ का, ६ का यह तीन उदयस्थान जिसके भांगे चोवीसी ४ होती है.

अनियट वादर गुणस्थानमें-५ का, ४ का, ३ का, २ का, और

× चौवीसी बनानेकी सीधी रीति-हांस्य और रतिके युगल मे तीनों वेदके तीन भाङ्गे, तैसेही शोक अरति के युगल मे तीन वेदके तीन भाङ्ग करने मे ६ भाङ्गे होते हैं. यह ६ क्रोधसे, ६ मानसे, ६ मायासे, और ६ लोभसे, यों २४ भाङ्ग होवे सो १ चौवीसी विशेष गुनामा अर्थ कांड में देखीये.

+ यहां से आगे अरति और शोक इन जुगल का अभाव होता है. इसलिये १ ही भांग पाता है.

१ का यों ५ बन्ध स्थान होते हे. जिसके ५ भांगे अलग अलग होते हें. और १ का, तथा २ का, यह दो उदय स्थान हें, जिसमें संज्वलकी चारों कषायोंमें की १ कषाय और तीनों वेदों में का १ वेद, इन दोनों का उदय होता हे. यों चारों कषायों को तीने वेदों से ती गुणे करने से १२ भांगे होते हें. और फिर वेद का उदय टलनें मे एक का उदय स्थान रहता हे. सो चो विध, त्रिविध द्विविध, और एक विध, यों१०उदयके भांगे होतेहे. तोभी यहां सामान्य विविक्षासे-४-३-२ और १ इन चारों बन्ध स्थानकी अपेक्षा एकेक ही भांगा गिननेसे चारही भांगे कहने, यों यहा, १६ भांगे होते हें.

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान में-मोहनीय कर्म का बन्ध नहीं होता हे फक्त एक कीटिकृत् संज्वल का लोभही का उदय हे जिसका एक ही भांगा पाता हे.

उपशांत मोहमे अयोगी केवलीतक मोहका लवलेशही नहीं हे.

मोहनीयके सर्व भाङ्गे की संख्याः-मिथ्यात्व, अविरति, देशविरति, प्रमत और अप्रमत, इन पांचों गुणस्थानों में-भाङ्गे के आठ आठ चोवीसीहे, और सास्वादन, मिश्र और अपूर्व करण इन तीनों गुणस्थानमें चार चार चोवीसीहे. सब ५२ चोवीसी हुइ जिसके भाङ्गे ५२×२४=१२४८होतेहे. और अनियट बादरके १६भाङ्गे, सूक्ष्म सम्परायका एक भाङ्गा यह १७ और पहलेके १२४८ मिलकर१२६५ मोहनी के भांगे होते हें.

१५२, छठा आयुष्य कर्म भंग द्वार

आयुष्य कर्मके भाङ्गे सुगमेके लिये देखीये अर्थ कोष्टका पृष्ट २४१ वा.

आयुष्य कर्म के २८ भांगे:-१ नरकायूका बन्ध, नरकायुका उदय. २तिर्यंचायुका बन्ध. नरकायुका उदय, ३ मनुष्यायुका बन्ध नरकायुका उदय, ४ नरकायुका उदय, और नरक तिर्यंचायुकी सत्ता. ५ नरकायुका उदय और नरक मनुष्यकी सत्ता.

ऊपर जिस तरह नरकायु के ५ भांगे किये, तैसे ही देवायू के भी ५ भांगे जानना. विशेष इतनाही की नरकायु के स्थान देवायु कहना. यों दोनों गति के १० भाङ्ग हूवे.

१ तिर्यंचायुका उदय, और तिर्यचायुकी सत्ता. २ तिर्यंचायुका बंध तिर्यंचायुकी सत्ता. ३ मनुष्यायुका बन्ध, तिर्यंचाकायु उदय, ४ देवायुका बन्ध, तिर्यंचायुका उदय, ५ नरकायु का बन्ध, तिर्यंचायुका उदय और नरकायु, तिर्यंचायु दोनों की सत्ता ६ एक तिर्यंचायुका उदय, और दो तिर्यंचायुकी सत्ता. ७ तिर्यंचायु का उदय और तिर्यंचायु मनुष्यायु की सत्ता, ८ तिर्यंचायुका उदय, और तिर्यंचायु देवायु की सत्ता. और ९ तिर्यंचायुका उदय और तिर्यंच नरकायु की सत्ता.

ऐसे ९ही भांगे मनुष्यायुके कहना. यों सब२८ भांगे आयुष्य के होते हैं.

मिथ्यात्व गुणस्थान में २८ ही भांगे पाते हैं, क्योंकि-चारोंही गति में मिथ्यात्व गुणस्थान पाता है. और मिथ्यात्वी चारों ही गति के आयुष्य का बन्ध करता है.

सास्वादन गुणस्थान में-नरकायु बन्ध न होनेसे तिर्यंच तथा मनुष्य के आयुर्बन्ध काल अवस्थाके दो भांगे विना २६ भांगे पातेहैं मिश्र-गुणस्थानमें-यहां किसीभी गतिका आयुर्बन्ध न होनेके सबब से-बन्ध काल अवस्थाके देवता के दो, नरक के दो, मनुष्यके चार

और तिर्यंचके चार यों १२ भांगे विना १६ भांगे पाते हैं.

अविरति गुणस्थान में इस गुणस्थान वर्ती मनुष्य और तिर्यच एक देवगति का आयुर्बन्ध करते हैं, इसलिये बाकी की तीनों गतिके आयुबन्ध अवस्था के दोनों के ६ भांगे टले. और समगृदृष्टि देवता नारकी फक्त एक मनुष्यायुकाही वन्धकरते हैं. इस लिये दोनों के दो भांगा तिर्यचायूकेबन्ध के टले. यों८ भांगे विना २० भांगे पावे.

देशविरति गुणस्थान में इस गुणस्थानवर्ती मनुष्य और तिर्यच दोनों ही होते हैं वो फक्त देवायुकाही वन्ध करते हैं. इसलिये इनके आयुर्वन्ध काल अवस्था का एकेक भांगा पाता है. और परभवायुवन्ध पहिले एकेक भांगा, और आयुवन्ध किये वाद ४ भांगे पाते हैं, क्योंकि प्रथम चारों गति में से किसी एक गतिका आयुर्वन्ध कर फिर देशविरति पणा धारन करे, इस अपेक्षासे, यों ६ भांगे तिर्यचके और ६ भांगे मनुष्यके मिलकर १२ भांगे पातेहैं.

प्रमत और अप्रमत गुणस्थान में इन गुणस्थानवर्ती फक्त मनुष्य ही होते है इसलिये ऊपरोक्त छेही भांगे मनुष्यके यहां पातेहैं

अपूर्व करण से उपशान्त मोह गुणस्थान तक उपशम श्रेणी गति में (१) मनुष्यायुका उदय और मनुष्यायु की सत्ता यह भांगा आयुर्वन्ध किये पहिले पावे, (२) और मनुष्यायुका उदय, मनुष्यायु देवायु दोनों की सत्ता. यह भांगा आयुवन्ध किये वाद पावे. यों दो भांगे पाते हैं.

इनके आयुर्वन्ध काल अवस्थाका भाङ्गा नहीं पाता है, क्योंकि अत्यन्त विशुद्ध परिणामी होनेसे आयु बन्ध नहीं करते है. और आयुवन्ध बाद जो श्रेणी प्रारंभ करतो फक्त देवायु बन्ध वालेही करते. तीनों गतिके आयुवन्ध वाले श्रेणी नहीं क-

और अपूर्व करण से अयोगी केवली गुणस्थान तक क्षपक श्रेणिवाले के मनुष्यका उदय, मनुष्यायु की सत्ता यह १ ही भांगा पाता है.

१५३, सातवा नाम कर्म भंग द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थान में वन्धस्थान ६ जिसके भांगे १३९२६ उदयस्थान ९ जिसके भांगे ७७७२ सत्ताके स्थान ६ जिसके स्थान २१२.

सास्वादन गुणस्थान में वन्धस्थान ३ जिसके भांगे ९६०८ उदयस्थान ७ जिसके भांगे ४०९७, और सत्ताके स्थान २ जिसके स्थान १८ होते हैं.

मिश्र गुणस्थान में वन्धस्थान २, जिसके भांगे १६, उदय स्थान ८ जिसके भांगे ४०९७, और सत्तास्थान २, जिसके स्थान ६ होते हैं.

अविरति सम्यक दृष्टि गुणस्थान में वन्धस्थान ३, जिसके भांगे ३२, उदयस्थान८जिसके भांगे ५२. और सत्तास्थान४ जिसके स्थान ५४ होते है.

देशविरति गुणस्थान में वन्धस्थान २ जिसके भांगे १६, उदयस्थान ६ जिसके भांगे ५९१ और सत्तास्थान ४ जिसके स्थान २२ होते हैं.

प्रमत गुणस्थान में वन्धस्थान २ जिसके भांगे १६, उदय

रते हैं. आयुवन्ध वाले क्षपक श्रेणी नहीं करते हैं क्योंकि वो निश्चयत में मोक्ष गामी ही होते है.

☞ नाम कर्म के भाङ्गे के खुलासे के लिये देखीये अर्थ कांडका पृष्ट २४२ वे से तथा पृष्ट २६२ वेसे.

स्थान ६ जिसके भांगे ३१६ और सत्तास्थान ४ जिसके स्थान २० होते है.

अप्रमत गुणस्थानमें बन्धस्थान ३ जिसके भांगे ४ उदयस्थान ४ जिसके भाङ्गे १४४ और सत्तास्थान ४ जिसके स्थान ८ होते हैं.

अपूर्व करण में बन्धस्थान १, जिसके भांगे ८, उदयस्थान १ जिसके भांगे ३६० और सत्तास्थान ४ जिसके स्थान ८ होतेहै

अनियट्ट बादरमें बन्धस्थान १ जिसके भांगा १, उदयस्थान १ जिसके भांगे९६ और सत्तास्थान ८ जिसके स्थान ४ होते है.

सूक्ष्म सम्परायमें बन्धस्थान १ जिसके भांगा १, उदयस्थान १ जिसके भांगे ९६ और सत्तास्थान ८ जिसके स्थान ४ होते हैं.

उपशान्त मोहमें-बन्ध स्थान नहीं, उदय स्थान १ जिसके भांगे ७२, और सत्ता स्थान ४, जिसके स्थान ४ होते हैं.

क्षीण मोहमें-बन्ध नहीं, उदय स्थान १, जिसके भांगे २४ और सत्ता स्थान ४, जिसके स्थान ४ होते हैं.

सयोगी केवलीके बन्ध नहीं, उदय स्थान ८, जिसके भांगे ६०० और सत्ता स्थान ४, जिसके स्थान ४ होते हैं.

अयोगी केवलीके बंध नहीं. उदयस्थान २, जिसके भांगे२ और सत्ता स्थान ६, जिसके भांगे २ होते हैं.*

१९४ आठवा-गौत्र कर्मभङ्ग द्वार.

मिथ्यात्वमें-(१) नीच गोत्र का बन्ध, नीच का उदय, और नीचकी सत्ता, (२) नीचका बन्ध, और नीच ऊंच दोनों की

* इस नाम कर्मके सर्व भाङ्गोका खुलासा अर्थ कांड में विस्तार से है.

** गोत्र कर्मके भंगोके खुलासेके लिये देखीये अर्थ कांड का पृष्ट २८० वा

उपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थान में-बन्ध के अभावसे-पांचोंका, उदय, और पांचोंकी सत्ता, यह १ भांगा पाता है.

सयोगी अयोगी केवलीके अन्तराय का बन्ध उदय सत्ता तीनों नहीं.

१५६, दशवा-बन्धीके भंग द्वार

बन्धी के भंग चार÷:—बन्धी, बन्धति बन्धेति, २ बन्धि, बन्धन्ति, नबन्धेति, ३ बन्धि, नबन्धे, नबन्धेति, और ४ नबन्धि, नबन्धे, नबंधेती.

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, नाम गौत्र, और अंतराय इन ५ कर्मों आश्रिय.

मिथ्यात्वसे सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानतक-पहिला और दूसरा दो भांग पावे, उपशान्त मोहमेंपडवाइ होता है इसलिये तीसरा भांगा पावे. और उपशान्त मोहसे अयोगी केवलीतक एक चोथा भांगा पाता है.

वेदनीय कर्म आश्रिय-मिथ्यात्वसे सयोगी केवली गुण स्थानतक पहिलेके दो भांगे पावे, और अयोगी केवली के—१ चौथा भांगा पाता है.

मोहनीय कर्म आश्रिय-मिथ्यात्वसे अनियट बादर गुणस्थानतक पहिलेके दो भागे पावे, सूक्ष्म सम्पराय में-उपशांत श्रेणि वालेके तीसरा, और क्षपक श्रेणिवाले के चौथा भांगा पावे, उपशान्त

÷ बन्धी—गये काल में बन्धन किया, बंधन्ति वर्तमान में बन्धे सो, बन्धेति अनागत कालमें बन्धेगे सो.

☞ बन्धिके भाङ्गेके समजनेके लिये देखीये अर्थ कांडका पृष्ट२८१वा

मोहमें पडवाइ होता है तो तीसरा भांगा पावे. और क्षीण मोहसे अयोगी केवलीतक १ चौथा भांगा पाता है.

आयुष्य कर्म आश्रिय-मिथ्यात्व, सास्वादन, अविरति, देशविरति, और प्रमत इन ५ गुणस्थानों में-चारों ही भांगे पावे. मिश्र में-आयु बन्ध के अभावसे तीसरा और चौथा भांगा पावे. अप्रमत से उपशान्त मोहतक-तीसरा और चौथा दो भांगे पावे. क्षीण मोह से अयोगी केवलीतक-एक चौथा भांगा पावे.

१५७. इग्यारवा इर्यावहीके भंग द्वार

इर्यावहीके भांगे ८:—१ बन्धि, बन्धन्ति, बन्धेति, २ बंधि, बन्धन्ति, नबन्धेति. ३ बन्धि, नबन्धन्ति, बन्धेति. ४ बन्धि, नबन्धन्ति. नबन्धेति. ५ नबन्धि बन्धन्ति, बन्धेति. ६ नबन्धि, बन्धन्ति नबन्धेति. ७ नबन्धि, बन्धन्ति, बन्धेति. और ८ नबन्धि, नबन्धन्ति, न बन्धेति-इनमें से:—

मिथ्यात्व गुणस्थानमें-तीसरा, सातवा, और आठवा भांगा पावे.
सास्वादनसे सुक्ष्म संपरायतक-तीसरा और सातवा भांगा पावे.
उपशांत मोह गुणस्थान में-पहिला और पांचवा भांगा पावे.
क्षीण मोह और सयोगी केवली में-एक दूसरा भांगा पावे.
और अयोगी केवली गुणस्थान में-एक चौथा भांगा पावे.

इति कर्म भंग नामक-षष्टम प्रकरण नामक...

---

* पांच भाव के खुलासा के लिये देखीये अर्थ ...

सप्तम प्रकरण भावादि द्वार*

भावादि १३ द्वारों के नाम.

१ मूल भावद्वार, २ औदायिक भावद्वार, ३ उपशामिक भावद्वार. ४ क्षयोपशमिक भावद्वार, ५ क्षायिक भावद्वार, ६ परिणामिक भावद्वार, ७ सन्निवाइ भावद्वार, ८ समुच्चय भावद्वार, ९ श्रेणी द्वार, १० कर्मवेद द्वार, ११ कर्मनिर्जरा द्वार, १२ दशाकरण द्वार, और १३ निर्जरा वृद्धिद्वार.

१०८, पहिला मूल भाव द्वार

मूल भाव ५ हैं:–१ औदयिक, २ उपशमिक, ३ क्षयोपशमिक, ४ क्षायिक, और ५ परिणामिक इनमें से.

मिथ्यात्व, सास्वादन और मिश्र इन तीन गुणस्थानों में १ औदयिक, २ क्षयोपशमिक, और ३ परिणामिक यह ३ भाव पाते हैं. अविरति से अप्रमत्त गुणस्थानतक क्षयोपशमिक सम्यक्त्वी में १ औदयिक, २ क्षयोपशमिक, और ३ परिणामिक, यह ३ भाव पाते हैं क्षायिक सम्यक्त्वी में क्षायिक भाव बढने से चार भाव पावे. और उपशमि सम्यक्त्वीमें भी चारही भाव पावे फक्त क्षायिक स्थान उपशम कहना.

अपूर्व करण गुणस्थान में-क्षायिक सम्यक्त्वी के-उपशमिक विना चार भाव पावे, उपशम सम्यक्त्वी के-क्षायिक विना चार भाव पावे और सर्व जीवों आश्रिय पांचों भाव पाते हैं.

अनिवृत्ति बादर से उपशान्त मोह गुणस्थान तक-उपशम स

* पांच भाव के समझने के लिये देखिये सर्व कोष्टक पृष्ठ ३०२ का

म्यक्त्वीके क्षायिक विना चार भाव पावे. और क्षायिक सम्यक्त्वीके पांचों भाव पावे.

क्षीण मोह गुणस्थानमें-उपशामिक विना चार भाव पावे.

सयोगी और अजोगी केवली गुणस्थान में [१] औदयिक, [२] क्षायिक, और ३ परिणामिक यह [३] भाव पावे.

सिद्ध भगवंत में क्षायिक और परिणामिक दो भाव पावे

१८९. दुसरा औदयिक भाव द्वार

औदयिक भाव के २१ भेदः—४ गति, ४ कषाय, ६ लेश्या, ३ वेद, १ मिथ्यात्व, १ अविरति, १ अज्ञान, और १ असिद्ध.

मिथ्यात्व गुणस्थान में-औदयिक भाव के २१ ही भेद पावे.

सास्वादन गुणस्थान में-मिथ्यात्व और अज्ञान विना १९भेद पावे.

मिश्र गुणस्थान में-मिथ्यात्व विना २० भेद पावे.

अविरति गुणस्थान में-अविरत विना १९ भेद पावे.

देशविरति गुणस्थानमें-१ देवगति, १ नरकगति विना १७भेद पावे

प्रमत में-१ तिर्यचगति, १ असंयम विना १५ भेद पावे.

अप्रमत में-३ तीनों अशुभ लेश्या विना १२ भेद पावे.

अपूर्व करण और अनियट बादरमें-१ तेजु, १ पद्म लेश्या विना १० भेद पावे.

सूक्ष्म सम्पराय में-३ वेद ३ कषाय विना ४ भेद पावे.

उपशान्त मोहसे सयोगी केवलीतक-लोभ विना ३ भेद पावे.

अयोगी केवली गुणस्थान में-शुक्ल लेश्या विना २ भेद पावे.

१९०. तीसरा उपशामिक भाव द्वार

उपशमिक भावके२ भेदः-१ उपशम सम्यक्त्व और उपशम
मिथ्यात्वसे मिश्र गुणस्थानतक उपशमिक भाव नहीं.
अविरति और देशविरति गुणस्थानमें-एक उपशम सम्यक्त्व.
प्रमतमे उपशांत मोह गुणस्थान तक दोनों भेद पाते हैं.
क्षीण मोहमे अयोगी केवली गुणस्थानतक-उपशम भाव नहीं.

१६१. चौथा क्षयोपशमिक भाव द्वार

क्षयोपशमिक भावके १८-भेद-४ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन, ५ अन्तराय, १ क्षयोपशम सम्यक्त्व और १ क्षयोपशम चारित्र. १ संयमा संयम.

मिथ्यात्व और मिश्र गुणस्थानमें-५ लब्धि, ३ ज्ञान, ३ दर्शन यह ११ भेद पावे.

सास्वादन गुणस्थान में-५ लब्धि, ३ दर्शन यह ११ भेद पावे.
अविरति गुणस्थान में १ क्षयोपशम सम्यक्त्व बढने से १२ भेद पावे.
देशविरति गुणस्थान में संयमा संयम बढनेसे १३ भेद पावे.

प्रमत्त अप्रमत्त गुणस्थान में संयमा संयम घटाना और १ मनपर्यवज्ञान तथा क्षयोपशम चरित्र बढानेसे १४ भेद पावे.

अपूर्व करण से उपशान्त मोह गुणस्थान तक १ क्षयोपशम सम्यक्त्व और क्षयोपशम चरित्र इन दो विना १२ भेद पावे.
क्षीनमोह से अयोगी केवली तक क्षयोपशम भाव नहीं है.

१६२, पांचवा-क्षायिक भाव द्वार.

क्षायिक भाव के ९ भेद ५ क्षायिक लब्धि, १ केवल ज्ञान, १ केवल दर्शन, १ क्षायिक सम्यक्त्व और १ क्षायिक यथाख्यात चरित्र

मिथ्यात्व से मिश्र गुणस्थान तक क्षायिक भाव नहीं. अव्रति से उपशान्त मोह गुणस्थान तक १ क्षायिक सम्यक्त्व क्षीणमोह गुणस्थान में १ क्षायक सम्यक्त्व और क्षायिक चारित्र २ भेद पावे.

सयोगी केवली और अयोगी केवली गुणस्थान में ९ ही भेद पाते हैं.

सिद्ध भगवन्त में १ केवल ज्ञान, २ केवल दर्शन, और ३ क्षायिक सम्यक्त्व यह ३ भेद ३ पावे.

१६३, छठा परिणामिक भाव द्वार.

परिणामिक भावके ३ भेद १ जीवत्व, १ भव्यत्व, १ अभव्यत्व मिथ्यात्व गुणस्थान में तीनों भेद पाते हैं.

सास्वादन से अयोगी केवली तक १ जीवत्व, १ भव्यत्व, यह २ भेद पावे.

१६४, सातवा सन्नी पातिक भाव द्वार

मिथ्यात्व सास्वाद और मिश्र गुणस्थानों में उदयिक क्षयोपशमिक और परणामिक यह त्रिसंयोगिक मूल १ भांगा पाताहै. और इनको अलग २ चारों गति में गिनने से उत्तर सन्नीपातिक भांगे चार होते हैं.

अविरति गुणस्थान में (१) उदयिक, क्षयोपशमिक, परिणामिक, यह १ त्रि संयोगी (२) उदयिक उपशमिक, क्षयोपशमिक परिणामिक यह १ चतु संयोगी (३) उदयिक, क्षयोपशमिक, परिणामिक, यह चतु संयोगी. यों मूल तीन भांगे पाते हैं. और इन तीनों को चारों गति से चौगुन करने से उत्तर भांगे १२ और

= ९वे और १०वे गुणस्थानमें क्षायिक चारित्र कितनेक आचार्य नहीं

देशविरति गुणस्थान में अविरति गुणस्थान के जैसेही भांगे तो तीनो पाते ही हैं. और इन तिर्यंच मनुष्य गतिसे ... करते उत्तर भांगे ६ होते हैं.

प्रमत और अप्रमत गुणस्थान में एक मनुष्य गति आ... य तीनों भांगे पाते हैं.

अपूर्व करण से उपशान्त मोह तक, उपशम श्रेणिवाले (१) उदयिक, उपशमिक, क्षयोपशमिक, परिणामिक यह १ च... संयोगी भांगा पाता है. और क्षपक श्रेणिवाले के (१) उदयिक, क्षयोपशमिक, क्षायिक, परिणामिक, यह १ चतुसंयोगी भांगा. २ समुचय सर्व जीवों आश्रिय, उदयिक, उपशमिक, क्षयोपशमिक क्षायिक, और परिणामिक यह १ पंच संयोगी भांगा पाता है.

और क्षीण मोह से अयोगी केवली तक उदयिक, क्षायिक परिणामिक, यह १ त्रि संयोगी भांगा पाता है.

१ मिथ्यात्व गुणस्थान में १ ओदयिक भावके २१ भेद, २ क्षयोपशमिक भाव के ११ भेद, और ३ परिणामिक भावके ३ भेद, यों तीनों भवों के ३५ भेद पावे.

२ सास्वादन गुणस्थान में १ ओदयिक भावके १९ भेद, २ क्षयोपशमिक भावके ११ भेद, ३ और परिणामिक भावके २ भेद, यों तीनों भावों के ३२ भेद पावे.

३ मिश्र गुणस्थान में-१ औदायिक भाव के-२० भेद, २ क्षयोपशमिक भावके ११ भेद, ३ पारिणामिक भावके-२ भेद. यों तीनों भावोंके ३३ भेद पावे.

४ अविराति गुणस्थान में-१ औदायिक भाव के १९ भेद. २ ओपशमक भाव का १ भेद, ३ क्षायिक भावका १ भेद. ४ क्षयो

अविरति सम्यक्त्वीके असंख्यात गुण अधिक होती है.
२ इनसे देशविरतिके असंख्यात गुण अधिक निर्ज्जरा.
३ इनसे-प्रमत संयतिके असंख्यात गुण अधिक निर्ज्जरा.
४ इनसे-अनन्तालवन्धि चोक विसं जोजी जीवके असंख्यात गुणी निर्ज्जरा.
५ इनसे-क्षायिक सम्यक्त्वी के असंख्यात गुणी निर्ज्जरा.
६ इनसे-उपशम श्रेणी वालेके असंख्यात गुणी निर्ज्जरा.
७ इनसे-उपशान्त कषाय वालेके असंख्यात गुणी निर्ज्जरा.
८ इनसे-क्षपक श्रेणी वाले के असंख्यात गुणी निर्ज्जरा.
९ इनसे-क्षीण कषाय वालेके असंख्यात गुणी निर्ज्जरा.
१० इनसे-सयोगी केवली के असंख्यात गुणी निर्ज्जरा.
और ११ इनसे-अयोगी केवलीके असंख्यात गुण अधिक.

परम पुज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराजकी सम्प्रदायके बाल ब्रम्हचारि मुनि श्री अमोलख ऋषिजी महाराज विरचित गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारी ग्रन्थके प्रथम मूल काण्डका कर्मद्वारा रोहण नामक द्वितीय खण्ड.

समाप्तम

तृतीय खण्ड-संसार द्वारा रोहण.

संसारा रोहण खण्डके ४१ द्वारों के नाम.

१ आगतिद्वार, २ जागतिद्वार, ३ पागातिद्वार, ४ आजाति द्वार, ५ पाजातिद्वार, ६ जाजातिद्वार, ७ आकायद्वार, ८ पाकाया द्वार, ९ जाकायाद्वार, १० आदंडकद्वार, ११ पादंडकद्वार, १२ जा-दंडकद्वार, १३ सामन्य जीव भेदद्वार, १४ विशेष जीवभेदद्वार, १५ जीवयोनिद्वार, १६ कुलकोडी द्वार, १७ सूक्ष्म बादरद्वार, १८ त्रस-स्थावर द्वार, १९ सन्निअसन्नि द्वार, २० भापकाभापक द्वार, २१ अ-हारका नाहारकद्वार, २२ ओजादि आहारद्वार, २३ सचित्तादि अ-हार द्वार, २४ दिशी आहारद्वार, २५ पर्याप्तापर्याप्तद्वार, २६ पर्याद्वार २७ प्रणद्वार, २८ इन्द्रियद्वार, २९ इन्द्रिय विषयद्वार ३० सज्ञाद्वार, ३१ वेदद्वार, ३२, कषायद्वार, ३३ लेशाद्वार, ३४ योगद्वार, ३५ श-रीर द्वार, ३६ संघयण द्वार, ३७ संठाणद्वार, ३८ मरणद्वार, ३९ विग्रह अविग्रहगाति द्वार, ४० स्वर्गद्वार औरभी षटस्थान हानीवृद्धिद्वार.

१.७१. प्रथम आगति द्वार.

☞ गति के तीनों द्वारोंका खुलासे के लिये देखीये [illegible] पृष्ठ ७

तेउ कायके ३ लाख क्रोड वायु कायके ७ लाख क्रोड, वनस्पतिके २८ लाख क्रोड, वेन्द्रियके ७ लाख क्रोड, तेन्द्रियके ८ लाख क्रोड चौरिन्द्रिय ९ लाख क्रोड, जलचरके १२॥ लाख क्रोड, स्थल चरके १० लाख क्रोड, खेचरके १२ लाख क्रोड. उरपरके १० लाख क्रोड, भुजपरके ९, लाख क्रोड, नरकके २५ लाख क्रोड देवताके २६लाख क्रोड, और मनुष्य के १२ लाख क्रोड, यों सब १ एक क्रोड साडी संताणवे लाख क्रोड कुल होते है इसमेंसे.

मिथ्यात्व गुणस्थान में-१ क्रोड ९७॥ लाख क्रोडही कुल पाते हैं.

सास्वादन में-५७ लाख क्रोड पांचों स्थावरके विना-१ क्रोड ४०॥ लाख क्रोड कुल पावे.

मिश्र और अविरातिमें-२४ लाख क्रोड विक्लेन्द्रिय विना-१ क्रोड१६॥ लाख क्रोड कुल पावे.

देशविरतिमें-५३॥ लाख क्रोड तिर्यच पचेन्द्रियके, और १२ लाख क्रोड मनुष्य के दोनों मिल ६५॥ लाख क्रोड कुल पावे.

प्रमतम अयोगी केवलीतक-१२ लाख क्रोड मनुष्यकेही कुल पावे.

१८७, सतरवा-सुक्ष्मवादर द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थान में सूक्ष्म वादर दोनों तरह के जीवों पावे. सास्वादनसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-एक वादर जीव पावे.

१८८, अठारवा त्रस स्थावर द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थान में-त्रस और स्थावर दोनों तरहके जीव पावे. सास्वादनसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-एक त्रस-जीव पावे.

१८९ उन्नीसवा सन्निअसन्नि द्वार

☞ सूक्ष्म बादर द्वारका खुलासा देखीये अर्थ कांडका पृष्ट ३०१ वा.
„ त्रस स्थावर और सन्नी असन्नी द्वारका खुलासा देखीये अर्थ कांडका पृष्ट३०२वा

मिथ्यात्व और सास्वादन दोनों गुणस्थानमें-सन्नि असन्नि दोनों पावे
मिश्रसे क्षीणमोह गुणस्थानतक-एक सन्नीही जीव पाते है.
सयेगी अयोगी केवली गुणस्थान वाले नो सन्नी नोअसन्नि.

१२०, बीसवा भाषक अभाषक द्वार

मिथ्यात्व, सास्वादन, अविरति, और सयोगी केवली इन चारों गुणस्थानोंमें भाषक अभाषक दोनों प्रकार के जीवों पावे.
मिश्र, देशविरति से क्षीण मोह गुणस्थानतक-एक भाषकही होतेहैं
अयोगी केवली गुणस्थानी-अभाषक होते हैं.

१२१, इक्कीसवा आहारक अनाहारक द्वार

मिथ्यात्व· सास्वादन, अविरति और सयोगी केवली × इन चारों गुणस्थानोंमें आहारक अनारक दोनों प्रकारके जीवों पाते हैं.
मिश्र, देशविरतिसे जावत क्षीणमोह गुणस्थानतक-एक आहारक ही जीव पाते है.
अयोगी केवली गुणस्थान वाले-एक अनाहारक होते हैं.

१२२, बावीसवा-आजादि आहार द्वार.

आहार ३ प्रकार का. १ ओज, २ रोम. ३ कवल.
मिथ्यात्व, सास्वादन और अविरति इन तीनों गुणस्थानोवाले. तीनों प्रकार का आहारलेते हैं.
मिश्र, देशव्रति से जावत सयोगी केवली गुणस्थान वर्ती जीवो

भाषक अभाषक द्वारका खुलासा देखीये अर्थ कांडका पृष्ट ३०३ वा.
आहारके तीनो द्वारका खुलासा देखीये अर्थ कांडका पृष्ट ३०३ वा.
×सयोगी केवली केवल समुद्घात करती वक्त तीनके समय में अनाहारक होतेहैं.

१९८, अठावीसवा इन्द्रिय द्वार

इन्द्रिय ५ हैं १ श्रुतेन्द्रिय, २ चक्षुइन्द्रिय, ३ घ्रणेन्द्रिय, ४ रसेन्द्रिय और ५ स्पर्शेन्द्रिय.

मिथ्यात्व गुणस्थान में एकेन्द्रिय आश्रिय १ स्पर्शेन्द्रिय, बेन्द्रिय आश्रिय दो जांवत् पचेन्द्रिय आश्रिय पांचों इन्द्रियों पावे. सास्वादन गुणस्थान में २ इन्द्रिय से पांच इन्द्रिय तक पावे. मिश्र से क्षीण मोह गुणस्थान तक पांचों इन्द्रियों पावे.

उनतीसवा-इन्द्रियाकी द्वार

सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थानी अणेन्द्रिय हैं.

१ श्रुतेन्द्रियकी ३, चक्षुन्द्रियकी ५, घ्रणेन्द्रियकी २ रसेन्द्रियकी ५, और स्पर्शेन्द्रियकी ८ यों पाचों इन्द्रियकी २३ विषय हैं. मिथ्यात्व गुणस्थान में जघन्य ८ उत्कृष्ट २३ ही विषय पावे. सास्वादन गुणस्थान में जघन्य १३ उत्कृष्ट २३ ही विषय पावे. मिश्रसे क्षीण मोह गुणस्थान तक २३ ही विषय पावे. सयोगी अयोगी केवली गुणस्थान में निर्विषयी हे.

२००, तीसवा सज्ञा द्वार.

सज्ञा ४ हैं:—१ अहार २ भय, ३ मैथुन, और ४ परिग्रह. मिथ्यात्व से प्रमत गुणस्थान तक चारो सज्ञा पाती है. अप्रमत से अयोगी केवली गुणस्थान तक नो सन्ना हे(सज्ञानही)

इन्द्रियके दोनों द्वारोंके खुलासेकेलिये देखीये अर्थ कांडका पृष्ट३०४-३०५मा

—केवली भगवंनके-कर्ण चक्षु प्रमुख द्रव्येन्द्रियोंतो है परन्तु वो उनके काम में नहीं आता है, क्योंकि-इन्द्रियोंके ग्रहण किये पाहिले ही सब पदार्थोंको जानते देखते हैं.

२०१, इकतीसवा वेद द्वार

वेद ३ हैं:-१ स्त्री. २ पुरुष. और ३ नपुंसक.
मिथ्यात्व से अनीयट्ट बादर गुणस्थान तक तीनों वेदो पावे.
सूक्ष्म सम्पराय से अयोगी केवली गुणस्थान तक अवेदी हैं.

२०२, बत्तीसवा-कषाय द्वार

कषाय ४ हैं:-१ क्रोध. २ मान, ३ माया, और ४ लोभ.
मिथ्यात्व से अनीयट्ट बादर गुणस्थान तक चारों कषाय पावे.
सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान में एक लोभ कषाय.
उपशान्त मोह से अयोगी केवली गुणस्थान तक अकषायी.

२०३, तेंतीसवा लेश द्वार

लेशा ६ हैं:-१ कृष्ण, २ नील, ३कापोत. ४तेजु, ५पद्म, और शुक्ल.
मिथ्यात्व से प्रमत गुणस्थान तक ६ ही लेश्या.
अप्रमत गुणस्थान में उपरकी शुभ तीनों लेश्या पावे.
अपूर्व करण से सयोगी केवली गुणस्थान तक १ शुक्ल लेश्या पावे.
अयोगी केवली गुणस्थान वर्ती अलेशी होते हैं.

२०४,—चौतीसवा योग द्वार

योग तीन १ मन, २ वचन, और ३ काया
मिथ्यात्व से स्वादन गुणस्थान में जघन्य १, मध्यम २, उत्कृष्ट ३, ही जोग पावे

संज्ञा,वेद,कषाय,इन तीनों द्वारोंका खुलासेके लिये देखीये अर्थ कांडका पृष्ठ ३०३वा.
और योगद्वार लेश्या, द्वारका खुलासा देखीये अर्थ कांडका पृष्ठ ३०७ वा

मिश्रसे सयोगी केवली गुणस्थान तक तीनों जोग पावे.
अयोगी केवली गुणस्थान वर्ती तो अजोगी ही होतेहैं.

२०५, पैंतीसवा-शरीर द्वार

शरीर ५ हैः-१ ओदारिक २ वैक्रिय, ३ अहारक, ४ तेजस और ५ कार्मण

मिथ्यात्व से अविरति गुणस्थान तक आहारक विन ४ शरीर पावे
प्रमत ओर अप्रमत गुणस्थान में पांचों शरीर पावे.
अपूर्व करणसे अजोगी केवलीतक वैक्रिय आहारक विना ३ शरीर पावे.

२०६, छत्तीसवा-संघयण द्वार.

संघयण ६ हैंः-१ वज्र वृषभ नाराच, २ वृषभ नाराच, ३ नाराच, ४ अर्ध नाराच, ५ किलिक, और ६ छेवटा.
मिथ्यात्वसे अप्रमत गुणस्थानतक, ६ ही संघयण पावे.
अपुर्व करणसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-१ वज्र वृषभ नाराच संघयण.

२०७, सैंतीसवा-संठाण द्वार.

संस्थान ६ हैं. १ समचतुरंस्र,२ निग्रोद्ध परिमंडल, ३ साधिक, ४वावन, ५ कुब्ज, और ६ हूंड.
मिथ्यात्वसे अयोगी केवली गुणस्थानतक, ६ ही संस्थान पावे.

अडतीसवा-मरण द्वार

☞शरीर द्वार के खुलासेके लिये देखीये अर्ध कांड का पृष्ट ३०८ वा.
संघयण द्वारोंके खुलासेकेलिये देखीये अर्ध कांडका पृष्ट३०९वा.
संस्थान द्वारका खुलासा देखीये अर्ध कांडका पृष्ट ३१० वा.

मरण २ प्रकार के-समोया, और २ असमोया.
मिथ्यात्व,सास्वदन अविरतिसे अनियटा वादरतक-दोनों माणपावे.
मिश्र क्षीण मोह सजोगी केवली. इन तीनों गुणस्थानोंमे मरेनहीं.
सुक्ष्म सम्पराय और उपशान्त मोह में और अयोगी केवली गुण-
स्थान में-१असमोहा मरण पाता है.

उनचालीसवा विग्रहगति द्वार

मरण नन्तर गति २ तरह की-१ विग्रह (वक्र) और ऋजु शरल.
मिथ्यात्व, सास्वादन अविरतिसे उपशान्त मोहतक-दोनों गति करे
मिश्र, क्षीण मोह सयोगी केवली यह तीनो गुणस्थानी मरे नहीं.
अयोगी केवली गुणस्थान वर्ती-१ ऋजु गति ही करे.

चालीसवा मरण द्वार

स्वर्ग २६ हैं-१२ देवलोक, ९ ग्रीवेक ५ अनुत्तर विमान.
मिथ्यात्व गुणस्थान वाले-५ अनुत्तर विमान विना२१स्वर्गतक जावे
सास्वादन, अविरति और देशविरति तीनों गुणस्थानी १२ स्वर्ग
तक जावे.
मिश्र, क्षीण मोह, और सयोगी केवली मरेही नहीं.
प्रमतसे अनियट वादर गुणस्थानतक-२६ ही स्वर्गमें जावे.
सुक्ष्म संपराय और उपशांत मोहवाले पांचों अनुत्तर विमानमें जावे
और अयोगी केवलीतो मोक्षमें ही पधारते हैं.

२११, एकचालीसवा-षठस्थान वृद्धि द्वार

☞ मरण विग्रहगति और स्वर्गकी मर्याद इन तीनों द्वारका खुलासा देखोंके अर्थ
कांडका पृष्ट ३११ वा

☞ षठस्थान हानी वृद्धि द्वारोंका खुलासेके लिये देखोंके अर्थ कांडका पृष्ट [illegible]

षटस्थान-१संख्यातगुणं,२असंख्यात, ३अनन्त गुण,४संख्यात भाग, ५असंख्यात भाग और ६ अनन्त भाग.
मिथ्यात्व से अपूर्व करण तक-आपसमें छे स्थान वढीये होते हैं.
अनियट बादर से अयोगी केवलीतक-आपस में तुल्य होते हैं.

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराजके सम्प्रदायके बाल ब्रम्हचारी मुनि श्री अमोलख ऋषिजी महाराज रचित गुणस्थान रोहण अढीशत द्वारी ग्रन्थका प्रथम मूल काण्ड का संसारा रोहण द्वार नामक तीसरा खंड

चतुर्थ खण्ड-धर्म रोहण

धर्मा रोहणके ४१ द्वारोंके नाम.

१मुल उपयोगद्वार २ अज्ञानद्वार ३ ज्ञानद्वार, ४ ...
५ समुचय उपयोगद्वार, ६ दृष्टिद्वार, ७ भव्याभव्यद्वार, ८ ...
चरमद्वार, ९ परितापरितद्वार, १० पक्षीद्वार, ११ आ...
नद्वार, १३ ध्यानके पर्येद्वार, १४ द्रव्यद्वार, १५ ...
वीर्यद्वार, १७ तीर्थातीर्थद्वार, १८ सम्यक्त्वद्वार, १९ ...
तिद्वार, २० लिंगद्वार, २१ चारित्रद्वार, २२ नियंठद्वार, ...
द्वार, २४ परिसहद्वार, २५ प्रमादद्वार, २६ ...
२७ पडवाइ अपडवाइद्वार, २८ छद्मस्तकेवलीद्वार, ...
३० पांचदेवद्वार, ३१ परिणामीद्वार. ३२ करणद्वार, ...
३४ आश्रवद्वार, ३५ संवरद्वार ३६ निर्ज्जरद्वार, ...
र. ३८ करणीफलद्वार, ३९ तीर्थंकर गोत्रोपार्जन ...
गुणस्थान स्पर्शनद्वार, और ४१ मोक्षद्वार.

२१२ प्रथम-मूल

मूल उपयोग दो- साकार,

☞ उपयोग द्वारका खुलासा

मिथ्यात्वसे अनियट बादर गुणस्थानतक-दोनों उपयोग पावे.
सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-एक साकर बहूता उपयोग पावे.×
उपशान्त मोहसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-दोनों उपयोग पावे

२१३, दुसरा अज्ञान द्वार.

अज्ञान ३ हैं-१ मति अज्ञान,२ श्रुति अज्ञान, ३ विभंग ज्ञान.
मिथ्यात्व और मिश्र गुणस्थानमें-तीनों अज्ञान पावे.
बाकी रहे बारेही गुणस्थानोंमें-अज्ञान नहीं पावे.

२१४, तीसरा-ज्ञान द्वार

ज्ञान ५ हे.१मति, २ श्रुति, ३ अवधि, ४ मनः पर्यव, और ५ केवल.
मिथ्यात्व और मिश्र गुणस्थान में-ज्ञान नहीं.
सास्वादन, अविरति और देशविरति गुणस्थानमें पाहिले तीनों ज्ञान
प्रमतसे क्षीण मोह गुणस्थानतक-केवल विना चार ज्ञान.
सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थानों में-एक केवल ज्ञान.

२१५, चौथा-दर्शन द्वार

दर्शन ४हे.-१चक्षु. २अचक्षु, ३अवधि, और ४ केवल.
मिथ्यात्वसे क्षीणमोह गुणस्थानतक-केवल विना तीनों दर्शन पावे.
सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थानमें-एक केवल दर्शन पावे.

२१६. पांचवा समुचय उपयोग द्वार

समुचय उपयोग १२ हे-५ ज्ञान, ३ आज्ञान, और ४ दर्शन.
मिथ्यात्व और मिश्र गुणस्थानमें-३ अज्ञान३ दर्शन, यह ६उपयोग.

× इस गुणस्थानकी स्थिति बहुतही थोडी होने से यहां एकही उपयोग वर्तता है.

सास्वादन, अविराति और देशविरातिमें-३ज्ञान,३ दर्शन यह६उपयोग प्रमतसे क्षीण योह गुणस्थानतक४ज्ञान३ दर्शन यह ७ उपयोग. सयोगी और अयोगी केवलीके-१केवल ज्ञान, और २ केवल दर्शन

२१७ छठा, दृष्टि द्वार

दृष्टि ३है-१समदृष्टि, २ मिथ्यादृष्टि और ३ समामिथ्यादृष्टि.
मिथ्यात्व गुणस्थानमें-१ मिथ्यादृष्टि.
मिश्र गुणस्थानमें-१ मिश्र दृष्टि.
सास्वादन, अविरातिसे अयोगी केवलीतक-एक समदृष्टि.

२१८, सातवा भव्याभव्य द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थानमें-भव्य अभव्य दोनों तरह के जीवोंहैं.
सास्वादनसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-एक भव्य जीवों.

२१९ आठवा चरमाचरम द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थान में-चरम अचरम दोनों तरह के जीवों.
सास्वादनसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-एक चरम जीवों.

२२०, नववा परितापरित्त द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थानमें-परित अपरित दोनों तरह के जीवों.
सास्वादनसे अयोगी केवली गुणस्थानतक-एक परत संसारी जीवों.

२२१ दसवा पद्वी द्वार

पद्वी २३ है-७ एकेंद्रियरतन, ७ पचेन्द्रियरत्न, और ९ वडी पद्वी.
मिथ्यात्व गुणस्थान में-७ एकेंद्रियरत्न, ७ पचेन्द्रियरत्न१ मंडलिक यों १५ पदी पावे.

दृष्टि,भव्याभव्य, चरमाचरम,परितापरित, और पद्वीका खुलासा अर्थ कांडके पृष्ट२१४

अयोगी केवली गुणस्थान में शुक्लध्यानका एक चोथा पाया.

२२५, चऊदवा-द्रव्य द्वार

द्रव्य ६ हैं धर्मास्ति, अधर्मास्ति, आकास्ति, काल, जीवास्ति, और पुद्गलास्ति.

मिथ्यात्व गुणस्थान से अयोगी केवली गुणस्थान तक छेही द्रव्य पावे.

२२६, पंदरवा-परिणाम द्वार.

परिणाम ३ हैं-१ हायमान, २ बृद्धिमान, और ३ अवस्थित.

मिथ्यात्व गुणस्थानमें तीनों तरह के परिणाम.

सास्वादन गुणस्थानमें एक हायमान परिणाम.

मिश्रगुणस्थानमें-हायमान और बृद्धमान दोनों परिणाम.

अविरतिमें अनियट्ट बादर गुणस्थानतक-तीनों तरहके परिणाम.

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान में-हायमान बृद्धमान दोनों परिणाम.

उपशान्त मोह गुणस्थान में-एक अवस्थित परिणाम.

क्षीणमोहमें अयोगी केवली गुणस्थानतक एक बृद्धिमान परिणाम

२२७, सोलवा-वीर्य द्वार.

वीर्य ३ प्रकारके-१ बाल्वीर्य, २ बाल पंडितवीर्य, और ३ पंडित वीर्य

मिथ्यात्वमें अविरति गुणस्थान पर्यन्त एक बाल वीर्य.

देशविरति गुणस्थान में-एक बाल पंडित वीर्य.

प्रमत्तमें अयोगी केवली गुणस्थानतक-एक पंडित वीर्य.

द्रव्य द्वारका खुलासा देखिये अर्थ कांडका पृष्ठ ११२ वां.

परिणाम और वीर्य, और भावादिक द्वारोंका खुलासा देखिये अर्थ कांडका पृष्ठ १४

२२८, सतवा तीर्थातीर्थ द्वार

मिथ्यात्व सास्वादन, और मिश्र यह तीनों गुणस्थान अतीर्थ में.
अविरति से-सयोगी केवली गुणस्थानतक-तीर्थ में.
अयोगी केवली गुणस्थान-तीर्त तीर्था है.

२२९, अठावय-सम्यक्त्व द्वार

सम्यक्त्व ६ है:-सास्वादन, मिश्र, उपशम, क्षयोपशम, वेदक और क्षायिक.
मिथ्यात्व गुणस्थानमें-सम्यक्त्व नहीं.
सास्वादन गुणस्थानमें-एक सास्वादन सम्यक्त्व.
मिश्र गुणस्थान में-एक मिश्र सम्यक्त्व.
अविरतिसे अप्रमत्त गुणस्थानतक-उपरोक्त २ विना ४ सम्यक्त्वपावे
अपूर्व करण और अनियट्ट बादर में-वेदक विणा ३ सम्यक्त्व पावे
सूक्ष्मसम्पराय और उपशान्तमोहमें-उपशम, क्षायिक २ सम्यक्त्वपावे.
क्षीणमोहमें अयोगी केवली गुणस्थानतक-एक क्षायिक सम्यक्त्व.

२३०, उनसिवा संयतासंयती द्वार

मिथ्यात्वसे अविरति गुणस्थानतक-एक असंयति हैं.
देशविरति गुणस्थानवाले-एक संयतासंयाति है.
प्रमतसे अयोगी केवली गुणस्थानतक एक संयति ही हैं.

२३१, वीसवा-लिंग द्वार,

लिंग ३ है.१ स्वलिंग, २ अन्यलिंग, और ३ ग्रहलिंग.

संयति, लिङ्ग, और चारित्रके खुलासेके लिये ... ३१९ वा पृष्ट देखिये

मिथ्यात्व से देशविरति गुणस्थानतक-द्रव्ये लिंग तीनोंही पावे ओर भावे स्वलिंग विना दो लिंग पावे.
प्रमत गुणस्थानसे अजोगी केवली गुणस्थानतक द्रव्ये लिंग तीन और भावे लिंग १.

२३२, इक्कीसवा-चारित्र द्वार

चारित्र ५ हैं:—१ सामायीक, २ छेदोस्थापनीय, ३ परिहार विशुद्ध ४ सूक्ष्म सम्पराय और ५ यथाख्यात.
मिथ्यात्वसे अविरति गुणस्थानतक-चारित्र नहीं.
देशविरति गुणस्थानमें-एक चरीता चरित्र.
प्रमत अप्रमत गुणस्थानमें-पाहिले के चारित्र ३ पावे.
अपूर्व करण अनियट्ट वादर में पहिले के चारित्र२पावे.
सुक्ष्म सम्पराय गुणस्थान में-एक सुक्ष्म सम्पराय चारित्र.
उपशान्त मोहसे अजोगी केवलीतक-एक यथाख्यात चारित्र.

२३३, बावीसावा भव्याभव्य द्वार

नियंठे ६ हैं-१पोलाक, २ बुकस, ३ प्रति सेवना. ४ कषाय कुशील, ५ निग्रन्थ, और ६ स्नातक.
मिथ्यात्व से देशविरति गुणस्थानतक. नियंठा नहीं पावे.
प्रमत अप्रमत गुणस्थान में-पाहिलेके नियंठे ४ पावे.
अपूर्व करणसे सूक्ष्म सम्परायतक-नियंठा-१ कषाय कुसील.
उपशान्त मोह और क्षीण मोहमें-नियंठा-१ निग्रंथ पावे.
सयोगी और अजोगी केवलीमें-नियंठा १ स्नातक पावे.

नियंठा द्वारका खुलासा के लिये अर्थ कांडका पृष्ट ३२२ वा देखीय.

२२४ तेवीसवा कल्प द्वार

कल्प ५हें-स्थिति, अस्थिति, जिन, स्थिवर, और कल्पातीत.
मिथ्यात्व से देशविरति गुणस्थान तक कल्प नहीं पावे.
प्रमत से अनियट्ट बादर गुणस्थान तक पांचों कल्प पावे.

सूक्ष्म सम्पराय से अयोगी केवली गुणस्थान तक पीछेके तीन कल्प पावे.

२२५, चौतीसवा-परीसह द्वार

परिसह २२ हैं १ क्षुधाका, २ त्रपाका, ३ शीतका, ४ उष्ण का, ५ दशमंसका, ६ अचेलका, ७ अरतिका, ८ स्त्रीका ९ चरिया का १० वैठनेका, ११ सैय्यका, १२ अक्रोशका, १३ वधका, १४ याचनाका, १५ अलाभका, १६ रोगका, १७ त्रणस्पर्शका, १८ जलमेलका, १९ सत्कारपुरस्कारका, २० प्रज्ञाका, २१ अज्ञानका, २२ दंशण सम्यक्त्व का इनमें से.
मिथ्यात्व से अविरति तक २२ ही परिसह दुःख रूपहैं निर्जरा नहीं.

देशविरति से नियट्ट वादर तक २२ ही परिसह पावे उसमेंसे एक समय में २० वेदे. शीतका वेदेतो उष्णका नहीं, तैसे ही उष्णका वेदेतो शीतक नही, चलनेका वेदेतों वैठनेका नहीं, और वैठनेका वेदेतो चलनेका नही.

सूक्ष्म सम्पराय से क्षीण मोह गुणस्थान तक अचेल, अरति स्त्री, वैठनेका, अक्रोश, मल, सत्कार, यह ७ चरित्र, मोहके उदय, के और दंशण परिसह सम्यक्त्व मोह के उदयका यों ८ परिसह विना १४ परिसह पावे. जिसमें से एक समय में १२ वेदे. शीतका वेदे तब उष्णका नही, उष्णका वेदे तब शीतका नहीं. चलनेका वे

कल्पद्वार और परिसहद्वार का खुलासा अर्थ थोकडे ३२४ वा पृष्ट देखीये.

दे तब सेय्या का नहीं सेय्या, का वेदे तब चलनेका नही.

सयोगी अयोगी केवली गुणस्थान में क्षुधा, त्रषा, शीत, उष्म, दंसमंस, चरिया, सैया, बध, रोग, त्रण, स्पर्श, और मेलका. यह ११ वेदनीय के उदय से होते हैं सो पाते हैं. जिसमें से एक समयमें९शीतका वेदतां उष्णका वेदेतो शीतका नहीं,चलनेका वेदे तो सेयाका नही, सेय्याका वेदेतो चलनेका नही.

२२६ पच्चीसवा प्रमाद द्वार

प्रमाद ५ हे १ मद, २ विषय ३ कषाय, ४ निद्रा और ५ विकथा. मिथ्यात्व से प्रमत गुणस्थान तक पांचों प्रमाद पावे. अप्रमत से अयोगी केवली गुणस्थान तक प्रमाद नही पावे.

२२७ छव्वीसवा-सरागीवीतरागी द्वार

मिथ्यात्व से सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान तक सयोगी जीवों हैं.
उपशान्त मोह गुणस्थान में उपशम रागी हैं.
क्षीण मोह से अयोगी केवली गुणस्थान तक वीतरागी हे.

२३८, सतवीस-पडवाइ द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थान वले अपडवाइ.
सास्वादन और उपशान्त मोह गुणस्थान वाले पडवाइ.
मिश्रसे सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान तक पडवाइ अपडवाइ दोनों.
क्षीणमोह से अयोगी केवली गुणस्थान तक अपडवाइ.

प्रमाद द्वारका खुलासा अर्थ कांटके ३२० वे पृष्ठ में देखीए.
सरागी वीतरागी द्वारका खुलासा अर्थ कांटका ३२८ वे पृष्ठ में देखीए.
पडवाइ अपडवाइ. छद्मस्त केवली और समुद्घात द्वारके खुलासेकेलिय अर्थ कांटके ३६७ वा पृष्ठ देखीये.

२३९ अठावीसवा छद्मस्त केवली द्वार

मिथ्यात्व गुणस्थान से क्षीणमोह गुणस्थान तक छद्मस्त.
सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थान वाले केवली हैं.

२४०, उन्नतीसवा समुदघात द्वार

समुद्घात ७ हैं १ वेदनीय, २ कषाय, ३ मरणांतिक, ४ वैक्रिय, ५ तेजस, ६ आहारक, और ७ केवली इनमें सेः—
मिथ्यात्व से अविरति गुणस्थान तक पहिली ५ समुद्घात पावे
देशविरति और प्रमत गुणस्थान मे पहिली ६ समुदघात पावे.
अप्रमत से क्षीण मोह गुणस्थान तक समुद्घात नही होती है.
सयोगी केवली गुणस्थान में एक केवल समुद्घात होवे
अयोगी केवली गुणस्थान में समुद्घात नही होतीहै.

२४१ तीसवा देव द्वार

देव ५हैः—१ भव्य द्रव्य देव, २ नरदेव, ३ धर्मदेव ४ देवाधीदेव, और ५ भावदेव.

मिथ्यात्व से मिश्र गुणस्थान तक १ धर्मदेव, और २ देवाधीदेव, विना ३ देव पावे.
अविरति गुणस्थान में धर्मदेव विना ४ देव पावे.
देशविरति गुणस्थान में एक भव्य द्रव्य देव पावे.

प्रमत से सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान तक नरदेव. भाव देव विना ३ देव पावे.

उपशान्त मोह गुणस्थान में १ भव्यद्रव्यदेव, और२धर्मदेव यह २ देव पावे.

देव द्वारका खुलाशा अर्थ कांडके ३२८ वे पृष्ट में देखीये.

क्षीणमोह गुणस्थानसे अजोगी केवली गुणस्थान तक देव और देवाधिदेव यह २ देव पावे

२४२, एकतीसवा-परिणामी द्वार

परिणामिके ४२ बोल ४ गति, ५ इन्द्रिय, ४ कपाय, ६ लेश्या, ३ जोग, २ उपयोग, ५ ज्ञान, ३अज्ञान,३दृष्टि,५ चारित्र और ३ वेद यों ४२ इनमेंसे.

मिथ्यात्व गुणस्थानमें ४ गति, ५ इन्द्रिय, ४ कषाय, ३जोग, ६लेश्या, २ उपयोग, ३ अज्ञान, १ मिथ्यात्व दृष्टि, और ३वेद यों३१ बोल पावे.

सास्वादन गुणस्थान में ४ गति, ५ इन्द्रिय, ४ कपाय, ३ जोग, ६ लेश्या, २ उपयोग, ३ ज्ञान, १ समदृष्टि और ३ वेद, यों ३१ बोल पावे

मिश्र गुणस्थान में ४ गति, ५इन्द्रिय, ४ कपाय, ३ जोग, ६ लेश्या, २ उपयोग, ३ अज्ञान, १ मिश्रदृष्टि, और ३वेद यों ३१ बोल पावे.

अविरति गुणस्थान में ४ गति, ५ इन्द्रिय, ४ कपाय, ३जोग, ६ लेश्या, २ उपयोग, ३ ज्ञान, १ समदृष्टि, और तीन वेद यों ३१ बोल पावे.

देशविरति गुणस्थान में-२ गति ५ इन्द्रिय ४ कपाय ३ जोग ६ लेश्या २ उपयोग, ३ ज्ञान, १ समदृष्टि और तीन वेद यों ३१ बोल पावे

प्रमत्त गुणस्थान में-१ मनुष्यगति ५ इन्द्रिय ४ कपाय, ३

और परिणामी कर्म और निर्वृत्ति द्वारका की गाथा अर्थ कोष्टक ३२२ मध्ये है

जोग, ६ लेश्या, २ उपयोग, ४ ज्ञान, १ दृष्टि, ३ वेद, ३ चारित्रयों ३२ बोल पावे.

अप्रमत गुणस्थान में-१ गति, ५ इन्द्रिय ४ कषाय, ३ जोग, ३लेश्या, २ उपयोग, ४ ज्ञान, १ दृष्टि, ३ वेद और ३ चारित्र. यों २९ बोल पावे.

अपूर्व करण और अनियट बादर गुणस्थानमें-१ गति, ५ इन्द्रिय, ४ कषाय, ३ जोग, १ लेश्या, २ उपयोग, ४ ज्ञान, १ दृष्टि, ३ वेद, और ३ चारित्र. यों २७ बोल पावे.

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-१ गति, ५ इन्द्रिय, ३ जोग, १ लेश्या २ उपयोग, ४ ज्ञान, १ दृष्टि १ सूक्ष्म सम्पराय चरित्र. यों १८ बोल पावे.

उपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थानमें १ गती, ५ इन्द्रिय, ३ जोग, १ लेश्या, २ उपयोग, ४ ज्ञान, १ दृष्टि, १ यथाख्यात चारित्र यों १८ बोल पावे.

सयोगी केवली गुणस्थानमें-१गति, ३ जोग, १ लेश्या, २ उपयोग १ केवल ज्ञान, १ द्रष्टि, १ यथाख्यात चरित्र यों १० बोल पावे.

अयोगी केवली गुणस्थानमें-१ गति, २ उपयोग, १ केवलज्ञान, १ १ दृष्टि, १ यथाख्यात चारित्र. यों ६ बोल पावे.

२४३, तीसवा करण द्वार.

करणके ५९ बोल-५ द्रव्य ५ शरीर, ५ इन्द्रिय, ४ मन, ४ वचन, ४ कषाय, ६लेश्या, ७ समुद्घात, ४ सञ्ज्ञा, ३ दृष्टि वेद और ५आश्रव.

मिथ्यात्व गुणस्थानमें—५ द्रव्य, ४ शरीर, ५ इन्द्रिय, ४ मनके, ४ वचनके, ४ कषाय, ६ लेश्या, ५ समुद्घात पहिली, ४ सञ्ज्ञा, १ मि

थ्यात्व, ३ वेद और ५ आश्रव यों ५० बोल पावे.

सास्वादन गुणस्थान में-उपरोक्त ५० बोलही पाते हैं फरक फक्त मिथ्यात्व दृष्टि के स्थान सम्यक दृष्टि कहना.

मिश्र गुणस्थानमें भी उपरोक्त ५० बोल, मिश्र दृष्टि कहना.

अविरति और देशविरति में-सास्वादन मुजबही ५० बोल पावे.

प्रमत गुणस्थानमें-५ द्रव्य, ५ शरीर, ५ इन्द्रिय, ४ मन, ४ वचन, ४ कषाय, ६ लेश्या, ३ समुद्घात (केवल विना) ४ सज्ञा, १ दृष्टि, ३ वेद यों. ४७ बोल पावे.

अप्रमत गुणस्थानमें-५ द्रव्य, ५ शरीर, ५ इन्द्रिय, ४ मन, ४ वचन, ४ कषाय, ३ शुभलेश्या. ३ समुद्घात, १ दृष्टि और ३ वेद यों ३७ बोल पावे.

अपूर्व करण और अनियट बादर में-५ द्रव्य ३ शरीर, ५ इन्द्रिय ४ मन, ४ वचन, ४ कषाय, १ लेश्या, ३ समुद्घात, और ३ वेद यों ३३ बोल पावे.

सुक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-५ द्रव्य ३ शरीर ५ इन्द्रिय, ४ मन, ४ वचन, १ कषाय, १ लेश्या, और १ दृष्टि, यों २४ बोल पावे.

उपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थानमें-१ कषाय विन २३ बोल पावे.

सयोगी केवली गुणस्थानमें-५ द्रव्य, ३ शरीर २ मन, २ वचन, १ लेश्या, १ समुद्घात, और १ दृष्टि यों बोल १५ पावे.

अयोगी केवली गुणस्थानमें-५ द्रव्य, ३ शरीर, १दृष्टि यों९बोल पावे

तैंतीसवा-निव्रति द्वार.

निव्रति के ५३ बोल-८ कर्म, ५ शरीर, ५ इन्द्रिय, ४ भाषा, ४ मन

४ कषाय, ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श, ६ संठाण, ४ सज्ञा, ६ लेश्या ३ दृष्टि, ५ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ जोग और२उपयोग सब ८२ मिथ्यात्व मिश्र गुणस्थान में-१ शरीर, ५ ज्ञान, २ दृष्टि इन८ विना ७४ बोल पावे.

सास्वादन अविरति और देशविरति गुणस्थानमें-१ शरीर २ ज्ञान ३ अज्ञान और २ दृष्टि इन ८ विना ७४ बोल पावे.

प्रमत गुणस्थानमें-२ दृष्टि, १ ज्ञान, ३ अज्ञान इन ६ विना ७६ बोल पावे.

अप्रमत गुणस्थान में- ३ अशुभ लेश्या, ४ सज्ञा इन ७ विना ६९ बोल पावे.

अपूर्व करण और अनियट बादर में२-शरीर, २ लेश्या इन ४ विना ६५ बोल पावे.

सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-३ कषाय, १ उपयोग इन४विना६१पावे.

उपशान्त मोहमें-१ कषायघटी, और १ उपयोग बढ़नेसे ६१ही पावे.

क्षीणमोहमें-१ मोहनीय कर्म विना ६० बोल पावे.

सयोगी केवलीमें ४ कर्म, ३ शरीर, २ भाषा, २ मन, २० वर्णादि, ३ संठाण, १ शुक्ल लेश्या, १ केवल ज्ञान ३ जोग, २ उपयोग, यों ४५ बोल पावे.

अयोगी केवली में ४ कर्म, ३ शरीर २० वर्णादि,६ संठाण१ दृष्टि १ ज्ञान और २ उपयोग यों ३७ बोल पावे.

२४४, चौंतीसवा आश्रव द्वार.

आश्रवके ४२ भेदः—५ अव्रत, ५ इन्द्रियोंका अनिग्रह, ४ कषाय,

आश्रव और संवर द्वारका खुलासा दूसरे अर्थ काण्डका पृष्ठ ३३ में का.

भेद पावे.

प्रमत और अप्रमत गुणस्थानमें-१ सुक्ष्म सम्पराय और २ यथाख्यात चारित्र विना ५५ भेद पावे.

अपूर्व करण और अनियट बादर गुणस्थान में-परिहार विशुद्ध चारित्र विना ५४ भेद पावे.

सुक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-सूक्ष्म सम्परायविना ४ चारित्र, और ८ परिसह इन १२ विना ४५ भेद पावे.

उपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थानमें-यथाख्यात विना ४ चार चारित्र और ८ परिसह विना ४५ भेद पावे.

सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थान में-पहिला ४ चारित्र और ११ परिसह विना ४२ भेद संवरके पावे.

२४७ छत्तीसवा-निर्जरा द्वार.

मिथ्यात्व, सास्वादन और मिश्र गुणस्थान में-अकाम निर्जरा.

अविरति से अजोगी केवली गुणस्थानतक-सकाम निर्जरा.

२४८ सैंतीसवा निर्जरा द्वार

निर्जराके १२ भेदः-१ अणसण २ ऊणोदरी, ३ भिक्षाचरी, ४ रसपरित्याग. ५ कायाक्लेश. ६ प्रतिसलेना, ७ प्रायश्चित, ८ विनय, ९ वैयावच्च. १० सझाय, ११ ध्यान, और १२ का उसग्ग.

मिथ्यात्वसे अविरति. गुणस्थानतक-निर्जराके भेद नहीं पावे.

देशविरतिसे क्षीण मोह गुणस्थानतक निर्जराके १२ ही भेद पावे.

सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थानमें-१ शुक्ल ध्यान पावे.

२४९, अडतीसवा-कारणीफल द्वार

☞ निर्जरा और करणी फलद्वारोंका खुलासेके लिये देखीये अर्थ कांडकापृष्ट २३१.

और २५ क्रिया, यों ४२ में से.

मिथ्यात्वमे मिश्रगुणस्थानतक-इर्यावही क्रिया विना ४१ भेद पावे.

अविरति गुणस्थानमें-मिथ्यात्वी क्रिया विना ४० भेद पावे.

देशविरति गुणस्थानमें-अविरति क्रिया विना ३९ भेद पावे.

प्रमत गुणस्थानमें-५ अव्रत, प्रणाति पात-परिग्रही अनापउगी, पाडुची, सामन्तवणी, नेसत्थी, साहत्थी, आणवणी, समुदाणी ×इन १४ विना २५ भेद पावे.

अप्रमत गुणस्थान में-५ इन्द्रियके आश्रव, और १ आरंभ क्रिया, इन ६ विना, १९ भेद पावे.

अपूर्व करण और अनियट बादर में-मायावित्ति क्रिया विना १८ भेद पावे.

सूक्ष्म संपराय गुणस्थान में-१ पेजवती क्रिया ही पाती है.

उपशान्त मोहसे सयोगी केवलीतक-एक इर्यावही क्रियाही पावे.

अयोगी केवली गुणस्थान में आश्रव नहीं.

१८, पेंतीसवा-संवर द्वार

संवरके ५७ भेदः-५ समिति, ३ गुप्ति, २२ परिसह, १० यति धर्म १२ भावना और ५ चारित्र. यों ५७ भेद इसमें से:-

मिथ्यात्वसे मिश्रगुणस्थानतक-संवर नहीं.

अविरति गुणस्थान में-१ सम्यक्त्व और १२ भावना यों १३भेदपावे

देशविरति गुणस्थानमें-१व्रत और २२ परिसह अधिक होनेसे १५

× और [illegible] [illegible] पांचों इन्द्रिय के ५ आश्रव भी यहां कमी करते हैं [illegible] [illegible] स्थान [illegible] गुणस्थान में [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible].

भेद पावे.

प्रमत और अप्रमत गुणस्थानमें-१ सुक्ष्म सम्पराय और २ यथाख्या त चारित्र विना ५५ भेद पावे.

अपुर्व करण और अनियट वादर गुणस्थान में-परिहार विशुद्ध चारित्र विना ५४ भेद पावे.

सुक्ष्म सम्पराय गुणस्थानमें-सूक्ष्म सम्परायविना ४ चारित्र, और ८ परिसह इन १२ विना ४५ भेद पावे.

उपशान्त मोह और क्षीण मोह गुणस्थानमें यथाख्यात विना ४चार चारित्र और ८ परिसह विना ४५ भेद पावे.

सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थान में-पहिला ४ चारित्र और ११ परिसह विना ४२ भेद संवरके पावे.

२४७ छत्तीसवा-निर्जरा द्वार.

मिथ्यात्व, सास्वादन और मिश्र गुणस्थान में-अकाम निर्जरा.
अविरति से अजोगी केवली गुणस्थानतक-सकाम निर्जरा.

२४८ सैंतीसवा निर्जरा द्वार

निर्जराके १२ भेदः-१ अणसण २ ऊणोदरी, ३ भिक्षाचरी, ४ रसपरित्याग, ५ कायाक्लेश, ६ प्रतिसलेना, ७ प्रायश्चित, ८ विनय, ९ वैयावच्च, १० सझाय, ११ ध्यान, और १२ का उसग्ग.

मिथ्यात्वसे अविरति गुणस्थानतक-निर्जराके भेद नहीं पावे.
देशविरतिसे क्षीण मोह गुणस्थानतक निर्जराके १२ ही भेद पावे.
सयोगी और अयोगी केवली गुणस्थानमें-१ शुक्ल ध्यान पावे.

२४९, अडतीसवा-कारणफल द्वार

निर्जरा और करणी फलद्वारोंका खुलासेके लिये देखिये अर्थ कोष्टक ६६१

मिथ्यात्व सास्वादन, ओर मिश्र गुणस्थानकी सफल करणी.
अविरतिसे अयोगी केवली गुणस्थानतक निष्फल करणी.

२५०, चालीसवा-तीर्थंकर

अविरति, देशविरति, प्रमत, और अप्रमत इन चारों गुणस्थानोंमें जीवों २० बोलोंमेंके बोलोंका आराधन कर तीर्थंकर गोत्र उपार्जतेहैं.

२५१, एकचालीसवा-तीर्थंकर स्पर्श

अविरति, प्रमत, अप्रमत, अपूर्व करण, अनियट्टी बादर, सुक्ष्म संपराय, क्षीण मोह, सयोगी केवली, और अयोगी केवली इन ९ गुणस्थानोंको तीर्थंकर महाराज स्पर्शते हैं.

२५२ बेंतालीसवा-मोक्ष द्वार

मोक्ष ४ कारण से होवे-१ ज्ञान, २ दर्शन, ३ चारित्र और ४ तप.
मिथ्यात्व गुणस्थानमें मुक्तिका कारण नहीं.
सास्वादन और मिश्र गुणस्थानमें-व्यवहारमें मुक्तिका कारण नहीं.
निश्चयसे सत्ता मात्र फक्त ज्ञान दर्शन.
अविरति गुणस्थानमें मुक्तिके कारण-ज्ञान और दर्शन दो है.
देशविरतिसे अयोगी केवलीतक-मुक्ति के कारण चारोंही पावे.

तीर्थंकर गोत्र उपार्जनके २० बोल भाग [illegible] ११० वे पृष्ठ में है.

तीर्थंकर गुणस्थान स्पर्शन द्वारमें और मोक्ष द्वारके गुणस्थान [illegible] भाग [illegible] पृष्ठ १११ मा.

परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराजके सम्प्रदाय के
बाल ब्रम्हचारि मुनि श्री अमोलख ऋषिजी महाराज
रचित " गुणस्थानरोहण अढशित द्वारी ",ग्रंथ
का चोथा धर्मा रोहन खण्ड
समाप्तम्.

श्री गुणस्थाना रोहण-अढीशतद्वारीका
द्वितीय-मूल काण्ड-समाप्तम्.

॥ श्री ॥

मुक्ति -- सोपान

श्री गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारी का सांक्षिपत यन्त्र

		१	२	३	४	५
१	नाम द्वार	मिथयात्व	सास्वादन	मिश्र	अव्रति समादृष्टि	देश [illegible]
२	अर्थ द्वार	सत्यमें असत्यश्रधा	पडवाइ	मिश्रित	समकित	
३	प्रश्नोत्तर द्वार	क्या गुण? ग्रीवेक तक जावे	" धर्म स्पर्श	" समझनेलगा	" तत्वज्ञ हुवा	
४	प्रवेश द्वार	मूलस्थान	धर्म भ्रष्ट	हानी वृद्धि	निसर्ग अधिगम	७ "
५	लक्षण द्वार	२४ मिथ्यात्व सेव	आर्त-रौद्र ध्यानी	शंकाभील	ज्ञानी ६७ लक्षण	धर्मो [illegible] २३ [illegible]
६	दृष्टान्त द्वार	३६३ पाखण्डी	प्रमाद-अन्न घडी वमन	त्रिकरण भोलाजीव	नदीकाठे अन्न सूपे	[illegible] १० [illegible]
७	गुण द्वार	अनन्त संसारी	अर्ध पुद्गल संसारी	शुक पक्षी	७ बोलका अबन्ध	ज३-३ बारवा
८	अवघेणा द्वार	अंगु० असं० १,००० यौ	"	"	"	ज० ९ [illegible]१०
९	उत्पति द्रव्य प्रमाण	अनन्त	असंख्याते	"	"	"

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
...मत्त संयती	अप्रमत संयती	अपूर्व करण	अनिवृत्ति बादर	सूक्ष्म सम्पराय	उपशान्त मोह	क्षीणमोह	सयोगी केवली	अयोगी केवली
...दोष साधु	निर्दोषसाधु	उल्लाहा ही	निर्विषयी	फक्त सूक्ष्म लोभी	ढकादिया मोह	क्षपकिया मोह	योगयुक्त केवल ज्ञानी	योग रहित केवल ज्ञानी
" विरति हुवे	" प्रमाद छूटा	" बडी कषाय से निवृते	" विषयसे भी निवृते	" अकषायी हुवे	क्यों पडे मोह उदय बने से	क्या गुणे भाव केवली	" द्रव्ये केवली	" मोक्ष गामी
प्रकृति "	१५ प्र० "	१६ प्र० "	२१ प्र. "	२७ प्र. "	२८ प्र. उपशमी	२८ प्र. क्षयकरी	घातिकर्म "	आक्रिय
...मूर्ति लक्षण	धर्मोधनी	धीर वीर	पूर्णशील	पूर्ण संतोषी	शान्त स्वभावी	परम शान्त	सर्वज्ञ	मोक्षात्मा
...सेठ ...पारी	उत्कृष्टार्थी धन्ना अणगार	पंथानुगामी प्रसन्न चन्द्र	फटादुग्ध हरकेशी	निरंग वदकी त्र गोतम स्वामी	अग्नि कुंडरिक	ब्रानि अग्नि स्कंध मुनि	निर्मल सूर्य महावीर	सुमेरु पर्वत गजसुकुमाल
...तीत ...गी	" कल्पतीत गमी	" "	" "	" "	३ भव अनुत्तरमें	इसी भव मोक्ष	"	"
...हाथ ...नुष्य	"	दो हाथ ५०० ध.	" "	" "	" "	" "	" "	" "
...क	प्रत्येक सो	१६२	"	"	५४	१०८	"	"

		१	२	३	४	५
१०	पावती द्रव्य प्रमाण	अनन्त	असंख्याते	"	"	"
११	खपती द्रव्य प्रमाण	अनन्त	असंख्याते	"	"	"
१२	क्षेत्र प्रमाण द्वार	सर्व लोक	त्रस नाडी	"	"	आधो और तिरछालोक
१३	क्षेत्र स्पर्शना द्वार	सर्व लोक	छठी नर्कसे ग्रीवेक	लोक का असंख्यात वा भाग.	छठी नर्क १२वा स्वर्ग	अधोगाव १२वा स्वर्ग
१४	काल प्रमाण (स्थिति)	३ प्रकारकी	६ आंवली ७ समय	अन्तर मुहूर्त	ज. अन्त ६ सागर	ज० अन्त० ऊणा क्रोड पूर्व
१५	काल प्राप्त द्वार	मेरे	"	नहीं मरे	मरे	"
१६	भाव प्रमाण द्वार	असंख्य स्थान	"	"	"	"
१७	निरंतर गुण द्वार	प्रत्येक असंख्यात वे भाग	"	"	आवलियाके असंख्यात वे भाग	"
१८	मार्गणा द्वार	४	०	३	२	१
१९	उपमार्गणा द्वार	०	१	१	२	४

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
प्रत्येक हजार क्रोड	प्रत्येक सो	१६२	"	"	५४	१०८	प्रेत्यक क्रोड	१०८
प्रत्येक सो	"	१६२	"	"	५४	१०८	"	"
अढाइ द्वीप	"	"	"	"	"	"	"	"
अयोवीज अनन्तरवी	"	"	"	"	"	लोक का असंख्या ना भाग	सम्पूर्ण लोक	लोकका असंख्या तना भाग
"	ज. १ समय उत्कृष्ट-अंत तर मुंहूर्त	"	"	"	"	अन्तर मुहूर्त	ऊणा क्रोड पूर्व	पांच लघु अक्षर
"	"	"	"	"	"	नहीं मरे	"	मरे
"	"	"	"	"	१	१	१	१
८ समय	"	"	"	"	"	"	"	"
१	१	१	१	२	०	१	१	मोक्ष
५	२	२	२	२	२	०	०	०

		१	२	३	४	५
२०	परस्पर मार्गणा	३	१	२	५	५
२१	परस्पर उपमार्गणा	९	३	४	१	३
२२	अरोह उवरोह	१उवरोह	१अवरोह	२	२	२
२३	चडाचड गति	१	१	२	४	३
२४	अन्तर काल द्वार	अन्तर मु. ६६ मा०	पल्याका अ. संख्यात भाग अर्ध पुद्गल	,, ,,	,, ,,	,, ,,
२५	विरह काल द्वार	०	एक समय अंतर मुहूर्त	,,	०	०
२६	एकभव में स्पर्शना	१ ९००	१ २	१ प्रत्येकहजार	,,	१ ९००
२७	बहुत भव में स्पर्शना	२ असंख्यात	२ ५	२ असंख्यात	,,	२ ९०००
२८	परस्पर स्पर्शना	१ नियमा १० भजना	३ नियमा ८ भजन	३ नियमा ८ भजन	२ नियमा ९ भजन	३ नियमा ८ भजन
२९	पडमा पडम द्वार	२	२	२	२	२
३०	शाश्वता शाश्वत	शाश्वत	अशाश्वत	,,	शाश्वत	,,

		१	२	३	४	५
३१	परभव गमन द्वार	साथ जावे	"	नहीं जावे	साथ जावे	"
३२	भव संख्या द्वार	अनन्त	१ ७-८	"	"	"
३३	अल्पा बहुत द्वार	१२ अनंत गुणे	८ असंख्याते	९ असंख्याते	१० असंख्याते	७
३४	किरिया द्वार	२४	२३	२४	२३	२२
३५	मूल हेतु (कारण)द्वार	५	४	४	४	४
३६	मिथ्यात्व हेतु द्वार	५	०	०	०	०
३७	अविरति हेतु द्वार	१२	१२	१२	१२	११
३८	कषाय हेतु द्वार	२५	२१	२१	२१	१७
३९	योग हेतु द्वार	१३	१३	१०	१३	१२
४०	समुचय हेतु द्वार	५५	५०	४३	४६	४०
४१	चार बन्ध द्वार	४	४	४	४	४
४२	समुचय कर्म बन्ध	८	८	७	८	८

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
"	"	"	"	"	"	"	"	"
१	१	१	१	१	१	१	१	१
६ संख्याते	५ संख्याते	३ पहलीनो	३ आपसमे तुल्य	२ संख्याते	१ सबसे थोडे	२ संख्यात गुण	४ संख्याते	११ अनन्ते
२१	२०	२०	२०	२०	१	१	१	०
३	३	२	२	२	१	१	१	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०
१३	१३	१२	७	१	०	०	०	०
१४	११	९	९	९	९	९	७	०
२७	२४	२२	१६	१०	९	९	७	०
४	४	४	४	४	२	२	२	०
८	८	७	७	६	१	१	१	०

श्री गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारीका संक्षेपी यन्त्र

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
३	३	२	२	२	०	०	०	०
४	४	२	२	२	०	०	०	०
४	४	४	४	३	०	०	०	०
२३	२१	२१	१७	१२	०	०	०	०
४	४	३	३	३	१	१	१	०
३६	३२	३	३	३	१	१	१	०
४	४	३	३	३	१	१	१	०
३१	३३	३२-३	३	३	१	१	१	०
६	५	५	५	४	०	०	०	०
३६	३०	३०-२३	१२-१६	१४	०	०	०	०
६	६	४	९	१	१	१	१	०
३५	२२	२७	८	३	१	१	१	०

		१	२	३	४	५
६७	अपगावर्तमान कर्म बंध	५	५	५	५	५
६८	अपगावर्तमान कर्म प्रकृति बन्ध द्वार	२८	२७	२७	२८	२८
६९	भूयस्कार कर्म बन्ध	१	१	१	१	१
७०	भूयस्कार कर्म प्रकृति बन्ध	८	०	०	४	२
७१	अल्पतर कर्म बन्ध	१	१	१	१	१
७२	अल्पतर कर्म प्रकृति बन्ध द्वार	जो ऊपर	भूयस्कार	बन्ध के	स्थान	कहे है,
७३	अवस्थित कर्म बन्ध	जो भूयस्कार	बन्ध	अल्प तर	बन्ध के	प्रथम समय
७४	अवस्थित कर्म प्रकृति बन्ध द्वार	भूयस्कार	बन्ध के २९	स्थान या	अल्पतर के	२८ स्थान हो
७५	अव्यक्त कर्म बन्ध	०	०	०	०	०
७६	समुच्चय कर्म प्र० बंध	११७	१२१	७४	७३	६७
७७	कर्म बन्ध व्युच्छेद	०	०	१	०	०
७८	कर्म प्र० बन्ध व्युच्छेद	३	१०	४६	४३	८३

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
५	५	५	३	३	०	०	०	०
२८	२८	२८	१४	१४	०	०	०	०
१	१	१	१	१	१	०	०	०
१	१	७	५	५	१	०	०	०
१	१	१	१	१	१	१	१	०
इनकोइलेट	पढने से	अल्पतर	कर्म	प्रकृति	बन्ध के	स्थान	होते	हैं.
बन्धा	वोबन्ध	जितने	काल	तक रहे	उसे अ	वास्थित	बन्ध	कहना.
बंध किये बाद	फिर वो	बंध जितने	काल	रहेतो अ	वास्थित	कर्म	प्रकृति	बन्ध
०	०	०	०	०	०	०	..	..
६३	५९	२६	१८	१७	१	१	१	०
०	०	१	१	२	७	७	७	८
५७	६१	९०	१०३	१०९	११९	११९	११९	१२०

		१	२	३	४	५
७९	समुचय कर्मोदय द्वार	८	८	८	८	८
८०	ज्ञानावरणी उदय द्वार	५	५	५	५	५
८१	दर्शनावरणी उदय द्वार	९	९	९	९	९
८२	वेदनीय कर्मोदय द्वार	२	२	२	२	२
८३	मोहनीय कर्मोदय द्वार	२६	२५	१९	१९	१३
८४	आयु कर्मोदय द्वार	४	४	४	४	२
८५	नाम कर्मोदय द्वार	६४	५२	५१	५५	५१
८६	गोत्र कर्मोदय द्वार	अनन्त	२	२	२	२
८७	अन्तराय कर्मोदय	२	५	५	५	५
८८	ध्रुव कर्मोदय द्वार	५	४	४	४	४
८९	ध्रुव कर्म प्रकृति उदय	२७	२६	२६	२६	२६
९०	अध्रुव कर्मोदय	६	६	६	६	६

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१
८	८	८	८	८	७	७	४	४
५	५	५	५	५	५	५	०	०
२	६	६	६	६	६	६	०	०
२	२	२	२	२	२	२	२	२
११	११	१०	४	१	०	०	०	०
१	१	१	१	१	१	१	१	१
४४	४२	३२	३१	३१	३१	३७	३७	९
१	१	१	१	१	१	१	१	१
५	५	५	५	५	५	५	०	०
४	४	४	४	४	४	४	१	०
२६	२६	२६	२६	२६	२६	२६	१२	०
६	६	६	६	६	५	५	४	४

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
६२	४८	४५	३९	३३	३२	३०	२९	१२
४	४	४	४	४	४	४	४	४
३२	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३१	१२
८	८	८	८	८	८	७	४	४
६२	४९	४६	४०	३४	३३	२९	१३	१
०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०
१	१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१	१
७	७	७	७	७	६	६	४	४
५८	४७	४६	४८	३४	३३	४५	१७	११
१	१	१	१	१	१	१	१	१

		१	२	३	४	५
१०३	पुद्गल कर्मप्रकृत्तियोदय	३४	३२	३२	३२	३०
१०४	सर्व घाती कर्मोदय	३	३	३	३	३
१०५	सर्वघातिक कर्मप्रकृतीयोदय	२०	१२	१५	१५	११
१०६	देश घाति कर्मोदय	४	४	४	४	४
१०७	द. घा. कर्मप्रकृतियो	२५	२५	२६	२६	२५
१०८	अघाति कर्मोदय	४	४	४	४	४
१०९	अ. घा. कर्मप्रकृत्तियो	७३	६८	६०	६४	५१
११०	समुचेकर्म प्रकृतीयोदय	११७	१११	१००	१०४	८७
१११	कर्मोदय व्यच्छेद द्वार	५	११	२०	१८	३५
११२	कर्म प्र.उदयव्याच्छेद्वार	०	०	०	०	०
११३	समुचय कर्म उदीर्णाद्वार	८	८	७	८	८
११४	ज्ञानावरण थिउदीराण	५	५	५	५	५

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२१	२१	२२	२९	२९	२९	२४	२४	०
३	३	३	३	३	२	२	०	०
७	४	४	४	४	४	२	०	०
४	४	४	४	४	३	३	०	०
२५	२५	२५	१२	१३	१२	१२	०	०
४	४	४	४	४	४	४	४	४
७६	४७	४४	४४	४४	४४	४२	४३	१२
८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२	१२
४१	४६	५०	५६	६२	६३	६५	८०	११०
०	०	०	०	०	१	१	४	४
८	६	६	६	६-२	५	५-२	२	०
५	५	५	५	५	५	५	०	९

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
९	६	६	६	६	६	६	०	०
२	०	०	०	०	०	०	०	०
१४	१४	११	७	१	०	०	०	०
१	०	०	१०	०	०	०	०	०
४४	४२	३९	३९	३९	३९	३७	३७	०
१	१	१	१	१	१	१	१	०
५	५	५	५	९	५	५	०	०
८१	७३	६९	६३	५७	५६	५२	३८	०
०	२	२	२	२	३	३	३	०
४१	४२	५३	५९	६५	६६	७०	८३	०
८	८	८	८	८	८	७	४	४
५	५	५	५	५	५	५	०	०

		१	२	३	४	५
१२७	दर्शना वरणी कर्मसत्ता	९	९	९	९	९
१२८	वेदनीय कर्मसत्ता	२	२	२	२	२
१२९	मोहनीय कर्मसत्ता	२८	२८	२८	२८-२१	२८-२१
१३०	आयुकर्म सत्ताद्वार	४	४	४	४-१	४-१
१३१	नाम कर्म सत्ताद्वार	९३	९३	९३	९३	९३
१३२	गोत्र कर्म सत्ताद्वार	२	२	२	२	२
१३३	अन्तराय कर्मसत्ता	५	५	५	५	५
१३४	ध्रुव कर्म सत्ताद्वार	७	७	७	७	७
१३५	ध्रुव कर्म प्रकृति सत्ता	१२६	१२२	१२६	१२२	१२१
१३६	अध्रुव कर्म सत्ताद्वार	४	४	४	४	४
१३७	अ. कर्म प्रकृति सत्ता	२२	२२	२२	२२	२२
१३८	सर्व घाती कर्म सत्ताद्वार	३	३	३	३	३

		१	२	३	४	५
१३९	स.घा. कर्मप्रकृत्ति सत्ता	२०	२०	२०	२०	२०
१४०	देशघाति कर्मसत्ता	४	४	४	४	४
१४१	दे. घा. कर्मप्रकृति सत्ता	२७	२७	२७	२७	२७
१४२	अघाति कर्म सत्ताद्वार	४	४	४	४	४
१४३	अघा. कर्मप्रकृत्तिसत्ता	१०१	१००	१००	१०१ ९७	१०१ ९७
१४४	समुचयकर्मप्रकृत्तिसत्ता	१४८	१४७	१४७	१४८	१४८
१४५	कर्म व्युच्छतिद्वार	०	०	०	०	०
१४६	कर्मप्रकृत्तिव्युच्छतिद्वार	०	१	७-१० क्षायिक	७-१० ,,	७-१० ,,
१४७	समुचय कर्मभङ्गद्वार	२	२	१	२	२
१४८	ज्ञानावरणी भङ्गद्वार	१	१	१	१	१
१४९	दर्शणावरणीयभङ्गद्वार	२	२	२	२	२
१५०	वेदनीय भङ्गद्वार	४	४	४	४	४

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२०	२०	२०	२० १६	२० १६	२०	१४	०	०
४	४	४	४	४	४	३	०	०
२७	२७	२७	२७ १४	२७ १३	२७	१२	०	०
४	४	४	४	४	४	४	४	४
१०१ ९७	१०१ ९७	१०१ ९७	१०१ ९७	१०१ ८४	१११	८४	८४	८४ १३
१४८	१४८	१४८ १४२	१४८ १४२	१४८ १४२	१४८ १४२	१०१ ९२	८५	८५ १३ १२
०	०	०	०	०	०	१	४	४
७-१० ११	९-१०	९-१०	९-१० ४५	९ ४६	९	४७ ४२	६३	६३ १३४ १२६
२	२	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	०	०
२	२	२	२	१	२	२	०	०
४	२	२	२	२	२	२	२	४

श्री गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारीका संक्षेपी यस्त्र

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
८चौ. १भां	८चौ, १भां	४चौ१.	१६भां	१	०	०	०	०
३	६	२ १	२ १	२	२ १	१	१	१
१६ ५१२ ८	४ ५२२ ८	५ ३६० ८	१ ०६ ४	१ २६ ४	७२ ४	२४ ४	६०० ४	२ ३
१	१	१	१	१	१	१	१	२
१	१	१	१	१	१	१	०	०
१०	१०	८	८	८	७	५	५	४
२	२	२	२	२	२	१	१	१
३ ४	३ ४	४ ६	४ ६	४ ५	४ ५	४	३	३
१५	१२	१०	१०	४	३	३	३	२
२	२	२	२	२	२	०	०	०
१४	१४	१२	१२	१२	१२	१२	०	०
१	१	१	१	१	१	२	०	०

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२	२	२	२	२	२	२	२	२
३	३	३	३	३	३	१	१	१
३४	३१	२७	२७	२१	२०	१२	१४	१३
०	०	२	२	२	१	१	०	०
८	८	८	८	८	७	७	४	४
८	८	८	८	८	८	७	४	४
१०	१०	१०	७	७	२	२	२	२
पांचवेमे असंख्या	छठेमेअसंख्यागुणी	सातवेमे असंख्या	आठवेमे असंख्या	नववेमे असंख्या	दशवेमे असंख्या	ग्यारवेमे असंख्या	बारवेमे असंख्या	तेरवेमे असंख्या
५	५	५	५	५	५	५	५	५
१	१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	०	०	[illegible]
२	२	२	२	२	२	२	२	२

		१	२	३	४	५
१७५	पाजाति द्वार	५	४	१	१	१
१७६	जाजाति द्वार	५	४	०	१	१
१७७	आकाया द्वार	६	६	६	४	४
१७८	पाकाया द्वार	६	१	१	१	१
१७९	आकाया द्वार	६	१	०	१	१
१८०	आडण्डक द्वार	१४	११	११	१२	२२
१८१	पाडण्डक द्वार	१४	१२	१६	१६	२
१८२	जाडंडक द्वार	१४	१२	०	१६	२
१८३	सामान्य जीवभेद द्वार	१४	६	१	-	१
१८४	विशेष जीवभेद द्वार	१५७	३०७	१०८	२३८	२०
१८५	जीवायोनी द्वार	८४ लक्ष	३२ लक्ष	२६ लक्ष	२६ लक्ष	१८ लक्ष
१८६	कुल कोडी द्वार	१ क्रोड ९७॥ लक्ष क्रोड	१ क्रोड ४०॥ लक्ष क्रोड	१ क्रोड १६॥ क्रोड क्रोड	२०॥ लक्ष क्रोड	१२ लक्ष क्रोड

श्री गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारीका संक्षेपी यन्त्र

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१	१	१	१	१	१	१	०	०
१	१	१	१	१	१	०	०	मोक्ष
४	४	४	४	४	४	४	४	४
१	१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	०	०	मोक्ष
२२	२२	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९
१	१	१	१	१	१	१	९	१
१	१	१	१	१	१	०	०	मोक्ष
१	१	१	१	१	१	१	१	१
१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
१४ल	१४ल	१४ल	१४ल	१४ल	१४ल	१४ल	१४ल	१४ल
,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
१	१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	०	०
१	१	१	१	१	१	१	२	१
१	१	१	१	१	१	१	२	१
२	२	२	२	२	२	२	२	२
१	१	१	१	१	१	१	१	०
६	६	६	६	६	६	६	६	६
१	१	१	१	१	१	१	१	१
६	६	६	६	६	६	६	६	६
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	[illegible]	१
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	०	०

	१	२	३	४	५
१९९ द्रय त्रिपयद्वार	८सेर३	१३सेर३	२३	२३	२३
२०० प्रमाद्वार	४	४	४	४	४
२०१ वेदद्वार	३	३	३	३	३
२०२ कषायद्वार	४	४	४	४	४
२०३ लेशाद्वार	६	६	६	६	६
२०४ योगद्वार	३	३	३	३	३
०५ शरीरद्वार	४	४	४	४	५
६ संघयणद्वार	६	६	६	६	६
संठाणद्वार	६	६	६	६	६
रणद्वार	०	२	०	०	२
द्रहगतिद्वार	२	०	०	०	२
मर्यादद्वार	२१	१२	०	१०	१०

॥ श्री मुक्ति सोपान ॥

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१[illegible]
२१	२१	२१	२१	२३	२३	२३	०	०
४	०	०	०	०	०	०	०	०
३	३	३	३	०	०	०	०	०
४	४	४	४	१	०	०	०	०
६	३	१	१	१	१	१	१	०
३	३	३	३	३	३	३	३	०
९	३	३	३	३	३	३	३	३
६	६	१	१	१	१	१	१	१
६	६	६	६	६	६	६	६	६
२	२	२	२	१	१	०	०	१
२	२	२	२	२	२	०	०	१
२६	२६	२६	२६	५	५	०	०	मोक्ष

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२	२	२	२	२	१	१	१	१
४	५	५	५	५	१	१	१	१
६	६	६	६	६	६	६	६	६
३	३	३	३	२	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१	१
४	४	३	३	२	२	१	१	१
१	१	१	१	१	१	१	१	१
३ १	३ १	३ १	३ १	३ १	३ १	३ १	३ १	३ १
३	३	४	४	१	१	१	१	१
४	४	१	१	१	१	१	१	१
५	५	५	५	३	३	३	३	३

		१	२	३	४	५
२३५ परिसहद्वार		८	०	०	१०	२२
२३६ प्रमादद्वार		६	५	६	५	५
२३७ सरागी वीतरागी द्वार	सरागी	,,	,,	,,	,,	
२३८ पडवाई अपडवाई द्वार	अपडवाई	पडवाइ	२	२		
२३९ छद्मस्त केवली	छद्मस्त	,,	,,	,,	,,	
२४० मनुष्योंतद्वार		५	५	५	५	६
२४१ देवद्वार		३	३	३	४	१
२४२ परिणामीद्वार		३१	३१	३१	३१	२१
२४३ करणद्वार		५०	५०	५०	५०	५०
२४४ निवृत्तिद्वार		७४	७४	७४	७४	७४
२४५ आश्रवद्वार		४१	४१	४१	४०	३२
२४६ संवरद्वार		०	०	०	१३	३८

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२२	२२	२२	२२	१४	१४	१४	११	११
५	०	०	०	०	०	०	०	०
,,	,,	,,	,,	,,	उपशम रागी	वीतरागी	,,	,,
२	२	२	२	२	पडवाइ	अपडवाइ	,,	,,
,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,	केवली	केवली
६	०	०	०	०	०	०	१	०
३	३	३	३	३	२	२	२	२
३२	२९	२९	२२	१८	१८	१८	१०	६
४७	३७	३३	३३	२४	२३	२२	१५	९
७६	६९	६१	६१	६१	६१	६०	४५	३७
२५	१९	१८	१८	१	१	१	१	१
५५	५५	५४	५४	४५	४५	४५	४२	४२

श्री गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारी संक्षेपी यन्त्र

	१	२	३	४	५
२४७ निर्जराद्वार	अकाम	”	”	सकाम	”
२४८ निर्जराभेदद्वार	०	०	०	०	१२
२४९ कर्मफलद्वार	सफल	”	”	अफल	”
२५० तीर्थंकरनामोपार्जन	०	०	०	उपार्जे	”
२५१ तीर्थंकरस्पर्शनाद्वार	०	०	०	स्पर्शे	०
२५२ मुक्तिद्वार	०	मणा	मणा	३	४

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
"	"	"	"	"	"	"	"	"
१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१	१
"	"	"	"	"	"	"	"	"
"	"	"	०	०	०	०	०	०
स्पर्श	"	"	"	"	०	१	"	"
४	४	४	४	४	४	४	४	४

इस यन्त्रमें बिन्दी है सो नास्तिका चिन्ह है, और " ऐसे कम्मा है सो आस्तिका चिन्ह है. यह चिन्ह १ कोटसे १४ वे कोटतक अनुक्रम जानना.

इति गुणस्थान रोहण अढीशत द्वारी का संक्षेपित यन्त्र समाप्त

श्री गुणस्थान रोहण अढीशतद्वारी मंत्रोपी यन्त्र

	१	२	३	४	५
२४७ अनिर्जराद्वार	अकाम	”	”	सकाम	”
२४८ निर्जराभेदद्वार	०	०	०	०	[illegible]
२४९ करणीकृत्यद्वार	सफल	”	”	अफल	”
२५० तीर्थंकरगोत्रोपार्जन	०	०	०	उपार्जे	”
२५१ तीर्थंकरदर्शनाद्वार	०	०	०	स्पर्शे	०
२५२ मुक्तिद्वार	०	भवा	भवा	२	४

६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
"	"	"	"	"	"	"	"	"
१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१	१
"	"	"	"	"	"	"	"	"
"	"	"	०	०	०	०	०	०
स्पर्शे	"	"	"	"	०	१	"	"
४	४	४	४	४	४	४	४	४

इस यन्त्रमें बिन्दी है सो नास्तिका चिन्ह है, और " ऐसे कम्मा है सो आस्तिका चिन्ह है. यह चिन्ह १ कोष्टसे १४ वे कोष्टतक अनुक्रम जानना.

इति गुणस्थान रोहण अर्द्धशत द्वारी का संक्षेपित यन्त्र समाप्तं